अमरीका में सहकारिता

अमरीका में सहकारिता

लेखक

जेरी वूरहिस

[संयुक्त राज्य कॉंग्रेस के भूतपूर्व सदस्य, अमरीकी सहकारी
लीग के कार्यकारी निदेशक]

अनुवादक

श्यामू सन्यासी

प्रकाशक

१ कटरा रोड, प्रयाग

AMRIKA MEN SAHKARITA

[Hindi Version of American Cooperatives]

BY

JERRY VOORHIS

TRANSLATED BY

Mr. Shyamu Sanyasi

Price Rs. 3 00

प्रथम हिन्दी संस्करण—१९६४—मूल्य ३·००

मुद्रक
प्रेम प्रेस, कटरा
प्रयाग।

विषय-सूची

१ | संघर्षमय संसार

हम एक विचित्र प्रकार की नई दुनिया मे रहते है। हमारे विचार उलझे हुए और हम भयभीत है। हम नही जानते कि यह मानव-जाति का विनाश-काल है अथवा मनुष्य के स्वर्णिम युग का सबेरा।

धर्म से आश्वासन और मार्ग दर्शन पाने की तीव्र, गहन और उत्कटतम आवश्यकता हम अनुभव करते है, लेकिन उसकी आशा भी कैसे की जाए, जब कि भगवान् की सृष्टि का ही विध्वस करने वाली विद्याओं एव तकनीकों मे हम निरन्तर पारगत हो रहे है।

हमारे किशोर एक-दूसरे की हत्या करते है, आपसी गिरोह बन्दियाँ कर शहर की सड़को और गलियो मे मारा-मारी और गुण्डागिरी करते है। हमे उनके इन कृत्यो पर आश्चर्य होता है। लेकिन वास्तव मे देखा जाए तो हमे आश्चर्य नही होना चाहिए लज्जा आनी चाहिए, क्योकि उनकी अपराधी-वृत्तियो को उकसाने की जिम्मेवारी हमी पर है—हमी ने तो अपने समाचार-पत्रो को यह अनुमति दे रखी है कि वे हिसा की हर कारवाई को चटपटे शब्दो मे, गरमागरम शीर्षक देकर भडकीले ढग से छापा करे; हमी ने तो टेलीविजन वालो को यह अनुमति दे रखी है कि वे प्रायः ऐसे ही कार्यक्रम प्रसारित करे जिनका केन्द्रीय आय किसी-न-किसी प्रकार की हिसा पर आधारित हो। और सबसे बुरी बात तो हमारा यह भूल जाना है कि इस तरह के अपराध करने वाली पीढ़ी भी वही है जिससे हर रोज यह कहा जाता है कि परमाणु युद्ध कभी भी छिड़ सकता है, और यदि छिड़ गया तो उस सभ्यता को ही नष्ट कर देगा जिसका सम्मान करने की सीख हम उन्हे क्षीण स्वर मे देते रहते है। पुरानी पीढ़ी के हम बुजुर्गो ने ऐसे दिन देखे है जब शान्ति को कोई खतरा नही था और अपने भावी जीवन के बारे मे हम पूर्णतः निश्चिन्त और आश्वस्त थे। लेकिन हमारे बेटो और पोतों ने तो अपने सारे जीवन मे एक भी दिन ऐसा नही जाना जब सर्वग्राही विनाशक युद्ध की सम्भा-

वना सिर पर मॅडराती न रही हो। एक बार मैंने अपने सबसे छोटे बेटे और जूनियर हाई स्कूल के उसके दो सहपाठियो से पूछा कि अगर तुम्हारी सिर्फ एक ही इच्छा निश्चित रूप से पूरी होती हो तो बताओ, तुम क्या चाहोगे ? उन्होंने केवल क्षण-भर सोचा और तब तीनो ने एक स्वर मे यही कहा कि हम आज की तिथि से दस बरस तक जीवित रहना चाहेगे।

आज तो भला और बुरा सब गड्ड-मड्ड हो गया है। मनुष्य अपने वैज्ञानिक कौशल मे चन्द्रमा को जीत कर उसे आबाद कर लेगा। लेकिन साथ ही मजे की बात यह है कि उसका सामाजिक और राजनैतिक पिछड़ापन—जिसे समाजशास्त्री सास्कृतिक पिछड़ापन कहते है—पृथ्वी को, चन्द्रमा जिसका केवल उपग्रह है, विनाश से बचाने मे पूर्णत. असमर्थ है।

हम तकनीकी प्रगति के व्यापक विकास के युग मे जी रहे है; अपने-आप चलने वाले यन्त्र और परमाणु ऊर्जा तो उस विकास के केवल मुख्य उपादान है। अमरीकन कृषि मे उत्पादकता १९४७ से १९५७ के बीच प्रतिक्रम-घटा ८७ प्रतिशत बढा और उद्योग मे ३४ प्रतिशत। इस अल्प समय मे विद्युत्-शक्ति की हमारी खपत दुगुनी से भी अधिक हो गई। दूसरे कई देशो मे भी ऐसे ही परिवर्तन हुए है। मानव-इतिहास मे प्रथम बार पृथ्वी के सभी लोगो की मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा कर सकने लायक उत्पादन सम्भव हुआ है। लेकिन हमने वस्तुओं और सम्पत्ति का वितरण-पद्धतियों मे तदनुरूप प्रगति नहीं की, इसलिए जो बिक नही पाता ऐसे 'अतिरिक्त उत्पादन' पर हाथ मलते और सिर धुनते है, अपने किसानो को अधिक उत्पादन के लिए कोसते है और मनुष्य-जाति के तृतीयाश को हर रात भूखे पेट सोने के लिए विवश देखते रहते है।

वीमारियों पर विजय पाने, आयु-सीमा मे वृद्धि करने और अकाल एव वाल-मृत्यु का निवारण करने की दिशा मे आधुनिक विज्ञान ने चमत्कारिक कार्य किया है। लेकिन इस दीर्घायुष्य का हम क्या करे, यह हमारी समझ मे नही आता, यह दीर्घायु हमारे लिए 'समस्या—बुढ़ापे की समस्या' बन गई है। और जनसंख्या मे इतनी तेज गति से इतनी अधिक वृद्धि की सम्भावना हमे इसलिए भय-विकसित कर देती है कि कही इतने विशाल जन-समुदाय का पेट भरने के लिए इस धरती के साधन ही कम न पड़ जाएँ।

भविष्य जो भी हो, परन्तु आज तो इस तथ्य को स्वीकार करना ही होगा कि हमारा ससार एक सम्पूर्ण दुनिया है। केवल ध्रुव प्रदेशो को छोड़ कर भौगोलिक सीमाएँ कही भी नही रह गई हैं। टेलीविजन के बावजूद 'पश्चिम' कहो रहा ही नही। अब वह जमाना नही रहा कि अपनी समस्याओ से छुटकारा पाने के लिए लोग पल्ला झाड कर कही और जा बसे। कैलिफोर्निया शीघ्र ही अमरीका का सबसे घनी आबादी वाला राज्य हो जाएगा, परन्तु अपने सामने उसे प्रशान्त महासागर के पार बहुत अधिक जनसंख्या वाले जापान और चीन पहले से ही दिखाई दे रहे हैं।

आज जहाँ यह आवश्यक हो गया है कि अपने-आपको विनाश से बचने के लिए हम मिल-जुल कर शान्तिपूर्वक रहना सीखे, वही यह परिस्थिति भी परिपक्व हो गई है कि हम जहाँ है वही डटे रह कर अपनी समस्याओ का सामना करे और उनका समाधान ढूँढ़े।

हमारी समस्याओ के समाधान की चाभी अब भूगोल के नही, समाज-शास्त्र के हाथ मे है। किसी समय हमारे देश मे स्वतन्त्रता और आरम्भिक ढग के आर्थिक न्याय की गारटी यहाँ की मुक्त भूमि हुआ करती थी, जो न तो आबाद होती थी और न जिसका कोई स्वामी होता था। अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा और आर्थिक विकास के लिए लोग ऐसे ही नये क्षेत्रो मे जा बसते थे। लेकिन आज तो हमे अपनी स्वतन्त्रता और आर्थिक न्याय की रक्षा और सवर्द्धना सजग, विवेकपूर्ण एव सुनियोजित सामाजिक प्रयासो से ही करनी होगी। जनता की स्वतन्त्र होने और आर्थिक अवसर एव न्याय की स्थापना तथा उनके परिरक्षण की दृढ इच्छा शक्ति को ही नये क्षेत्रो मे जाकर बसने के उपायों और प्रभावों को स्थानापन्न बनाना होगा।

दुनिया के इतिहास मे पहली बार लोगो को अपने वर्तमान पड़ोसियों से भाग कर नये पडोसियों की खोज मे जाने के स्थान पर, वही जमे रहकर पुरानो के ही साथ मिल-जुल कर काम करना होगा।

यह तो मानना ही होगा कि आज दुनिया बहुत-सी बातो मे एक मुहल्ले की तरह हो गई है। आज पृथ्वी के कोने-कोने मे, एक साथ और तत्काल, सूचनाएँ भेजने के लिए संचार-व्यवस्था है। लोगों को उसी समय मालूम हो

जाता है कि और-और जगहों के लोगों के साथ क्या हो रहा है। और यह जानने के लिए उनका लिखा-पढ़ा होना भी आवश्यक नही है। यातायात भी संचार की ही भाँति द्रुत और त्वरित है। लोग एक स्थान से दूसरे स्थान पर लगभग उतनी ही जल्दी पहुँच सकते है जितनी देर मे एक स्थान से दूसरे स्थान को खबरे भेजी जाती है। अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना-यात्राएँ और व्यक्तियों का आदान-प्रदान आज एक सामान्य बात हो गई है। जिन लोगों को सैकड़ों वर्षो से बाहर की दुनिया के ज्ञान से वचित रखा गया था उनमे शिक्षा और साक्षरता की माँग बहुत तेजी से बढ़ रही है। मानव इतिहास मे ऐसा अवसर भी प्रथम बार ही उपस्थित हुआ है जब विश्व के सभी राष्ट्र और सभी लोग ज्ञान और सूचनाओं का परस्पर आदान-प्रदान कर सकते है। इतना ही नही, वर्तमान समय का सबसे शुभ सकेत यह है कि आर्थिक दृष्टि से विकसित राष्ट्रों को अपने प्रत्यक्ष हित एव कर्त्तव्य के सम्बन्ध में सहसा यह ज्ञात हुआ है कि आर्थिक दृष्टि से पिछडे देशों के साथ उन्हें अपनी तकनीकी 'जानकारी,' का हिस्सा बँटाना चाहिए। औपनिवेशिक काल की सारी विचार-पद्धति ने ससार को दो भागों मे बँटा हुआ मान लिया था—एक ओर तो तकनीकी दृष्टि से उन्नत, विनिर्माता और निस्सन्देह 'शोषण करने वाले' राष्ट्र और दूसरी ओर तकनीकी दृष्टि से अविकसित, कृषि-प्रधान और शोषित राष्ट्र। 'तकनीकी' सहायता की नई सूझ ने इस समूची विचार-पद्धति को ही बदल दिया और सर्वथा नये प्रकार के उपयोगी सम्बन्ध स्थापित कर दिए।

लेकिन साथ ही इस विडम्बना को भी स्वीकार करना होगा कि हमने विश्वव्यापी त्वरित संचार-विज्ञान पर अधिकार तो कर लिया, लेकिन यही नही जानते कि संचार किसका करे। इन संचार-साधनों के द्वारा किसी हिटलर, स्तालिन या पेरों के उग्रातिउग्र भाषण भी लाखों श्रोताओं तक पहुँच सकते हैं और शान्ति के दूतों की मधुर वाणी या कोई उपयोगी तथ्य या सांस्कृतिक अनुभूतियाँ भी। वास्तव मे आज तो स्थिति इन नए संचार-साधनों के समुचित उपयोग के विरुद्ध ही जाती है। दुनिया के लगभग तिहाई हिस्से की जनता को वहाँ की तानाशाही सरकारों ने ऐसे तथ्यों अथवा विचारों को पढ़ने या सुनने के मूलभूत अधिकारों से वंचित कर दिया जो वहाँ की सर-

कारों द्वारा मान्य नही। तथा कथित 'स्वतन्त्र दुनिया' मे भी 'जन-अभिप्रेरण,' मे प्रवीण चतुर व्यक्तियो को प्रति वर्ष अरबों डालर उनका स्वय प्रचारित उस योग्यता के लिए दिये जाते है जिसके बल पर वे लोगो से जो बात मनवाना चाहे, मनवा सकते है, और उन वस्तुओ को खरीदने के लिए लोगों को तैयार कर सकते है जिनकी ओर खरीदारों को अभिप्रेरित करने के लिए उत्पादको की ओर से उनको पारिश्रमिक आदि दिया जाता है। हमारे पास सस्कृति, ज्ञान, सौन्दर्य और पारस्परिक समझ उत्पन्न करने के विश्वव्यापी प्रचार के साधन मौजूद है। लेकिन हमने शायद ही कभी सोचा होगा कि हमे इन कार्यो को करना भी चाहिए अथवा नही। अभी तो हमे यही सीखना है कि इन साधनों का समुचित प्रयोग कैसे किया जाए और खतरनाक, अनुचित या अति सामान्य कोटि के कामो मे इनके प्रयोग को कैसे रोका जाए।

दूसरे विश्वयुद्ध और उसके बाद की हलचलों के कारण तथा नए विश्वव्यापी सचार एव सम्बन्धो के फलस्वरूप पन्द्रह अरब लोगो की मनः—स्थिति तथा दृष्टिकोण मे जबर्दस्त परिवर्तन हुआ है। ये विश्व के आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए क्षेत्रों के लोग है। सदियो से ये अदेय ऋणो के बोझ-तले दबे, या तो बचपन मे ही या फिर अकाल मृत्यु का शिकार होते और घिसटघिसट कर जिन्दगी के दिन काटते रहे है; इस दुरवस्था को ही ये बेचारे अपना भाग्य मान बैठे थे।

लेकिन आज वे इस तरह के दुर्दशा ग्रस्त जीवन को अपना भाग्य नही मानते। उन्होंने दूसरे देशवासियो के अपने से बिलकुल भिन्न प्रकार के जीवन के बारे मे सुना है और थोडा-बहुत उसे देख भी लिया है। और उन्हे विश्वास हो गया है कि स्वय उनका जीवन भी कुछ-कुछ तो वैसा ही हो सकता है। हजारों वर्षो मे पहली बार उनके मन मे यह विश्वास जागा है कि वर्तमान से भविष्य भिन्न हो सकता है; और अपने उस भविष्य को सँवारने के लिए वे कृत सकल्प भी है। अपनी इस 'नई आशाओ की क्रान्ति' को जैसे भी हो साकार रूप देने का वे निश्चय किये बैठे है। इतना ही नही, उन्होने कुछ प्रगति भी की है। उनमे से करोड़ो ने राजनैतिक स्वाधीनता प्राप्त कर ली है। कुछ ने अपनी आय और रहन-सहन के स्तर मे थोड़ी-बहुत उन्नति भी

की है। संयुक्त राष्ट्र संघ, बांदुंग, तथा अन्य स्थानों मे उनकी बातों को बडे ध्यान से सुना जाने लगा है।

नई आशाओं की क्रान्ति के इस अभियान के पीछे सबल प्रेरणा इसलिए भी है कि उन लोगों को यह बात मालूम हो गई है कि हमारी दु:खदायी भूख के साथ-साथ कुछ देशो मे कथित 'अधिशेष' भरे पड़े है। इस दु:खद तथ्य को तो स्वीकार करना ही होगा कि हमारे युग की तकनीकी क्रान्ति ने तकनीकी सहायता कार्यक्रमो, विदेशी मदद और तत्सम्बन्धी सभी प्रयत्नो के बावजूद धनी और निर्धनो के बीच की खाई को पाटने के स्थान पर चौडा ही किया है। दूसरे विश्व-युद्ध के बाद से पश्चिमी देशों तथा जापान में उत्पादन जनसख्या की वृद्धि से काफी आगे निकल गया है। किन्तु दूसरी ओर, उदाहरणार्थ, भारत मे, जनसख्या प्रति वर्ष २ प्रतिशत के हिसाब से बढ़ती जाती है और उसकी तुलना मे खाद्योत्पादन केवल ३ प्रतिशत प्रति वर्ष बढाया जा सका है। बहुत-से देशो मे तो इससे भी कम प्रगति हुई है। एशिया, अफ्रीका और विश्व के कुछ अन्य देशो के १५ अरब लोगो की प्रति व्यक्ति आय से अमरीका की प्रति व्यक्ति आय तीस गुना से भी अधिक है।

इस तरह की स्थिति अधिक दिनों तक सहन नही की जा सकती-विश्व-व्यापी सचार-साधनों वाली दुनिया मे तो कदापि नही। यह ज्यादा दिन नही चल सकता कि आधी मानव-जाति तो अमीर हो और आधी गरीब; दुनिया के आधे लोग 'अधिशेष' की शिकायत करते रहे और आधे उसके लिए तरसते रहें। नई आशाओं की क्रान्ति, जैसे भी होगा, अपना काम करके रहेगी।

मानव-जाति के लम्बे इतिहास मे इस पृथ्वी के अधिकाश लोग निरक्षर रहे और अपने गॉव से परे के जीवन, घटनाओं एव परिस्थितियों से प्राय: अज्ञ भी। जिसे जनता की सामान्य शिक्षा कहते है उस तरह की चीज तो दूसरे विश्व-युद्ध के समय तक पश्चिम के कुछ गिने-चुने देशों मे ही और सो भी केवल आशिक रूप मे दिखाई देती है। लेकिन आज यह स्थिति बदल रही है 'नई आशाओं की क्रान्ति' का एक पहलू सारी दुनिया के लोगों मे शिक्षा, साक्षरता और जानकारी की निरन्तर बढ़ती हुई माँग भी है। यूनेस्को ने सब देशों मे साक्षरता-प्रसार और शैक्षिक सुविधाओं के लिए विश्व-व्यापी

कार्यक्रम शुरू किया है। यह तकनीकी सहायता को सक्रिय रूप देने वाले विचार का ही एक अंग है कि शिक्षा के क्षेत्र मे भी इसी प्रकार की सहायता की व्यवस्था होनी चाहिए। अब एक नई किस्म का प्रचारक (मिशनरी) पिछडे हुए देशों मे इसलिए जाता है कि वहाँ लोगो को साक्षर बनाने मे सहायता करे। लेकिन यह सब होने के पहले से ही लाखों की सख्या मे लोग रेडियो से लाभ उठा रहे है। विश्व के दूरस्थ प्रदेशो मे यदि शिक्षा नही तो कम-से-कम जानकारी तो अवश्य ही पहुँच रही है।

अतएव यह कहा जा सकता है कि जिन लोगों के लिए भूतकाल मे अपने यहाॅ स्वतन्त्र और लोक तन्त्रात्मक राजनैतिक सस्थाओ का निर्माण करना असम्भव था, वहाॅ धीरे-धीरे और कठिन परिश्रम के द्वारा अब इस प्रकार की सस्थाओ को चलाने की नीव रखी जा रही है।

लेकिन इसके साथ ही दुनिया मे इस समय जनतन्त्रात्मक (जनता का, जनता के लिए और जनता द्वारा संचालित) राज्यतन्त्र का अन्त कर उसके स्थान पर अधिनायक-तन्त्र (तानाशाही) की स्थापना करने के लिए सुगठित शक्तियो का प्रबल अभियान भी चल रहा है। एकसत्तात्मक राज्य की सकल्पना हमारे ही समय मे आविर्भुत हुई और आज करोडो की आस्था और विश्वासों का मुख्य सैद्धान्तिक आधार बनी हुई है। जो राष्ट्र अभी भी स्वतन्त्र राज्यतन्त्र को अपनाये हुए है उनमे भी राज्य के ऐसे स्वरूप की माँग निरन्तर बढती जा रही है जो स्वतन्त्रता के स्थूल रूप को चाहे हानि न पहुँचाता हो स्वतन्त्रता की भावना के लिए तो निस्सन्देह हानिकारक है।

लगभग सभी देशो मे शासन-सत्ताएँ अधिक बडी और शक्तिशाली होती जा रही है; जहाॅ इसके लिए कोई और कारण नही वहाॅ एकसत्तात्मक राज्यों की निर्विरोध केन्द्रीय शक्ति के प्रति सन्तुलन के ही लिए ऐसा हो रहा है। अपने देश (अमरीका) की तरह के देशों मे आर्थिक शक्ति अधिकाधिक केन्द्रित होती जा रही है, यहाॅ तक कि कुछ बहुत बडे व्यवसाय-निगम हमारी अर्थ-व्यवस्था के समस्त क्षेत्र पर पूर्ण रूपेण छाते जा रहे है और इस दृष्टि से उनका रूप बहुत-कुछ साम्यवादी देशो के सरकारी उद्योगो के समान होता जा रहा है। प्रेस, रेडियो और टेलिविजन पर मुट्ठी भर लोगो का नियन्त्रण

बढ़ता जा रहा है। और सबसे बुरी बात तो यह है कि हाइड्रोजन बम के वास्तविक आतक के कारण सामान्य व्यक्ति इस विश्वास को खोता जा रहा है कि वह किसी महत्त्वपूर्ण विषय मे ऐसे निर्णय ले सकता है जो उसके भाग्य के लिए नियामक हों अथवा समकालीन इतिहास को प्रभावित कर सके।

पचास साल पहले अमरीका मे बहुत ही कम लोगो ने लाओस, वियतनाम या कोरिया का नाम सुना होगा। और इस बात की चिन्ता तो और भी कम लोगो को थी कि इन 'विचित्र नामो वाले दूरस्थ प्रदेशो' मे क्या हो रहा है। आज हम सीरिया और लेबनान यहाँ तक कि जार्डन और यमन तक की घटनाओं के बारे मे बहुत अधिक चिन्तित है। हम कोरिया मे युद्ध कर चुके है और बहुत-कुछ अशो मे वियतनाम मे भी। इसका सीधा-सादा कारण यही है कि हम चाहे या न चाहे, आज सारा विश्व एक है और हमारे देश का और हर महत्त्वपूर्ण देश का हित और चिन्ता सारे विश्व से सम्बद्ध है। हमारी इस सभ्यता के जीवित रहते विश्व के किसी भी स्थान मे अब कोई महत्त्वपूर्ण घटना नही घट सकती जिसकी जानकारी विश्व के अन्य सभी स्थानों के लोगों को तुरन्त न मिल जाए और जो उनके जीवन और भाग्य को प्रभावित न करे।

इसके बाद यह कहना विरोधाभास ही होगा कि आज विश्व जितना बँटा हुआ है उतना पहले कभी नही था। लेकिन ये गहरे मतभेद भी इसी बात को स्पष्ट करते है कि आज की दुनिया के सारे देश अन्योन्याश्रित है। आज से पचास साल पहले अमरीका और रूस के बीच आज की ही तरह सशस्त्र प्रतिद्वन्द्विता और तीव्र विरोध हो सकते थे, और ससार के शेष देशों को उनके तनावपूर्ण सम्बन्धो के बारे मे कोई खास चिन्ता भी न होती। क्योंकि पचास साल पहले यदि अमरीका और रूस आपस में युद्ध करते तो उससे मानव-जाति का विनाश भी न होता, लेकिन आज तो सर्वनाश के सकट की पूरी-पूरी सम्भावना है।

आज विश्व के समस्त देश सारी मानव-जाति के लिए अच्छे जीवन की खोज में अन्योन्याश्रित सम्बन्धों से बँधे हुए और एक है। विश्व-विनाशक मृत्यु के भय और आशंका मे भी वे उसी तरह एक-दूसरे से बँधे और एक है। जो

विज्ञान समस्त मानव-जाति की भलाई के लिए समुद्र के पानी से अपरिमित शक्ति उत्पन्न करने का बचन देता है उसी विज्ञान ने ऐसे शस्त्रास्त्रो का निर्माण किया है जो देशों की सामूहिक हत्याओं का कारण भी बन सकते है।

आज तो हालत यह हो गई है कि दुनिया के सभी स्त्री पुरुष और बच्चे हर रात इस आशका को मन मे लेकर सोते है कि शक्तिशाली शस्त्रो से सजग दो देशों मे कही युद्ध न छिड जाए। इसका कारण व्यक्ति जानता है और वह यह कि अमरीका और रूस के पास ऐसे आयुध है जिन्हें यदि पूरे पैमाने के युद्ध मे प्रयुक्त किया गया तो वे पृथ्वी के समस्त जीव धारियो का अन्त कर सकते है। ऐसी अथवा इससे मिलती-जुलती सम्भावना आज से पहले कभी भी नही थी।

विगत आधी शताब्दी मे, विशेष रूप से पिछले पच्चीस वर्षो मे, तकनीक, भौतिक विज्ञान, जीवन के सभी विशुद्ध भौतिक क्षेत्रो और युद्धास्त्रो के निर्माण में जो प्रगति हुई है वह सर्वथा चमत्कारिक ही है। लेकिन इसकी तुलना मे मानव-सम्बन्धो, सामाजिक विज्ञान, आर्थिक, राजनैतिक एव सांस्कृतिक सस्थाओं के विकास और शान्ति के निर्माण मे जो प्रगति हुई है वह खेदजनक रूप से मन्द रही है। समाजशास्त्री इसे 'सास्कृतिक पिछड़ापन' कहते है; और यह सास्कृतिक पिछड़ापन ही तो हमारी मुख्य समस्या है।

बड़े-बड़े नगर, बडे-बड़े निगम, बडी-बडी व्यापार शृखलाएँ, बड़े-बड़े संगठन, बड़ी-बडी सरकारे और बड़े-बड़े बम हम पर हावी है और हमे चारों ओर से घेरे हुए है। हम भयभीत ही नही, स्तम्भित और जड भी हो गए है। हम मे से अधिकांश नितान्त हताश होकर यह कहते है कि "मै इस सम्बन्ध मे कर ही क्या सकता हूँ।" कितने खेद की बात है कि हम विभिन्न राष्ट्राध्यक्षों के पारस्परिक दौरों पर अपनी आशा लगाये रहते है। और उससे भी अधिक खेद की बात तो यह है कि हम उनके साथ सवाददाताओं और फोटोग्राफरों की बड़ी-बडी पलटने भेजते है। क्योकि शान्ति की हमारी समस्त आशाएँ इन 'बड़े आदमियों' के हिसाब-किताब से बोले गए शब्दो अथवा वाक्यों, उनकी नपी-तुली मुस्कराहटों, यहाँ तक कि उनके श्वासोच्छ्वासों पर टिकी और अटकी रहती है। राष्ट्राध्यक्षों के पारस्परिक वार्त्तालापों के खोखले प्रति-

वेदनों मे हम अपने लिए आश्वासन खोजा करते है और उन्हीसे अपनी मानसिक जड़ता को मिटाने की प्रेरणा प्राप्त करते है और इसीलिए उनके दुबारा मिलन की आशा लगाये रहते है। हम मे से अधिकाश को कभी यह ख्याल ही नही आता कि विभिन्न राष्ट्राध्यक्ष मानव-जाति की रक्षा के नये और महत्त्वपूर्ण कार्य केवल तभी आरम्भ करेगे जब लाखो क्रुद्ध व्यवित एक स्वर मे उन्हें ऐसा करने के लिए बाध्य कर देगे।

हम लोग, यानी विश्व की जनता, अपने उत्तरदायित्व से परागमुख हो रहे है और साथ ही अपनी स्वतन्त्रता से भी हाथ धोते जा रहे है।

इसका एक कारण तो यह है कि हमारी नैतिक दृष्टि धुँधली पड गई है। हमने वैभव-लिप्सा और मुनाफे के लिए अन्धी दौड को उन धार्मिक शिक्षाओ के चौखटे मे बिठाने का प्रयत्न किया है जो हमसे पश्चात्ताप, विनम्रता, त्याग और पडोसी के प्रति सौहार्दपूर्ण आचरण की अपेक्षा रखती है। अपने व्यक्तिगत अथवा राष्ट्रीय जीवन मे हमे कोई प्रेरणा अथवा शाश्वत अनुभूति इसीलिए प्राप्त नही होती कि आधुनिक अमरीकी भौतिकवाद की 'प्रचुरता-पूजा' का ईसाई धर्म अथवा किसी भी प्राणवान् धर्म का विशिष्ठताओ (अच्छाइयो) से मौलिक विरोध है।

युद्धोतर वर्षो मे नैतिक दृष्टि और आत्म निर्देश की भावना उत्तरोत्तर मन्द पडती गई है।

शिकागो विश्वविद्यालय के एपिस्कोपल चर्च के माननीय पादरी विलियम एच० बार ने दिसम्बर १९५७ मे 'एडवान्स' पत्रिका मे लिखते हुए निम्न विचार प्रकट किये है :

"कारखानों और मैन स्ट्रीट में ही नही, अपनी शिक्षा संस्थाओ में भी हम 'औद्योगिकी' नामक एक झूठे भगवान की स्थापना कर रहे हैं। 'मुझे विश्वास है कि औद्योगिकी हमारी रक्षा करेगी'—आज के विश्व की सबसे व्यापक आस्था का यही मूलमन्त्र हो रहा है और इस तथ्य को अस्वीकार करना मूर्खता ही होगी।

"रस्किन ने 'वेनिस-निवासियो' की कला के द्रुतह्रास के सम्बन्ध में बडी सुन्दर बात कही है। उसने कहा है कि उनके पास असमान्य कौशल और आश्चर्यजनक तकनीक था। लेकिन ये दोनों ही निष्प्रयोजन थे। महान् प्रतिभा के धनी होने के बावजूद वेनिस-निवासियों के पास देने को कोई सन्देश नहीं था।

"इससे हम शिक्षा ले सकते हैं। हम अपनी सभ्यता को बचाने के लिए कृत संकल्प हैं। हमें टैकनी शिपनों एवं शिल्पियों की आवश्यकता है। लेकिन यदि हमने थोड़े-से पियानो-

वादक कुछ गायक, थोड़े-से कार्य, कुछ धर्म-मर्मज्ञ और इतिहासकार आदि पैदा नहीं किये तो जिस सभ्यता की रक्षा की हम इतनी धूमधाम से तैयारी कर रहे हैं वह रक्षा के इन प्रयत्नों के आरम्भ होने से पहले ही मर जाएगी।

"किसी भी विश्वविद्यालय के पुस्तकालयों में उन सभ्यताओं पर जो बड़े-बडे निर्माण कार्यक्रमों, विशाल वैभव और निरर्थक युद्धो के शोर-शराबे में चुपचाप समाप्त हो गईं, हजारों पुस्तकें मिल जाएँगी।

"यदि कार्यनिष्ठ पुस्तकाध्यक्ष न हो तो इतिहास के ये सारे ग्रन्थ धूल की मोटी तहों के नीचे दबे पड़े रह जाएँगे, क्योकि न तो कोई उन्हे पढने वाला है और न कोई उन सभ्यताओं की चिन्ता करने वाला।"

दूसरे विश्व-यद्ध की समाप्ति के कुछ समय बाद ही अमरीका के एक बडे शहर के समाचार पत्र ने परमाणु बम पर सम्पादकीय लेख लिखते हुए निम्न बात कही थी:

"हमारे सामने आज यह नैतिक प्रश्न ज्वलन्त रूप मे उठ खडा हुआ है कि हमारे राष्ट्र को या किसी भी राष्ट्र को पृथ्वी पर से समस्त जीवधारियों का अन्त करने वाली संहारक शक्ति को अपने हाथ मे रखने का अधिकार है?"

सम्पादकीय मे आगे चल कर विश्व-शान्ति और विश्व-व्यापी निरस्त्रीकरण को अत्यन्त महत्त्वपूर्ण आवश्यकता मान कर उनके लिए अथक अभियान करने की अपील की गई थी।

कुछ ही समय बाद, १९५२ मे, उसी समाचार पत्र ने हाइड्रोजन बम पर सम्पादकीय लिखा और उसमे कहा·

"अत्यधिक भयानक होते हुए भी इस नये शस्त्र का विकास और निर्माण अवश्यम्भावी हो गया था। यह तो हमारे ही अपने हित की बात है कि हमी ने सबसे पहले इस हथियार को बनाया और इसका पहला विस्फोट भी हमी ने किया।"

'नैतिक प्रश्न' का यहाँ कोई उल्लेख नही किया गया। सम्पादकीय को केवल यह कह कर समाप्त कर दिया गया कि 'कुशलतापूर्ण वार्ताओं' के द्वारा शान्ति बनाये रखने मे ही मानव-जाति के भाग की आशा निहित है। १९५२ के आते-आते हम पृथ्वी पर से प्राणि-मात्र का अन्त करने वाली घातक शक्ति को अपने पास रखने के इतने अभ्यस्त हो गए कि मानव-जाति के बृहदांश के नाश के लिए रूस के साथ हम भी उत्तरदायी ठहराये जा सकते है, इस सम्भावना की हमे कोई खास चिन्ता नही रह गई।

१९५५ मे इसी समाचारपत्र ने बड़े साहस के साथ 'परमाणु-विकीरण का मानव-जाति पर सम्भावित प्रभाव' शीर्षक एक लेखमाला प्रकाशित की, जिसमें

बहुत खरी-खरी भयोत्पादक बाते कही गई। उन लेखो मे यह चेतावनी दी गई कि यदि किसी चमत्कार से अधिकाश मानव-जाति बम की आग मे झुलसने से बच भी जाए तो आनेवाली अनेक पीढियो मे दैत्याकृति मानवो की सख्या उत्तरोत्तर अधिक और सामान्य मानवो की सख्या उत्तरोत्तर कम होती जाएगी। अन्त में उस लेखमाला पर यह सम्पादकीय टिप्पणी लिखी गई थी :

"विकीरण के खतरों को यथार्थवादी दृष्टिकोण से देखते हुए हमे परमाणु शस्त्रों के अपने कार्यक्रम मे वास्तविकता को भुलाकर काट-छाँट करने की बात कदापि नहीं करनी चाहिए। अमरीका और स्वतन्त्र विश्व की शान्ति-सुरक्षा के लिए हमे परम्परागत सावधानी के साथ परमाणु बम और हाइड्रोजन बम के परीक्षण जारी रखने चाहिए। परमाणु ऊर्जा आयोग के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री गौर्डन डीन के शब्दों मे, 'हमे अधिक प्रक्षेपणीय, अधिक बड़े और अधिक अच्छे शस्त्रो का निर्माण करने के लिए निरन्तर परीक्षण करते रहना चाहिए।'"

इस तरह न केवल नैतिक प्रश्न को भुला दिया गया, बल्कि हमारी पीढ़ी द्वारा मानव-जाति के लिए उत्पन्न किये गए अत्यन्त भयानक और सर्वग्राही सकट को समाप्त करने के प्रयत्न भी छोड दिये गए। यह समाचार पत्र अथवा परमाणुओं उर्जा आयोग केवल यही सुझाव दे पाये कि 'हमे अधिक प्रक्षेणीय, अधिक बडे और (भगवान बचाए) अधिक अच्छे शस्त्रो का निर्माण करना चाहिए।' अधिक अच्छे से यहाँ तात्पर्य उस हाइड्रोजन बम से ज्यादा अच्छे बम से है, जिसके एक ही विस्फोट ने ३० से ५० लाख आदमियो का अन्त कर दिया था और जिसने प्रयोगात्मक विस्फोट के स्थान से दो सौ मील की दूरी पर एक जापानी मछुए की जान ले ली थी।

१९५५ के बाद के वर्षों मे कुछ अच्छे परिवर्तन हुए। इक्का-दुक्का लोगो को अमरीकावासियो की हास्यास्पद मन.स्थिति का मजाक उड़ाते हुए सुना जाने लगा। माननीय पादरी बार के लेख की तरह के और भी कई लेख लिखे गए। कभी-कभी लोगों ने यहाँ तक कहा . "अपने बच्चो को जीवित रहने का अवसर देने की शिष्टता ही हमारी पीढी का मुख्य काम होना चाहिए।" और अन्त में उन्होने पूछा : "हम इसके लिए क्या कर रहे है ?"

हम यह तो मानने ही लगे है कि हम पथ-भ्रष्ट हो गए है, हमारा नैतिक-निर्देशन नष्ट हो चुका है और अपने धर्म के वास्तविक सन्देश से, मूल प्रयोजन से, हमारा सम्बन्ध-विच्छेद हो गया है।

मै ऐसा सोचता हूँ या सम्भवतः यह मेरी मनोभिलाषा ही हो कि हम इस अपरिहार्य सत्य को भी गम्भीरता से लेने लगे है कि बीसवी शताब्दी के मध्य की

यह पीढी इन दो प्रश्नों का अवश्य निर्णय करेगी कि क्या मानव-जाति जीवित रहेगी या समाप्त हो जाएगी और यदि जीवित रही तो क्या वह स्वतन्त्र भी रहेगी ?

और हम यह भी अनुभव करने लगे है कि यदि अपने वर्तमान मार्ग पर ही चलते रहे तो हम निश्चय ही इन दोनो प्रश्नो के गलत निर्णय पर पहुँचेगे।

बीसवीं सदी के छठे दशक के अन्तिम वर्षों मे हम इतना तो समझने लगे है कि अपनी अस्तित्व रक्षा के लिए कुछ बाते बहुत आवश्यक और अनिवार्य है।

यह आवश्यक है कि हम अपने जीवन मे नैतिक प्रयोजन की भावना, आप चाहे तो उसे धार्मिक प्रयोजन की भावना भी कह सकते है, पुनः स्थापित करे।

यह आवश्यक है कि अपने भविष्य के सम्बन्ध मे स्वय निर्णय करने की लोगों की इच्छा को पुनः जाग्रत किया जाए।

यह आवश्यक है कि ऐसे उपायो की खोज की जाए जिससे बड़ों की दुनिया में छोटे लोग आत्मसम्मान और महत्त्व बनाये रख सके।

यह आवश्यक है कि ऐसी सस्थाएँ स्थापित की जाएँ जो इस विश्व मे शान्ति की स्थापना उसका कार्यान्वियन और अनुरक्षण कर सके।

ये आवश्यक कार्य, जो स्वतन्त्र मानव की अस्तिव रक्षा के लिए नितान्त आवश्यक है, ऊपर के स्तर के व्यक्तियो से शुरू होकर पूरे नही किये जा सकते। नेताओ के उग्र भाषण स्वतन्त्रता की इच्छा को पुनर्जाग्रत नही कर सकते। आधुनिक ढग का निरकुश शासन, चाहे वह साम्यवादी हो अथवा पूँजीवादी, व्यक्ति के आत्मसम्मान को अथवा इस भावना को कि औसत व्यक्ति का भी कुछ महत्त्व है, पुनःस्थापित नही कर सकता। इसी प्रकार केवल सन्धियो, समझौतो और अन्तर्राष्ट्रीय सस्थाओ से शान्ति कायम नही की जा सकती।

सभी मानवी प्रगतियो की तरह, हमारे युग को जिस प्रगति की आवश्यकता है उसकी जड़े भी विश्व-भर के हजारो समुदायों और लाखो समूहों मे रहनेवाले सामान्य लोगों के जीवन और रहन-सहन मे निहित होनी चाहिए। इसलिए ऐसे उपायों की खोज करना आवश्यक है जिनसे लोग निर्णय लेने का, आत्मगौरव, स्वाभिमान, सहयोगभावना और अपने साथियो के साथ सक्रिय, शान्तिपूर्ण सम्बन्धों का सुखद अनुभव प्राप्त कर सके।

इस पुस्तक मे इसी प्रकार के उपायो की चर्चा की गई है।

---

२ | नये युग के अनुरूप नये ढंग का व्यवसाय

सभ्य समाज की स्थापना के लिए पहला प्रयत्न कब और कैसे आरम्भ हुआ इसका हमें कोई निश्चित ज्ञान नहीं है। सम्भवतः यह निम्नलिखित ढंग से हुआ हो:

सर्दी का मौसम था और उस दिन कड़ाके का जाड़ा पड़ रहा था। एक पेड़ पर बिजली गिरी और वह जल उठा। विभिन्न दिशाओं से कोई एक दर्जन डरे हुए आदि मानव उस आग के पास गर्मी पाने के लिए चोरी-चोरी आये। उन सभी के दिल में एक-दूसरे का डर समाया हुआ था। वास्तव में वे एक-दूसरे से इतना अधिक डरे हुए थे कि उस कीमती आग को यों ही जलकर खत्म हो जाने देते और पुनः ठण्ड तथा अँधेरे का शिकार हो जाते, क्योंकि अभी उन्हें आग जलाना आता नहीं था।

तभी एक महान् घटना घटी। आग के चारों तरफ खड़े उन आदि मानवों में से किसी एक ने बाकी लोगों के सामने एक बहुत ही साधारण सुझाव पेश किया, जिसमें सभ्यता के निर्माण की प्रक्रिया के सारे बुनियादी तत्त्व समाये हुए थे। प्रस्ताव यह था कि वे एक-दूसरे पर आक्रमण करने के बजाए आग को सबके हित में बनाये रखने के लिए मिल-जुलकर काम करने को राजी हो जाएँ।

किसी समय कहीं-न-कहीं इस तरह का प्रस्ताव स्वीकार किया गया, पारस्परिक सहायता और सहकारिता का जन्म हुआ और मानव-जाति सभ्यता की ओर अग्रसर हुई।

उस दिन से लेकर आज तक मनुष्यों के बीच स्वेच्छापूर्ण पारस्परिक सहायता की प्रथा ही सभ्यता को विकसित करनेवाली महान् शक्ति, मानव-जाति की दशा सुधारने वाला महान् प्रभावशाली माध्यम और समस्याओं को सुलझाने का प्रमुख साधन रही है।

दुनिया के इतिहास में पहले-पहल खेती करने वालों ने यदि पारस्परिक सहायता को न अपनाया होता तो खेती का शुरू हो पाना असम्भव ही था। उस समय का कोई भी अकेला एक किसान खानाबदोश कबीलों की लूट-मार से अपनी खेती

को रक्षा नहीं कर सकता था। लेकिन यदि घाटी के सभी किसान साथ मिलकर अपने बोये हुए धरती के ऊबड़-खाबड़ टुकड़ो की रक्षा के लिए तैयार हो जाते तभी वे अपनी फसल को काटने का अवसर पाते थे।

यदि पारस्परिक निर्भरता न होती तो न अमेरीका को बसाया जा सकता या और न किसी नये क्षेत्र को ही। शुरू शुरू के वे अक्खड वाशिन्दे एक-दूसरे की सहायता के बल-बूते ही वहाँ जाकर बसे और उन नये क्षेत्रो को आबाद किया। अपने अनगढ़, भोंडे मकानो को बनाने के लिए उन्हे पारस्परिक सहायता की आवश्यकता होती थी और अपने खलिहान तथा अन्न-भडार बनाने के लिए भी। पारस्परिक सहायता के बिना न तो वे दुर्दान्त दस्युओ के बर्बर आक्रमणो को परास्त कर जीवित बच पाते, न हारी-बीमारी का सामना करके और न कठोर शीत से अपनी रक्षा कर के ही।

रोम के पतन के बाद के युगो मे हिंसा और उत्पातो का जो दौर चला उसमे कुछ लोगों ने यदि पारस्परिक सहायता के आधार पर मठो मे रहकर ज्ञान तथा सस्कृति के उद्धार और सरक्षण का कार्य करने का निश्चय न किया होता तो प्राचीन काल का समस्त ज्ञान-विज्ञान एव सास्कृतिक परम्पराएँ सम्भवत नष्ट हो जाती।

यूरोप की वर्तमान जातियों और राष्ट्रो की जड़े वहाँ के मध्यकालीन नगरो मे समायी हुई है। और उन नगरो का विकास हुआ है उस समय की लगातार होती रहनेवाली छोटी-छोटी लडाइयो के अशान्त और विक्षुब्ध वातावरण मे। शान्तिपूर्वक रहने का अवसर पाने के लिए उस समय के दस्तकारो और व्यापारियों की सुरक्षा के निमित्त पारस्परिक सहयोग की एक खास पद्धति को अपनाना पड़ता था। कालान्तर मे इस पद्धति ने पर कोटे वाले नगरो मे पास-पास रहने का रूप ग्रहण कर लिया। और अन्त मे इन्ही नगरो के निवासियो ने ऐसी केन्द्रीय सरकारो की स्थापना पर जोर दिया जो नागरिक शान्ति को बनाये रख सके ; और वे इसमे सफल भी हुए।

इस तरह के अगणित उदाहरण दिये जा सकते है, जो प्राय अनावश्यक ही है।

आतंक, दमन, भूख और भय से मानव-जाति की रक्षा के साधन के रूप में पारस्परिक सहायता और सहकारिता की वंशावली काफी लम्बी और उजागर है। हमारे युग के श्रेष्ठतम समाजशास्त्रियों ने भी इस तथ्य को स्वीकार किया है।

श्री एशले माटेगू ने अपनी पुस्तक 'आन विहग ह्युमन' मे कहा है :

"मनुष्य का जन्म प्रतिद्वन्द्विता अथवा पारस्परिक संघर्ष के लिए नहीं सहकारिता के लिए हुआ है। आज से दो सहस्र वर्ष पूर्व नाजरेथ के एक ईसा ने यही खोज की थी। आधुनिक विज्ञान इसका समर्थन करता है क्योंकि उसकी बुनियादी खोज भी यही है। संक्षेप में कहें तो यह प्रेम का सिद्धान्त है— मानवता का सिद्धान्त, एक ही विश्व और वसुधैव कुटुम्बकम् का सिद्धान्त है जो समस्त मानव-जाति को आबद्ध किये है।

हमारे युग के समाजशास्त्री मांटेगू के विचारो का अनुसरण करे यह सर्वथा उचित ही है; क्योकि आज मानव-जाति के सामने केवल दो ही रास्ते है—विश्वव्यापी सहकारिता अथवा विश्व व्यापी विनाश।

सम्भव है कि मनुष्य-जाति ऐन वक्त पर अपने सही रूप को पहचान ले। कम-से-कम आशा तो हमे यही करनी चाहिए।

और वह 'ऐनवक्त' अधिक दूर भी नही है।

तब तक परम्परा से प्राप्त दाय सर्वथा रक्षणीय है; और इस दाय का सबसे मूल्यवान अश है परस्पर अभीप्सित लक्ष्यो के लिए जन-समूहो की स्वेच्छा से संयुक्त होकर काम करने की क्षमता।

पारस्परिक सहायता-सहकारिता ने भी अन्य सभी मानवी आवेगोकी भाँति अनेक प्रकार के सस्थागत रूप अपना लिये है। इसका पहला संस्थागत रूप हमे परिवार मे दिखाई पडता है, उसके बाद वश मे, फिर कबीले मे, तब नगर, राज्य और फिर राष्ट्र मे। मानव-इतिहास मे जितने भी 'शान्ति दल' हुए वे सब शान्ति को बनाये रखने और स्वय अपने अस्तित्व के लिए भी स्वैच्छिक पारस्परिक सहायता पर ही मूलत: निर्भर करते रहे। कोई भी पुलिस दल कितना ही बड़ा क्यो न हो अकेला कभी इस काम को नही कर सकता।

हमारे युग के सहकारी व्यवसाय वास्तव मे मानव-जाति के दैनिन्दिन आर्थिक क्रिया-कलापों मे पारस्परिक सहायता की भावना एवं सिद्धान्त का संस्थागत निरूपण ही है।

आगे चल कर सहकारी व्यावसायिक उद्यमो के जिन नये और अद्यतन रूपों की चर्चा की जाएगी उससे स्पष्ट हो जाएगा कि वे हमारे युग की समस्त व्याधियों की अचूक चिकित्सा है।

हमारे पूर्वजो ने अपने 'रक्त, स्वेद और अश्रुओ' से स्वतत्रता एव वैधानिक जनतन्त्र की जिन सस्थाओ का विकास किया उन्हे भावी पीढ़ी के लिए सुरक्षित छोड जाने के घनघोर सघर्ष मे आज हम जुटे हुए है।

हम सफल होगे ही इसका कोई आश्वासन नही दिया जा सकता।

कम-से-कम तीन बाते पूरी हो तभी हम सफलता पा सकते है:

पहली तो यह कि लोगो के अपने भाग्य-निर्णय के अधिकार को सुरक्षित किया जाए। इसका मतलब यह हुआ कि विधिपूर्वक निर्मित और अपने विधानो के द्वारा मनुष्य के मौलिक अधिकारो की गारटी करने वाली सरकारे पनपनी चाहिए।

दूसरी यह कि जिन सस्थाओ की स्वतन्त्रता इस प्रकार बुनियादी तौर पर सुरक्षित कर दी गई है उनके द्वारा आत्मनिर्णय, आत्म-निर्देशन और मूल विषयो पर निर्णय करने के अपने अधिकार को कार्यान्वित करने की लोगो की इच्छा भी अवश्य होनी चाहिए। तात्पर्य यह कि अपने भाग्य और भविष्य का निर्णय करने की इच्छा तो जनता मे होनी ही चाहिए।

इस अधिकार का अधित्याग करने वाले कभी स्वतन्त्र नही रह सकते।

निर्णय करने के अधिकार से जब जनता यो पराङ्मुख हो जाती है तो एक ऐसी कुण्ठा और असहायता प्रतिफलित होती है जो इस दु:खद विश्वास को बद्ध मूल कर देता है कि सामान्य नरनारी के लिए स्वय अपने भाग्य निर्देशन अथवा अपने बच्चो के भविष्य-निर्माण का कोई भी व्यावहारिक मार्ग नही रह गया है।

इसलिए मानवी सभ्यता मे जो श्रेष्ठतम है उसकी सुरक्षा के लिए तीसरी आवश्यक शर्त है इस तरह के व्यावहारिक साधन जिनके द्वारा साधारण नर-नारी अपने सम्बन्ध मे स्वय निर्णय कर सके।

और जीवन की दैनन्दिन समस्याओ मे, हमारे अस्तित्व के जिन आर्थिक कार्य-व्यापारों से हमारी इतनी सारी सस्थाएँ बनी है, नये प्रकार के सहकारी व्यवसाय और आर्थिक सस्थाएँ बिलकुल ऐसा ही साधन हैं।

आज सयुक्त राज्य अमरीका मे सहकारी व्यवसायो के स्वामी अपने लिए और अपने समुदायो के लिए अनेक प्रकार के सेवा कार्य कर रहे है।

वे प्रसव करवाते है, कफन-दफन का इन्तजाम करते हैं, खेतो और फारमो पर रोशनी का प्रबन्ध करते है, कृषि यन्त्रो को चलाने के लिए बिजली देते है, गृह-निर्माण करते है, खेतो मे नई तरह के तरल खाद डालते है, मोटरो की सर्विस (सफाई और दुरुस्ती) करते है और किसानो की उपज को बेचते है। वे उपभोक्ताओ के लिए विशाल सर्ववस्तु भण्डार (सुपरमार्केट) चलाते है और स्वतन्त्र पनसारियो के लिए किराना माल का थोक काम करते है। वे तेल के कुओ से तेल निकालते है, फास्फेट की खदाने खोदते है, बीज उगाते है, काफी पीसकर तैयार करते है और पानी गरम करने तथा दूध दुहने की मशीने बनाते है। वे लोगो के बचाये हुए धन-बचतो को जमा करके साख (उधार) संघ, सहकारी बीमा कम्पनियाँ और सहकारी कृषि साख समितियाँ शुरू कर देते हैं और इस तरह लोगों को अपनी बचत कारोबार मे लगाने और अपने को ही ब्याज देने के योग्य बनाते हैं। और जैसा कि हम आगे चलकर देखेगे, वे हर प्रकार की छोटी और बडी स्वास्थ्य योजनाएँ भी चलाते हैं जिससे आधुनिक-चिकित्सा-विज्ञान के चमत्कारिक लाभ सर्व साधारण को सुलभ हो सके।

सहकारिता के आज के इन विभिन्न रूपों को देखकर इसके प्रवर्तक और पुरोगामी कार्यकर्ता अपनी कब्रों मे पड़े अकुला रहे होंगे। उनकी व्याकुलता सही भी है, क्योंकि इनमे से कुछ तो सही अर्थो मे 'सच्ची सहकारी सस्थाएँ' है भी नही। उदाहरण के लिए स्वास्थ्य योजनाएँ है, जो सरक्षण-धन वापसी (patronage refund) नही देती, लेकिन जिनका दिया जाना सहकारिता के चार बुनियादी सिद्धान्तो मे से एक है। ऊपर बताये उद्यमो मे से कुछ ऐसे भी हैं, जिनमे उपभोक्ता नही होते—फुटकर विक्रेताओ की सहकारी थोक किराना समितियाँ और किसानों की सहकारी विक्रय समितियाँ ऐसी ही संस्थाएँ है। फिर कुछ राज्यो मे शासपत्री (स्टेट-चार्टर्ड) साख-संघ हैं, जिनमें प्रतिपत्री (प्राक्सी) मतदान की प्रथा है, जब कि यह प्रथा 'हिस्से कितने ही क्यों न हों, एक व्यक्ति, एकमत' वाले 'रोशडेल सिद्धान्त' का स्पष्ट उल्लघन करती है। इसके अतिरिक्त वृहत्तर न्यूयार्क की स्वास्थ्य बीमा योजना-जैसी सहकारी संस्थाएँ भी हैं, जहाँ मतदान होता ही नही। और फिर उपनगरों

मे परिवर्तनशील 'कृषि आपूर्ति सहकारी समितियाँ' है, जिनके बहुसंख्यक सदस्यों को, जो प्रायः गैर-किसान है अभी तक पूरी तरह मतदान का अधिकार नही मिल पाया है, और यो वे एक प्रकार से द्वितीय कोटि के सदस्य है।

इस प्रकार हमारे आधुनिक विश्व की ही भाँति आज के और विशेष रूप से अमरीका के सहकारी उद्यम द्रुतगति से परिवर्तनशील और विकासोन्मुख अवस्था मे है। सहकारिता वास्तव मे एक नये प्रकार का व्यवसाय है, जो ऐसे नये युग की आवश्यकताओ के सर्वथा अनुरूप है जिसमे पुराने किसी भी युग की अपेक्षा हम ज्यादा अच्छी तरह जीवन-यापन करते है, लेकिन जिस तथ्य को न तो इस नये युग के अधिकांश वाचाल हितैषी और न इसके शोर-शरापा करने वाले अधिकाश शत्रु ही अभी तक ठीक से समझ पाये है।

सहकारिता के आधुनिक विभिन्न रूपों और प्रकारो के कारण जो उलझन और गड़बड़ पैदा हो गई है उसे कुछ लोग यह कहकर सुलझाने का प्रयास करते है कि अब सहकारी और दूसरे किसी भी प्रकार के व्यवसाय मे विशेष अन्तर नही रह गया है। लेकिन वे गलत है।

कुछ लोग पिछली शताब्दी की आवश्यकताओं के उपयुक्त, और नई स्थितियाँ और नई आवश्यकताओं के अनुरूप कार्य-सचालन की रूपान्तरित विधियों वाले सहकारी सगठनो के पारस्परिक अन्तर पर बहुत ज्यादा जोर देते है।

वे भी गलत है, या कम-से-कम भूले हुए तो है ही।

तीसरी तरह के भी कुछ लोग है जिनका कहना है कि किसी भी प्रकार का उद्यम यदि अपने को सहकारी कहना चाहे तो उसका वैसा ही वर्गीकरण कर देना चाहिए—लेकिन इसमे मुश्किल यह है कि भिन्न-भिन्न प्रकार के ऐसे अनेक उद्यम है जो यही चाहते है कि उन्हे भी सहकारी समझा जाए।

इसलिए ऐसे लोग तो और भी ज्यादा गलत है।

क्योंकि प्रकार की एक ऐसी बुनियादी विशिष्ठता तो अवश्य है जिसके विद्यमान होने पर ही किसी व्यवसाय, उद्यम अथवा सस्था का स्वरूप सहकारी हो पाता है; अन्यथा मुनाफा करने के इच्छुक किसी भी संगठन मे कितने ही तर्क-वितर्क से सहकारिता के प्राण नही फूंके जा सकते।

यह विशिष्ठता उस उद्यम के प्रयोजन और स्वामित्व के उसके प्रकार

में पायी जाती है और स्वामीत्व का वह प्रकार उसके प्रयोजन से अवश्यम्भावी रूप से मेल खाने वाला होना चाहिए।

यही भिन्न प्रयोजन और स्वामीत्व का यही भिन्न प्रकार तो सहकारी को दूसरे ढग के आर्थिक सगठनों से पृथक् और वैशिष्ठ्य प्रदान करता है।

तो पहली बात यह कि अपने जिन ग्राहको और उपभोक्ताओ की सेवा मे वह रत है उन्हें आर्थिक दृष्टि से व्यावहारिक न्यूनतम असल कीमत पर उनकी आवश्यक वस्तुएँ और सेवाएँ, जिस रूप मे और जिस कोटि की वे चाहे, उपलब्ध करना जिस उद्यम का प्रयोजन हो वही सहकारी है। लेकिन ऐसा तभी हो सकता है जब ग्राहक अथवा सेवाओं के उपभोक्ता ही उस व्यवसाय के स्वामी और एकमात्र स्वामी हों।

जो व्यवसाय, उद्यम या सस्था उन्ही लोगों के अधिकार मे हो जिनको कि सामान सेवा देने का कार्य वह प्रमुख रूप से करती है और जिसके अस्तित्व का प्रयोजन भी उसी जन-समुदाय की किसी-न-किसी आवश्यकता को पूरा करना हो, सही अर्थो मे उसी को सहकारी कहा जा सकता है।

थोडे से विवेचन से ये बात और भी स्पष्ट हो जाएगी। यदि कोई व्यवसाय एक जन-समुदाय के यानी अपने स्टाकधारियो के लाभ के लिए दूसरे जन-समुदाय को यानी अपने ग्राहको को माल या सेवाएँ बेचता है तो वह सहकारी नही है। इसी प्रकार जिस व्यवसाय के संरक्षक अथवा सेवाओ के उपभोक्ता उस व्यवसाय के स्वामी नही है, उसे भी सहकारी नही कहा जा सकता। ऐसे व्यवसाय को सहकारी बनाने के लिए आवश्यक है कि उसके वर्तमान स्टाकधारी अपने सारे हिस्से (स्टाक) उस व्यवसाय के ग्राहको को बेच दे और व्यवसाय का पूरा नियन्त्रण भी 'एक व्यक्ति और एक, केवल एक वोट' के आधार पर उन्ही ग्राहकों को सौप दिया जाए।

इसका यह अभिप्राय तो कदापि नहीं कि हमारे देश की तथाकथित स्वतन्त्र अर्थ-प्रणाली मे व्यवसाय के दूसरे प्रकार के संगठन अच्छे, उपयोगी और आवश्यक नही हैं। न यही कहा जा रहा है कि अमरीकी अर्थ-व्यवस्था मे निकट भविष्य मे सहकारी ढंग के व्यापारी सगठनों के अतिरिक्त अन्य प्रकार के संगठन प्रमुखता प्राप्त करेगे ही नही। उलटे जोर तो इस बात पर है कि

लाभ अभिमुखी निर्धारित अन्य व्यवसायों की कड़ी प्रतियोगिता सहकारियों के हित मे ही है, क्योकि ऐसी स्थिति के न रहने पर सहकारियों का विकास सम्भवतः अवरुद्ध हो जाएगा।

यह सही है कि सभी सहकारी सहकारियों के जैसा ही आचरण नही करते। लेकिन यह बात तो ठीक उसी प्रकार हुई जिस प्रकार कि सभी आदमी हमेशा भले आदमियों की ही तरह आचरण नही करते, या जिस प्रकार मेथोडिस्ट चर्च के सभी अनुयायी अच्छे मेथोडिस्टो के जैसा या ईसाई धर्म के किसी भी फिरके से सम्बद्ध लोग हमेशा अच्छे-भले ईसाइयों-जैसा ही आचरण नही करते।

एक साधारण से उदाहरण से बात और स्पष्ट हो जाएगी। हिस्सा-पूंजी से बनी ज्वाइट-स्टाक बीमा कम्पनियाँ एक तो अपने हिस्सेदारो (स्टाकधारियों) के लिए लाभ अर्जित करने के उद्देश्य से व्यवसाय करती है और दूसरे, उन बीमा कम्पनियों के पालिसीधारी उनके स्वामी नही होते, इसलिए हिस्सा पूँजी से बनी कोई भी पब्लिक या प्राइवेट ज्वाइट-स्टाक बीमा कम्पनी सहकारी पद्धति का व्यावसायिक उद्यम नही है। इसके विपरीत पारस्परिकता के आधार पर बनी बीमा कम्पनियाँ हर दृष्टि से सहकारी सस्थाएँ है,क्योकि एक तो उनका व्यावसायिक उद्देश्य अपने पालिसीधारियों को न्यूनतम असल कीमत पर, जो व्यावहारिक भी हो, बीमा-सुरक्षा उपलब्ध करना होता है दूसरे, इस कोटि की सभी बीमा कम्पनियों का स्वामित्व किसी दूसरे मे नही, उनके पालिसी-धारियों मे ही निहित रहता है। अब यह सर्वथा दूसरी बात है, और इस समय हम यहाँ उस पर विचार भी नही कर रहे है, कि पारस्परिकता के आधार पर बनी बहुत-सी बीमा कम्पनियाँ पारस्परिक अथवा सहकारी सस्थाओ जैसा आचरण नही करती।

तो सहकारी अपनी सेवाओ का उपयोग करने वालो के ही पूरे अधिकार मे उपभोक्ता-स्वामीत्व कृत ग्राहक-स्वामीत्व-कृत सरक्षक-स्वामीत्व-कृत व्यवसाय है। न केवल इतना ही, बल्कि यह भी कि आप कोई भी क्यों न हों यदि थोड़े से समय तक इस व्यवसायों से खरीदते रहें तो अपने-आप इनके स्वामी बन सकते है।

सहकारी वितरण-अभिमुखी, आवश्यकता-अभिमुखी और उपभोक्ता-अभि-

मुखी व्यवसाय हैं। प्रायः यह कहते सुना जाता है कि 'उपभोक्ता-अभिमुखता' मे तो दूसरे ही व्यवसाय सहकारियो से बाजी मार ले जाते है। वे अपने उपभोक्ताओ से तरह-तरह की अपीले करते है और उन्हे बडे जोर-शोर से एव विस्तारपूर्वक यह बतलाते है कि नये उत्पादनो की शोध-खोज और विकास पर उनके द्वारा कितने लाख खर्च किया जाता है। यह सब एक अंश तक सच है। और यह भी सच है कि सहकारी सस्थाओं को नये उत्पादको की शोध-खोज पर जितना वे अभी खर्च कर रही है उससे कही अधिक करना चाहिए; और यदि उनके पास रुपया हुआ तो वे करेगी ही। लेकिन इस तर्क की सबसे बड़ी कमजोरी यह है कि दूसरे व्यवसाय उपभोक्ताओ के प्रति अपने प्रेम का प्रदर्शन तो खूब करते है, यहाँ तक कि इस काम को प्रायः सनसनीखेज और कभी-कभी तो वीभत्स भी बना डालते हैं, लेकिन नितान्त आवश्यक हो जाने के अतिरिक्त कीमतो को कभी कम नही करते; और यह तो कभी कहते ही नही कि सारा असल लाभ ग्राहकों की सम्पत्ति है जो वर्ष के अन्त मे उन्हे चुकाया ही जाना चाहिए।

सहकारी ये दोनो ही काम करते है।

वे इससे भी ज्यादा करते है। वस्तुओ और सेवाओ का उनका समस्त उत्पादन और वितरण उनके सरक्षको की आवश्यकता और मॉग के अनुसार ही होता है। लेकिन दूसरे व्यवसाय पहले स्वय तय कर लेते है कि उन्हे किस चीज का उत्पादन करना है और कीमत भी तय करली जाती है और तब उपभोक्ताओ को खरीदने के लिए प्रवृत्त किये जा सकने के अनुसार ही उनका उत्पादन होता है।

सहकारी वास्तव मे उपभोक्ता-अभिमुखी व्यवसाय है। वे उपभोक्ता-निर्देशित वस्तुओं और सेवाओ का ही उत्पादन और वितरण करते है। और यही बुनियादी बात सहकारी को 'नये युग के अनुरूप नये प्रकार का व्यवसाय' बनाता है, जिस पर आगे और भी विस्तार से चर्चा की जाएगी।

अधिकाश सहकारी सस्थाओं के सम्बन्ध मे और कारण भी है; क्योंकि अधिकांश सहकारियों के स्वरूप, सिद्धान्तों और कार्यविधियों की ज्यादा ठीक तरह से परिभाषाएँ की जा सकती हैं। लेकिन वे सब गौण और हैं अभी तक

जिन अन्तर्निहित मौलिक विशेषताओं पर विचार किया गया है उन्हीं का अनुसरण करने वाली और उन्हों पर निर्भर है।

१९२० के बाद की दशाब्दी के प्रारम्भिक वर्षों मे किसानों को, विशेष रूप से कुछ मध्यवर्ती पश्चिमी राज्यों मे, आवश्यक मात्रा मे, उपयुक्त मूल्य पर सन्तोषजनक कोटि के उर्वरक प्राप्त करने मे कठिनाई होने लगी। जो उर्वरक वे खरीदते थे उनकी किस्म के सम्बन्ध मे सामान्यत उन्हे 'विश्वास पर ही निर्भर करना पडता था। ग्राहकों को उर्वरक का कोई विश्लेषण या सूत्र भी नही दिया जाता था।

तब उनमे से कुछ किसानो ने नया व्यवसाय—अपना ही सहकारी व्यवसाय आरम्भ करने का निश्चय किया। शुरू-शुरू मे काम करने का ढग बडा ही सरल और सीधा-सादा था। सबका रुपया जमा करके जहाँ भी अच्छे भावों पर मिल जाता वहीं से वे सब के लिए एक साथ उर्वरक खरीदने लगे। इस सीधे-सादे ढग से ही उन्हें उर्वरक १० प्रतिशत सस्ता पडने लगा। लेकिन थोडे ही दिनों मे उन किसानों को उपयुक्त मूल्य पर विश्लेषण युक्त उर्वरक आवश्यक मात्रा मे प्राप्त होने मे कठिनाई होने लगी। तब स्थानीय 'कृषि आपूर्ति' सहकारी सस्थाएँ उर्वरक-उत्पादन की अपनी निजी सुविधाएँ जुटाने लगीं। इसके लिए सबसे पहले किसानों का अपने इन सहकारी उद्यमों मे पैसा लगाने को तैयार होना आवश्यक था। पूँजी निवेश के लिए निर्धारित राशि के हिस्से निकाले गए और प्रति किसान कम-से-कम एक हिस्से के हिसाब से किसान सहकारी के सदस्य बन गए। इस प्रकार किसानों के धन ने उन्हीं किसानो के हाथ बेचने के लिए उर्वरक का उत्पादन करने वाले कारखानों का निर्माण किया। ये कारखाने बहुत ही बढ़िया उर्वरक बनाने लगे, और क्यों न बनाते, जब कि वह स्वय उन्हीं के उपयोग के लिए होता था। उर्वरक-उत्पादन व्यवसाय मे इन सहकारियों के प्रवेश का परिणाम यह हुआ कि खुले सूत्र वाले उच्च विश्लेषण युक्त उर्वरक का उत्पादन खूब बढ गया। अब तो इस व्यवसाय मे इस तरह का खुले सूत्र वाला उच्चकोटि का उर्वरक बहुत सामान्य बात हो गई है।

तो सहकारी लोगों का ऐसा समुदाय है जो एक-जैसी आवश्यकता से

प्रेरित होकर यह निर्णय करते है कि उस आवश्यकता की पूर्ति का सर्वश्रेष्ठ या एकमात्र उपाय ऐसे नये व्यवसाय का सगठन है जो सीधे उस आवश्यकता को पूरा करे। निवेश पूँजी जमा करने के लिए स्वेच्छा से सम्मिलित होकर वे इस काम को करते और यों अपने उद्यम के स्वामी, नियन्त्रणकर्ता और सरक्षक बनते है।

सहकारी के स्वामी और संरक्षक बनने के कार्य मे जितने ही अधिक लोग हिस्सा लेगे उन सब की हालत भी उतनी ही अच्छा होगी। एक सहकारी उर्वरक व्यवसाय को आरम्भ करने वाले किसान यदि उस उद्यम के स्वामीत्व और सरक्षण के लिए दुगुने सदस्य बना सके तो व्यापार तो दुगुना होगा ही लाभ भी सभी को होगा। इसीलिए तो सहकारी सगठन वर्ग, पन्थ, वर्ग और आस्था-विश्वासो के भेदभाव के बिना सभी को अपना सदस्य बनाते हैं। सहकारिता का यही पहला सिद्धान्त है। पन्थगत धार्मिक और पक्षगत राजनैतिक विवादों से अपने-आप को पूरी तरह अलग रखकर सहकारी सगठन इस सिद्धान्त की रक्षा ही नही करते, बल भी पहुँचाते है।

सहकारी सगठनो का अस्तित्व निवेश पूँजी पर ऊँचे प्रतिलाभ उपार्जित करने के लिए नही, बल्कि अपना निर्माण करने वाले लोगो की आवश्यकताओ की पूर्ति के ही लिए होता है। इसी से सहकारिता के अगले दो सिद्धान्तो अर्थात् सिद्धान्त दो और तीन की अनिवार्य निष्पत्ति होती है। वे है . एक सदस्य के पास हिस्से कितने ही क्यो न हो उसके द्वारा एक और केवल एक ही मत दिये जाने का सिद्धान्त, और निवेश पूँजी पर सीमित प्रति लाभ का सिद्धान्त जो प्रतिवर्ष ५ प्रतिशत से क्वचित् ही अधिक होता है।

अपना उर्वरक अपने को ही बेच कर किसान अथवा अपना किराना अपने को ही बेच कर उपभोक्ता मुनाफा कमाने की कोशिश करे यह एक ऐसी बात है जो न किसान की समझ मे आ सकती है और न उपभोक्ता को ही। इसलिए चौथे सिद्धान्त मे 'सरक्षण-धन वापसी' का प्रावधान किया गया। इस युक्ति के द्वारा सहकारी अपने सदस्यों और सम्क्षको को लागत मूल्य पर माल और सेवाएँ प्रदान करने के अपने प्रयोजन की सिद्धि करते हैं। लेखा-अवधि के अन्त मे, व्यवसाय की सारी लागत चुका कर, आवश्यक अथवा

प्राप्त आरक्षित निधियाँ जमा करके और शिक्षा तथा कल्याण कार्यों के लिए धनराशियाँ निकाल कर जो निधि बचती है वही 'शुद्ध बचत' है। सामान्य व्यवसाय मे इसको शुद्ध लाभ कहते है जो स्टाकधारियों को उनके निवेशों के अनुपात मे वितरित कर दिया जाता है लेकिन सहकारी सगटन तो लाभार्जन के लिए होते नही है, न अपने लिए और न अपने स्टाकधारियो के ही लिए, इसलिए यह सारी शुद्ध बचत उनके सरक्षकों मे संरक्षण के अनुपात से वितरित कर दी जानी चाहिए। इसका अर्थ यह हुआ कि प्रत्येक संरक्षक को कुल क्रय मे उसके क्रय का जितना अनुपात होता है मूल बचत का उतना ही प्रतिशत मिल जाता है। 'सरक्षण धन-वापसी' का यह विचार मूलतः उन पुरोगामियों की अद्भुत देन है जो इग्लैण्ड के रोशडेल नामक स्थान के निवासी थे और जिन्होने १८४४ मे टोडलेन मे अपना छोटा-सा भण्डार खोलकर इस विचार को कार्यान्वित किया था। इग्लैण्ड के महान उदारवादी प्रधान मत्री विलियम ई० ग्लैडस्टन ने 'उन्नीसवी सदी का महान आर्थिक आविष्कार' कह कर इसकी प्रशसा की है।

यह तो हुई बुनियादी सिद्धान्तो की बात। व्यावसायिक प्रतिष्ठान मे इन बुनियादी सिद्धान्तों का विनियोग ही सहकारियो को जुदे प्रयोजनो एवं जुदी परिस्थितियाँ मे सगठित व्यवसायो से पृथक् करता है।

सहकारियों की कराधान स्थिति भी इन्ही बुनियादी सिद्धान्तों से निरूपित होती है। जिस तरह वे कर चुकाते है उसका कारण यह नही है कि उन्हें कोई विशेष सुविधाएँ प्राप्त है, अथवा उनके लिए विशेष प्रकार के कर-सम्बन्धी नियम बने हुए है, उसका सीधा-सा कारण यही है कि उन्हें एक खास ढंग से अपना व्यवसाय करना पडता है।

सहकारी सगठन बिलकुल थोडे-से और अत्यन्त ही महत्त्वहीन अपवादो के साथ बिलकुल उन्ही सधे-बँधे कर-कानूनो के अन्तर्गत वे सारे ही कर चुकाते हैं जो उनके प्रतियोगी व्यावसायिक सगठनों द्वारा चुकाये जाते है। कई देहाती क्षेत्रों मे तो सहकारी व्यवसाय ही अपने कस्बे का सबसे बडा करदाता होता है। सभी सहकारी सगठन पाठशाला-कर, उत्पादन-कर, समाज-सुरक्षा कर, सम्पत्ति-कर और दूसरे सभी प्रकार के कर ठीक उसी तरह चुकाते हैं

जिस तरह उनके प्रतियोगी चुकाते है।

मुनाफा करने का उद्देश्य न होते हुए भी कुछ सहकारियो को तो मुनाफा होता ही है और यदि होता है तो उसके एक-एक सेंट पर पूरा-का-पूरा सघीय आय कर चुकाते है। लेकिन न्यायालयो ने लगातार उचित ही निर्णय दिय है कि सहकारी या दूसरा कोई भी व्यवसाय अपने सरक्षको को 'सरक्षण धन वापसी' के लिए बचनबद्ध हो और इस तरह की अदायगियाँ करे तो उसे उस व्यवसाय की आय नही समझा जाना चाहिए, वास्तव मे वह सरक्षक की सम्पत्ति है और उसी से उसका कर वसूला जाना चाहिए, जैसा कि किसी भी करदाता से उसकी कर-योग्य सम्पत्ति पर लिया जाता है।

. इसका कारण एकदम स्पष्ट है। देयता (देनदारियाँ) आस्तियाँ (परि-सम्पत्ति) नही है। जिस धन के लिए व्यवसाय किसी का ऋणि हो वह देयता उस व्यवसाय की कर-योग्य आय नही हो सकती। वह बुनियादी तरीका तो हम देख ही आये है कि जिसके द्वारा सहकारी अपने सदस्यो और अधिकतर मामलो मे अपने सभी सरक्षको के लिए निर्लाभ ढग से काम कर पाते है। वह तरीका है उस निधि को जो दूसरे व्यवसायो मे सदस्यो और सरक्षको के लिए लाभ है, सहकारियो द्वारा अपने सरक्षको को उनके सरक्षण अनुपात के अनुसार सरक्षण-धन वापसी के रूप मे लौटाने के लिए बचनबद्ध होना। ये दायित्व सहकारी व्यवसायों के लिए बन्धनकारी देनदारियाँ है। इन दायित्वो से विमुख होकर न तो उनका रूप सहकारियो का रह जाता है और न वे सहकारी कहलाने की योग्यता ही रख सकते है। यदि सहकारी दूसरे व्यव-सायों की अपेक्षा कम आयकर देते है तो इसका कारण केवल यही है कि उनकी कर-योग्य आय ही कम होती है। और कर-योग्य आय के व्यय होने का कारण यह है कि उस आय का काफी बड़ा हिस्सा सहकारियो का नही उसके सरक्षको का होता है। वास्तव मे वह सरक्षक की आय है, जिसका वह जो चाहे करे। उस धन के निर्वर्तन का अधिकार सहकारी को नही है। इसीलिए वह धन सहकारी की आय नही हो सकता।

यह तो कोई भी नहीं कहेगा कि घाटा देने वाले व्यवसाय को उस लाभ पर भी आय कर देना चाहिए जिसे वह कर सकता था, लेकिन किया

नही। न कोई यही सुझाव देगा कि सहकारी व्यवसायों को, जिन्हे उनके स्वामी विमर्शपूर्वक ही निलोभ आधार पर चलाने का निश्चय करते है, इस निर्णय के लिए दण्ड दिया जाना चाहिए। सहकारियो से सरक्षण धन वापसी पर आय कर लेना ठीक इसी प्रकार का दण्ड होगा। यह तो अमर्यादित नागरिक के बिना लाभ बनाये व्यवसाय करने के अधिकार पर करारोपण होगा! कोई भी राष्ट्र जो सही अर्थो मे स्वतन्त्र हो इस तरह का कर बर्दाश्त नहीं कर सकता।

यदि सरक्षण धन वापसी पर यो दण्ड-शुल्क देना पडे तो मानी हुई बात है कि सहकारी उनसे बचने का उपाय भी कर ही सकते है। उनका व्यावसायिक अस्तित्व ही होता है अपने सदस्यो को लाभ पहुँचाने के लिए, न कि अपना निज का लाभ करने के लिए, इसलिए वे निस्सन्देह लागत मूल्य पर बिक्री करने का प्रयत्न करके सरक्षण धन वापसी की अदायगियो से बच सकते है। लेकिन ऐसा करने पर तो उनके विशिष्ट सहकारी स्वरूप का ही अन्त हो जाएगा।

इसलिए सहकारिता के सभी, और सरक्षण धन वापसी वाला चौथा तो विशेष रूप मे मूलभूत सिद्धान्त है।

कुछ नियम भी है जिनका पालन करने की सहकारियो मे अपेक्षा की जाती है और अधिकाश उनका पालन करते भी है। पहला नियम है नकद व्यवहार। अपने ग्राहको का पैसा बचाने वाले किसी भी व्यवसाय के लिए यह नियम बहुत जरूरी है, क्योकि उधार का कारबार बड़ा महँगा सौदा है। हमारे देश मे ऐसे बहुत-से सहकारी सगठन भरे पड़े है जो नकद व्यवहार की नीति के पास भी नही फटकते। और कुछ धन्धे तो ऐसे भी है जिनमे प्रतियोगियो द्वारा उधार देने की व्यवस्था के कारण सहकारियो को भी यह व्यवस्था चालू करनी पड़ी है। लेकिन नकद का व्यवहार ही एक ऐसा नियम है जिसको अपना कर सहकारी व्यवसाय अपने सरक्षको के लिए ज्यादा-से-ज्यादा बचत कर सकते है और उन्हे ज्यादा-से-ज्यादा फायदा पहुँचा सकते है।

दूसरा नियम है सहकारियो का एक विचारपूर्ण नीति अपना कर सामान्यतः अपने माल और सेवाओं को बाजार भाव पर बेचना और जो भी

अतिरिक्त आय हो उसे संरक्षण धन वापसी के द्वारा लौटा देना। यदि सहकारी शुरू से ही अनुमानित लागत मूल्य पर बेचने का प्रयत्न करे तो उन्हे आरम्भिक वर्षों मे ही बन्द हो जाना पडे। क्योकि लागत मूल्य का अनुमान गलत हो सकता है और तब उन्हे कारबार मे बुरी तरह घाटा होने लगेगा। इसलिए लागत मालूम हो जाने पर ही सदस्यो को लागत मूल्य पर व्यावसायिक लाभ पहुँचाना अच्छा होता है, न कि पहले।

तीसरा नियम है स्वस्थ ढग से अपना विस्तार करते जाना; क्योंकि तभी सहकारियो के सफल होने की आशा की जा सकती है। 'विस्तारित न होना' सहकारियों के लिए, जो आवश्यक रूप से अपने सदस्यों की दिलचस्पी और निष्ठा पर निर्भर करते है, दूसरे सामान्य व्यवसायों की अपेक्षा कही अधिक खतरनाक है और इसी पर चल कर अधिकांश सफल सहकारियो का निर्माण हुआ है।

चौथा नियम है निरन्तर शिक्षा, जो लम्बे अनुभव के उपरान्त सहकारियों की व्यावसायिक सफलता के लिए अपरिहार्य सिद्ध हुई है। जब तक सदस्य और सामान्य जनता दोनो ही सहकारियो की कार्य प्रणाली को नही समझते और उनका उचित ढग से सही-सही मूल्याकन नही कर पाते उलझने अवश्यम्भावी है और उस समय तो और भी अधिक जब कि बचत बहुत कम हो रही हो।

तो ये है **सहकारिता के सिद्धान्त** :

१. खुली सदस्यता।

२. जनवादी नियन्त्रण—प्रत्येक सदस्य-स्वामी को केवल एक मत देने का अधिकार, हिस्से उसके पास कितने ही क्यो न हों।

३ निवेश पूंजी पर सीमित प्रतिफल।

४. सम्पूर्ण वास्तविक बचत का संरक्षण के अनुपात से वितरण।

और ये है **सहकारिता के नियम** :

१. यथा सम्भव नकद व्यापार।

२. चालू बाजार भाव पर बिक्री।

३. सतत विस्तार।

४. निरन्तर शिक्षा।

इन सिद्धान्तो और नियमो पर चलते हुए कई देशो मे सौ वर्षो से भी अधिक समय से सहकारी संगठन कारबार कर रहे है।

तो फिर हम सहकारियो को 'नये युग के अनुरूप नये ढग का व्यवसाय' क्यो कहते है ? कुछ तो इसलिए कि अमरीका अभी तक सहकारियो को सही-सही पहचान' नही पाया है। कम-से-कम नगरवासी अमरीका ने तो इन्हे नही ही समझा है। और कुछ इसलिए भी कि आज के हमारे श्रेष्ठतम सहकारी व्यवसाय मन्दी के जमाने के अपने परवर्ती सहकारियो से नितान्त भिन्न प्रकार के उद्यम है।

लेकिन इस अध्याय का यह शीर्षक रखने का मुख्य कारण है हमारे देश की अर्थ व्यवस्था मे कुछ ऐसी चिन्तनीय प्रवृत्तियो का होना जिनकी ओर बहुत ही कम ध्यान जा पाया है। सहकारी व्यवसायो के सगठन का कारण भी उन्ही मे की कुछ प्रवृत्तियाँ है। और इसलिए भी कि हमारे कुशल-क्षेम और हमारी स्वतन्त्रता पर सकट बन कर छाई हुई उन प्रवृत्तियो के विरुद्ध स्वैच्छिक स्वतन्त्र उद्यम' के ढग की प्रतीकारात्मक और सशोधक शक्ति के रूप मे सहकारियो की आज आवश्यकता है।

३ | जनता का स्वास्थ्य

बीमार पडोसी की सुश्रूषा कर उसे स्वस्थ करना मानव-इतिहास के सभी युगों में और सर्वत्र एक मौलिक सद्गुण और बड़े परोपकार का कार्य माना जाता रहा है। ऐसे कृत्यों से ही स्नेहपूर्ण मानवी सम्बन्धों की उत्पत्ति हुई और नये स्थानों में सच्ची बिरादरी के विकास का शुभारम्भ। आज भी इन कृत्यों का यही परिणाम होता है। लेकिन अब तो आधुनिक अमरीका और अन्य विकसित देशों के देहातों में भी, इस तरह की बातें बहुत कम देखने को मिलती हैं, और हमारे बडे नगरों में तो शायद ही कभी।

इस परिवर्तन के कई कारण हैं और वे सब बुरे भी नहीं हैं। मुख्य कारण तो यही है कि आधुनिक चिकित्सा-विज्ञान रोगियों को अच्छा करने की दिशा में चमत्कार कर दिखाता है, जो कि सामान्य व्यक्ति नहीं कर सकता।

आज से पचास वर्ष पहले रोगी डाक्टर के पास बिलकुल ही नहीं जाता या चला भी जाता तो दोनों ही स्थितियों में उसके रोग-मुक्त होने की सम्भावनाएँ प्राय एक-जैसी ही होती थी। क्योंकि बीमार को अच्छा करने की तरकीबें किसी अच्छे डाक्टर को भी लगभग उतनी ही मालूम होती थीं जितनी किसी और को।

आज ये दोनों ही बातें नहीं रहीं। आज तो बीमार होने पर उसी रोग का विशेषज्ञ निपुण डाक्टर यदि मिल सके तो उसके पास जाने और न जाने में जीवित रहने और मरने तक का अन्तर हो सकता है।

आधुनिक चिकित्सक अच्छी दशाओं में चिकित्सा और सुश्रूषा का पूरा-पूरा अवसर मिलने पर न केवल किसी भी रोग को अच्छा कर सकते हैं, बल्कि लोगों को निरोग और स्वस्थ भी बनाये रख सकते हैं।

हमारे आधुनिक समाज में बीमारी के समय पड़ोसी की प्रायः निरर्थक-सी सहायता के स्थान पर जहाँ भी सम्भव होता है निपुण डाक्टरों, परिचारिकाओं

ओर दूसरे-दूसरे पेशेवर तकनीशियनो को बुलाया जाता है, और इसमे आश्चर्य की कोई बात भी नही है।

सामाजिकदृष्टि से हमने कुछ मूल्यवान खोया अवश्य है, लेकिन शारीरिक दृष्टि मे जीवन और स्वास्थ्य की अपेक्षाओ के रूप मे हमने काफी कुछ प्राप्त भी किया है।

यदि चिकित्सक, परिचारिकाएँ, जन-स्वास्थ्य कार्यताओ और चिकित्सकों तथा परिचारिकाओं के काम मे हाथ बँटाने और उनके कार्यो की अनुपूर्ति करने वाले छोटे और वडे सब तरह के तकनीकी कौशलो मे दक्ष नाना विधि लोग काफी सख्या मे हो, और यदि जनता इन सारी सेवाओ के लिए पैसा दे सके तो हमारे राष्ट्र का स्वास्थ्य इतना अच्छा और उन्नत हो सकता है जिसकी हम स्वप्न मे भी कल्पना नही कर सकते।

लेकिन दुर्भाग्य से अभी इनमे से एक भी बात नही है।

१९०० से १९५० के बीच की अवधि मे अमरीका में डाक्टरो की संख्या मे केवल ५८ प्रतिशत वृद्धि हुई जब कि जनसख्या मे १००प्रतिशत वृद्धि होती रही। और अब भी यही हाल है। यह सही है कि पेशेवर परिचारिकाओ, ओषध-कारको और अन्यान्य स्वास्थ्य कार्यकर्ताओ की सख्या मे अधिक तेजी से वृद्धि हुई है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि प्रत्येक डाक्टर के समय का ज्यादा अच्छा उपयोग होने लगा है। लेकिन ज्यादा अच्छे ढग का स्वास्थ्य-परिचर्या सेवा की जितनी माँग और मानवोचित आवश्यकता है उसकी पूर्ति तो बहुत ही कम हो पाती है। और इसलिए ज्यादा-से-ज्यादा लोगों को परिचर्या-सेवा करने की सक्षमता प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित किया जा सके ऐसे विधि-विधानों पर काग्रेस मे विचार होता रहता है।

डाक्टरो की कमी का एक कारण तो यह है कि लाखो परिवार इतने समर्थ नही है कि आधुनिक चिकित्सा परिचर्या का मूल्य और विशेष रूप से आपत्-सेवा-शुल्क दे सके। उदाहरण के लिए बहुत देहाती क्षेत्रों मे डाक्टरो की कमी है, क्योंकि ऐसा प्रतीत नही होता कि वहाँ जाकर बसने वाला डाक्टर अच्छी कमाई कर सके। औसत रूप से अमरीकी परिवार चिकित्सा और स्वास्थ्य परिचर्या पर अपनी वार्षिक आय का लगभग ५ प्रतिशत व्यय करते

है। लेकिन एक तो इस धन का अधिकाश बडी बेतरतीबी से खर्च किया जाता है और दूसरे लाखो परिवार निम्न आय वाले है इसलिए हमारा राष्ट्रीय स्वास्थ्य मध्यम कोटि से ज्यादा अच्छा नही हो पाता।

इस स्थिति मे सुधार करना अनेक कारणो से आवश्यक हो गया है।

एक कारण तो सीधे उन जबर्दस्त परिवर्तनो से सम्बन्धित है जो अमरीकी जनता के रोजगार के रूपो मे होते जा रहे है। इतिहास मे सम्भवतः पहली ही बार हमे बडे पैमाने के उत्पादन उद्योगो मे तेजी बढ़ती हुई और व्यापक औद्योगिकीय बेकारी की स्थिति और समस्या का सामना करना पड़ रहा है। यह स्थिति असन्दिग्ध रूप मे हमारी अर्थ-व्यवस्था के उन सभी विभागो मे पाई जाती है जो सेवाओ के विपरीत माल (वस्तुओ) का उत्पादन करते है।

इस सम्बन्ध मे थोड़े से ही उदाहरण काफी होगे।

देश का प्रत्येक बड़ा वायुमार्ग अपने विमान-चालको की संख्या मे निरन्तर कमी करता जा रहा है। कारण यह है कि विशाल जेट विमान दुगुने यात्रियो को आधे समय मे एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचा देते है इसका अर्थ हुआ विमान-चालको के उड्डयन घण्टो का सिर्फ एक चौथाई रह जाना, क्योंकि बढे हुए यातायात के लिए कोई भत्ता नही दिया जाता।

मोटर (आटोमोबाइल) मजदूर सघ की सदस्यता कुछ ही वर्ष पहले १५ लाख के लगभग थी। इस सघ की भावी योजनाएँ इस धारणा पर आधारित है कि मोटर उद्योग मे लगे कर्मचारियो की सख्या आगे कभी भी १० लाख से अधिक नही होगी।

अमरीका मे कपड़ा उद्योग मे लगे श्रमिकों की सख्या १९४७ मे ११,४६,३००; १९५४ मे ९,४७,००० और १९५८ के मार्च महीने मे ८,२०,००० थी। यह निन्तर घटती ही जा रही है।

अगर हमारे आर्थिक विकास की गति को मन्द कर दिया जाए तो हमे बहुत बड़े पैमाने पर औद्योगिकीय बेकारी का सामना करना पड़ेगा। वास्तव मे तो जब तक इस गति को तेज नही किया जाता यह समस्या अधिकाधिक गम्भीर ही होती चली जाएगी।

इसके अतिरिक्त उन बेकार मजदूरों की काफी बड़ी सख्याको उप-

भोक्ताओं को बेचे जाने वाले माल का अधिक उत्पादन करने के काम पर लगाने की सम्भावनाएँ तो प्रायः निराशा जनक ही हैं। जब तक हम इस न्याय सगत बात को जल्दी-से-जल्दी नही सीख लेते कि हमारे बच्चे बगैर भीड़-भाड़ वाली कक्षाओ मे उचित वेतन पाने वाले ऐसे शिक्षकों से, जो कार्याधिक्य से क्लान्त नही हो जाते, अच्छी शिक्षा पाने के अधिकारी हैं, जब तक हम यह नही सोचने लगते कि गन्दी बस्तियों का उन्मूलन और नगरो का पुर्नविकास लगभग उतना ही महत्वपूर्ण है जितना कि देश के चौथाई भाग को कक्रीट की पक्की सड़कों से पाटना; जब तक हम स्वास्थ्य-सेवाओं के विस्तार की ओर तत्काल ध्यान नही देने लगते और जब तक हम इस बात को नही समझ लेते कि अब आगे से सबको यथा सम्भव पूरा काम या नौकरी देना केवल जन-कल्याणकारी सेवाओं से सीधे रूप से सम्बन्धित क्षेत्रों के तेज विकास पर ही निर्भर करता है, हम अपने-आप को बराबर कठिनाइयों के जजाल मे फँसा पाएँगे।

कोई भी महान् सभ्यता भौतिक साधनों और तुष्टियो के उपभोग की सीमातीत वृद्धि पर ही कभी निर्मित नही की जा सकी है। हमारा देश अपवाद नही हो सकता।

नौकरी या काम देने के अवसर का अमरीकी जनता के स्वास्थ्य-मान का अभिवृद्धि और स्वास्थ्य सेवाओ के क्षेत्र मे विस्तार करने से अधिक युक्तियुक्त और व्यापक रूप से मान्य दूसरा कोई उपाय सोचा भी क्या जा सकता है? यह तो सच है कि वस्त्रोद्योग के सभी विस्थापित श्रमिक डाक्टर नही बन सकते। लेकिन १९०० में जहाँ प्रत्येक पाँच पेशेवर स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं मे तीन डाक्टर होते थे, १९५० मे अपने पडोसियों के स्वास्थ्य को उन्नत करने के कार्य मे लगे प्रति पाँच व्यक्तियो मे केवल एक ही डाक्टर होता था। वास्तव मे लोगों के स्वास्थ्य को बनाये रखने और उन्नत करने वाला व्यवसाय ही एकमात्र ऐसा व्यवसाय है जिसमे उच्चकोटि की प्रवीणता प्राप्त डाक्टर से लेकर निपट अकुशल अर्दली तक सभी तरह के लोगों को काम पर लगाया जाता है।

स्वास्थ्य-सेवाओं को विस्तारित और स्वास्थ्य मानो को उन्नत करने का कम-से-कम एक उपाय तो यह हो ही सकता है कि जिस अमूल्य सामाजिक हेतु से अनु-

प्राणित होकर किसी जमाने मे पुरोगामी महिला पड़ोसी की झोपडी मे उसके बीमार बच्चे की सुश्रूषा के लिए जाया करती थी उस अभिप्रेरणा का इस जमाने मे आधुनिक ढग से उपयोग किया जाए। इससे अवश्य ऐसी तरकीबे समझ मे आ सकती है जिनको अपनाने से अमरीकी जनता द्वारा आज चिकित्सा परिचर्या पर जितना व्यय किया जाता है उतनी ही धनराशि मे ज्यादा सक्षम सेवाएँ और अधिक उत्तम कोटि की सुरक्षा प्राप्त की जा सकती है।

और जो एक-एक परिवार के लिए अकेले-अकेले सम्भव नही उसे परिवारों के समूह सहकारिता के लिए राजी होकर कर सकते है और वास्तव मे इस दिशा मे काफी अच्छा कार्य कर भी रहे है।

लेकिन इसके लिए सबसे पहले रोगी और निरोग दोनों ही तरह के परिवारों को अपनी वर्तमान और भावी आवश्यकताओ का तथा अपनी मासिक आय के एक अंश का निकाय करने का फैसला करना होगा।

जब लोग किसी सामूहिक स्वास्थ्य योजना के सदस्य बनते या उसमे सम्मिलित होते है तो बिलकुल यही करते है। इस तरह की कुछ योजनाओं को सहकारी योजनाओं के नाम से पुकारा जाता है, जो सर्वथा उचित ही है; कुछ सामुदायिक योजनाएँ कहलाती है; कुछ श्रमिक स्वास्थ्य योजनाओ के नाम से जानी जाती है। नाम जो भी हो, सभी मे कुछ मूलभूत विशेषताएँ तो अवश्य एक-जैसी है। और स्वास्थ्य के लिए निर्धारित धनराशि का ये सभी योजनाएँ निश्चित ही सदुपयोग करती है।

चीन के गाँवों के सम्बन्ध मे एक कहानी कही जाती है कि वहाँ के लोगो ने एक बार यह नियम बनाया कि यदि साल-भर परिवार के सदस्यो का स्वास्थ्य अच्छा रहा तो गाँव के चिकित्सक को हर परिवार की ओर से एक निर्धारित रकम दी जाएगी। लेकिन यदि परिवार मे कोई बीमार हो जाता तो डाक्टर का पारिश्रमिक उसी अनुपात से कम कर दिया जाता था। लोगो को स्वस्थ बनाये रखने के लिए डाक्टर को पुरस्कृत करना ही इसमें मुख्य बात थी।

यह कहानी सच है या झूठ, इससे हमे कोई मतलब नही; लेकिन इसमे रोग को अच्छा करने के व्यवसाय और निरोग बनाये रखने की योजनाओ के मूलभूत अन्तर पर काफी अच्छा प्रकाश पड़ता है।

यह अध्याय स्वास्थ्य को बनाये रख और उसमे उन्नति करने की योजनाओं के सम्बन्ध में है। इस अध्याय मे यह भी बताया गया है कि जन-समुदाय इस दिशा मे स्वत-प्रेरणा से क्या कर सकत है। यह अध्याय कुछ ऐसी उपयुक्त विधियों के प्रयोग के सम्बन्ध मे है जिन्हे अपना कर अधिकाधिक लोग आधुनिक ढग की सर्वोत्तम स्वास्थ्य परिचर्या को निश्चित रूप से प्राप्त कर सकते हैं। यह अध्याय अमरीका के सहकारी स्वास्थ्य आन्दोलन के बारे में भी है। अमरीका मे इस आन्दोलन को आमतौर पर सामूहिक स्वास्थ्य आन्दोलन कहते है। यहाँ के समस्त विधि-विधानो मे 'सामूहिक स्वास्थ्य' यह ही प्रयुक्त होता है और इस कार्य मे सलग्न अधिकाश सगठन भी इसी पद का प्रयोग करते है। 'सामूहिक स्वास्थ्य' जिसका शब्दार्थ और भावार्थ दोनो ही वैयक्तिक स्वास्थ्य से उसके अन्तर को व्यक्त करते है।

लेकिन चूँकि यह पुस्तक आधुनिक जीवन मे सहकारिता के मूल्यो के सम्बन्ध मे है इसलिए हम इस आन्दोलन को 'सहकारी स्वास्थ्य आन्दोलन' ही कहेगे; और हमारा ऐसा कहना यथार्थ भी होगा। क्योंकि उत्कृष्ट कोटि का यह सम्पूर्ण उपक्रम मूल रूप से लोगों के एक समूह के इस निर्णय पर निर्भर करता है कि पूरे समूह को महँगी बीमारी के आर्थिक दुष्परिणामो से बचाने के साथ ही सभी के स्वास्थ्य-स्तर को समुन्नत करने के लिए वे सब मिल-जुलकर सहकारिता से काम करेंगे।

इस मूलभूत निर्णय के पश्चात् ही इन सहकारी समूहों को सब तरह के सम्बद्ध प्रश्नों का स्वय निपटारा करने का अवसर प्राप्त होता है। वे प्रश्न है : दवाइयों और नुस्खों का हम कितनी कीमत दें; क्या अपने लिए दन्त-परिचर्या का प्रावधान हमारी भी करे; हमारे खयाल मे डाक्टरो का कौन सा समूह बहुत बढिया और पूरी लगन से सेवा कर सकता है; इस बात का निश्चय कैसे किया जाए कि वे डाक्टर अच्छी-से-अच्छी दवाओं का ही अच्छी-से-अच्छी दशाओ मे प्रयोग करे और आर्थिक दृष्टि से उनके व्यावहारिक परिणाम भी बहुत ही अच्छे निकले; बूढ़ों की स्वास्थ्य-समस्याओं के बारे मे क्या किया जा सकता है; हमें प्रतिमास कितना धन देना चाहिए कि अपेक्षित स्वास्थ्य-परिचर्या निश्चित रूप से उपलब्ध होती रहे और हमारी योजना आर्थिक दृष्टि से सुदृढ़ बनी रहे, दिवालिया न हो जाए। फिर यह प्रश्न भी है कि क्या हम अपना निजी अस्पताल बनाएँ,

सामुदायिक अस्पतालो के साथ प्रबन्ध कर ले या अपने सदस्यो का ब्लूक्रास बीमा करवा दे ?

सहकारी स्वास्थ्य योजनाएँ जन-समूहों को अपने पारिवारिक स्वास्थ्य से सम्बद्ध अनेक महत्त्वपूर्ण प्रश्नो का स्वय निर्णय करने की सम्भावनाएँ प्रदान करती है जो जनता और जन-स्वास्थ्य दोनो के ही हित मे अच्छी बात है।

अब प्रश्न उठते हैं कि यह आन्दोलन कब और कहाँ आरम्भ हुआ, दूसरा फैलाव कितना है, इसने कौन-से रुप ग्रहण किये और इसका भविष्य क्या है ?

इसके आरम्भ की निश्चित तिथि बताना तो मुश्किल ही है। सम्भवतः बेंजामिन फ्रैंकलिन ने १७५२ मे अमरीका मे पहली पारस्परिक अग्नि बीमा कम्पनी संगठित कर उसके पालिसीधारियों को आग से अपने स्वास्थ्य का बचाव करने के लिए मिल-जुलकर काम करने को प्रोत्साहित किया था। इस बात के लिए प्रोत्साहित तो उन्होंने अवश्य ही किया था कि अकेले न तो से आग से लड़ सकते हैं, न उसका निवारण कर सकते है और न उसके द्वारा की हुई हानि का भुगतान ही; लेकिन अगर मिल-जुलकर जोखिम को फैला ले और सयुक्त रूप से सरक्षण के लिए पैसा दे तो अवश्य ऐसा कर सकते है। १८५१ मे सैनफ्रासिस्को मे फ्रासिसी आप्रवासियों ने फ्रेंच म्युचूअल बेनिफिट सोसाइटी (फ्रासिसी पारस्परिक हित संवर्धन समिति) बनाई, जिसने एक अस्पताल स्थापित किया और पूर्व अदायगी (अग्रिम शुल्क की योजना प्रचलित की। कुछ वर्षों बाद सैनफ्रांसिस्को मे जर्मन आप्रवासियो ने और टाम्पा मे क्यूबा के स्पेनवासियो ने भी इसी तरह का काम किया। ये सब योजनाएँ अब भी चल रही है।

इन सब योजनाओं मे एक ही राष्ट्रीयता के कारण सन्निकट आये हुए समान हितों वाले भ्रातृत्वपूर्ण समूह मिल-जुलकर अपने आप के लिए स्वास्थ्य परिचर्या और स्वास्थ्य सुरक्षा क्रय करते हैं।

या सम्भवतः १८८२ मे 'नार्दन पैसिफिक वेनिफिशियल एसोसिएशन' द्वारा संस्थापित पहले रेलरोड अस्पताल से ही इस आन्दोलन का श्रीगणेश हुआ हो। उन रेल श्रमिकों ने रोशडेल बुनकरों का नाम भी नही सुना था, फिर भी समूहगत आवश्यकताओ और आर्थिक मोलभाव का सामूहिक शक्ति के बलपर उन्होंने मालिकों से हानिपूर्ति के एक अंश के रूप में अपने लिए अस्पताल

सेवाओं की सुविधा का समझौता किया और उसे प्राप्त भी कर लिया। किसी अकेले रेल मजदूर के लिए यह कदापि सम्भव नही था।

१९१३ मे इण्डर नेशनल लेडीज गारमेण्ट वर्कर्स यूनियन ने न्यूयार्क सिटी मे अपने सदस्यो के लिए अमरीका के इतिहास मे सबसे पहला श्रमिक सघ-संचालित स्वास्थ्य केन्द्र स्थापित किया। सघ के सदस्यो मे से किसी को कोई चल रोग हो जाता तो उन्ही के धन से इस केन्द्र मे बाहरी रोगी के रूप मे उनकी परिचर्या की जाती थी। आज यह और ऐसे बीसियो स्वास्थ्य केन्द्र कार्य कर रहे है।

या फिर १९२९ मे ओक्ला होमा के एल्क सिटी मे इस आन्दोलन का प्रारम्भ माना जा सकता है। उस समय वही के एक डाक्टर, माइकेल्स शैडिड ने वहाँ की चार कठिनाइयो का उपाय सोच निकाला और दूसरो को भी उसी ढग से उनके निवारण के लिए प्रोत्साहित किया। उनमे से पहली कठिनाई थी पश्चिमी ओक्ला होमा के किसानो की अत्यधिक गरीबी, वे डाक्टरो का बिल और विशेष रूप मे आपत्कालीन डाक्टरी सेवा का बिल तो और भी अधिक, मुश्किल से ही चुका पाते थे। दूसरे, उस क्षेत्र में दूर-दूर तक कोई अस्पताल नही था। तीसरे, डाक्टरों को न तो यही भरोसा था कि वहाँ अच्छी आमदनी हो सकेगी और न यही विश्वास कि जिन अच्छी दवाइयों का ये प्रयोग करना चाहते है उन्हें रोगी ले ही लेगे। और चौथे यह कि लोग इन कठिनाइयों की ओर से नितान्त उदासीन सब कुछ चुपचाप सहे जा रहे थे।

डाक्टर शैडिड ने सुझाव दिया कि अन्तिम कठिनाई से आरम्भ करके इन चारो पर एक साथ हमला बोलना चाहिए। जिन लोगो को चिकित्सा-परिचर्या की अभी आवश्यकता है या आगे हो सकती है वे सब यदि एक ऐसे सघ का सदस्य बनना स्वीकार कर ले जो व्यवस्थित ढग से अस्पताल और चिकित्सा परिचर्या प्रदान कर सके तो अपने अत्यल्प साधनो के बावजूद वे अपनी आवश्यकता को पूरा कर सकते है। और यदि वे इस उपक्रम को आरम्भ करने के लिए प्रारम्भिक शुल्क देने को प्रस्तुत हो जाएँ और उसके बाद हर महीने केवल अत्यन्त आवश्यक प्रकार की परिचर्या का मूल्य चुकाने भर को डालर देते रहे तो परिचर्या प्रदान करने वाले डाक्टर उनके साथ

आने को राजी हो जाएँगे और उन डाक्टरों को निर्भरता-योग्य आय का कुछ विश्वास भी हो जाएगा। हो सकता है कि वे अपना अस्पताल भी बना ले, जिसके सदस्य ही स्वामी होंगे और जो उस सारे क्षेत्र के लिए चिकित्सा-केन्द्र का काम देगा।

उन्होने यही किया।

काम अवश्य आसान नही था। लेकिन डाक्टर शैडिड ने स्वय काफी रकम उधार दी और इस तरह अमरीका की पहली सहकारी स्वास्थ्य योजना का, यही उसका नामकरण किया गया, जन्म हुआ। इसका जीवन काफी उथल-पुथल वाला रहा है। एल्क सिटी के कम्युनिटी हास्पिटल क्लिनिक (सामुदायिक अस्पताल और स्वास्थ्य केन्द्र) की कुछ बाते आज भी ऐसी है जिनकी स्वास्थ्य समस्याओं के विद्यार्थी प्रायः आलोचना करते है।

लेकिन एल्क सिटी का सहकारी स्वामीत्व वाला, सुयोग्य डाक्टरों से लैस अस्पताल पश्चिमी ओक्ला होमा के कई जिलों का चिकित्सा-केन्द्र है; और इसके कुछ डाक्टर तो जिला और राज्य की चिकित्सा समितियाँ के पदाधिकारी भी है।

और सबसे बडी बात तो यह कि इस अस्पताल ने उस क्षेत्र के बहुत से लोगो को अपने परिवारो की अच्छे ढग की चिकित्सा-परिचर्या के लिए पैसा खर्च करने का अवसर भी दिया।

इसके बाद ही तरह-तरह की योजनाएँ सभी स्थानों में और सब तरह के लोगो के बीच अस्तित्व मे आई और विकसित हुई। उनमे से कुछ तो सभी दृष्टियो से पूर्णत. सहकारी सगठन है जैसे कि महानगर की पथ प्रदर्शक योजना—ग्रुप हेल्थ एसोसिएशन आफ वाशिंगटन (वाशिगटन डी० सी० का सामूहिक स्वास्थ्य सघ)—और ग्रूप हेल्थ कोआपरेटिव आफ पगेट साउण्ड (पगेट साउण्ड का सामूहिक स्वास्थ्य सहकारी संघ, (एवं टूहारवर्स,) मिनोसोटा) का हेल्थ एसोसिएशन सामुदायिक स्वास्थ्य सघ)। इनकी सदस्यता सब के लिए खुली है, जो भी चाहे सदस्य बन सकता है; संचालन और नियन्त्रण, एक व्यक्ति केवल एक ही मत के आधार पर, सदस्यों के ही हाथ मे है; सारी सुविधाओं का स्वामित्व सदस्यों मे निहित है; और पूरी योजना

को वास्तव मे लाभहीन आधार पर चलाया जाता है। पूरे वर्ष के कारोबार के अन्त मे यदि अधिक आय पायी भी गई तो भी सदस्यों को सरक्षण वन वापसो अदायगियाँ नही की जाती। स्वास्थ्य योजनाओं मे और दूसरे सहकारी उद्यमों मे यही मुख्य अन्तर है। रूढ़िगत व्यवसायो में जो लाभ है वह दूसरे सहकारी उद्यमो मे सदस्यों और सरक्षक-स्वामियो का प्राप्तव्य है, जिसे वर्ष के अन्त मे सरक्षण के अनुपात से उनमे वितरित कर दिया जाता है। लेकिन, नैतिक दृष्टि से, स्वास्थ्य योजना को तो किसी के भी यहाँ तक कि सदस्यों के भी लाभार्जन के लिए नही चलाया जा सकता। यदि अधिक आय होती भी है तो या तो सदस्यो से लिया जानेवाला मासिक शुल्क घटा दिया जाता है, या डाक्टरों और अन्य सेवा-नियुक्त कर्मचारियों को दिये जाने वाले पारिश्रमिक मे वृद्धि कर दी जाती है, या फिर उस राशि को भवननिधि मे जाने वाले पारिश्रमिक मे वृद्धि कर दी जाती है, या फिर उस राशि को भवननिधि में नया कक्ष वनाने के लिए जमा कर दिया जाता है।

इन 'विशुद्ध' सहकारी योजनाओं के अतिरिक्त अन्य कई प्रकार की दूसरी योजनाएं भी है, लेकिन दो बुनियादी विशेषताएँ उन सभी मे समान रूप से पायी जाती है। एक तो यह कि उन सभी योजनाओं मे लोगों का एक समूह स्वास्थ्य-परिचर्या को अपनी आवश्यकता के निकाय का, और रोगी निरोग दोनों से एक-सी राशि के आधार पर, समूह के रूप मे धन देने का और चिकित्सकों के दल एव अन्य पेशेवर तथा गैर-पेशेवर कार्य कर्ताओं से, जो उनके लिए अपेक्षित स्वास्थ्य परिचर्या उपलब्ध कर सके, व्यवस्था करने का फैसला किये रहता है। दूसरे यह कि ये सभी सामूहिक स्वास्थ्य योजनाएँ युक्तियुक्त विचार-परम्परा पर आधारित होती है, जो सार रूप मे इस प्रकार है:

(१) आज औसत अमरीकी परिवार के समक्ष परमाणु युद्ध के खतरे के अतिरिक्त स्वास्थ्य का आर्थिक पक्ष ही वास्तव में सबसे गम्भीर समस्या है। यह कुछ तो इसलिए है कि बीमारी से कष्ट और पीड़ा होती है, और कुछ इसलिए भी कि पर्याप्त स्वास्थ्य-परिचर्या का मूल्य एक तो पहले से मालूम नही हो पाता और फिर बड़ी तेजी से बढ़ता भी रहता है।

(२) लेकिन यदि परिवारों को उचित समय उचित प्रकार की चिकित्सा-परिचर्या, जिसमे निरोधिक परिचर्या भी सम्मिलित है, उपलब्ध हो सके तो अधिकांश बीमारियों की रोक-थाम की जा सकती है। और यदि परिवार स्वास्थ्य परिचर्या के लिए हर महीने छ या हर हफ्ते निर्धारित किस्त अग्रिम जमा करवा सके या जैसा कि अर्थशास्त्र की पारिभाषिक शब्दावली मे कहेगे 'वजारत आवर्ती पूर्व अदायगी' के आधार पर पैसा दे सके तो बीमारी के अधिकाश आर्थिक दुष्परिणामो को टाला भी जा सकता है।

(३) पारिवारिक डाक्टर के शुल्क के अतिरिक्त आपत्कालीन मामलो मे या कठिनाई के समय बुलाये गए विशेषज्ञों की फीस शायद ही कोई परिवार दे सकता है। वास्तव मे औसत परिवार डाक्टरो के चुनिन्दा दल का सामूहिक प्रैक्टिस के सिवाय चिकित्सा-सेवा मे विशेषज्ञता से लाभान्वित हो ही नही सकता।

(४) सेवा के लिए आयातित शुल्क के आधार पर पैसा देने की कोशिश करके भी औसत परिवार को आधुनिक चिकित्सा-परिचर्या उपलब्ध नही हो सकती; क्योकि एक तो इस प्रणाली मे मूल्य नियन्त्रित नही होते और दूसरे, न यही पहले से बताया जा सकता है कि कितना मूल्य देना होगा। परिणाम स्वरूप औसतन काफी पैसा खर्च करके भी आज लोगों को पर्याप्त चिकित्सा-परिचर्या उपलब्ध नही हो पाती।

(५) बीमार पड़ने पर अमरीकी जनता आयातित चिकित्सा परिचर्या के लिए इतना अधिक पैसा देती है कि यदि सही ढग से खर्च किया जाए तो उस रकम से उन्हे स्वस्थ बनाये रखने वाली व्यापक परिचर्या बड़ी आसानी से मिल सकती है। राष्ट्र की स्वास्थ्य-सम्बन्धी आवश्यकताओं के बारे मे नियुक्त राष्ट्रपति के आयोग ने और अन्य विश्वसनीय अधिकारियों ने जो आँकड़े निकाले हैं उनसे पता चलता है कि हम अपनी आय का ५ प्रतिशत चिकित्सा-परिचर्या पर खर्च करते है। अमरीका की औसत पारिवारिक आय पाँच हजार डालर प्रतिवर्ष है; इसका ५ प्रतिशत २५० डालर होता है।

(६) पूर्व अदायगी की पद्धति सारी समस्या का सीधा-सा समाधान है। इस पद्धति के अन्तर्गत लोग प्रतिमास एक निर्धारित धन राशि जमा कर-

जाते रहते है, जिसके बदले मे जब भी आवश्यक हो उन्हे चिकित्सा-परिचर्या उपलब्ध हो सके। और एक परिवार से प्रति वर्ष २५० डालर इतनी बड़ी रकम है कि यदि उसे चुने हुए डाक्टरो को 'सामूहिक प्रैक्टिस वाली पूर्व अदायगी स्वास्थ्य योजना' के अन्तर्गत अच्छे ढग से खर्च किया जाए तो परिवारो को सम्पूर्ण और व्यापक चिकित्सा परिचर्या उपलब्ध हो सकती है।

(७) अस्पताल परिचर्या के लिए पूर्व अदायगी अच्छी बात है; लेकिन समय पर स्वास्थ्य की जॉच-पडताल और निरोधक उपायों वाली सेवाओं के लिए पूर्व अदायगी और भी अच्छी और ज्यादा महत्त्वपूर्ण बात है, क्योंकि ऐसा करने से अस्पताल जाने की नौबत ही नही आती। दूसरे शब्दो मे यह कि हमे आवश्यकता है व्यापक परिचर्या के लिए पूर्व अदायगी की, जो लोगों को अस्पताल से दूर रखती और इस तरह चिकित्सा-परिचर्या का मूल्य भी कम करती है। हमे अपने डाक्टरो को निरोधक औषधियों का प्रयोग करने का अवसर देना चाहिए और इसके लिए उनसे समय-समय पर मिलते रहना, बीच-बीच मे अपने स्वास्थ्य की जॉच-पड़ताल करवाते रहना और साधारण तथा गम्भीर, सभी प्रकार के लक्षणों के सम्बन्ध मे उनकी सलाह लेते रहना बहुत जरूरी है। लेकिन यह तभी हो सकता है जब इस तरह की सेवाओ के लिए किसी सामूहिक स्वास्थ्य योजना के अन्तर्गत हमने पहले से पैसा दिया हो।

(८) काफी सख्या मे सभी तरह के लोगो के सम्मिलित हुए विना इस तरह की योजना न तो बन सकती है और न कार्यान्वित ही की जा सकती है। कोई भी योजना सफल कैसे हो सकती है ? यदि उसमे चन्दा देने वाले सभी लोग तत्काल चिकित्सा सेवा पाने वाले ही हों। इसलिए ऐसी योजनाओ मे स्वस्थ लोगों को भी काफी सख्या मे सम्मिलित करना चाहिए।

(९) लोकतन्त्र मे लोगों का आवश्यकता से अधिक सरकार पर निर्भर करना कदापि उचित नही; अपनी समस्याओं को सुलझाने के लिए उन्हें स्वतः प्रेरणा को विकसित करना और उसी पर निर्भर करना चाहिए। अपने लिए काम करना वैसे भी बहुत अच्छी बात है। इसलिए चिकित्सा परिचर्या के आर्थिक पहलुओं, उसके मूल्यों और अदायगी के तौर-तरीकों पर उपभोक्ता का कुछ-न-कुछ नियन्त्रण और उपभोक्ता पर इन सब की कुछ जिम्मेवारी लोक-

तन्त्र का एक अच्छा ढग है।

(१०) डाक्टरों की सामूहिक प्रैक्टिस, पूर्व अदायगी, व्यापक परिचर्या, जोखिम का बराबर-बराबर बँटवारा और उपभोक्ता के स्वत. प्रेरणा को मिला कर सामूहिक-स्वास्थ्य-पूर्व अदायगी-योजना बनाई जाए तो चिकित्सा-सम्बन्धी आर्थिक समस्या काफी हद तक सुलझ सकती है और इस तरह आधुनिक चिकित्सा से छोटे समुदायो एव सामान्य आय वाले परिवारो को भी लाभान्वित किया जा सकता है।

कुछ लोग और उनके डाक्टर स्वास्थ्य के क्षेत्र मे सहकारी ढग से काम करने को कैसे प्रवृत्त हुए इसकी कहानी सघर्ष, अन्तर्विरोध, सन्देह, निराशा और क्रमश अधिकाधिक सफलता प्राप्त करते जाने की कहानी है।

ओक्ला होमा के निवासियों ने जो कुछ किया उसके समाचार शीघ्र ही मन्दीग्रस्त देश मे चारों ओर फैल गए। अब जो दूसरी महत्त्वपूर्ण योजना बनी वह थी वाशिंगटन डी० सी० का सामूहिक स्वास्थ्य सघ (Group Health Association of Washington D C)। सरकारी कर्मचारियों के एक समूह ने १९३७ मे इसकी स्थापना की। आरम्भ से ही यह सघ सभी दृष्टियों से पूरी तरह सहकारी रहा है। कोई भी इस योजना का सदस्य बन सकता है। नियन्त्रण सदस्यों का ही है और एक सदस्य को केवल एक ही मत देने का अधिकार है। सदस्य ही इसकी समस्त साधन-सामग्री और सम्पत्ति के स्वामी हैं और इसके सचालक-मण्डल का चुनाव भी वे ही करते है। १९६० मे, साधारण और विशेषज्ञ डाक्टरो के इसके विशाल और सुयोग्य चिकित्सक दल ने वाशिंगटन क्षेत्र के लगभग ४५ हजार लोगों को चिकित्सा-परिचर्या प्रदान की। इसमे विशाल ट्राजिट वर्कर्स यूनियन के सदस्य भी सम्मिलित है, जिन पर १९५९ में काफी विचार-विनिमय के बाद इस योजना को लागू किया गया। बढी हुई सदस्य सख्या की समुचित देख-भाल के लिए इस यूनियन ने वाशिंगटन सामूहिक स्वास्थ्य संघ की शाखा के रूप मे एक नये स्वास्थ्य केन्द्र का निर्माण भी कर दिया है।

इस स्वास्थ्य सघ को सघर्ष भी कई करने पड़े। आरम्भ के वर्षों मे चिकित्सा समिति ने इस योजना से सम्बद्ध डाक्टरों के नाम वर्ज्य सूची मे डाल दिये और

सामूहिक स्वास्थ्य सघ के डाक्टरों और रोगियों को अपने अस्पतालों का उपयोग करने से रोक दिया। पॉच वर्ष तक मुकदमा चलता रहा। अन्त में सयुक्त राज्य के सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय से चिकित्सा समिति के एकाधिकारी व्यवहारों को रोका गया, सामूहिक स्वास्थ्य सघ के डाक्टरो के लिए चिकित्सा समिति की सदस्यता फिर से खोल दी गई और अस्पतालो के उपयोग की सुविधा पुन. प्रचलित कर दी गई। यह फैसला १९४३ मे हुआ और एक अच्छी नजीर बन गया। सामूहिक स्वास्थ्य योजनाओ को 'सगठित चिकित्सा' द्वारा अपने डाक्टरों के साथ भेदभाव करने पर जब भी न्यायालयों मे जाना पडता है तो १९४३ मे हुए उक्त फैसले के उदाहरण स्वरूप उनकी बराबर जीत ही होती है।

१९४१ से प्रारम्भ होने वाली शताब्दी मे ग्रेट प्लैन्स के दर्जनो छोटे-छोटे देहाती कस्बों के निवासियों ने अपने-अपने सहकारी अस्पताल सघ बनाये। इनमे से कइयों ने तो वास्तव मे बहुत सारे अस्पताल बना भी डाले और वेस्ट टेक्सास जैसे कुछ क्षेत्रो मे तो सबसे अधिक अस्पताल बनाये गए। कहीं-कहीं पूर्व अदायगी योजनाएँ भी शुरू की गई। लेकिन मासिक चन्दा प्रायः सर्वत्र बहुत ही कम रखा गया। जो साधन-सुविधाएँ जुटाई गई वे अक्सर बहुत अच्छी बनी हुई और सुनियोजित भी नही थी। चिकित्सा समिति के विरोध के कारण बहुत से डाक्टर डर कर भाग गए। परिणाम यह हुआ कि इनमे से अधिकाश अस्पताओं को सामुदायिक स्वामीत्व का रुप दे देना पडा, अधिकाश पूर्व अदायगी योजनाओ को बन्द कर देना पडा और केवल अस्पताल की इमारते ही सद्प्रयत्नो के स्मारक के रूप मे बची रह गईं, यह कहने के लिए कि जो प्रयत्न किये गए उनमे जल्दबाजी की मात्रा बहुत ही अधिक और दूरदर्शिता एवं योजनाबद्धता की मात्रा बहुत ही थोडी थी।

इस प्रकार एल्क सिटी और वाशिगटन डी० सी० के अतिरिक्त सहकारी स्वास्थ्य योजनाओं का सारा ही विकास द्वितीय महायुद्ध के काल में ही हुआ है। यह बिलकुल नया आन्दोलन है और इसका जन्म हुआ है अमरीकी जनता की निरन्तर बढ़ती हुई स्वास्थ्य चेतना और उनके इस अभिज्ञान के फलस्वरूप कि चिकित्सा परिचर्या की लगातार मूल्य-वृद्धि उनकी सबसे बड़ी और

पहले नम्बर की आर्थिक विपत्ति है। पाँच लाख अमरीकी परिवारो पर प्रति वर्ष चिकित्सा-बिलो का जितना बोझा पडता है वह उनकी सम्पूर्ण वार्षिक आय के बराबर हो जाता है। दस लाख परिवारो पर उनकी वार्षिक आमदनी की आधी रकम के बराबर चिकित्सा-व्यय का कर्ज हो जाता है। लाखो लोगो ने ब्लूशोल्ड, ब्लूक्रास और व्यापारी कम्पनियो के अन्तर्गत किसी-न-किसी प्रकार का स्वास्थ्य बीमा करवा रखा है। १९५८ तक अमरीका की लगभग तीन-चौथाई जन सख्या किसी-न-सिकी प्रकार के स्वास्थ्य-बीमा से रक्षित हो चुकी थी।

लेकिन इस प्रकार के बीमो की कुल अदायगियाँ तो स्वास्थ्य बीमा करवा कर 'अपने को रक्षित' समझने वाले अमरीकी परिवारो के चिकित्सा बिलों के चतुर्थांश के लिए भी पर्याप्त नही होती। कुछ भी न होने से तो यह अवश्य ही अच्छा है। लेकिन यह कुछ बहुत अच्छा सरक्षण तो है नही और न स्वास्थ्य को उन्नत करने की दिशा मे ही इससे कुछ हो पाता है। दूसरी ओर जो परिवार सहकारी ढग की सामूहिक-प्रैक्टिस वाली-पूर्व अदायगी-स्वास्थ्य योजनाओं के सदस्य है उन्हे सरक्षण का लाभ नकद अदायगियो मे नही डाक्टरो और नर्सों की परिचर्या के रूप मे प्राप्त होता है; और प्रयत्न किया जाता है कि वह परिचर्या ज्यादा-से-ज्यादा प्रकार की बीमारियो के लिए और रोग-निवारण के अधिक-से-अधिक उपायो वाली भी हो।

१९४४ मे मिनेसोटा के टूहारबर्स नामक छोटे से नगर मे मुख्यतः रेल-मार्गों और इस्पात श्रमिको ने मिल कर एक सहकारी योजना आरम्भ की। इस योजना ने नगर के एकमात्र अस्पताल को बन्द होने से बचा लिया, नगर के तीन-चौथाई परिवारों को अपना सदस्य बनाया, कई साहसी डाक्टरों को जन-परिचर्या के लिए आकर्षित करने मे सफलता प्राप्त की और अन्त मे, १९५६ मे अपने डाक्टरों के लिए चिकित्सा समिति की सदस्यता के रूप मे मान्यता भी प्राप्त कर ली।

१९४५ मे सेंट लुई मे लेबर हेल्थ इन्स्टीटयूट श्रमिक स्वास्थ्य सस्था (Labor Health Institute) बनाई गई। यह सस्था केवल एक स्थानीय श्रमिक सघ के सदस्यों और उनके परिवारों तक ही सीमित थी और आज सारे संयुक्त

राज्य को किसी भी श्रमिक प्रायोजित योजना से सम्बद्ध अपने १५,००० सदस्यों को व्यापकतम परिचर्या प्रदान करती है। मालिक स्वास्थ्य और कल्याण-निधि मे जो अशदान करते हैं उससे इस योजना को चलाया जाता है। इस सस्था के सदस्यों का अस्पताल के बिलो का खर्च ब्लू क्रास बीमा करवाने के खर्च से कही कम होता है, क्योकि सस्था का यह अनुभव है कि आवश्यकता पडते ही चिकित्सा परिचर्या उपलब्ध हो जाने वालो को दूसरो की अपेक्षा कम बार अस्पताल जाने की जरूरत पड़ती है।

यदि गम्भीरता से विचार किया जाए तो यह बात आश्चर्यजनक नही, उचित ही प्रतीत होगी।

१९४६ मे युनाइटेड माइन वर्कर्स वेलफेयर एण्ड रिटायरमेण्ट फण्ड (सयुक्त खनि श्रमिक कल्याण एव निवृत्ति निधि (United Mine Workers Welfare and Retirement Fund) को खान से निकाले गये प्रतिटन कोयले पर ४० सेंट मिलने लगा। निधि मे यह अशदान मालिकों की ओर से किया जाता था और आज भी किया जाता है। लेकिन कोयला खोद कर निकालते तो मजदूर ही हैं। खनिको एव उनके आश्रितों को उच्च कोटि की चिकित्सा परिचर्या प्रदान करने एव निधि के धन का दुरुपयोग रोकने के बारे मे अनेक प्रकार से आश्वासन दिये गए। अन्त मे यही उपाय ठीक समझा गया कि निधि मे काम करने के लिए ऐसे ही डाक्टरो का चुनाव किया जाए जो भले, निर्भरता योग्य और शुद्ध अन्त.करण वाले हो, लापरवाह और काम करने मे अक्षम बूढो को छोड़ दिया जाए। निधि के इस सही निर्णय ने बहुत से राज्यो की चिकित्सा समितियों मे खलबली मचा दी। कुछ राज्यों की विधान सभाओं ने तो ऐसे कानून बनाने की धमकियाँ दे डाली कि यदि कोई डाक्टर खनिको की परिचर्या करेगा और निधि से इस काम का पैसा लेगा तो उसे जेल मे बन्द कर दिया जाएगा।

लेकिन न तो ऐसा कानून बना और न बनने की सम्भावना ही है।

इसका सबसे बडा कारण तो यही है कि खनिक निधि ने देश के उन हिस्सो मे जहाँ चिकित्सा-सम्बन्धी सुविधाएँ बहुत कम या नही के ही बराबर थी, लोगों के स्वास्थ्य के लिए काफी प्रशसनीय काम किया है। आपला-

ेचियान (Appaluchian) के पहाडी प्रदेश मे जहाँ पहले एक भी अच्छा अस्पताल नही था निधि ने दस बडे ही खूबसूरत बढ़िया अस्पताल निर्मित किया।

१९४७ बडा ही महत्वपूर्ण वर्ष था। उसी वर्ष (हेल्थ इन्श्योरेन्स प्लान आफ ग्रेटर न्यूयार्क (वृहत्तर न्यूयार्क की स्वास्थ्य बीमा योजना, Health Insurance Plan of Greater New york) ने, जिसे अँग्रेजी मे 'हिप' (HIP) भी कहते है, अपने सदस्यो की सेवा प्रारम्भ की। और उसी वर्ष महःद्वीप से उस ओर पगेट साउण्ड मे ग्रूप हेल्थ कोआपरेटिव्स (सामूहिक स्वास्थ्य सहकारी) योजना शुरू की गई। आज ये दोनो ही योजनाएँ अपने-अपने क्षेत्र की लगभग ५ प्रतिशत जनता को व्यापक चिकित्सा परिचर्या प्रदान कर रही है।

सीटल योजना भी वाशिगटन के सामूहिक स्वास्थ्य सगठन की ही तरह एक सच्चा सहकारी उद्यम है। इसके स्वास्थ्य केन्द्र और एक बढ़िया नया अस्पताल भी है और इनमे अधिकतर पूँजी सदस्यो की ही लगी हुई है।

न्यूयार्क की योजना 'हिप' वृहत्तर न्यूयार्क के सारे क्षेत्र में अपने पाँच लाख से भी अधिक सदस्या को अपेक्षित सेवाएँ प्रदान करने के लिए डाक्टरों के समूहों से करार करती है। इन डाक्टर-समूहों को प्रति व्यक्ति के हिसाब से पारिश्रमिक दिया जाता है:—समूह-विशेष को चुनने वाले प्रत्येक व्यक्ति के लिए प्रति वर्ष इतने डालर!

जैसे-जैसे समय बीतता गया अधिकाश दूरदर्शी श्रमिक संघ स्वास्थ्य केन्द्रों की सख्या मे अभिवृद्धि करते गए, जिससे उनके सदस्यों का वहाँ रोग-निदान और मामूली किस्म के चल रोगों की परिचर्या की जा सके।

१९५१ मे फिलाडेलफिया का अमरीकी श्रमिको के महासघ की चिकित्सा सेवा योजना ने (American Federation of Labor Medical Service Plan of Philadelphia) उस बाधा को तोड़ दिया जो श्रमिक सघों की स्वास्थ्य योजनाओं को एक ही श्रमिक सघ के सदस्यो तक सीमित करनेवाली थी। इस योजना को प्रारम्भ ही इसलिए किया गया था कि इसमे हिस्सा लेने वाली किसी भी स्थानीय यूनियन की सेवा की जा सके। पहले आठ वर्षो के कार्यकाल के अन्त मे इस योजना से तीस से भी अधिक स्थानीय श्रमिक संघ और कोई ६० हजार लोग परिचर्या प्राप्त कर रहे थे। और

१९५५--५६ के आस-पास इसी से मिलती-जुलती एक योजना श्रमिक सघ स्वास्थ्य सेवाएँ (Union Health Services Inc.) शिकागो मे आरम्भ की गई।

यह पुस्तक लिखी जा रही थी उस समय (१९६१) डेट्रोहा के प्रमुख नागरिकों का एक समूह मुख्यत युनाइटेड आटो मोबाइल श्रमिको पर निर्भर करते हुए एक ऐसी समुदाय-व्यापी पूर्व अदायगी स्वास्थ्य योजना बनाने का प्रयत्न कर रहा था जिसमे डाक्टरो के कई समूहो की सेवाओ का और विद्यमान अस्पतालो का उपयोग किया जा सके।

१९६० तक सयुक्त राज्य के पचास लाख से भी अधिक लोगो ने सह-कारिता के मोटे-मोटे तरीको को अपना कर अपने स्वास्थ्य से सम्बन्धित आर्थिक समस्याओ को काफी हद तक हल कर लिया था।

इनमे की कोई भी दो योजनाएँ एक-जैसी नही है। कुछ की खुली सदस्यता है: व्यक्ति, परिवार अथवा समूह, सब के लिए। कुछ की सदस्यता सीमित है, उनकी सेवाएँ केवल किसी एक ही स्थानीय श्रमिक सघ के सदस्यों को उपलब्ध है। अधिकाश तो सेवा-सुविधाएँ ही प्रदान करती हैं, जैसे कि निदान, चिकित्सा, सुश्रूषा, निरोध-निवारण आदि; लेकिन दो-एक ऐसी भी है जो सेवाओं के बदले क्षतिपूर्ति की नकद रकमे देती है—डाक्टरो से इनका यह समझौता रहता है कि वे क्षतिपूर्ति रकमे को अपनी सेवाओं के पारिश्रमिक की पूरी अदायगी समझ कर स्वीकार कर ले। कुछ ऐसी है जिनकी परिचर्या मे कई रोगों का समावेश नही होता, तो कई ऐसी हैं जो अपने सदस्यों अथवा ग्राहकों की चिकित्सा-सम्बन्धी हर आवश्यकता को पूरा करती हैं। कुछ का नियन्त्रण उनके सदस्यो द्वारा जनतन्त्रात्मक ढग से होता है; कुछ का नियन्त्रण संचालक मण्डल करते है, जो सदस्यों के प्रतिनिधि तो होते हैं, परन्तु उनके द्वारा निर्वाचित नही; और कुछ ऐसी भी है जिनका कार्य-संचा-लन और नियन्त्रण श्रमिक सघो की स्वास्थ्य एवं कल्याण निधि के न्यासधारियो द्वारा किया जाता है।

कुछ थोड़ी-सी डाक्टरों के समूहों द्वारा नियन्त्रित और उन्ही के स्वामीत्व में 'उत्पादक ढग की सहकारी योजनाएँ' हैं। कुछ को ऐसे लोक-समूहों ने आरम्भ

किया जिन्हे स्वास्थ्य सेवाओ की आवश्यकता थी, कुछ श्रमिक सघो के पदाधिकारियो द्वारा शुरू की गई, कुछेक को सार्वजनिक कार्यकर्ताओ ने, और कुछ को केवल डाक्टरो ने ही आरम्भ किया। लेकिन कोई भी सरक्षण-धन वापसी की अदायगी नही करता।

इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि 'सहकारी स्वास्थ्य योजनाएँ' सहकारी शब्द के सही अर्थ मे तो पूरी तरह सहकारी नही ही है। कुछ है तो खुली सदस्यता वाले सहकारी सिद्धान्त की अवहेलना करती है, कुछ जनवादी नियन्त्रण के सिद्धान्त को भग करती है; और सरक्षण धन वापसी वाली कसौटी पर तो एक भी खरी नही उतरती।

लेकिन मूलतः अपने सारभूत रूप मे वे सभी निस्सन्देह सहकारी ही है, क्योंकि उन सभी मे सहकारिता की एक अत्यन्त आवश्यक विशेषता सदैव ही विद्यमान रहती है।

वे ऐसे उद्यम हैं जिनके स्वामी ही उनकी सेवाओं के उपभोक्ता भी हैं। इसलिए वे उद्यम न तो किसी व्यक्ति-विशेष के और न उस उद्यम के ही आर्थिक लाभ के लिए होते है। वे होते है एक जन-समूह की, कहना चाहिए कि अपने स्वामियो की न्यूनतम शुद्ध मूल्यो पर, जो व्यावहारिक भी हो, सेवा-यहाँ अभिप्राय है स्वास्थ्य-सेवा करने के लिए। और वे है पारस्परिक सहायता की परिकल्पना और सिद्धान्त को आचरण द्वारा अभिव्यक्त करने वाले ठोस, मूर्त रूप।

एक प्रकार से तो वे उक्त सिद्धान्त की सर्वाधिक प्रभावशाली अभिव्यक्तियाँ हैं; क्योंकि किसी भी सामूहिक स्वास्थ्य योजना की सफलता अनिवार्यतः इस बात पर निर्भर करती है कि उसकी निधि मे पैसा देने वाले स्वस्थ लोग भी काफी संख्या में रहे, जिससे उनके रोग ग्रस्त साथी सदस्यों की परिचर्या का मूल्य चुकाया जा सके।

और यदि थोड़ा विचार किया जाए तो पता चलेगा कि यह विचार कितना श्रेष्ठ और कितना उदात्त है।

संक्षेप में यह कि इन योजनाओं के द्वारा एक परिवार अपना पैसा बीमारी को अच्छा करने के बजाय बीमारी से बचने और स्वास्थ्य को अच्छा बनाये

रखने मे खर्च कर सकता है। इन योजनाओ का उद्देश्य ही होता है ऐसे निरोधक उपायों को व्यवहार मे लाना जिससे लोगों को अस्पताल जाने की जरूरत ही न पड़े; यह तो कदापि नही कि वे अस्पताल जाते रहे और वहाँ के बिलों का भुगतान करते रहे। पिछले तीस वर्षों मे केवल अस्पताल के ही नही सामान्यत: स्वास्थ्य-चिकित्सा-सम्बन्धी सभी वस्तुओं के मूल्यो मे लगभग तीन गुनी वृद्धि हुई है, इसलिए स्वास्थ्य-परिचर्या पर पारिवारिक व्यय को कम करने का सिवाय इसके और कोई उपाय नही है कि लोगो को यथा सम्भव अस्पताल से दूर रखा जाए—किसी के वहाँ जाने की नौवत ही न आने पाए।

लेकिन अधिकाश व्यावसायिक बीमा योजनाएँ, यहाँ तक कि ब्लू क्रास और ब्लू शील्ड भी, लोगो को अस्पताल जाने के लिए सचमुच प्रोत्साहित करती हैं, क्योंकि अनेक मामलो मे उन्हे अपने बीमा से पैसा तभी मिलता है जब वे अस्पताल मे भर्ती हो जाते है।

सहकारी ढग का स्वास्थ्य योजनाओ की कार्य-पद्धति इसकी ठीक उलटी है। वे चूँकि पैसा नही देती, जब, जहाँ और जैसी आवश्यकता हो उसी के अनुसार चिकित्सा-परिचर्या प्रदान करती है, इसलिए उनके ये प्रयत्न अत्यन्त स्वाभाविक ही है कि एक तो वे अपने ग्राहकों को जितना भी हो सके भला-चगा रखे; दूसरे, उन्हे अस्पताल मे भर्ती किये बिना ही श्रेष्ठ डाक्टरी सहायता द्वारा जितना सम्भव है अधिक-से-अधिक और अच्छी-से-अच्छी परिचर्या प्रदान करे; और सबसे अधिक तो यह कि उनके स्वास्थ्य का सरक्षण करके गम्भीर रोगों का निवारण करे।

और इस सम्बन्ध मे तथ्यों का जादू तो और भी सर पर चढ़ कर बोलता है। १९५६ मे देश व्यापी पैमाने पर ब्लू क्रास के प्रति हजार बीमाधारी ग्राहकों ने औसत ९९५ दिन अस्पताल-परिचर्या का उपयोग किया। मिचिगन मे यह सख्या प्रति हजार बीमाधारी ११०० दिन थी। लेकिन इसके विपरीत पगेट साउण्ड के सामूहिक स्वास्थ्य सहकारी के सदस्यों को प्रति हजार सदस्य केवल ५६२ दिन अस्पताल परिचर्या की आवश्यकता हुई; और वाशिंगटन डी० सी० के सामूहिक स्वास्थ्य सघ मे तो सिर्फ ५४६ दिन। न्यूयार्क सिटी मे ब्लू शील्ड के प्रति १०० ग्राहकों मे से औसत १० को प्रति वर्ष अस्प-

ताल मे भर्ती होना पडता है जब कि वृहत्तर न्यूयार्क की स्वास्थ्य बीमा योजना के ग्राहकों का यह औसत केवल ८ प्रतिशत ही है।

इतना ही नही, ये योजनाएँ दूसरे ढग से मूल्यो का नियन्त्रण भी करती हैं। उदाहरणार्थ अस्पताल परिचर्या के कुल बिल का २१ प्रतिशत तो दवाइयो का मूल्य ही होता है और इस अनुपात मे निरन्तर वृद्धि होती जा रही है। फिर बिल की दूसरी भी बहुत-सी कीमते जबर्दस्ती बढ़ा-चढ़ा कर लिखी जाती है, जो सरासर ज्यादती है और जिसे जबरिया वसूली ही समझना चाहिए, क्योंकि उन वृद्धियों का दवाइयो अथवा कर्मचारियो की श्रेष्ठता अथवा सेवा के विस्तार और उन्नति से रच-मात्र भी सम्बन्ध नही होता।

इन दवाइयों की कीमत इतनी अधिक तो कदापि नही होनी चाहिए जितनी कि लगाई जाती है; और यह बात अमरीकी सीनेट की केफौवर समिति के समक्ष १९५९ और १९६० मे दिये गए बयानों से बहुत ही अच्छी तरह सिद्ध भी हो चुकी है।

सहकारी स्वास्थ्य योजनाएँ इस सम्बन्ध मे बहुत-कुछ कर सकती है। उदाहरणार्थ, पगेट साउण्ड की सामूहिक स्वास्थ्य सहकारी का अपना ही औषधालय (फारमेसी) है। इस औषधशाला ने १९५८ मे जितने नुसखे बनाये उनका औसत मूल्य प्रति नुसखा १.१५ डालर हुआ, जब कि राष्ट्रीय औसत मूल्य २.६२ डालर था। इस प्रकार इस सहकारी के सदस्यो को दवा-दारू पर लगभग आधे की बचत हुई, जो उन्हे इस व्यवस्था के न होने पर दूसरी जगह अवश्य ही देनी पड़ती। अपने लिए नुसखे बनाने का व्यवसाय आरम्भ करने का निर्णय करके ही वे यह सारी बचत कर सके।

उतने ही मूल्य की दवाई के यदि दूने दाम देने पड़े तो वह सारी अतिरिक्त रकम निरोधक परिचर्या, पुनर्वास सेवाओं, दन्त चिकित्सा, मनोरोग चिकित्सा आदि के विस्तार अथवा विकास पर या लोगों की स्वास्थ्योन्नति के दूसरे किसी भी काम मे खर्च करने के लिए उपलब्ध हो जाती है।

एक बुधवार के दिन तीसरे पहर शहर के सम्पन्न उपनगर मे किसी महिला का हाथ डिब्बे का ढक्कन काटते समय बुरी तरह से कट गया। उन्होंने डाक्टर को बुलाने का प्रयत्न किया। सम्भ्रान्तों की उस बस्ती में डाक्टरो की

कमी नहीं थी। सारे देश की तरह वहाँ भी डाक्टरो का औसत प्रति व्यक्ति दो डाक्टर था। लेकिन बुधवार को डाक्टर लोग छुट्टी रखते और गोल्फ खेलने चले जाते है। पीड़ित महिला को बड़े प्रयत्नो के बाद एक डाक्टर के सचिव से टेलीफोन पर सम्पर्क हो पाया। उसने सलाह दी कि वे दस मील दूर दूसरे उपनगर मे अपनी मोटर से चली जाएँ; वहाँ एक अस्पताल है और सम्भवतः बुधवार की शाम को भी कोई-न-कोई चिकित्सा कर्मचारी उन्हे वहाँ मिल जाएगा।

यदि वे महिला ट्रहार वर्स, (मीन्नोसोटा) के कम आय वाले समुदाय के साथ निवास करती होती तो उन्हे अपने लहू-लुहान हाथ को लिये मोटर चला कर दस मील न जाना पड़ता। बहुत अधिक सम्भावना तो इसी बात की थी कि उनका परिवार टू हारबर्स की सामुदायिक स्वास्थ्य योजना का सदस्य स्वामी होता। लेकिन वे सदस्य भी न होती तो भी सहकारी चिकित्सालय को टेलीफोन कर सकती थी और उन्हे कोई-न-कोई डाक्टर बुधवार के दिन-भी ड्यूटी पर या टेलीफोन पर अवश्य मिल जाता।

क्योंकि जहाँ भी इस तरह की योजना प्रचलित होती है साल के हर दिन चौबीसों घण्टे कोई-न-कोई डाक्टर ड्यूटी पर रहता ही है।

कितना बडा अन्तर है? सम्पन्न उपनगरो मे सेवाली शुल्क दो, आ-पाती चिकित्सा, हर डाक्टर और हर रोगी अपने-अपने भरोसे वाली वही पुरानी पद्धति अभी तक चली आ रही है। इसके विपरीत लेक सुपीरियर के वीरान किनारों पर बसे रेलरोड और इस्पात श्रमिको के अपेक्षाकृत विपन्न नगर में चिकित्सा परिचर्या पर खर्च किये गए थोड़े से डालरो से लोगों के लिए अधिक अच्छी और अधिक निर्भरता योग्य चिकित्सा परिचर्या क्रय की जाती है।

इसका कारण यही है कि लोगो ने पारस्परिक सहायता के—अपनी ही स्वास्थ्य योजना के माध्यम से अपनी ही स्वास्थ्य परिचर्या पर मिल-जुल कर रुपया खर्च करने के महत्त्व को समझा ही नही है अजमा कर देख भी लिया है।

स्वास्थ्य सूचना प्रतिष्ठान (Health Information Foundation) की सूचना के अनुसार १९५८ में निजी स्वास्थ्य सेवाओं पर औसत पारिवारिक

खर्च २९४ डालर था। इतनी रकम खर्च करके भी अधिकांश परिवारों को केवल मध्यम कोटि की ही स्वास्थ्य परिचर्या मिल रही थी। वे यह सारी रकम आयाती आधार पर चुका रहे थे—प्रायः बहुत अधिक बीमार हो जाने के बाद ही, जब डाक्टर के पास गये बिना कोई चारा नही रह जाता।

लेकिन २८० डालर कम नही होते। इतनी रकम मे तो देश की किसी भी श्रेष्ठतम और अत्यधिक व्यापक किस्म की सहकारी स्वास्थ्य योजना की वार्षिक सहायता का पूरा चन्दा बड़े मजे मे दिया जा सकता है। कुछ योजनाओ का चन्दा तो २८० डालर से भी कम है। हाँ, कुछक का अधिक भी है।

अमरीकी जनता के काफी बड़े हिस्से को अधिक अच्छे प्रकार की स्वास्थ्य-परिचर्या मिल सके और आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के चमत्कारी लाभ उन्हे सुलभ किये जा सके इस के लिए न तो अधिक धन खर्च करने की आवश्यकता है और न सरकार के द्वारा कानून ही बनाये जाने का।

वास्तव मे इसके लिए आवश्यकता है लोगो के समझदार और दूरदर्शी होने की, उनके द्वारा सामूदायिक विचार और दृष्टिकोण के अपनाये जाने की एवं अपनी स्वास्थ्य-परिचर्या-सम्बन्धी आश्यकताओ तथा उनका मूल्य चुकाने के लिए अपने रुपयों का मिल-जुलकर निकाय करने की।

उन चिकित्सा चमत्कारो को बहुजन सुलभ बनाने के लिए वास्तव में आवश्यकता है हम मे से अधिकाधिक लोगों द्वारा उस हेतु को आधुनिक ढंग से अपने आचरण मे उतार लेने की, जिससे अनुप्राणित होकर पुरोगामी महिला पड़ोसी की झोंपड़ी मे बीमार बच्चे की सुश्रूषा के लिए पहुँच जाया करती थी।

ठीक इन्ही उद्देश्यो को कार्यान्वित करने वाला एक राष्ट्रीय संगठन भी है। उसका नाम है अमरीकी सामूहिक स्वास्थ्य सघ (Group Health Association of America)। देश की बड़ी-बडी सहकारी, सामूदायिक और श्रमिक स्वास्थ्य योजनाएँ इस सघ की सदस्य है। सघ का कार्यक्रम है सामूहिक प्रैक्टिस, पूर्व अदायगी, व्यापक रूप की तात्कालिक सेवा-परिचर्या और उपभोक्ता के स्वतःप्रेरणा को प्रोत्साहित करना। इसीलिए अमरीकी सामूहिक स्वास्थ्य संघ की प्रगति ही वह पैमाना है जिससे अमरीका को अधिक स्वस्थ बनाने की दिशा मे उठाये गए इन सुविचारित कदमों की प्रगति को नापा जा सकेगा।

विशाल जन-सहायता वाला यह संगठन ही १९५९ से चिकित्सा परिचर्या के उपभोक्ताओ का प्रमुख,एक मात्र कहना ज्यादा सही होगा, हित संरक्षक और प्रवक्ता है। क्योकि १९५९ मे ही दो सगठनों ने मिलकर इस अमरीकी सामूहिक स्वास्थ्य सघ का निर्माण किया था। उनमें से एक था अमरीकी श्रमिक स्वास्थ्य संघ; (American Labour Health Association); सयुक्त राज्य की प्राय: सभी श्रमिक-संघ प्रायोजित स्वास्थ्य योजनाओ के प्रशासक एवं प्रतिनिधि इस संगठन के सदस्य थे। दूसरा था अमरीका का सामूहिक स्वास्थ्य महासघ (Group Health Federation of America), यह ज्यादा बडा और ज्यादा पुराना संगठन था और १९४६ मे कुछेक श्रमिक स्वास्थ्य योजनाओ और सयुक्त राज्य तथा कनाडा की दो-एक को छोड़कर अधिकाश महत्त्वपूर्ण सहकारी एव सामूदायिक स्वास्थ्य योजनाओ को सम्मिलित कर सहकारी स्वास्थ्य महासघ (Co-operative Health Federation) के नाम से इसकी नीव डाली गई थी।

---

४ | घर और पड़ोस

हमारी अर्थ व्यवस्था मे आज ऊपर से सब-कुछ ठीक होने की जो स्थिति-आर्थिक स्वास्थ्य-दिखाई देती है वह नितान्त भ्रामक है। वास्तव मे हमारी अर्थ-व्यवस्था को गहरी बीमारी लग चुकी है। जिस मूल्य पर बेचने के आग्रह के साथ अमरीकी उद्योग जो उत्पादन कर रहा है उसकी निकासी का बाजार बहुत ही नगण्य है; क्योंकि हमारा उद्योग उसी परिमाण मे जनता की क्रयशक्ति को पैदा नही कर पा रहा है। समग्र मूल्यों और समग्र सार्थक माँग के बीच की खाई वास्तव मे बहुत चौड़ी है। यह खाई पैदा हुई है हमारी अर्थव्यवस्था मे औद्योगिक माल के 'व्यवस्थापित' अधिमूल्यन की रीति और व्यवसाय के अन्दर से ही पूँजीग खर्चो के लिए उनका लागत माल के उपभोक्ता मूल्य मे जोडकर, आन्तरिक वित्तिय-प्रबन्ध की पद्धति से।

सयुक्त राज्य इस्पात कारपोरेशन (United States Steel Corporation) ने 'इस्पात और मुद्रा स्फिति से सम्बन्धित तथ्य एव कपोल कल्पनाएँ'. नामक अपने एक वक्तव्य मे स्वय ही कहा है कि हमारी अर्थ व्यवस्था मे सभी कीमतो का ८८ प्रतिशत 'व्यवस्थापित' है।

जहाँ पर सपत्र (प्लाट) के लिए निवेश की वित्त-व्यवस्था आन्तरिक स्रोतो (साधनों) से, अर्थात् व्यवसाय से नि.सृत निगम अधिशेषो से की जाती है, वहाँ यह एक साधारण-सा तथ्य है कि ऐसे सपत्रों की लागत उन उद्योगो के उत्पादनो के उपभोक्ताओं द्वारा ही चुकाई हुई होती है। एकाधिकारी लाभ उत्पादित माल के समग्र मूल्यो एव उपभोक्ताओ की सार्थक क्रय शक्ति के बीच की खाई के विस्तार का निर्धारित करते है; और नई पूँजी जमा किये विना सपत्र के लागत की वित्तीय व्यवस्था उस खाई का एक घटक है।

उस खाई को बहुत-कुछ अंशों मे निम्न उपायों से पाटने का प्रयत्न किया जा रहा है : सारे सैनिक खर्चे और उपभोक्ता ऋण मे वृद्धि और बन्धक तथा लम्बी

अवधि के ऋण मे बहुत अधिक मात्रा मे वृद्धि और स्थानीय, राज्य की अथवा सघ की सरकार के घाटे और वे हानियाँ जो छोटे एव प्रति स्पर्धी व्यवसायों को लागत से कम मूल्य पर अपना माल बेचने की विवशता के कारण होती है, जैसा कि हमारे किसानों को आमतौर पर मजबूर होकर करना पडता है।

लेकिन इतनी बडी आर्थिक सहायता के बावजूद हमारे निर्माताओ को अपने माल के धारा प्रवाह उत्पादन को खपाने के लिए बहुत बड़े पैमानों पर बहुत खर्चीले और अजीबोगरीब विज्ञापनो एव बिक्री बढाने के अन्य अनेक साधनो को काफी अधिक मात्रा मे अपनाना पडता है।

यही स्थिति बनी रही तो हमारी अर्थ-व्यवस्था का शीघ्र अन्त हो जाएगा।

और सच तो यह है कि यदि उपभोक्ता ऋण का इतना अधिक फैलाव न होता और हमारी जनसख्या मे इतनी तेजी से वृद्धि न हो रही होती तो अन्त कभी का हो भी जाता। अमरीकी परिवार इतने विलासप्रिय और शौकीन तो हो ही सकते है और सम्भवत है भी जो यह सोचे कि उनमे से हरएक के पास दो-दो मोटरे, दो-दो टेलीविजन, एक बहुत बढ़िया रेफ्रिजरेटर और उपनगर मे काफी महँगा मकान होना चाहिए। लेकिन आज या आगे कभी भी कोई भी परिवार तीन या चार मोटरे, चार या पॉच टेलीविजन सेट, एक से अधिक रेफ्रिजरेटर या पचास हजार डालर से अधिक महँगा मकान नही खरीद सकता। विलास वस्तुओ की खपत की भी अपनी सीमाएँ है। एक सीमा तो यही कि औसत युवा परिवार पारिवारिक ऋण का बोझ केवल एक हद तक ही बढा सकता है, उससे अधिक नही। दूसरी सीमा है जिस उपहासास्पद वस्तु-पूजा के फेर मे हमारी वर्तमान अर्थ व्यवस्था ने हमे डाल रखा है उसके प्रति स्वस्थ, स्वाभाविक विरक्ति का भाव, जिसके चिन्ह अब निश्चित रूप से दिखाई देने लगे है। और जहाँ तक मोटरो का प्रश्न है वे तो अधिक इसलिए नही बिक पाती कि खरीदार के लिए उन्हे खडा रखने की जगह पाना सचमुच ही असम्भव होता जा रहा है। इसी कष्ट के कारण तो लोग सार्वजनिक यातायात का अधिकाधिक उपयोग करने लगे है और बहुत कुछ पैदल आवागमन का भी।

सौभाग्य से इस असन्तुलन को काफी हद तक सुधारने का उपाय है और उसकी उपयुक्तता प्रमाणित भी हो चुकी है। सुधार का वह उपाय है व्यवसाय के स्व-

यीत्व को लाखों लोगों मे विस्तारित कर देना। इससे लोग ऐसे कुछ औद्योगिक सपत्रो के स्वामी बन सकते है जिनकी कीमत वास्तव मे वे स्वयं ही चुका रहे होते है। यह लोक समूहो द्वारा व्यावसायिक उद्यमों का ऐसा सगठन है जिसका सुनिश्चित प्रयोजन उन्ही लोगो की माँगोकोपूरा करना है। यह **उपभोक्ता-दिदेशित उत्पादन** और वस्तुओं तथा सेवा का वितरण है। सुधार का यह उपाय अधिकाधिक मात्रा मे एक प्रकार की ऐसी प्रतिद्वद्विता को जन्म देता है जिसे एकाधिकार न तो डरा पाता है और न खरीद ही सकता है, बल्कि जो वर्तमान स्थिति की बहुत बड़ी खराबियो को केवल इसलिए ठीक कर सकती है, कि वह होती ही है लोगों की आवश्यकताओ को पूरा करने के लिए, न कि उनकी सनको से अनुचित लाभ उठाने के लिए। व्यावसायिक सगठन के जिस रूप के द्वारा इस सुधार को कार्यान्वित किया जाता है वह सहकारी अथवा पारस्परिक व्यवसाय कहलाता है।

उदाहरण देना ठीक रहेगा।

१९६० की १६ फरवरी को न्यूयार्क के गवर्नर नेल्सन राक फेलर ने यह घोषणा की कि जमैका (लाग आइलैण्ड) के घुडदौड मार्ग पर ६३०० गृह-इकाइयाँ शीघ्र ही निर्मित की जाएगी। उन्होने यह भी घोषणा की कि इस बस्ती का नाम रोशडेल (इगलैण्ड) मे, १८४८ मे, पहली उपभोक्ता सहकारी स्थापित करने वाले २८ गरीब बुनकरो के सम्मान मे रोशडेल ग्राम रखा जाएगा। गवर्नर महोदय ने अपनी घोषणा मे यह भी बताया कि इस निर्माण-योजना के लिए आवश्यक बन्धक पूँजी की व्यवस्था मुख्य रूप से जिन तीन स्रोतो से की जाएगी वे है . राजकीय शिक्षा-को की निवृत्ति निधि से २ करोड़ ८० लाख डालर; राजकीय कर्मचारियो की निवृत्ति विधि से भी लगभग इतनी ही रकम; और राजकीय गृह एव अवास बिभाग से १ करोड़ ८० लाख डालर।

. उन्होने यह भी कहा कि देश और सम्भवत: विश्व की इस सबसे बडी सहकारी गृहनिर्माण योजना का प्रयोजक, निर्माता और उन्नायक सयुक्त आवास प्रतिष्ठान (United Housing Foundation) रहेगा।

गवर्नर महोदय की घोषणा को २४ घण्टे भी पूरे नही हो पाये थे कि संयुक्त आवास प्रतिष्ठान के पास दो हजार से भी अधिक आवेदन-पत्र पहुँच

गए। ये उन लोगों ने भेजे थे जो ६२९९ अन्य परिवारों के साथ रोशडेल ग्राम मे रहने और उसके स्वामी बनने के इच्छुक थे। इन लोगो ने इमारतों के नकशे अथवा चित्र नही देखे थे। इन्हे सिर्फ इतना ही बताया गया था कि अपने नये मकानो मे रहना शुरू करने पर उन्हे पहली बार नकद और बाद मे मासिक कितनी रकम देनी होगी। और अधिकतर लोग तो पहली बार की नकद रकम उसी समय देने को तैयार थे।

इसका कारण क्या था ? '

कुछ तो यह कि सयुक्त राज्य मे मध्य और निम्नवित्त परिवारो की अच्छे पडोस मे अच्छे मकान पाने की विशिष्ट आर्थिक मॉग आज भी पूरी नही हो पाई है।

और कुछ यह कि रोशडेल ग्राम सयुक्त आवास प्रतिष्ठान द्वारा हाथ मे ली जाने वाली दूसरी गृह निर्माण योजना थी और जनता का इस प्रतिष्ठान मे विश्वास था और लोग जानते थे कि जो मकान बनाये जाएँगे वे मुनाफे पर बेचने के लिए नहीं होंगे, बल्कि ज्यादा-से-ज्यादा परिवारो को अच्छे पडोसियो वाले अच्छे मकान इतने लागत मूल्य पर दिये जाएँगे जो उन्हे भारी नही पडेगा।

साथ ही न्यूयार्क सिटी के निवासियो को यह अनुभव भी हो चुका था कि उपभोक्ता प्रायोजित सहकारी निर्माण योजना के अन्तर्गत जो मकान बनाये जाते है वे लोगों की गृह-सम्बन्धी मॉग को पूरा करने के अतिरिक्त और किसी भी प्रयोजन के लिए नहीं होते। इस प्रकार का गृह-निर्माण उपभोक्ता-निदेशित उत्पादन का सबसे प्रभावशाली उदाहरण है। इस ढग पर जिन वस्तुओं अथवा सेवाओं का उत्पादन किया जाता है वे उत्पादन के पूर्व ही बिक जाती है, जैसा कि रोशडेल ग्राम के उन मकानो का हुआ जिनका अभी अस्तित्व भी नही था।

यहॉ थोड़ा स्पष्टीकरण आवश्यक है।

आज कोई १ लाख ४० करोड़ अमरीकी परिवार या तो रद्दी या फिर गन्दी बस्तियॉ वाले मकानों मे रहते है। और बहुत से परिवार तो अपना मकान खरीदने के लिए सामर्थ्य से बहुत अधिक पैसा खर्च करके ही इस दुर्भाग्य से बच पाये है। फिर भी हमारी कुछ महानगरियो मे मकान बनाने सम्बन्धी रोजगारों मे बहुत ज्यादा बेकारी है।

इस सब के दुहरे कारण है। एक तो यह कि हम काफी सख्या मे नये मकान नही वना रहे और न महानगरो के कलक स्वरूप गन्दी बस्तियो को ही साफ करने की दिशा मे काफी-कुछ कर रहे है। दूसरे यह कि जो भी मकान बनाये गए उनमे से अधिकतर बहुत महँगे और विलास की चीज हो गए है। १५ हजार डालर से कम कीमत वाले मकान अपेक्षाकृत बहुत ही थोड़े है—लगभग नही के बरावर। उतना महँगा मकान खरीदने के लिए एक परिवार की कम-से-कम वार्षिक आय ७ हजार डालर होनी चाहिए, जब कि इतनी आय वाले परिवार अमरीका मे अल्प सख्या मे ही है।

हमारा गृह-निर्माण उद्योग जैसे मकान चाहता है बनाता है, जो कीमत चाहता है वसूल करता है; आम तौर पर वह इस वात की परवाह ही नहीं करता कि लोग क्या चाहते है और कितना दे सकते है।

इसलिए कुछ बुद्धिमान लोगो ने इस सारी प्रक्रिया को ही उलटने और ऐसे मकान बनाने को सोची जिनकी लोगो को जरूरत है और कीमत भी उनकी पहुँच से परे न हो। इसको करने का एकमात्र सही ढग यही है कि जिन लोगो को मकानो की आवश्यकता है उन्ही को इस सम्बन्ध मे निर्णय भी करने दिया जाए। दूसरे शब्दो मे यह कि मकान चाहने वालो की सहकारी सस्था बनाई जाए, उनकी आवश्यकता और जेब का पूरा-पूरा ध्यान रख कर मकान बनाये जाएँ और जब मकान बनकर तैयार हो जाएँ तो सहकारिता के आधार पर उन्ही को उनका कब्जा दे दिया जाए।

ऐसी हालतों मे बिक्री के लिए एँडी-चोटी का जोर लगाने की कोई जरूरत न होगी। बनने से पहले ही वे मकान उनमे रहने वाले परिवारो के होजाते है।

न्यूयार्क के निचले ईस्ट साइड का एक पूरा हिस्सा इसी पद्धति का अव-लम्बन करके गन्दी बस्ती से सुन्दर मकानो वाली शरीफ आदमियो और भले पडो-सियों को आबादी मे बदल दिया गया है। इन मकानों को बनाने की लागत व्यावसायिक ढग पर बने मकानों की अपेक्षा २५ से ३० प्रतिशत कम हुई है। इन सहकारियो में चार कमरों वाले हिस्सों का औसत मासिक शुल्क सारी लागते (खर्चे) जोड़ कर ६० से ७० डालर है, जो ७२० से ८०० डालर प्रति वर्ष हुआ। जिन परिवारों की वार्षिक न्यूनतम आय ४ हजार डालर है वे सिर पर

बहुत अधिक कर्ज ओढ़े बिना इतने मूल्य के मकान आसानी से ले सकते हैं।

इस पर थोड़ा और विचार करने की जरूरत है। मान लीजिए कि हर एक महानगर मे न्यूयार्क की ही तरह के सक्षम सेवा सगठन हो, जो मकान चाहने वाले लोक-समूहो को सलाह और निर्देशन का कार्य तत्परता एव सुयोग्यता से करे जिससे उन्हे अपेक्षित मकान गृह निर्माता सहकारियो के द्वारा उपलब्ध हो सके तो सहकारी आधार पर बने वे सारे ही मकान लोगो की आवश्यकताओं एव आर्थिक स्थितियो के सर्वथा अनुकूल हेग। लेकिन तब दूसरे मकान-निर्माता क्या करेगे ? वे अवश्य प्रतियोगिता करेगे। वे भी ठीक वैसा ही करने का—सहकारियों से ज्यादा अच्छा काम कर दिखाने का प्रयत्न आरम्भ कर देगे। और बहुत सम्भव है कि उनमे से कुछ इसमे सफल भी हो जाएँगे।

तो इस प्रकार सरकार की आर्थिक सहायता के विना लोगो के अपने ही प्रयत्न, अपने ही पूँजी-निवेश और अपनी ही बुद्धि के बल पर अमरीकी जनता को आवास समस्या हल होती दिखाई देगी।

इतना ही नही, सार्थक माँग और उसकी आपूर्ति के बीच एक ऐसा सन्तुलन भी स्थापित हो जाएगा जो गृह निर्माण उद्योग को काफी समय के लिए पूरा काम और पूरा रोजगार देने की उचित गारटी कर सकेगा।

मूल्य के स्फीतीकरण को भी रोकने का यह एक प्रभावशाली ढग होगा. क्योंकि बहुत-सी व्यावसायिक प्रतियोगिता तो ऐसे ही सगठनो द्वारा की जाएगी जिनके स्वामी ही उनके उत्पादन के देयक की अदायगी कर रहे होगे।

संयुक्त राज्य अमरीका मे सहकारी गृह-निर्माण १९२६ मे आरम्भ हुआ, जिसे अधिक समय नही कहा जा सकता। अमलगामेटेड क्लोदिग वर्कर्स यूनियन (समामेलित पोशाक मजदूर सघ-Amalgamated Clothing Workers Union) के कुछ सदस्यों और पदाधिकारियो के बुद्धिमत्तापूर्ण निश्चय से यह काम शुरू होता है। उस समय वे लोग मन्दी और गरीबी की मार से उतने ही परेशान थे जितने कि राशडेल के वे २८ बुनकर जिन्होने १८४८ मे इग्लैण्ड के रोशडेल नामक स्थान मे पहली उपभोक्ता सहकारी शुरू की थी, या फिर कोनेक्टिकट के उन दूध उत्पादक किसानों की तरह जिन्होंने १८०४ मे सयुक्त राज्य अमरीका मे किसानो की पहली सहकारी विक्रय समिति बनाई थी।

सबसे पहले तो इन पोशाक मजदूरो ने यह हिसाब लगाया कि जिन खस्ताहाल कमरों मे वे अभी अपने परिवारों के साथ रहते है उनको कुल किराया कितना देना पडता है। सम्मिलित किराये की इस रकम को उन्होंने अपनी पूँजी बनाया। फिर उन्होंने यह पता लगाया कि न्यूयार्क क्षेत्र में रिहायशी कमरों वाली इमारते बनाने की लागत क्या बैठती है। उन्होंने यह भी मालूम किया कि बन्धक पूँजी की दरे क्या है। इस सारी खोज-बीन के बाद वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि यदि हमी अपने गृह-स्वामी बन सके अर्थात् स्वय मकान बनाये और स्वय ही उनके स्वामी बन जाएँ तो रहने को बढिया मकान भी मिलेगे और पैसा भी बचेगा। अन्त मे योजना को विधिवत रूप देने और विशेष रूप से यह पता करने के लिए कि रुपया कहाँ से उधार मिल सकता है, उन्होंने एक समिति नियुक्त कर दी। सौभाग्य से इस सारे उद्यम की व्यवस्था करने के लिए उन्हे अब्राहम ई० कजान मिल गए, जो कद मे तो अवश्य छोटे परन्तु सूझ-बूझ और दूरदर्शिता मे पर्वताकार है। पोशाक मजदूरो ने उन्ही को अपना व्यवस्थापक चुन लिया।

कजान जो आजकल सयुक्त आवास निगम के अध्यक्ष है, तभी से अमरीका मे सहकारी गृह निर्माण अध्यवसाय की मुख्य प्रतिभा और प्रमुख प्रेरणा रहे है।

उस पुरोगामी प्रयत्न का प्रतिफल हुआ अमल्गामेटेड हाउसिग कारपोरेशन की स्थापना के रूप मे, इसी निगम ने वान कार्ट लैण्ट पार्क के किनारे रिहायशी कमरों वाली इमारत प्रायोजित और निर्मित की। एक सहानुभूति रखने वाली बैंक, जो इस योजना के महत्त्व को समझती थी, उसने बन्धक पर कर्ज देना स्वीकार कर लिया। बैंक के लिए यह निवेश बड़ा ही सुरक्षित और बिना जोखिम का सिद्ध हुआ। आगे चल कर उसने ऐसे और भी बहुत से निवेश किये। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि न्यूयार्क के किसी भी सहकारी गृह-निर्माण सघ ने एक भी किस्त चुकाने मे कभी देर नही की—ब्याज और पूरा मूल धन उनके द्वारा हमेशा ठीक समय पर चुकाया जाता रहा है।

यह अमल्गामेटेड निर्माण योजना बहुत ही सफल रही। बहुत ही कम लागत पर इसने अच्छे मकान ही उपलब्ध नही किये, अमरीका के सबसे बड़े नगर के बीच मे सच्चे पड़ोसियों और अच्छे पड़ोस का भी सृजन किया। इसने

अच्छे पड़ोसियों वाली एक ऐसी बस्ती का निर्माण किया जहाँ सभी विषयों पर विचार-गोष्ठियाँ और भाषाण-मालाएँ आयोजित की जाती है, जहाँ बच्चों के लिए बाल मन्दिर और सैर-सपाटों (समर कैम्प्स) का प्रबन्ध किया जाता है, जहाँ पड़ोसी ही पडोसियो के पारस्परिक लाभ के लिए सहकारी खाद्य भण्डार, साख-सघ और बीमे का काम सचालित करते है। उद्यानों, निकुजों और इमारतो पर चढ़ी अगूरी लताओ पर यहाँ के परिवारो को बडा नाज है। अपनी बस्ती को साफ सुथरा रखने और उसकी देख-भाल करने मे यहाँ के निवासी बडे गौरव का अनुभव करते है इसीलिए सहकारी स्वामीत्व वाली इमारतो के रख-रखाव का खर्च प्राय: किराये पर उठाई गई मालिकाना इमारतों अथवा सरकारी स्वामीत्व वाले निवास भवनों की अपेक्षा आधा ही पडता है।

लेकिन अमलगामेटेड के गृह-स्वामियो और उनके-जैसे अन्य गृह-समूहों के सम्बन्ध मे जो सबसे महत्त्वपूर्ण उल्लेखनीय बात है वह यह कि वहाँ अपराध अथवा अपचार बहुत ही कम मात्रा मे पाये जाते है। वान कार्टलैण्ड पार्क के वर्तमान निवासियों मे से तीन चौथाई परिवार या तो वे ही है अथवा उनके वशज जो १९२६ मे यहाँ रहने के लिए आये थे। मगर वहाँ पर भीषण अपराध का एक भी मामला या बाल अपचार का कोई भी गम्भीर काण्ड आज तक नही हुआ।

सहकारी गृह स्वामीत्व अपने पड़ोसियो पर गर्व और अभिमान की भावना को जन्म देता है। बिलकुल स्वाभाविक भी है। अच्छे मकान और अच्छे पड़ोस उपलब्ध करने मे पारस्परिक सहायता की भावना असंदिग्ध रूप से एक ऐसी सामूहिक नैतिकता। और आचरण सहिता के ऐसे मानों का सृजन करती है जिनके सामाजिक मूल्यो को आँकना सरल नही है।

जैसे-जैसे समय बीतता गया अमल्गामेटेड आवास निगम अपने मूल भवन-समूह मे कई नये भवनो की वृद्धि करता चला गया।

इस पहले प्रयत्न की सफलता से प्रोत्साहित होकर न्यूयार्क सिटी के अन्य भागों मे भी धीरे-धीरे ऐसे कई प्रयत्न प्रारम्भ हुए। उन आरम्भिक प्रयत्नों का प्रयोजन अमल्गामेटेड क्लोदिग मजदूर सघ ने किया और उन्हे वित्तीय सहायता दी सेविग बैंकों ने, जिनका कजान महाशय पर पूरा-पूरा विश्वास था।

लेकिन द्वितीय महायुद्ध की समाप्ति के बाद के वर्षो तक इस आन्दोलन के

विकास की गति मे तेजी नही आ पायी। फिर इटर नेशनल ब्रदर हुड आफ इलेक्ट्रिकल वर्कर्स और इटर नेशनल लेडीज गारमेण्ट वर्कर्स जैसे शक्तिशाली श्रमिक सगठनों ने इसमे रुचि लेना आरम्भ किया। कुछ बड़े-बडे साखसघ और अन्य सहायता-सगठन भी इस ओर झुके। और इन सब की रुचि केवल निर्माण योजनाओ को प्रायोजित करने तक ही सीमित नही रही, ये बन्धक वित्त की व्यवस्था भी करने लगे। कुछ बीमा कम्पनियाँ भी निर्माण योजनाओ के लिए वित्तीय प्रबन्ध करने के कार्य मे सम्मिलित हो गई। अधिकाश निर्माण-कार्य निम्न ईस्ट साइड के कोरलियर्स हूक विभाग मे ही केन्द्रित रहे। किसी जमाने मे यह घनघोर गन्दी बस्तियो वाला क्षेत्र था, लेकिन १९६० तक सहकारी ग्राम (कोआपरेटिव विलेज) के नाम से सुविख्यात चहल-पहल और सुषमा-सौन्दर्य से भरी सहकारी बस्ती मे परिवर्तित हो गया; ५ हजार परिवार इसके रिहायशी कमरो के स्वामी है; कई साख-सघ उनकी विभिन्न आवश्यकताओ को पूरा करती है, सहकारी स्वामित्व का बहुत ही बढ़िया वृहद् भण्डार (सुपर मारकेट) है और बच्चो के लिए कई शानदार क्रीडागण भी।

दूसरा महायुद्ध आरम्भ होने से पहले ही न्यूयार्क के निवासियो के मन मे यह बात घर कर गई थी कि सहकारी गृह-निर्माण बहुत ही बढिया बात है।

लेकिन युद्ध के दिनों मे गृह-निर्माण का कार्य कुछ भी नही हो पाया, जो स्वाभाविक ही था। हर महीने आवश्यकताएँ बढ़ती गईं; और साथ ही बहुत से परिवारों की बचत राशियाँ भी। इसलिए जैसे ही शान्ति स्थापित हुई इस दिशा मे क्रियाशीलता की लहर-सी उमड़ पडी। लेकिन निर्माण-कार्य अब भी न्यूयार्क सिटी मे ही केन्द्रित रहा। ओहियो के डैटन, इडियाना के साउथ बैण्ड, टेक्सास के डल्लास और कुछ अन्य स्थानो मे सामरिक श्रमिकों के लिए निर्मित सरकारी मकानों मे रहने वाले किरायेदारों ने अपने-अपने सहकारी संघ बनाकर उन किराये के मकानों को सरकार से खरीद लिया। लेकिन जितने अच्छे और सुविधाजनक कानून न्यूयार्क मे थे वैसे और कही नही थे। न न्यूयार्क के अतिरिक्त कहीं पर खाली जमीन को आनन्दित पड़ोसियों को सुख-चैनवाली बस्तियो के रूप मे परिवर्तित करने वाली सहकारी गृह निर्माण की सफलता का प्रत्यक्ष प्रमाण ही उपलब्ध था; और न कही

पर कोई कजान ही था।

लोगो को रुचि ने इतना व्यापक रूप ग्रहण कर लिया कि सहकारी गृह-निर्माण को बढ़ावा देने के लिए एक सगठन बनाने की कोशिशे की गई। लेकिन इस तरह के सारे प्रयत्न दुराशा ही सिद्ध हुए। मुख्य रूप से दो विचार धाराएँ सामने आई। एक के प्रबल समर्थक थे श्री ए० ई० कजान और उनके निकटस्थ साथी जो सहकारिता के अपने सम्यक् सिद्धान्तों मे परिवर्तन या समझौता करने को रच-मात्र भी तैयार नही थे, क्योंकि वे बार-बार इन सिद्धान्तो को आचरण की कसौटी पर कस चुके थे, और न वे इसी बात के लिए राजी हुए कि सिद्धान्तो और कार्यक्रम को इतना व्यापक बना देना चाहिए जिससे हाथ मे ली हुई उनकी हर निर्माण-योजना के लिए निर्धारित मान-दण्ड ही खतरे मे पड जाएँ। उनकी दुनिया और उनका कार्य क्षेत्र न्यूयार्क सिटी तक ही सीमित था। दूसरी ओर वे लोग थे जो कजान और उनके सहयोगियों के कार्य और सफलताओं के महत्त्व को स्वीकार करते हुए भी इस बात को बडी तीव्रता से अनुभव करते थे कि सहकारी गृह-निर्माण से न्यूयार्क के बाहर के लोगों को भी लाभान्वित किया जाना चाहिए; और इसीलिए उनका कहना था कि यदि अधिकाधिक मात्रा मे मकान उपलब्ध किये जा सके तो शुद्ध सहकारी प्रणालियों के अपनाये जाने पर इतना अधिक जोर नही भी देना चाहिए।

अन्त मे परिणाम यह हुआ कि तीन सगठन बन गए—तीनों का केन्द्र न्यूयार्क ही रहा और तीनों एक-दूसरे से सर्वथा स्वतन्त्र और बहुत-कुछ भिन्न ढग से अपना-अपना काम करने लगे।

इनमे सबसे पहला और शक्तिशाली सगठन था युनाइटेड हाउसिंग फाउण्डेशन (सयुक्त आवास प्रतिष्ठान) जिसके आगे चल कर ए० ई० कजान अध्यक्ष बने। न्यूयार्क की महानगरी मे एक के बाद एक निर्माता सहकारियों को विकसित करने मे जो नीतियाँ बार-बार परखी जाकर सफल प्रमाणित हो चुकी थी उन्ही पर यह संगठन चलता रहा। इस प्रतिष्ठान का अधिकाश काम-काज नगर के निम्न ईस्ट साइड मे ही केन्द्रित रहा।

१९५९ तक न्यूयार्क के १२ हजार परिवार बहुत ही बढ़िया और साथ ही रिहायशी कमरों वाली अत्यन्त सस्ती इमारतों मे बसा दिये गए और वे

ही परिवार उन इमारतो के स्वामी भी थे, जो सयुक्त आवास प्रतिष्ठान के प्रयत्नों का ही सुफल था। साफ दिखाई दे रहा था कि आगामी कुछ वर्षों मे यह सख्या तिगुनी हो जाएगी। अमलगामेटेड श्रमिको के अतिरिक्त अन्य श्रमिक सगठनों ने भी इस काम मे रुचि दिखाई। इटर नेशनल लेडीज़ गारमेण्ट वर्कर्स यूनियन ने निम्नतर ईस्ट साइड मे इल्वु ग्राम नामक एक निर्माण योजना प्रायोजित की और उसके लिए डेढ़ करोड डालर का बन्धक ऋण भी प्रदान किया। १९५६ मे जब यह ग्राम अपने सरक्षकों को सौपा गया तो उस उद्-घाटन समारम्भ मे, न्यूयार्क से सयुक्त राज्य की सीनेट के दोनों सदस्य, नगर के महापौर (मेयर), नगर परिषद् के अध्यक्ष (Borough Council), अनेक काग्रेसमैन, अमरीकी श्रमिक महासघ (American Federation of Labour) के अध्यक्ष, श्रीमती फ्रैंकलिन डी० रूजवेल्ट एव राज्य तथा राष्ट्र के अनेक नेतागण उपस्थित थे। और वहाँ उपस्थित सभी ने इस बात को निर्विवाद रूप मे स्वीकार किया कि सयुक्त आवास प्रतिष्ठान के ढग पर गिया गया सहकारी गृह निर्माण अमरीका के नगर जीवन के लिए, बडे महत्त्व का रचनात्मक कार्य है।

इसका प्रमुख कारण तो यही था कि इस प्रकार को गृह-निर्माण योज-नाओं मे सम-स्वामीत्व का क्रमिक अधिकार प्रदान करते जाने वाले अश (साम्या-स्वामीत्व) समेत जो मासिक धन-राशि ली जा रही थी वह इसी कोटि के व्याव-सायिक मकानो के सादे किरायो की अपेक्षा २० से ३० प्रतिशत कम थी ओर अब भी है। और इस कमी या बचत का बुनियादी कारण यही है कि सहकारी गृह-निर्माण मकानो का उपभोक्ता-निदेशित उत्पादन होता है—एक ऐसा उत्पादन जो वास्तविक आवश्यकताओं के ही आधार पर ठीक-ठीक तुष्टि के लिए आव-श्यकताग्रस्त लोगो के द्वारा ही किया जाता है।

यह सच है कि न्यूयार्क मे दूसरे किसी भी लाभार्जन-विहीन मकान की ही तरह सहकारी मकान को भी कर मे कुछ छूट दी जा सकती है। इस तरह का कानून दूसरे किसी भी राज्य मे नही है। और सहकारी मकान के लिए विशेष प्रकार का कर-प्रावधान तो निश्चित रूप से कही भी नही है। दूसरे किसी भी प्रकार के मकान को जितने कर देने पड़ते हैं ठीक उतने ही सहकारी मकान

भी चुकाता है। लेकिन न्यूयार्क मे किसी भी प्रकार का लाभार्जन विहीन मकान, जिसमे सहकारी मकान भी समाविष्ट है, पच्चीस वर्षो के लिए कर मे छूट पाने की अर्हता प्राप्त कर सकता है। यह कर से मुक्ति तो किसी भी प्रकार नही है। न्यूयार्क के कानून के अन्तर्गत लाभार्जन-विहीन मकानो को इतनी छूट अवश्य दी गई है कि वे पच्चीस वर्षो तक उतना ही कर दे सकते हैं जितना कि नया निर्माण होने से पहले उस सम्पत्ति से लिया जा रहा है। इससे सदस्य-स्वामियो मे ली जाने वाली मासिक धनराशि को न्यून करने मे कुछ सहायता अवश्य मिल जाती है, लेकिन इसे सहकारी मकानो को दी गई 'विशेष सुविधा' तो कदापि नही कहा जा सकता। यह केवल विशेष प्रावधान है, जो न्यूयार्क के कानून मे लाभार्जन-विहीन मकानो के लिए किया गया है।

युद्धोत्तर काल मे इस क्षेत्र मे सयुक्त आवास प्रतिष्ठान अकेला ही काम नहीं कर रहा था। मध्यवित्त आवास निगम (Middle Income Housing Corporation) ने भी कई धार्मिक एव शैक्षिक सस्थाओ द्वारा प्रायोजित मार्निंग साइड हाइट्स् हाउसिग कोआपरेटिव के निर्माण, विकास और अधिभोग (दखल किये जाने के कार्यो) के निर्देशन द्वारा कार्यारम्भ किया। इसके बाद नगर और राज्य के साख-सघों द्वारा प्रायोजित चैथम ग्रीन हाउसिग कोआप-रेटिव ने कार्य शुरू किया। राष्ट्रीय साख सघ के नेता विलीयम रीड, जो आगे चल कर न्यूयार्क सिटी आवास आयोग के अध्यक्ष हुए, मध्यवित्त आवास निगम के सभापति बनाये गए।

सयुक्त आवास प्रतिष्ठान की कमियों को काफी हद तक सहकारी आवास प्रतिष्ठान (The Foundation for Co-operative Housing) ने एक दूसरी दिशा मे पूरा किया। सहकारी आवास प्रतिष्ठान की स्थापना विनस्जो कार्लटन ने की, जो जन-सेवी नागरिक नेता और एक उपभोक्ता-अभिप्रेरित स्वास्थ्य बीमा कम्पनी के अध्यक्ष है, इस प्रतिष्ठान को चलाने के लिए पूँजी का अधिकाश प्रबन्ध भी उन्हीने किया। सहकारी आवास प्रतिष्ठान ने सारे राष्ट्र मे अपनी नजर दौड़ाई और सामान्यतः राष्ट्रीय आवास समस्या पर विचार किया और तब सारे देश मे कही पर भी सहकारी गृह निर्माण के संचालन मे सलाह और सहायता देने के लिए लैस हुआ। इसका काम सयुक्त

आवास प्रतिष्ठान की अपेक्षा कम गहन और अधिक व्यापक है, जिन निर्माण योजनाओ को यह कार्यान्वित करता है उनमे सहकारिता के सभी सिद्धान्तो को लागू किये जाने का इसका विशेष आग्रह भी नही रहता। इसका उद्देश्य अपने कार्य और प्रभाव को अधिकाधिक व्यापक और विस्तारित करते जाना है। इसने कनेक्टिक्ट के ब्रिजपोर्ट मे, मेरीलैण्ड के ग्रीन वेल्ट मे, मिसौरी के कनसास सिटी मे और दर्जनो दूसरे स्थानो मे मकानो के स्वामीत्व को सहकारी स्वामीत्व मे परिवर्तित किया। ब्रिजपोर्ट मे हस्तान्तरण का यह कार्य मकानो को खरीदने के बाद नेशनवाइड इन्श्युरेन्स कम्पनी के द्वारा किराये दारो के हाथ उन्हे पुनः बेच कर सम्पन्न किया गया।

१९५० मे वाशिगटन मे एक ऐसी घटना घटी जो आगे चल कर ऊपर वर्णित तीनो सगठनों, सयुक्त राज्य की सहकारी लीग (Cooperative League of the United States) और सहकारी आन्दोलन से सम्बन्धित हर व्यक्ति के लिए अच्छी-खासी मुसीबत, कहना चाहिए कि एक चुनौती ही बन गई। इसी वर्ष संयुक्त राज्य की काग्रेस ने सघीय आवास अधिनियम (Federal Housing Act) की धारा २१३ को कानून का रूप दे दिया। इस नये कानून ने सहकारी गृह निर्माण योजनाओ को दिये जाने वाले कर्जों का सघीय आवास अधिनियम के द्वारा बीमा करवाना आवश्यक कर दिया। और निर्माण योजनाओं के स्वरूप मे भी कुछ सशोधन कर दिये गए। अब इन सशोधित निर्माण योजनाओं को उपभोक्ता, निर्माता अथवा पूँजी निवेश करनेवालो मे से कोई भी प्रायोजित कर सकता था। ऋण की अदायगी और ब्याज की शर्तो मे भी काफी सुविधाएँ दे दी गई।

इसका परिणाम यह हुआ कि सारे देश मे विभिन्न रूप-रगों और आकार-प्रकारो की सहकारी गृह निर्माण योजनाओं की बाढ़-सी आ गई। उनमे से कुछ योजनाएँ, और विशेषकर वे सब जिनका संचालन और निर्देशन ऊपर बताये हुए सगठन कर रहे थे, अवश्य अपने बहुलांश मे शुद्ध सहकारी ही थी; लेकिन दूसरी बहुत-सी तो रिहायशी कमरों के नाम पर निरे विलास-कक्ष बनाने वाली ऐसी योजनाएँ थी, जिनके लिए अधिनियम की 'सहकारिता' वाली धारा ने वित्तीय प्रबन्ध का बड़ा ही सुविधाजनक ढंग प्रस्तुत कर दिया था।

अधिकाश निर्माण योजनाओ ने जो कार्य-प्रणाली अपनाई वह बहुत-कुछ इस प्रकार की थी : मकान बनाना और अपने लिए बहुत ही लाभकारी शर्तों पर उन्हे धड़ाधड़ बेचते चले जाना; क्योंकि निर्माताओं अथवा निवेश-कर्ताओं के लिए अब धारा २१३ ने इस व्यवसाय मे लाभ कमाने के बढ़िया अवसर प्रस्तुत कर दिये थे। और मकानो की आवश्यकता तो इतने अधिक लोगो को थी कि अनगिनत परिवारो ने इस प्रकार की गृह-निर्माण योजनाओं के हिस्से तुरत-फुरत खरीद लिये—बहुत-कुछ तो इसलिए भी कि आरम्भ मे पहली नकद राशि ज्यादा नही देनी पडती थी। इनमे से शायद ही किसी को यह पता था कि वह क्या कर रहा है और कितनी बड़ी मुसीबत अपने गले बाँध रहा है। यद्यपि फेडरल हाउसिंग एसोसिएशन ने इस सम्बन्ध की जान-कारी देने वाला पर्चा तैयार करवा कर लोगों मे बाँटवा भी दिया था, फिर भी किसी ने यह जानने-समझने की परवाह नही की कि सहकारिता कहते किसे है और सहकारी के स्वामी बन जाने पर उनके कर्त्तव्य और दायित्व क्या हो जाते है। और न किसी ने स्पष्टता से यही अनुभव किया कि अपने मकान के स्वामी बन जाने के अतिरिक्त पडोस का विकास और उन्नयन करने तथा आवश्यक वस्तुएँ, सेवाएँ एव मनोविनोद के साधन उपलब्ध करने मे सहकारिता का कितना महत्त्व और कितनी उपादेयता होती है।

१९५९ तक सारे सयुक्त राज्य मे कुल मिला कर तीनेक सौ के लगभग सहकारी गृह-निर्माण योजनाएँ हो गई, जिनमे से १५० तो न्यूयार्क राज्य मे ही थी और सब मे मिला कर अनुमानत. ४० लाख लोग बसे हुए थे। इनमे से कुछ तो आर्थिक एव सामाजिक दोनों ही दृष्टियों से पूर्णत. सहकारी समुदाय थे। कुछ मे सहकारिता का नाम भी नही था। जो किसी भी दृष्टि से सहकारी नही कही जा सकती उनमे लोगों को रहने के लिए नये मकान मिल गए थे; और यह जरूर एक अच्छी बात थी। ऐसे लोगों को यह समझाने का काम कि सहकारी स्वामीत्व क्या होता है, अभी पूरी तरह शेष था।

इस काम को कौन करता ?

सहकारी लीग ने १९५८ मे, वाशिंगटन डी०सी० मे, सहकारी गृह-निर्माण पर पहला राष्ट्रीय सम्मेलन आयोजित कर इस कार्य को आरम्भ किया।

प्रतिनिधियों ने इसमे इतना अधिक उत्साह दिखाया कि लीग को इस तरह के सम्मेलन प्रति वर्ष बुलाने की तत्काल घोषणा करनी पडी।

लेकिन वर्ष मे एक बार केवल दो दिनों के लिए सहकारी गृह-निर्माण के कुछ नेताओं का आपस मे विचार-विनिमय और अनुभवों का आदान-प्रदान उन लाखों लोगो को, जो घरों मे रहने के साथ-साथ उनके स्वामी भी है, सहकारिता का अर्थ और महत्त्व समझाने के लिए काफी नही हो सकता।

इस दिशा मे सहकारी लीग द्वारा प्रायोजित एव सचालित सहकारी गृह-निर्माण के व्यवस्थापकों के एक त्रिदिवसीय प्रशिक्षण शिविर की खूब सराहना की गई और साथ ही इस आशय की मॉग भी कि इस तरह के प्रयत्न अधिक मात्रा मे किये जाने चाहिए।

शीघ्र ही यह विदित हो गया कि सहकारी गृह-निर्माण सघों और सस्थाओं का एक राष्ट्रीय सगठन ही इस सारी समस्या का हल हो सकता है। ऐसा सगठन ही अपने सदस्यों के लिए यथोचित सहकारी कार्यविधि के मानदण्ड निर्धारित कर सकता है। ऐसा ही सगठन समस्याओं को सुलझाने मे सहायता और परामर्श दे सकता है। ऐसा ही सगठन देश के अन्यान्य भागों में अधिकाधिक सख्या मे 'सयुक्त आवास प्रतिष्ठानों' और 'सहकारी आवास प्रतिष्ठानों' को विकसित कर सकता है। ऐसा ही सगठन प्रशिक्षण शिविरों एव सम्मेलनों का सचालन कर सकता है। और ऐसा ही सगठन सहकारी गृह-निर्माण योजनाओं के स्वामी-निवासी-सदस्यों की पर्याप्त शिक्षा के कार्यक्रमों पर आवश्यक जोर दे सकता है।

सहकारी गृह-निर्माण का राष्ट्रीय सगठन इन सारे कामों को तभी कर सकता है यदि इस क्षेत्र मे काम कर रहे विविध तत्त्वों का समाधान कर उन्हे एक साथ लाया जा सके, विभिन्न दृष्टिकोणों मे उचित सामजस्य स्थापित किया जा सके और राष्ट्रीय सगठन मे सम्मिलित होने एव चन्दा देकर उसका व्यय भार उठाने के लिए सहकारी गृह स्वामीत्व वाले समूहों को बहुत बड़ी संख्या मे राजी किया जा सके। १९५९ का प्रायः पूरा वर्ष और १९६० के आरम्भ के कुछ दिन सहकारी लीग, संयुक्त गृह-निर्माण प्रतिष्ठान और सहकारी गृह-निर्माण प्रतिष्ठान की प्रेरणा से इन्ही दिशाओं मे कार्य होता रहा।

हुई है। सहकारी प्रणालियाँ एवं सहकारी स्वामीत्व को कुछ नये ढग से लागू कर दिया जाए तो इनमे की कुछ समस्याएँ तो अवश्य ही सुलझ सकती है। कम-से-कम नगरपालिका को ही पाँचेक करोड़ डालर करो के रूप मे मिल जाएँगे, जो अन्यथा वह कभी वसूल ही नही पायेगी। शुरू मे ही साम्या-स्वामीत्व समाविष्ट पहली नकद अदायगी के रूप मे कोई २ करोड डालर मिल जाएँगे, जो १३ करोड ८० लाख डालर की अनुमानित लागत के बोझ को इस अर्थ मे थोड़ा हलका करदेगे कि २ करोड़ डालर की रकम दूसरी जगह उपयोग करने के लिए तुरत निकल आयेगी। आर्थिक उपदान की आवश्यकता नही होगी। उलटे नगर की ऋण-धारण की शक्ति के कारण सस्ती दरो पर वित्तीय प्रबन्ध सम्भव हो सकेगा; इससे नये सहकारी-स्वामियो से ली जाने-वाली मासिक किस्ते इतनी घटाई जा सकेगी कि निम्न-मध्य परिवार उसे आसानी से दे सकेगे। यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है; क्योंकि ब्याज की दरो मे १ प्रतिशत की कमी मासिक किस्त को २ २५ डालर प्रति कमरे तक घटा सकती है।

न्यूयार्क सिटी आवास आयोग के निर्णय ने सहकारी निवास व्यवस्था की दिशा मे एक बिलकुल नया ही मार्ग खोल दिया है। यदि नगर-अधिकारी आशिक उपदान प्राप्त सरकारी भवनो के लालायित, लोगो की मकान-सम्बन्धी माँगों को पूरा करने के लिए सहकारित को अपनाने लगे तो इस सर्वाधिक सकट-ग्रस्त क्षेत्र मे भी सहकारी गृह-व्यवस्था को काफी बढ़ाया जा सकता है।

जैसा कि इस अध्याय के आरम्भ मे कहा गया था, जितनी सामर्थ्य है उतने मूल्य पर अच्छा मकान पाना ही सम्भवत. आज अमरीकनो की एक ऐसी आर्थिक माँग है जिसे सबसे कम पूरा किया जा सका है। यह परिस्थिति ही सहकारियो के अस्तित्व का सबल कारण है और उन्हे समाज के लाभ के लिए कुछ कर दिखाने का एवं जन समुदाय का व्यापक समर्थन अर्जित करने का श्रेष्ठतम अवसर प्रदान करती है।

हमारे देश के आर्थिक और सामाजिक जीवन मे सहकारी गृह-निर्माण उत्तरोत्तर महत्त्व प्राप्त करता जाएगा, इसमे तो किसी को सन्देह है ही नही। प्रश्न केवल इतना ही है कि शुद्ध, श्रेष्ठ और सम्पूर्ण सहकारिता के पूरे-पूरे सार्थक लाभ किस सीमा तक प्राप्त किये जा सकेगे ?

५ | अमरीका के गाँवों में बिजली कैसे पहुँची

'देहाती विद्युत् सहकारियों को बिजली कम्पनियों का व्यवसाय क्यों छीनने दिया जाता है?'

'क्या ये सहकारी समाजवादी नहीं हैं?'

'सरकार स्वयं जिस दर पर कर्ज लेती है उससे भी कम ब्याज पर इन्हें सरकार से कर्ज क्यों दिया जाता है?'

'किसान बिजली के कार-बार में टाँग क्यों अड़ाते हैं? है उनके पास इसका कोई जवाब?'

'यदि विद्युत् सहकारियों ने देश के सारे बिजली व्यवसाय को हथिया लिया तो क्या होगा? और हथिया लेने से इन्हें रोक भी कौन सकता है?'

'और ये कम्बख्त कर क्यों नहीं देते?'

ये कुछ प्रश्न हैं जो लोगों के मन में, और विशेष रूप से महानगरों के अखबार पढ़ने वालों के मन में, घुमड़ते रहते हैं।

यह अध्याय इसी तरह के प्रश्नों के बारे में है।

१९३५ में संयुक्तराज्य अमरीका के १० में से एक भी किसान के घर में न तो बिजली की रोशनी थी और न खलिहान में विद्युत् शक्ति ही। इसका मुख्य कारण यह था कि बिजली कम्पनियाँ देहातों में बिजली पहुँचाने के काम को लाभ-हीन व्यवसाय समझती थीं। वे बड़े विश्वास के साथ कहती थीं कि किसान कभी बिजली के दाम चुका नहीं सकते। व्यावसायिक लाभ की दृष्टि से जितनी भी जाँच-पड़तालें की गई उनसे पता चला कि यदि कम्पनियाँ बिजली देने का अपना निर्धारित लाभ उपार्जित करना चाहें तो किसानों को उसके लिए प्रति किलोवाट-घण्टा ७५ सेंट देने पड़ेंगे। किसानों से कहा जाता था कि उन्हें अपने फार्मों तक बिजली की लाइन ले जाने के ही दो सौ, पाँच सौ और कभी-कभी तो दो हजार डालर तक बिजली कम्पनियों को देने पड़ेंगे।

असल बात यह थी कि १९३५ मे व्यावसायिक बिजली कम्पनियाँ इस धन्धे मे हर एक ग्राहक से लाभ, जितना ज्यादा-से-ज्यादा हो सके, उतना लाभ कमाने के लिए थी और यही स्थिति आज भी है।

यदि लाभार्जन के अतिरिक्त दूसरा कोई आर्थिक हेतु न होता तो अमरीका के देहात आज भी मोमबत्तियाँ और लालटेन का ही प्रयोग कर रहे होते। अमरीकी किसानों ने द्वितीय महायुद्ध के दौरान और बाद मे उत्पादन के क्षेत्र मे जो चमत्कार कर दिखाये वे कदापि न होते। अमरीका कृषि एक पिछड़ा हुआ उद्योग ही होता, आज की तरह का राष्ट्र का सर्वाधिक प्रगतिशील व्यवसाय तो कदापि नही। विद्युत् उपकरणों की करोड़ो-अरबों डालरो की खपत वाला एक देहाती बाजार भी न होता। नगर के रहन-सहन की तुलना मे देहात का रहन-सहन अपेक्षाकृत आदिकालीन और कष्टकर ही होता। आज शहरों तथा उप-नगरो मे बिजली की जो दरें है, देहातों मे उसका दुगुनी ही होती।

और सबसे विकट समस्या तो होता विद्युत्-शक्ति और विद्युत्-साधनो के व्यवसाय मे औद्योगिकीय बेकारी की।

लेकिन एक दूसरा हेतु प्रयुक्त हुआ, जिसका काफी अच्छा प्रभाव पड़ा और विद्युत्-शक्ति-व्यवसाय मे एक भिन्न प्रकार का आर्थिक सगठन अस्तित्व मे आया।

लाभार्जन के हेतु से जो न हो सका या उसने जो नही किया उसे सेवा और पारस्परिक सहायता के हेतु ने कर दिखाया। जो काम वाणिज्यिक कारोबार से न हो सका उसे सहकारी कारोबार ने बहुत अच्छी तरह पूरा किया। जो ग्रामीण अमरीका विद्युत्-शक्ति की बनावटी कमी वाला क्षेत्र था वही सहकारी ढग पर विद्युत्-उत्पादन और वितरण की एक ऐसी प्रणाली विकसित की गई जिसने फारमों (कृषिवरों) और गाँवों को विद्युत्-शक्ति और साधनों की खपत का बडी तेजी से निरन्तर विकासमान बाजार बना दिया। मन्दी के जमाने मे लाखों लोगों को काम-काज दिया गया; और तभी से विद्युत्-उद्योग मे नई-नई नियुक्तियाँ होती रही है और आगे भी प्रतिवर्ष होती रहेंगी।

उदाहरण के लिए, किसानो ने १९५७ की अपेक्षा १९५८ मे १४ प्रतिशत बिजली अधिक खर्च की और औसत मासिक उपभोग तो ४१५ किलोवाट-घंटा मासिक से बढ़कर ४७२ किलोवाट-घंटा हो गया।

गाँवों मे बिजली पहुँचने के पहले पच्चीस वर्षों मे ग्रामीण जनता ने विद्युत्-साधनों पर १५ अरब डालर खर्च किये।

१९५८ तक ९५ प्रतिशत से अधिक अमरीकी कृषिघरों मे बिजली पहुँच चुकी थी।

और यह सब इसलिए हुआ क्योंकि ग्रामीण विद्युत् सहकारियो की प्रतिस्पर्धा ने समूचे व्यवसाय के स्वरूप को ही, जो बनावटी कमी और महँगी दरों वाला था, बदलकर पर्याप्त प्रदाय और उचित दरो वाला व्यवसाय बनादिया। चूँकि हमारी अमरीकी अर्थ प्रणाली मे इस बात की गुंजाइश है कि लोगो के समूह अपनी विशिष्ट आर्थिक आवश्यकताओ को पूरा करने के लिए व्यवसाय आरम्भ कर सकते है, इसलिए आधु . . आर्थिक जीवन के एक बुनियादी उद्योग मे व्याप्त गडबडी को कम-से-क . . . ना क्षेत्र मे तो ठीक कर दिया गया।

यह सच है कि सर . रा क्षेत्र की 'टा एवं' जैसी विद्युत् विकास योजनाओं का भी विद्युत् व्यवसाय मे प्रतिस्पर्द्धा को पुन प्रारम्भ करने मे काफी बडा हाथ है, लेकिन यदि ग्रामीण विद्युत् सहकारी सस्थाएँ न होती तो गाँवो मे इस प्रतिस्पर्द्धा का कुछ भी असर न हो पाता।

इस प्रकार १९३५ मे आरम्भ होनेवाली ग्रामीण बिजली की कहानी इस बात का उत्कृष्ट उदाहरण है कि उपभोग मुखीअथवा उपभोक्ता-निदेशित उत्पादन और वितरण से समूचा राष्ट्र किस प्रकार और कितनी अधिक मात्रा मे लाभान्वित होता है। इस कहानी से, और सहकारी गृह-निर्माण से भी, हमे यह शिक्षा भी मिलती है कि औद्योगिकीय बेकारी को कैसे मिटाया जा सकता है। क्योंकि जहाँ उद्योग पर स्वाम्याधिकारी व्यवसाय का एकाधिकारी नियन्त्रण होता है वहाँ तो बनावटी ऊँची कीमतो को बनाये रखने के लिए प्राय उत्पादन को रोका जाता है और इस प्रकार रोजगार को कम करके बेकारी बढाई जाती है; लेकिन इसके विपरीत सहकारी अथवा उपभोक्ता निर्देशित व्यवसाय का स्वरूप ही इस प्रकार का होता है कि वहाँ उत्पादन और वितरण उसी का किया जाता है जिसकी जनता को आवश्यकता होती है, और फिर इस सारे उत्पादन और वितरण का एकमात्र उद्देश्य होता है शुद्ध लागत पर, जो उचित और व . . रिक भी हो, जनता की आवश्यकताओं को पूर्णरूपेण सन्तुष्ट करना।

१९३५ मे देशव्यापी मन्दी का दौर बड़ा गहरा था। कोई १ करोड ४० लाख मजदूरों को काम नही मिल रहा था। किसान और छोटे व्यापारी या तो दिवालिया हो चुके थे या होने ही वाले थे। काग्रेस और देश का प्रशासन लोगो को रोजगार सुलभ करने के लिए आर्थिक गति-विधियो को वढाने के उपाय खोज रहे थे। कुछ तो यह कारण हुआ और कुछ कृषि को सहायता देने के उद्देश्य से १९३५ मे सरकारी आदेश से ग्रामीण विद्युतन प्रशासन (Rural Electrification Administration) की स्थापना की गई। १९३६ मे कॉग्रेस मे नॉरिस-रेबर्न अधिनियम स्वीकृत किया गया, जो ग्रामीण विद्युतन अधिनियम (Rural Electrification Act) के नाम से प्रसिद्ध है। सरकार मे ग्रामीण विद्युत् प्रशासन के रूप मे एक नये अभिकरण, नये विभाग का प्रावधान इस अधिनियम मे किया गया और यह प्रावधान भी कि नया अभिकरण किसानों, ग्रामीणजनो एव ग्राम्य सस्थाओ को दी जानेवाली विद्युत्-सेवाओ को वढाने के लिए कर्ज दे सकेगा। शर्ते यह थी कि ग्रामीण विद्युत् प्रशासन से कर्ज पाने वाले एक तो १५०० जनसख्या से अधिक बडे समुदाय की सेवा नही करेगे और दूसरे, अपने क्षेत्र मे जो भी किसान या अन्य उपभोक्ता सेवा चाहेगे उन्हे लाभ-हानि की परवाह किये विना सेवा देगे। अधिनियम बनानेवालो ने आशा तो यही की थी कि अधिकाश कर्ज जानी-मानी बिजली कम्पनियाँ ही लेगी, जो ग्रामीण विद्युत् प्रशासन से कर्ज पाने के योग्य थी, है और आगे भी रहेगी। लेकिन यह कुछ नही हुआ। असल मे तो अधिनियम बन जाने के बाद के महीनो मे भी कुछ नही हो पाया।

तब किसान सोचने लगे कि यदि बिजली कम्पनियाँ गॉवो मे बिजली पहुँचाने की दिशा मे कुछ भी नही करती तो हम किसान स्वय ही कुछ क्यो न करे।

ग्रामीण विद्युत् प्रशासन के प्रचारको ने इस विचार की जड जमाने और इसे परिपुष्ट करने की दिशा मे काफी काम किया। उन्होने किसानो को यह भी समझाया की कि अपना सहकारी सगठन बना लेने के बाद सारे समूह की साख पर किसान बिजली आवश्यक लाइने बनाने के लिए ग्रामीण विद्युत् प्रशासन से कर्ज पा सकते है।

इस दिशा मे कुछ पुरोगामी प्रयत्न भी अवश्य हो चुके थे। जिस पहले ग्रामीण विद्युत् सहकारी का विवरण मिलता है, वह १९१४ मे मिन्ने सोटा के

ग्रेनाइट फाल्स मे सगठित किया गया था।

१९१९ मे क्लाईड ग्रीअर नामक एक व्यक्ति के पास विसकोनसिन में वॉयला के निकट एक छोटा-सा पनविद्युत सयत्र था। इस कारखाने मे जितनी बिजली बनती थी उसकी खपत के लिए पर्याप्त बाजार नही था। उस व्यक्ति ने किसानो से प्रस्ताव किया कि वे अपना सहकारी सगठन बना ले। बडी-बडी लाभकारी कम्पनियो के ठीक विपरीत मिस्टर ग्रीअर ने किसानो से कहा कि मेरा अपना विश्वास तो यह है कि आप लोग बिजली के दाम दे सकते हैं; और उन्होने यह भी कहा कि मै आपको ऐसी दरो पर थोक बिजली दे सकता हूँ जो आपके ओर मेरे दोनो के ही लाभ की होगी। तैतालीस किसानो ने सहकारी मे सम्मिलित होना स्वीकार कर लिया। चार आदमियो के एक कर्मी दल ने छ महीने लगा कर उन तैतालिसो किसानों के फारमो तक १८ मील लम्बी लाइन बना दी। १९३५ ओर १९३६ की जिन घटनाओ का ऊपर वर्णन किया जा चुका है उस समय भी यह सहकारी सस्था विद्यमान थी।

बाद के वर्षो मे सहकारी ढग पर बिजली पहुँचाने के कई सफल प्रयत्न यहाँ, वहाँ और सर्वत्र किये गए। उतर-पूर्वी मिसिसिपी मे अलकार्न काउण्टी इलेक्ट्रिक पावर एसोसिएशन ने, जिसकी अधिकाश कारोबारी पूंजी 'टी वी ए' से प्राप्त कर्ज पर आधारित थी, अपने पहले ही वर्ष के कार्यकाल मे बिजली की लागत घटा कर आधी कर दी। और १९३५ मे जब ग्रामीण विद्युत् प्रशासन अस्तित्व मे आया तो यह एक बडा ही सुस्थापित कारबार था।

और इस प्रकार १९३५ और १९३६ मे हमारे देश के इतिहास के सबसे महत्त्वपूर्ण सगठन अभियान आरम्भ हुए। उन दिनो जिन नर-नारियों ने अभियान किये थे आज भी सैकडो ग्रामीण समुदायो मे उनका सम्मान किया जाता है। सैकडों देहाती कस्बो मे उनके नाम पत्थर और ईट की छोटी सुन्दर इमारतो के कोनिया अथवा नीव के पत्थरो पर खुदे हुए है। सबसे बडी बात तो यह कि जिन लोगों ने खेतो और फारमों पर मोमबत्ती और लालटेन की रोशनी देख रखी है वे इन सगठनकर्ता पुरोगामियो का सयुक्त राज्य अमरीका मे आधुनिक कृषि और आधुनिक फारम जीवन के संस्थापको के रूप में आदर करते है। मुझे एक ऐसी ही घटना याद आ रही है। मै विसकोनसिन

के ओकोण्टो फाल्स मे एक सभा मे सम्मिलित हुआ था। वह सभा वहाँ के आस-पास के क्षेत्र को विद्युत् प्रदाय करने वाले विद्युत् सहकारी का तेईसवाँ वार्षिक स्थापना दिवस मनाने के लिए आयोजित की गई थी। उत्सव के लिए जो बडा तम्बू लगाया गया था वह खचाखच भरा हुआ था, कही तिल धरने को भी जगह नही थी। उत्सव के मुख्य सम्माननीय अतिथि दो व्यक्ति थे—एक पद-निवृत्त मत्री और दूसरे सहकारी के अध्यक्ष। स्त्री और पुरुष वक्ताओं ने कितनी श्रद्धा से विगलित होकर स्नेहाश्रु पूरित लोचनो एव गद्गद् कण्ठो से उन्हे सम्मानाजली समर्पित की थी। क्योंकि यही दोनो व्यक्ति थे जिन्होने १९३५–१९३६ के हडकम्पी जाड़ो के वर्फ और बदन गलाते पालों मे प्रायः लम्बी दुर्गम यात्राएँ करके फारम-फारम मे सहकारी ढग पर गाँवों मे बिजली देने का आशा भरा सन्देश पहुँचाया था। फिर अत्यन्त सरलता से लेकिन साथ ही प्रभावोत्पादक शैली मे ९ दिसम्बर १९३५ की उस बैठक का वर्णन किया गया, जिसमे बारह व्यक्तियों ने ओकोण्टो विद्युत् सहकारी सघ के निगमन पत्रो पर अपने हस्ताक्षर किये थे और ग्रामीण विद्युत प्रशासन से कर्ज पाने के लिए एक प्रार्थना पत्र वाशिगटन भेजा था। ओकोण्टो फाल्स मे विद्युत् सहकारी का प्रधान कार्यालय ही वहाँ की सबसे सुन्दर इमारत है। और होना भी चाहिए। क्योंकि दूसरे सहकारियो के साथ-साथ यह भी एक ऐसा व्यवसाय है जिसे वहाँ की स्थानीय जनता आने वाले वर्षो मे भी एक महत्त्वपूर्ण स्थानीय-स्वामित्व वाले एक उद्योग के रूप मे अपना बनाये रखना और चलाते रहना चाहेगी—यदि उसे ऐसा करने दिया गया।

बीसवी शताब्दी के मध्यकाल के इन पथप्रदर्शको ने किसका सगठन किया? सगठन तो उन्होंने निस्सन्देह एक सहकारी व्यवसाय सघ का ही किया। आगे यह भी पूछा जा सकता है कि उस सगठन मे आखिर था क्या? यही कहा जाएगा कि अधिक कुछ भी नही। सदस्यो का एक अपेक्षाकृत छोटा-सा समुदाय था, जिनमे से प्रत्येक ने पाँच डालर सदस्यता शुल्क दिया था। इसके अतिरिक्त ग्रामीण विद्युत् सघ से कर्ज पा जाने की आशा भी अवश्य थी। लेकिन यदि इन सहकारियो मे दो अत्यन्त मूल्यवान और सशक्त वस्तुओं—भावनाओ को भी संगठित न कर लिया जाता तो बाकी सब का कुछ भी मूल्य

नही था। इनमे से पहली वस्तु भी पडोसियो के एक समूह की एक-जैसी, सामान्य आवश्यकता। पहली चीज यही थी जिसका संगठन किया जाना था। वास्तव में इन विद्युत सहकारियो मे, और इन्ही मे क्यो किसी भी प्रकार के सुविचारित सहकारी मे, सगठन का मूल तत्त्व ही होता है किसी भी जन-समूह की सर्वनिष्ठ आवश्यकता, सबसे पहले इसी का सगठन किया जाना चाहिए। और, हाँ, इसके साथ यह दृढ विश्वास भी कि उस आवश्यकता को सह-कारिता के द्वारा पूरा किया जा सकता है।

और जब किसानों ने लालटेन की रोशनी मे निगमन पत्रो पर अपने हस्ताक्षर किये तो जो दूसरा तत्त्व सगठित किया गया वह था सदस्यो की साख—उनकी यह प्रतीक्षा कि जिस रुपए के कर्ज मिलने की आशा है उसे वे नियत समय पर चुकाएँगे। उनमे से बहुत से किसान उस समय दिवालिया होने की स्थिति मे थे। लेकिन वे ईमानदार थे। उनका बचनबद्ध होना उनकी सम्पत्ति को बन्धक किये जाने से ज्यादा अच्छो जमानत समझी गई—लेकिन तभी जब कि वे एक सगठित समूह के रूप मे सम्मिलित होकर बचनबद्ध हुए।

अकेला एक तो कोई भी किसान अपनी बिजली-सम्बन्धी आवश्यकता पर विद्युत् प्रदाय की पूरी प्रणाली का निर्माण नही कर सकता। लेकिन किसानो के समूह, अपनी बिजली-सम्बन्धी आवश्यकता को सहकारी ढग से सगठित करके इस काम को कर सकते है। अकेला कोई भी किसान अकेले अपने नाम का साख को रुपया नही बना सकता, लेकिन किसानों के समूह सम्मिलित रूप से ऐसा कर सकते है। तो, इस प्रकार अमरीकी गाँवो मे बिजली पहुँचाना जीवन के इस मौलिक तथ्य का जीता-जागता दिग्दर्शन है कि जिस काम को हम अकेले नही कर सकते उसे बहुत से लोग सहकारिता के आधार पर मिल-जुल कर प्राग. कर डालते है।

पारस्परिक सहायता समस्याओ को सुलझाने का एक बहुत ही अच्छा ढग है।

इस ढग ने कोई ४५ लाख किसानो और ग्रामीण जनता को आधुनिक अर्थ-व्यवस्था के बुनियादी उद्योग-विद्युत् व्यवसाय—के एक अश का स्वामी बनाने की दिशा मे बड़ा ही महत्त्वपूर्ण कार्य किया है।

यहाँ उस कहानी के विस्तार मे जाना आवश्यक नही। १९३५ अभी समाप्त

भी नही हुआ था कि ग्रामीण विद्युत् सहकारी सगठित हो गए और इडियाना, ओहियो, टेक्सास, विसकोन्सिन और मिसिसिपी मे उन्हे कर्ज भी मिल गया। उसके बाद तो जैसे-जैसे समय बीतता गया विद्युत् सहकारियो का देशव्यापी जाल-सा बिछता चला गया। ये ही थे जिन्होने आवश्यकता को सगठित रूप देने और अपना कर्ज चुकाने की ईमानदार लोगो की बचन बद्धता की सरल प्रणाली को अपना कर उस समस्त कार्य के बहुत बडे अंश को पूरा किया जिस पर आगे चल कर अमरीका का भविष्य ही निर्भर करने जा रहा था। लाभार्जन करने वाले सम्पन्न और शक्तिशाली व्यावसायिक अधिष्ठानो ने इस कार्य को नही किया। वे तो इस ओर तब तक नही आये जब तक कि सहकारियों ने यह सिद्ध करके नही दिखा दिया कि किसान भी बिजली का पैसा दे सकता है और अच्छी दरे दे सकता है; वे तो तब तक नही आये जब तक कि सहकारियो ने यह नही दिखा दिया कि गाँवो मे विद्युत्-साधनों की खपत की अनन्त सम्भावनाएँ भरी पडी है; वे तब तक नही आये जब तक कि सहकारियो ने अपना कर्ज चुकाने का (९९ ९९८७ प्रतिशत) रिकार्ड कायम नही कर दिया; वे तब तक नही आये जब तक कि सहकारियो ने प्रतिस्पर्द्धा करके बिजली की दरे ४० प्रतिशत और ५० प्रतिशत और कही-कही तो इस से भी अधिक नही घटा दी। जब तक इतना सब नही हो गया लाभार्जन करने वाले व्यावसायिक अधिष्ठानो ने अमरीकी देहातो को बिजली देने की दिशा में वास्तविक प्रयत्न भी आरम्भ नही किये। उन्होने जो कुछ किया इतना सब हो जाने के बाद ही किया।

वे आरम्भ से ही ग्रामीण विद्युत् प्रशासन के कार्यक्रम और विशेष रूप से सहकारियों के विरुद्ध सघर्ष करते रहे। सहकारी, राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक क्षेत्रो को प्रभावित करने के लिए वाशिगटन में उनका जो प्रमुख व्यक्ति रहता है उसे राष्ट्रीय ग्रामीण विद्युत् सहकारी सघ (National Rural Electric Cooperation Association) के मुख्य व्यवस्थापक से कई गुना अधिक वेतन दिया जाता है। यह स्थिति आज ही नही, १९५९ मे भी थी, जब कि राष्ट्रीय ग्रामीण विद्युत् सहकारी सघ की गाँवो के विद्युत् उपभोक्ताओं में सदस्य-सख्या ४५ लाख से भी अधिक थी और वह

देश के बहुत ही महत्त्वपूर्ण राष्ट्रीय सगठनों मे गिना जाता था। लेकिन जब सहकारियों ने यह दिखा दिया कि देहाती क्षेत्रों मे विद्युत् प्रदाय एक 'अच्छा व्यवसाय' हो सकता है तो लाभार्जन करनेवाले सारे-के-सारे व्यावसायिक अधिष्ठान इस नव विकसित व्यापार को हडपने के लिए दौड पडे। इसके लिए उन्होंने कई तरह के हथकण्डे अपनाये। विद्युत् सहकारी के रूप मे 'समाजवादी खतरों' से सचेत करने वाले खर्चीले राष्ट्रव्यापी विज्ञापन कार्यक्रम शुरू किये गए। सहकारियों के कार्य क्षेत्र को सबसे सघन बस्तियों को अपनी ओर करने के लिए भेद नीति-स्वरूप नई विद्युत् प्रदाय लाइनें बनाई गई, जो कालान्तर मे 'विद्वेष लाइनों' के नाम से प्रख्यात हो गई। सहकारियों के स्वामियों को फुसलाने के लिए, जिससे वे अपना कारबार उस क्षेत्र की प्रमुख व्यावसायिक विद्युत् कम्पनी के हाथ बेच दे, सुनियोजित अभियान बडे कुशल ढग से आरम्भ किये गए।

ज्यों-ज्यों समय बीतता गया इन सारे हथकण्डों को उतने ही अधिक जोर-शोर से आजमाया गया और उधर कॉग्रेस पर ज्यादा-से-ज्यादा दबाव डालने के प्रयत्न तो बराबर होते ही रहे।

उन्हे इक्की-दुक्की जगहो मे सफलता भी मिली।

अधिकाश विद्युत् सहकारी परम निष्ठावान् सदस्यों वाले सुदृढ संगठन है, जिनकी वार्षिक सभाओ मे सैकडों और कभी-कभी तो हजारों की सख्या मे सदस्य उपस्थित होते है और उन सगठनो को अपने सदस्यों पर अभिमान भी कम नही है। इओवा के विद्युत् सहकारी को इस बात का उचित गर्व है कि उसकी वार्षिक सभा मे प्रतिवर्ष १० हजार सदस्य बराबर भाग लेते है। वहाँ की ये वार्षिक सभाएँ उस जिले का 'वर्ष का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण दिन' बन गई है।

लेकिन कुछ सहकारी सगठन की दृष्टि से काफी कमजोर है। कुछ ऐसे है जिनके व्यवस्थापक तानाशाह बन बैठे है, मजाल है कि उनके बगैर पत्ता भी हिल जाए। जो जी मे आता है करते है, न किसी की सुनते है न मानते है। कुछ ऐसे भी है जिनके सदस्यों मे अब किसानों की सख्या कम और बहुमत ऐसे उपनगरवासियों का है जो जन्म से ही विद्युत् का सुखोपभोग कर रहे है।

वास्तव मे ऐसे सदस्यो की सख्या निरन्तर कम होती जा रही है जिन्हे अपनी सहकारी सस्था द्वारा फारम पर पहले-पहल बिजली पहुँचाने की बात अच्छी तरह याद हो। उनके स्थान पर ऐसे लोगो की सख्या बराबर बढ रही है जो बिजली को सदा से चली आती साधारण बात समझते है, जिन्हे बिजली पाने के लिए कोई संघर्ष, कोई प्रयत्न नही करना पडता। इसलिए जहाँ सदस्यो की शिक्षा का कोई कार्यक्रम नही है, जहाँ सदस्यो को सही और पूरी जानकारी देने वाले संवाद पत्र नही भेजे जाते और जहाँ सदस्यो के मन मे स्वामित्व के प्रति गर्व और गौरव की भावना को जगाने का कोई प्रयत्न नही किया जाता वही विद्युत् सहकारियो को 'बेचने' के लिए की जानेवाली व्यावसायिक बिजली कम्पनियो की चिकनी-चुपडी बातो और फुसलावो के सफल होने की अधिक सम्भावना है।

विद्युत् सहकारियों को अपने क्षेत्र मे जो भी लोग माँग करे उन सब को विद्युत्-सेवा प्रदान करनी होती है। अक्सर इस तरह की सेवा बड़ी महँगी पडती है। सहकारियो के ग्राहकों की औसत सख्या बिजली लाइन के प्रति मील पर उनके प्रबल प्रतिस्पर्द्धियो की औसत सख्या २५ की तुलना मे केवल ३ है। कुल आय से संयत्र और साधन मे पूँजी निवेश का उनका अनुपात लाभार्जन वाली व्यावसायिक कम्पनियो की तुलना मे तिगुना है। इसीलिए सहकारियों को अत्यन्त कडी प्रतिस्पर्द्धा का सामना करते हुए काम करना पडता है। इसके अतिरिक्त १९५० के बाद के वर्षो मे तो उनपर राजनैतिक प्रहारो मे भी खूब वृद्धि हुई है। इन राजनैतिक प्रहारो का मुख्य लक्ष्य यह रहा है कि ग्रामीण विद्युत् सहकारियों को ग्रामीण विद्युत् प्रशासन से कर्ज प्राप्त करने की सुविधा से वचित कर दिया जाए और व्यापारिक पूँजी बाजार मे कर्ज लेने को विवश किया जाए। इस आशय की माँगो और प्रस्तावो को बार-बार दुहराया गया।

विद्युत् सहकारियो पर राजनैतिक प्रहार की एक दूसरी दिशा भी है; वह है काग्रेस को उन कर्जो पर रोक लगाने के लिए राजी करने का प्रयत्न जो ग्रामीण विद्युत् प्रशासन द्वारा सहकारी आधार पर विद्युत् उत्पादन और पारेषण साधनो के वित्तीय प्रबन्ध के लिए दिये जाते है।

यह बात समझ मे तो आती है, लेकिन साथ ही सहकारियो के लिए

अत्यन्त भयावह भी है। समझ मे तो इसलिए आती है कि यदि ग्रामीण विद्युत् सहकारियो पर यह रोक लगा दी जाए कि जहाँ आवश्यकता हो वहाँ पर भी वे विद्युत् उत्पादन का अपना प्रबन्ध नही कर सकते तो उन्हे विवश होकर अपनी प्रतिद्वन्दो व्यावसायिक विद्युत् कम्पनियो की कृपा पर ही निर्भर करना पड़ेगा।

वितरण सहकारियो के लिए यह कतई जरूरी नही है कि वे अपने द्वारा वितरित की जाने वाली विद्युत् की पूरी मात्रा या उसका अधिकाश स्वय ही उत्पादित करे। सचाई तो यह है कि वे १९५९ मे अपने द्वारा दी जाने वाली बिजली के केवल १५ प्रतिशत का ही उत्पादन कर रहे थे। लेकिन आरम्भ से ही उन्हे यह दु खद अनुभ व हो गया था कि विद्युत् का कुछ-न-कुछ उत्पादन तो उन्हे स्वय करना ही होगा।

बिजली लाइनो का निर्माण-कार्य पूरा हो जाने के बाद सहकारी वितरण सस्थाओ के सम्मुख जो सबसे बडी समस्या मुँह बाये आ खड़ी हुई वह थी उचित दरो पर थोक बिजली का उपलब्ध न होना। सब जगह यही स्थिति रही हो सो बात नही; कुछ अपवाद भी अवश्य थे, विशेष कर उन क्षेत्रों मे जहाँ विद्युत् प्राप्ति के सरकारी साधन सुलभ थे। लेकिन वैसे आम तौर पर व्यापारिक कम्पनियों ने विद्युत् प्रदाय के अनाप-शनाप दाम माँगे और केवल इसीलिए कि किसानो ने अपनी आवश्यकताओ को सगठित कर उसे पूरा करने के लिए नई चमचमाती बिजली लाइने बना ली थी।

इसलिए जो मार्ग पेट्रोलियम सहकारियो को अपनाना पडा था और हर प्रकार के सहकारी को अपनाना ही होगा जब वह इतना शक्तिशाली हो जायेगा सार्थक ढग से प्रतिस्पर्द्धा कर सके तो वही मार्ग विद्युत् वितरण सहकारियो को अपनाना पडा और कुछ क्षेत्रो मे उन्होने विद्युत-उत्पादन के अपने स्वतन्त्र साधनो को विकसित करना प्रारम्भ कर दिया। केवल यही दिखा देना काफी नही था कि बहुत सारे सामान्य जन इकट्ठा होकर विद्युत्-वितरण प्रणाली का सगठन, उसके स्वामीत्व का भार वहन और सफल सचालन कर सकते है; लेकिन यह प्रमाणित कर देना भी नितान्त आवश्यक हो गया था कि जहाँ तक विद्युत् के उत्पादन का प्रश्न है उसे भी सहकारिता की पद्धति को अपना कर लोग 'अपने लिए' अवश्यमेव कर सकते है।

इस सम्बन्ध मे डेरीलैण्ड पावर कोआपरेटिव की कहानी आदर्श कहानी है। १९३७ मे दस विद्युत् वितरण सहकारी सस्थाओ के प्रतिनिधियो की एक बैठक मे इसका जन्म हुआ। वह बैठक इसलिए बुलाई गई थी कि विसकोन्सिन की व्यापारी बिजली कम्पनियो ने उन्हे थोक मे प्रति किलोवाट-घटा ढाई सेट की दर से कम पर बिजली देना अस्वीकार कर दिया था और ये दरे अत्यधिक महँगो थी। तब उन्होने सोचा कि थोक बिजली के अपने ही साधन का निर्माण कर लेना सबसे बढिया बात होगी। और अन्त मे उन्होने विसकोन्सिन पावर कोआपरेटिव की स्थापना की।

ग्रामीण विद्युत् प्रशासन से साढ़े छ लाख डालर का कर्ज प्राप्त किया गया और एक वर्ष के बाद उत्तरी विसकोन्सिन की सात सहकारी सस्थाएँ किसानो को अपनी बिजली लाइनो से जो विद्युत् प्रदान कर रही थी उसका जनित्रण चिप्पे वा फाल्स के उन्ही के डिज़ल जनित्रा ने किया था।

जो कठिनाई उत्तरी विसकोन्सिन के वितरण सहकारियो को अनुभव करनी पडी ठीक वही इओवा, मिन्नेसोटा और दक्षिणी विसकोन्सिन के वितरण सहकारियो के सामने भी आई। उचित दरो पर थोक बिजली इनमे से किसी को कही से भी प्राप्त न हो सकी। तव इन सबने मिल कर त्रि-राज्यीय विद्युत-शक्ति सहकारी (Tri-Stated Power Cooperative) सगठित की और विसकोन्सिन के जेनोआ नामक स्थान मे एक वाष्प सयत्र का निर्माण किया, जो १९४१ मे बन कर पूरा हो गया।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि इस सयत्र का निर्माण-कार्य पूरा होने से कुछ ही समय पहले उस क्षेत्र की तीन व्यापारी कम्पनियो ने एक नया निवेद किया। वे विद्युत् सहकारियों को पहले माँगी गई दरो से बहुत कम पर थोक बिजली देने को तैयार हो गई। जिस तरह पेन्सिले एकदम नुकीली हो जाती है उसी तरह वे एक दम सचेष्ट हो गए थे और उनकी वणिक् बुद्धि जाग पड़ी थी। पर क्यो ?

केवल इसलिए कि किसान अब यह प्रमाणित करने जा ही रहे थे कि वे अपने लिए बिजली का उत्पादन स्वय कर सकते है—और व्यावहारिक अनुभव से उन्हे यह भी मालूम हो ही जाता कि उत्पादन को वास्तविक लागत कितनी होती है।

१९४१ के अक्तूबर महीने मे विसकोन्सिन विद्युत्-शक्ति सहकारी और त्रि-राज्यीय-विद्युत्-शक्ति सहकारी का विलयन कर डेरालैण्ड बना दी गई। उसके बाद तो बहुत-से नये सयत्र निर्मित हुए, नई-नई बिजली लाइने बनाई गई, कारबार की नई आर्थिक पद्धतियाँ प्रयोग मे लाई गई। अधिकाश सयत्र वाष्प-सयत्र है, जो कोयले से चलते है और वह कोयला इलिनोइस और केण्टुकी की खानो से मिसिसिपी की राह भारवाही डोगो से लाया जाता है। लेकिन एक पन-विद्युत् सयत्र भी है जो फ्लाक्यू नदी पर साठ लाख डालर से भी अधिक की लागत से बनाया गया है। इस सयत्र के निर्माण मे इतना अधिक पैसा केवल इसलिए लग गया कि कुछ लोगो ने इसका घोर विरोध किया जिससे देर-पर-देर होती गई और लागत खर्च बढता चला गया। विरोधी शक्तियाँ शायद यह कहना और कर दिखाना भी चाहती थी कि विद्युत् सयत्र के निर्माण का कार्य किसानो की भोड़ के उपयुक्त नही है; बड़े नगरो मे बड़े दफ्तरों वाली बडी कम्पनियाँ को ही ऐसे कार्य करने का एकमात्र अधिकार है।

लेकिन फिर भी किसानो ने इस काम को कर ही डाला। फारमो और देहाती क्षेत्रो मे जैसे-जैसे विद्युत्-शक्ति की माँग बढ़ती गई डेरीलैण्ड भी अपनी क्षमता को बढाती चली गई—पहले दुगुना किया और फिर तिगुना। विरोधियो ने हर बार शोर मचाया कि डेरोलैण्ड के बढ़े हुए सारे उत्पादन की खपत उसके सदस्यो मे ही नही हो सकती। लेकिन सत्य तो यही है कि हर बार क्षमता के विस्तार के बावजूद सदस्यो को विद्युत्-शक्ति-सम्बन्धी माँग को पूरा नही किया जा सका।

अकेले १९५० मे ही डेरीलैण्ड के सदस्यो को २० लाख डालर की बचत हुई। इसका अर्थ यह हुआ कि व्यापारी कम्पनियो ने जो कम-से-कम दरे बताई थी उनपर थोक बिजली खरीदने से जितना मूल्य देना पड़ता उसकी अपेक्षा अपनी ही प्रणाली से लेने पर २० लाख डालर कम देना पडा।

पड़ोसियो के साथ मिलकर स्वय काम किया जाए तो अवश्य सस्ता पड़ता है और लाभ भी होता है।

१९५८ मे जब डेरीलैण्ड के किसान और दूसरे ग्रामीण ग्राहक-स्वामियों की सख्या एक लाख से भी अधिक हो गई तो उसने एक दूसरा चमत्कार

कर दिखाया। वह चमत्कार यह था कि पिछले दस वर्षों पर जीवन-निर्वाह-सूचकाक जहाँ ३० प्रतिशत बढता जा रहा था वही डेरीलैण्ड की बिजली का लागत मूल्य ३५ प्रतिशत कम कर दिया गया। और १९५९ मे तो थोक बिजली प्रति किलोवाट-घटा एक सेट से भी कुछ कम पर ही दी जा रही थी।

स्वावलम्बन ने बडा काम किया। इसका शुभ परिणाम केवल विसकोन्सिन मे ही नही मध्य इओवा मे, केण्टुकी मे, मिसौरी मे और जहाँ-जहाँ भी वितरण सहकारियो ने मिलकर अपने निजी विद्युत् जनित्र सहकारियो की स्थापना की थी वहाँ सभी जगह हुआ।

व्यापारी कम्पनियों के गोष्ठी कक्ष (लॉबी) ने काग्रेस के आगे बहुत चिल्ल-पों मचाई। उसने ऐसा कानून बनाने पर बहुत अधिक जोर दिया जिससे ग्रामीण विद्युत् प्रशासन विद्युत् शक्ति के जनित्रण और पारेषण के लिए किसी भी प्रकार का कर्ज दे ही न सके। उनका गोष्ठी कक्ष तो यही चाहता था कि विद्युत् सहकारी अपनी आवश्यकता की हर किलोवाट विद्युत् शक्ति के लिए अपने प्रतिद्वन्द्वियो के मुहताज हो जाएँ—उन्ही प्रतिद्वन्द्वियो के जो प्रारम्भ से ही उनसे युद्ध ठाने हुए थे और घृणा करते थे।

लेकिन काग्रेस ने उनकी एक न सुनी।

स्वावलम्बन ने और दिशाओ मे भी कुछ काम किये। विसकोन्सिन विद्युत् सहकारी ने बड़े साहस से एक दूरदर्शिता पूर्ण कदम उठाया। इस सहकारी ने एक स्वतन्त्र एल्यूमिनियम कम्पनी से युद्धोत्तर काल मे सरजाम-सामग्री और केबल की जो घोर कमी थी उसे दूर करने और गाँवो मे विद्युत् विस्तार के लिए अत्यन्त आवश्यक इन वस्तुओ के एकाधिकारियो द्वारा निर्धारित मूल्यो को घटाने के सम्बन्ध मे सविदा किया। इस कदम मे जोखिम तो बहुत था, परन्तु फिर भी बात बन गई। दो तरह से लाभ हुआ . विद्युत् सहकारियो के विकास और विस्तार को ही नही एल्यूमिनियम के खपत बाजार को भी एकाधिकारी पूँजी के कुछ बहुत ही अनिष्टकारी प्रभावो से मुक्त किया जा सका।

१९५० के बाद की पूरी दशाब्दी मे ग्रामीण विद्युत् सहकारियो तथा अन्य पारस्परिक एव सहकारी उद्यमों पर प्रहार का वेग निरन्तर बढता ही गया। सहकारियों के प्रतिद्वन्द्वियो द्वारा समाचार पत्रो मे बड़े-बड़े, पूरे पृष्ठों के विज्ञापन

प्रकाशित करवाये जाते थे और उनमे यह दिखाया जाता था कि विद्युत् सहकारियों को सरकार से काफी मोटी आर्थिक सहायताएँ मिलती हैं, ये सहकारी करदाता पर भीषण आर्थिक बोझ बने हुए हैं; सहकारी अनुचित होड करते है; सहकारो का 'अमरीकी जीवन-पद्धति' से जरा भी मेल नही; आदि-आदि। ऊँचा वेतन फटकारने वाले लाबीबाज बार-बार इन मॉगो को दुहराने लगे कि जनित्रण और पारेषण के लिए दिये जाने वाले कर्जों मे एकदम कमी कर दी जाए, ग्रामीण विद्युत प्रशासन सहकारियों को जिन दरो पर ब्याज देता है उनमे तत्काल वृद्धि की जाए, और अधिक अच्छा तो यही होगा कि ग्रामीण विद्युत् प्रशासन को ही भग कर दिया जाए; और देश के उस समय के प्रशासकीय अधिकारी इन मॉगो का समर्थन करते थे! इस बात पर भी बहुत अधिक जोर दिया गया कि विद्युत् सहकारियों को अपने वित्तीय प्रबन्ध के लिए नियमित साधनों का ही आश्रय लेना चाहिए, अर्थात् बैंको, बीमा कम्पनियों और साहूकार पेढ़ियों के दरवाजे खटखटाना चाहिए। निजी व्यापारी कम्पनियों के समस्त कर्मचारियों ने इस बात के लिए अपना सारा जोर लगा दिया कि किसी तरह विद्युत् सहकारियो के सदस्यो की निष्ठा को डिगाया और उन्हे अपने कारबार को व्यापारी गुटो के हाथ बेचने के पक्ष मे मत देने के लिए फुसलाया जा सके। यह जाना-माना तथ्य होते हुए भी कि बहुत से जिलों मे विद्युत् सहकारी बड़े करदाताओ मे गिने जाते हैं, उन पर 'कर-मुक्त' होने का आरोप गला फाड-फाड कर लगाया गया।

राष्ट्रीय ग्रामीण विद्युत् सहकारी सघ (Natfonal Rural Electric Cooperative Associations) जो १९४२ से विद्युत् सहकारियों की सेवा और सहायता का, उनकी ओर से जन-सम्पर्क का और उनके वैधानिक सरक्षण के रूप मे कार्य करने वाला राष्ट्रीय स्तर का केन्द्रीय सगठन रहा है और जिसको इतना सक्रिय नेतृत्व प्रदान करने का श्रेय भूतपूर्व काग्रेसमैन क्लाइड टी० इलिस को है, उसे कड़ी अग्नि परीक्षाओं और जबर्दस्त चुनौतियों का सामाना करना पड़ा।

और यह सब हुआ अमरीकी कृषि के लिए परिवर्तन, दबाव, तगी और कठिनाइयों के ऐसे समय जब कि फारमों की सख्या निरन्तर घटती जा रही थी, जब कि फारमों, कस्बों और शहरों तक के बीच की बिजली लाइने ठण्डी

पड़ती जा रही थी और जव विद्युत् सहकारियों द्वारा लगाये हुए चार लाख मीटर (मापक यन्त्र) सुन्न पडे थे, क्योंकि उन फारमों पर एक भी आदमी नही था।

ऐसे समय सहकारियो के खिलाफ इतनी कटु आलोचना का कारण समझ मे नही आता। दो मे से एक ही बात हो सकती है; या तो लोगों को आमतौर पर तथ्यों की जानकारी नही होती, या वे उनके बारे मे कुछ सोचते ही नही।

सच्चाई यही है, कि सयुक्त राज्य अमरीका ने ग्राम्य विद्युतन कार्यक्रम से काफी पैसा कमाया है। सहकारियो ने अपना कर्ज हमेशा निर्धारित समय से पहले ही चुकता किया है। ब्याज का २ प्रतिशत दर भी इस कार्यक्रम के समस्त प्रशासनिक खर्चो को पूरा करने के लिए काफी है।

सहकारी अपने प्रतिस्पर्द्धियों द्वारा चुकाये जाने वाले सभी कर चुकाते है, और जैसा कि कहा जा चुका है, कुछ मामलों मे तो राज्य स्तरीय ओर जिला स्तरीय कर चुकाने वालो मे वे ही सबसे बडे और प्रमुख करदाता होते है। यह सच है कि विद्युत् सहकारियों को सघीय आयकरो से छूट मिली हुई है, जो किसी भी तरह के दूसरे सहकारियो को नही दी गई है। इम छूट का प्रावधान इसलिए किया गया कि विद्युत् सहकारी किसी भी उपभोक्ता की सेवा तब तक नहीं कर सकते जब तक कि वह उस सहकारी का सदस्य नही बन जाता। इस तरह की छूट देने का उद्देश्य यह है कि सहकारियो का सगठन लाभार्जन विहीन ऐसे व्यवसायों के रूप मे ही किया जाना चाहिए, जिनकी सारी कमाई उनके सदस्यो को सम्पत्ति होती है, न कि सहकारियों की। इसलिए आयकर चुकाने की पूरी जिम्मेवारी उन सदस्यो की है, सहकारियों की नही। अपनी सहकारी सस्थाओ से प्राप्त सरक्षण धन वापसियों के कारण उनकी आय मे जितनी भी वृद्धि हो अथवा व्यवसाय करने की उनकी लागत जितनी भी कम हो उसी अनुपात मे उन सदस्यो से आयकर लिया जाना चाहिए। कभी-कभी सरक्षण धन वापसी की अदायगी नकद रुपयों मे की जाती है; लेकिन अधिकतर वह 'पूँजी गत जमा पत्र' के रूप मे होती है, जो सहकारी विद्युत्-शक्ति व्यवसायो के स्वामीत्व के सम्बन्ध मे इस आशय के प्रमाण पत्र है कि उन व्यवसायों पर साम्या (न्यायत: समान अधिकार) उस व्यवसाय के सदस्यों का ही है। १९५९ तक देश के विद्युत् सहकारी व्यव-

साय पर इन-सदस्यों का औसत साम्या स्वामीत्व १७ प्रतिशत तक हो चुका था; लेकिन बहुत तेजी से विकसित हो रहे इन सहकारी व्यवसायों की पूँजी की बढती हुई माँग को पूरा करने के लिए ५० प्रतिशत साम्या स्वामीत्व की जो शर्त बहुत से ऋणदाता लगाते हे, उससे अभी यह बहुत कम है। तात्पर्य यह कि 'प्रचलित' दरो पर कर्ज मिलने की कोई सम्भावना दिखाई नही देती।

ग्रामोण विद्युत् प्रशासन द्वारा विद्युत् सहकारियों को इतने न्यून ब्याज पर ऋण दिया जाना उनके साथ किये गए सविदा करार का ही एक भाग है। ऋण को इन न्यूनतर दरो का दूसरा पहलू यह है कि विद्युत् सहकारियो को लागत की चिन्ता किये बिना अपने क्षेत्र के सभी इच्छुको उपभोक्ताओ को सेवा अनिवार्यत करना होती है, प्रचुर खपत वाले सघन उपभोक्ता क्षेत्र उन्हे सुलभ नही होते, वस्तुत उन पर यह प्रतिबन्ध होता है कि वे पन्द्रह सौ मे अधिक जनसख्या वाले समुदाय की सेवा नही करेगे।

ये विद्युत् सहकारी अमरीका की एक नये प्रकार की व्यापारी सस्था है। इनके साथ किसी तरह का अन्याय नही होना चाहिए, वस्तुत. ये बहुत अच्छे व्यवहार के अधिकारी है। जहाँ पहले न बिजली की रोशनी थी और न विद्युत् शक्ति। उन फारमो और गाँवो के घरो और पाठशालाओं और गिरजाघरो मे इन्ही ने बिजली की रोशनी और विद्युत् शक्ति को पहुँचाया। हमारे उद्योग का ग्रामोण क्षेत्रो मे विकेन्द्रीकरण इन्ही की कृपा से सम्भव हो सका। सभी प्रकार के विद्युत् उपकरणो और सेवाओ की खपत का इन्होने कितना विशाल और नया बाजार खोल दिया है।

इन्होने और भी महान कार्य किया, क्योकि विद्युत शक्ति आधुनिक अर्थ व्यवस्था और सामाजिक जीवन का प्राण है। इसके बिना न तो कोई उद्योग चल सकता है और न कोई व्यापार, न कोई नगर और न कोई कस्बा—इसके अभाव मे सभी ठप्प हो जाते है। आज विद्युत् प्रदाय जिसकी मुट्ठी में है राष्ट्र भी उसी की मुटठी मे है।

इसीलिए विद्युत् शक्ति पर किसी का एकाधिकार नही होना चाहिए—निजी व्यापारी-सम्राटो का तो कदापि नही।

बडी-बड़ी व्यापारी कम्पनियो के हाथ मे हमारे विद्युत्-शक्ति व्यवसाय

का ८५ प्रतिशत केन्द्रित है। इनकी तुलना मे विद्युत् सहकारियों का कुल राष्ट्रीय व्यवसाय वास्तव मे बहुत ही थोड़ा है। फिर इन बडी-बडी व्यापारी कम्पनियों को इन सहकारियों के विरुद्ध इतना विष-वमन और इन पर इतनी चतुराई और इतने अस्त्र-शस्त्रो से आक्रमण क्यो करना चाहिए ?

क्या यह प्रत्येक विचारवान अमरीकी के लिए महान गर्व की बात नही है कि हमारा ही एक ऐसा देश है जहाँ दिवालिया होने जा रहे किसानो के समूह अपने अच्छे-भले नामो और अच्छी-भली साख पर और सहकारिता तथा पारस्परिक सहायता की पद्धति को अपना कर बडी मन्दी के दौर से बच कर निकल आये और अपने लिए बिजली कम्पनियाँ बना सके ? क्या हमे इस तथ्य से प्रसन्न नही होना चाहिए कि एकाधिकार से समस्त जर्जर उद्योग मे स्वस्थ प्रतियोगिता के प्राण पूरित किये गए ? क्या यह सच नही है कि समूची अर्थ-व्यवस्था और वाणिज्य के लिए जिस पर आवश्यक नीति का समर्थन किया जा सकता है वह बगैर घाटे की, न्यूनतम लागत पर उत्पादन और वितरण की ही नीति हो सकती है ? यदि हॉ, तब तो विद्युत् सहकारी सारे अमरीकावासियों के धन्यवाद और समर्थन के अधिकारी है।

और यह भी क्या कम उल्लेखनीय है कि विद्युत् सहकारियों का—और दूसरे सहकारियों का भी विरोध प्रायः उनके क्षेत्र से बाहर और दूर के ही लोग करते हैं। जिन क्षेत्रो मे सहकारी बनाये जाते और काम तथा सेवा करते है वहाँ के लोग कभी इनका विरोध नही करते—यहाँ तक कि घोर अनुदार और कट्टर पुराणपन्थी व्यापारी भी नही।

क्योंकि उन्होंने परिवर्तन और रूपान्तर के आधुनिक चमत्कार को घटित होते देखा और अनुभव किया है; और उनका जीवन उससे पूर्णत प्रभावित हुआ है, बल्कि आमूल बदल ही गया है, जैसा कि जार्जिया के एक देहाती डाकिये का कहना है : "जो प्रदेश पहले अत्यन्त पिछडा हुआ, आदिम ढग से खेती करने वाला, मलेरिया ग्रस्त घोर जगल था वही अब आधुनिक कृषि का उन्नत क्षेत्र हो गया, जहाँ के लोग दैनिक-पत्र मँगवाते है, अपने बच्चो को कालेज भेजते है, रात मे बिजली की रोशनी मे पढ़ते है और जहॉ की माँ के पास मॉ बनने का समय है।"

अमरीकी प्रणाली के गर्व और गौरव की एक बात यह है कि ४५ लाख किसान और ग्रामवासी इस महान औद्योगिक राष्ट्र के मूल उद्योग के एक अंश के स्वामी है। ग्रामीण विद्युत् सहकारी की कहानी इस बात को प्रमाणित करती है कि हमारी प्रणाली का प्रत्येक को लाभ पहुँचाने के लिए उपयोग किया जा सकता है। इतना ही नही, इससे यह भी प्रमाणित होता है कि **जनता अपने स्वयं के प्रयत्नों से** इस प्रणाली का ऐसा उपयोग कर सकती है। और इससे यह भी प्रमाणित होता है कि सहकारिता हमारे देश के लिए--सह-कारियों के प्रतिस्पर्द्धियों सहित हमारे समूचे देश के लिए बहुत अच्छी चीज है।

क्योंकि सहकारियों ने यह दिखा दिया कि किसान बिजली का खर्च भुगत सकते है, यदि वह उन्हे उचित दरों पर दी जाये। यह काम करके सहकारियों ने केवल अपने व्यवसाय के लिए ही नही अपने प्रतिस्पर्द्धियों के व्यवसाय के लिए भी खपत का कितना विशाल बाजार खडा कर दिया।

जिन बाधा-बन्धनों और सीमाओं के अन्तर्गत विद्युत् सहकारियों को अपना काम करना पडता है उसे देखते हुए उनसे लिये जाने वाले ब्याज की दरे और उनकी कराधान स्थिति सर्वथा उचित ही है। यहाँ इस बात का उल्लेख किये बिना नही रहा जा सकता कि इतनी बाधा-बन्धनों और मर्यादाओं के रहते हुए भी विद्युत सहकारियो ने उस उद्योग मे, जिसकी गति बहुत कुछ अशों मे अवरुद्ध हो गई थी, एक नये प्रकार की सक्रियता प्रवर्तित की। उन्होंने एकाधिकार को उस उद्योग मे औद्योगिकीय बेकारी बढ़ाने से रोका। प्रति-स्पर्द्धियों की ओर से उन पर जो प्रबल प्रहार किये जा रहे है वे ग्रामीण अमरीका की अर्थ व्यवस्था मे उनकी सफलता, महत्त्व और स्थायात्व के ही उत्कृष्ट प्रमाण है।

१९६१ मे जब (स्वर्गीय) जान एफ० केनेडी ने राष्ट्रपति-पद सभाला तो विद्युत् और दूसरे सभी सहकारियो के भावी विकास की सम्भावनाएँ बहुत उज्ज्वल हो गईं। क्योंकि निर्गामी प्रशासन के प्रतिकूल मिस्टर केनेडी और उनके द्वारा नियुक्त अधिकारी देश के विद्युत् सहकारियों की आवश्यकताओं, समस्याओं और उपयोगिता को ज्यादा अच्छी तरह समझते थे।

६ | एकाधिकारी शक्ति और स्वतन्त्रता की आशा

युद्धोतर कालीन अमरीका मे रहन-सहन के स्तर मे निरन्तर उन्नति, वर्ग-भेदो के अस्पष्ट होते जाने और सम्पत्ति, स्वामीत्व एव आय के अधिक व्यापक वितरण के सम्बन्ध मे काफी बढा-चढा कर बाते कही जाती रही है। युद्ध के तत्काल बाद के वर्षो मे इन तीनो प्रवृत्तियो के सबल होने के ठोस प्रमाण भी उपलब्ध हुए। कारखानो के आगे उनमे काम करने वाले मजदूरों की मोटरो की कतारे तो अब भी विदेशी पर्यटको के लिए अमरीका की भव्य दर्श-नीयताओ मे से है। दूसरे देशो मे मजदूरो के पास मोटरो की जगह अधिक-से-अधिक बाइसिकले होगी, या कुछ भी न होगा।

रहन-सहन का स्तर बराबर उन्नत होता रहा और वर्गभेद इस सीमा तक तो अस्पष्ट रहे ही कि वेशभूषा और वस्त्राभूषणो से अब भी यह नही पहचाना जा सकता कि कौन स्टेनोग्राफर है और कौन सम्पन्न महिला, लेकिन सम्पत्ति आदि के व्यापक वितरण की बात तथ्यो से जरा भी मेल नही खाती—वह निरी डीग ही बनी रही। उलटे, आर्थिक शक्ति थोडे से और भी थोडे हाथों मे सिमटती चली गई। उद्योग-धन्धे अधिकाधिक मात्रा मे 'तीन बडो' या 'चार बडो' के प्रभुत्व मे आते जा रहे है। जन सख्या का बहुत ही छोटा-सा भाग उद्योगो के साम्या स्वामीत्व को पूरी सार्थकता से अपने अधिकार मे किये हुए है। और **औगोगिक दानवों से सही अर्थों में स्वतन्त्र** छोटे व्यवसाय के लिए तो टिके रहना भी अधिकाधिक कठिन होता जा रहा है।

१९५२ मे सयुक्त राज्य अमरीका मे साढे सैतीस लाख परिवारो के एक या एकाधिक सदस्य निगम पूँजी के एक या एकाधिक हिस्सो के स्वामी थे। उसके बाद चार वर्षो तक स्वामीत्व को विस्तारित करने और 'जनता के पूँजीवाद' को आंशिक सत्य का रूप देने के लिए घोर अभियान किया गया तो १९५६ मे निगम पूँजी के स्टाकधारियो की संख्या ३५ लाख परिवारो के सदस्यो तक

विस्तारित की जा सकी। लेकिन चार करोड परिवार फिर भी ऐसे रहे जिनमें से किसी के पास निगम पूँजी का एक भी हिस्सा नही था।

सयुक्त राज्य अमरीका के निगमो मे दस मे केवल एक ही परिवार एक हिस्से तक का स्वामी होगा। इसके विपरीत चार मे से एक परिवार के पास एक या एक से अधिक सहकारियो के एक या एकाधिक हिस्से है। सहकारी व्यवसायो के हाथ मे कुल राष्ट्रीय व्यापार का केवल २ प्रतिशत है और देश के सारे पजीकृत निगमो के पास ८५ प्रतिशत, फिर भी उनकी अपेक्षा ढाई गुना परिवारो को सहकारियो ने व्यापार के स्वामीत्व का अवसर प्रदान किया है।

यह बात विचारणोय है, और यदि हम 'जनता के पूँजीवाद' को लाने के लिए वास्तव मे उत्सुक है तब तो हमे इस तथ्य पर और भी अधिक विचार करना चाहिए।

विक्टर पर्लो ने 'अमरीकन इकानामिक रिव्यू' मे हाल ही मे प्रकाशित अपने एक लेख मे इस बात की ओर ध्यान आकर्षित किया था कि निगमो के चार अरब डालर मूल्य के हिस्से (स्टाक) डुपाण्ट परिवार के पास है और राकफेलर एवं मेलन परिवारो मे से प्रत्येक के पास तीन-तीन अरब डालर के; लेकिन सयुक्त राज्य अमरीका के सभी मजदूरो के पास कुल मिलाकर इस तरह के हिस्से ७५ करोड डालर से भी कम के ही होंगे।

१९२९ की बडी मन्दी से लेकर १९४७ तक झुकाव धन और सम्पत्ति के स्वामीत्व को ज्यादा-से-ज्यादा लोगो तक फैलाने की ओर था। उसके बाद प्रवाह की दिशा पलट गई और १९५३ मे २ प्रतिशत से भी कम लोग राष्ट्र की वैयक्तिक सम्पत्ति के ३० प्रतिशत के स्वामी थे। निगम पूँजी के कुल हिस्सो का ८० प्रतिशत और राज्य सरकारो तथा स्थानीय प्रशासनो के सारे-के-सारे ऋण पत्र (बाण्ड) भी वस्तुत इन्ही लोगो के पास थे। ये तथ्य हमे नेशनल व्यूरो आफ इकानामिक रिसर्च से प्राप्त हुए हैं।

लघु व्यवसायो को समस्याओ पर सयुक्त राज्य अमरीका के प्रतिनिधि सदन (United States House of Representatives) की विशेष समिति ने यह जानकारी प्राप्त की कि देश को साढ़े इक्यावन प्रतिशत विनिर्माण आस्तियो पर १९५२ मे सबसे बडे ५०० निगमो का स्वामीत्व था, जो केवल तीन साल

बाद १९५५ मे बढकर ५७ प्रतिशत हो गया। समिति ने थोडा हिसाब लगाकर यह चिन्तनीय भविष्यवाणी की कि यदि यही गति रही तो १९७८ तक देश के सारे कारखानो पर इन ५०० निगमो का स्वामीत्व हो जाएगा।

स्वामीत्व के सकेन्द्रण के साथ-ही-साथ नियन्त्रण और निर्णय का संकेन्द्रण भी होता ही है। १९५९ के मार्च महीने मे 'वालस्ट्रीट जरनल' ने क्रिस्लर कारपोरेशन के अध्यक्ष के इस कथन का उल्लेख किया था कि थोडी जगह मे खडी रखी जानेवाली छोटी मोटर बनाने का क्रिस्लर का निर्णय जनरल मोटर्स और फोर्ड के इस प्रकरण से सम्बन्धित निर्णय पर निर्भर करता है। अध्यक्ष महोदय ने यह तो अवश्य नही कहा था, लेकिन सचाई यही है कि ऐसी छोटी मोटर का बिक्री मूल्य भी पूर्णत जनरल मोटर्स द्वारा निर्धारित कीमत पर ही निर्भर करता है।

कई बार तो छोटे व्यवसायो को समझ मे ही नही आ पाता कि इस नई व्यवस्था मे अमरीकी व्यवसाय को चलाया किस तरह जाए।

१९५७ मे लघु व्यवसाय प्रशासन (Small Business Administration) से कर्ज पानेवाले एक छोटे नानबाई ने एक बडे सैनिक रसद विभाग का रोटियो को आपूर्ति का ठेका लेने का निश्चय किया। उस समय तक चार बहुत बडी-बडी नानबाइयो को ही वहाँ का ठेका मिलता रहा था। केवल राई की रोटी को छोड कर वे चारो हमेशा बाकी रोटियो के लिए एक ही दर भरा करते थे। सफेद रोटी के लिए उन सबकी दरे हमेशा साढे सत्रह सेट होती और दूसरे प्रकार की रोटियो के लिए इससे मिलती-जुलती। राई की रोटी की दरो के लिए वे पर्ची डाल कर पहले तय कर लेते थे कि जिसका नाम खुले वही दूसरो से एक सेर कम भर दे। इस तरह जो एक सेर कम भरता उसी को ठेका मिल जाया करता था।

इस बार छोटे नानबाई ने १२ ७० सेट की दरे भरी जो अभी तक सेना द्वारा दी जाती रही दरो से बहुत न्यून थी। लेकिन यह बात मालूम होते ही उन चार बडी नानबाइयों मे से एक ने तत्काल अपनी दरे साढे दस सेट कर दी, जो उनकी सदा की दरो से जो लगभग ४० प्रतिशत कम थी। और वह ठेका उस बडी नानबाई को मिल गया।

आज संयुक्त राज्य मे अनुसन्धान और उन्नयन-सम्बन्धी सारे कार्यो का लगभग ८५ प्रतिशत केवल ३७५ बड़ी-बडी कम्पनियो द्वारा किया जाता है।

प्रतिरक्षा-सम्बन्धी सारे ठेकों का ९४ प्रतिशत हर बार बहुत बड़ी-बडी व्यापारी-सस्थाओ का वही-का-वही समूह मार ले जाता है।

सिर्फ निर्माण मे ही नहीं दूसरे व्यापारो मे भी एकाधिकार का प्रवेश बढ़ता जा रहा है।

१९३९ मे देश मे फुटकर खाद्यान्न भडारो की सख्या ३,८७,००० थी, जो १९५४ मे २, ७९,००० हो गई, यानी ३९ प्रतिशत कमी हुई। इतना ही नही, १९५४ मे इन २,७९,००० भडारो मे से ६००० भडार कुल बिक्री की एक तिहाई बिक्री कर रहे थे।

सहकारी लीग के जन सम्पर्क सम्मेलन को १९५८ मे सघीय सचार आयोग (Federal Communication Commission) के एक सदस्य ने यह बताया कि ९० प्रतिशत दर्शक केवल दो टेलीविजन कम्पनियो के पास है और न्यूयार्क सिटी की सिर्फ १८ कम्पनियाँ कुल रेडियो टेलीविजन विज्ञापन का ८० प्रतिशत काम सँभाले हुए है।

समाचार पत्रो को प्रतिद्वन्द्विता तो अब बीते जमाने की कहानी हो गई है। देश के कोई चौदह सौ नगरो मे दैनिक पत्र है ।

लेकिन समाचार पत्रों को चलाने वाले अलग और उनके स्वामी अलग ऐसे अधिक नही केवल दो भिन्न व्यक्ति अथवा भिन्न सस्थाएँ तो तीन सौ से भी कम नगरों मे ही होगी। बाकी स्थानो मे तो जहाँ तक समाचार पत्रो का प्रश्न है, सवाद, सूचना और समाचारों पर एकाधिकार का पूर्णछत्र साम्राज्य है। आज तो समाचार पत्र की स्वतन्त्रता का अर्थ ही हो गया है जो जी मे आये कहने के लिए अपने पैसो के बल पर समाचारपत्र के स्वामी बनने की मुट्ठी-भर लोगो की स्वतन्त्रता। सयुक्त राज्य की सीनेट के एक बडे विशिष्ट और सर्वसम्माननीय सदस्य १९६० मे तीसरी बार चुनाव के लिए खडे हुए तो उन्हे यह आशा थी कि राज्य के सैकडो समाचार पत्रो मे से अधिक नही तब भी एक या दो तो उनका अवश्य समर्थन करेगे। वे जिस पार्टी से सम्बद्ध है वह देश के 'शक्ति-श्रेष्ठियों' को फूटी आँखों नही सुहाती। ये सीनेटर महोदय जिस राज्य के है वहा के सबसे बड़े नगर मे डेमोक्रेटो का २ . १ या ३ : १ के अनुपात मे बहुमत है। लेकिन नगर के चारों समाचार पत्र कट्टर रिपब्लिकन है, सिर्फ इसलिए कि

उनके मालिक रिपब्लिकन है। समाचारपत्र पक्षपात नही करता उसे करना भी नही चाहिए। वह तो सम्पत्ति है—अपने पूरे रूप मे—उन लोगो की जिनका एक तरह का दृष्टिकोण है। और भिन्न विचारो एव दृष्टिकोणो की प्रतिस्पर्द्धा तो कभी से भूत काल की बात हो गई है। समाचार पत्र हामी है समनुरूपता का और दूसरो को भी इसी तरह के आचरण के लिए उद्बोधित करता है।

आर्थिक शक्ति के इस अत्यधिक केन्द्रीकरण के कुछ परिणाम तो बिलकुल सामने ही है। 'फार्च्युन' नामक पत्र ने सबसे बडे ५०० निगमो का जो वार्षिक सर्वेक्षण किया उससे पता चलता है कि उनके लाभ की वार्षिक औसत दर १० और १२ प्रतिशत के बीच मे है। १९५९ की पहली छहमाही मे युनाइटेड स्टेट्स् स्टील ने बिक्री पर १० प्रतिशत और निवेशित पूंजी पर १७ प्रतिशत लाभ कमाया।

मुनाफा कमाने मे कोई बुराई नही है, लेकिन इन विशाल व्यवसायी दानवों के मुकाबले छोटे व्यवसायों का औसत मुनाफा पचमाश और दशमाश भी मुश्किल से ही होगा।

इसका कारण यह है कि बडी कम्पनियाँ अपने उत्पादनो और सेवाओं की कीमते अपनी इच्छानुसार—व्यवस्थापित ढग से—निश्चित करने की स्थिति मे होती है १९५८ की ग्रीष्म मे इन्टरनेशनल मिनरल्स एण्ड केमिकल कारपोरेशन के उपाध्यक्ष नेल्सन सी० वाईट ने इसी बात को यो कहा है. "उद्योग की मूल्य-निर्धारण की पद्धति के सम्बन्ध मे जितनी गलत फहमी है उतनी उसके काम करने के और किसी भी ढग के बारे मे नही है। इसके लिए अकसर हमारी आलोचना की जाती है। हमारी ओर से अपना बचाव करने की तो इतनी जरूरत नही है, परन्तु स्पष्टीकरण अत्यन्त आवश्यक है। अपने निगमित उद्देश्यो को सम्पादित करने के लिए हर एक कम्पनी के पास मूल्य-निर्धारण साधन-स्वरूप है। इसीलिए तो मूल्य-निर्धारण एक निश्चित नीति के अनुसार, एक निर्धारित योजना के अनुसार किया जाता है, अटकल पच्चू ढग पर नही।" और जैसा कि पिछले अध्याय मे बताया जा चुका है सयुक्त राज्य इस्पात कारपोरेशन द्वारा प्रकाशित 'इस्पात और मुद्रास्फिति से सम्बन्धित तथ्य एव कपोल कल्पनाएँ' नामक पत्रिका में पढ़ा जा सकता है कि वर्तमान अमरीका मे प्रचलित ८८ प्रति-

शत कीमते बनावटी तरीके से बढ़ाई हुई व्यवस्थापित ढग की कीमते है।

इस तरह की बनावटी कीमतो को 'व्यवस्थापित कीमते' या व्यवस्थापित मूल्य' कहा जाता है, क्योकि कम्पनियों का व्यवस्थामण्डल प्रशासनीय निर्णयों से उन्हे तय करता है। यह पद्धति उसी कम्पनी मे लागू की जा सकती है जहाँ किसी उद्योग पर अपने ही जैसी तीन या चार विशाल कम्पनियों के साथ एकाधिकारी नियन्त्रण हो। व्यवस्थापित मूल्यो का साधारणत. आर्थिक परिस्थितियों से अथवा माँग और पूर्ति के नियम से कोई भी सम्बन्ध नही होता। फेडरल रिजर्व बोर्ड के अनुसन्धान निदेशक राल्फ ए० यग ने इस्पात और मोटरो की मूल्य वृद्धि पर १९५९ के आरम्भ मे टिप्पणी करते हुए अत्यन्त सक्षेप मे कहा था 'अर्थशास्त्र की दृष्टि से ` बोधगम्य नही है।"

वास्तव मे ही बोधगम्य नही है।

इस्पात और मोटरो की कीमतें १९५९ मे उस समय बढाई गई जब माँग की अपेक्षा माल कही ज्यादा था। उस समय इस्पात उद्योग अपनी क्षमता का केवल ५० प्रतिशत के लगभग उत्पादन कर रहा था। मोटरो की बिक्री अपेक्षा से बहुत कम हो रही थी, फिर भी कीमतें बढ़ा दी गई, घटाई नही गई।

१९५० के बाद की पूरी दशाब्दी मे मुद्रास्फीति और डालर की क्रय-शक्ति पर सकट को लेकर काफी चिल्ल-पो मची रही। लेकिन गुहार मचाने वालो मे से किसी ने स्फीति के मूल कारणो को खोलकर दिखाने का साहस नही किया।

एकाधिकारी औद्योगिक शक्ति ही उस मुद्रास्फीति का मूल कारण थी। १९५० के बाद की दशाब्दी मे यदि हमारे सारे उद्योग प्रतिस्पर्द्धात्मक उद्योगो की ही तरह चलाये जाते तो स्फीति और मूल्य वृद्धि की नौबत ही न आने पाती। इस सम्बन्ध मे प्रतिस्पर्द्धात्मक उद्योगों से दो उदाहरण देना काफी होगा : १९५३ से १९५८ तक के बीच कृषि उपजो के मूल्य ५ प्रतिशत गिर गये और यही हाल कपडे के मूल्यों का भी रहा। लेकिन इसी बीच इस्पात की कीमते ३७ प्रतिशत, मोटर गाड़ियाँ और मशीनो की कीमते २२ प्रतिशत और तम्बाकू की कीमतें १५ प्रतिशत बढ़ा दी गई; और यही स्थिति आम-तौर पर उन सारे उद्योगों मे हुई जहाँ एकाधिकारी नियन्त्रण के कारण व्यव-स्थापित कीमते सम्भव थी।

नतीजा यह हुआ कि कृषि-उपजों और कुछ अन्य कीमतो मे काफो गिरावट होने के बावजूद उन पाँच वर्षो मे थोक कीमतो के सूचकाक मे ८ प्रतिशत की वृद्धि हो गई।

एकाधिकार ने अपना कर वसूल कर ही लिया।

और एकाधिकार जो दूसरा कर वसूल करता है वह तो और भी खतरनाक है। एकाधिकारो पद्धति पर चलाये जाने वाले उद्योग अपने अधिकाश विकास के लिए आजकल हिस्से बेचकर वित्तीय प्रबन्ध नही करते, वे इस कार्य के लिए 'आन्तरिक वित्तीय प्रबन्ध' की प्रलाणी को अपनाते है, अर्थात् लाभाश का उपयोग नये सयत्रों का मूल्य चुकाने अथवा प्रतिस्पर्द्धी व्यवसायो को खरीदने मे किया जाता है।

इसका सही अर्थ यह हुआ कि हमारी अर्थ व्यवस्था के एकाधिकारी टुकडे में फँसी पूँजी और मजूरी का निरन्तर बढती जाती औद्योगिकीय दक्षता से सारे राष्ट्र को लाभान्वित करने मे कोई भी उपयोग नही हो पा रहा है। यदि हो रहा होता तो या तो उन्हे कीमते घटानी पडती या उन्ही कीमतों पर ज्यादा अच्छा माल देना पडता। और बिना नये हिस्से बेचे नये सयत्रो का निर्माण करने अथवा पूरे व्यवसायों को ही खरीद लेने लायक अनाप-शनाप मुनाफे तो वे कभी भी नही कर सकते थे। और नये उपभोक्ताओं से उत्पादित वस्तुओ के मूल्य मे नये सिरे से बनाये जाने वाले कारखानो का मूल्य जोड कर अत्यधिक महँगी कीमते वसूल कर रहे होते।

जब तक यह चलता रहेगा औद्योगिकीय बेकारी बढती ही जाएगी, कृषि—जैसे प्रतिस्पर्द्धात्मक उद्योगो को हानि होती रहेगी और अमरीकी अर्थव्यवस्था के विकास की गति पिछड़ती चली जाएगी।

इस सम्बन्ध मे कुछ तो करना ही होगा। क्योकि जैसा यूनियन आयल कम्पनी ने अपने सम्यागत उद्देश्य-सम्बन्धी विज्ञापनो मे कहा है . "थोडे से लोगो के हाथो मे, चाहे वे व्यवयाय हों, चाहे रुपया लगाने वाले साहूकार, चाहे उद्योगपति हों, सरकारी अधिकारी हो अथवा मजदूर नेता, शक्ति का किसी भी तरह का केन्द्रीकरण बहुसख्यक जनता को अनिवार्यतः हानि पहुँचाने वाला ही होता है।"

इस सम्बन्ध मे कुछ-न-कुछ तो करना ही होगा, नही तो संयुक्त राज्य मे आर्थिक स्वतन्त्रता, आर्थिक महोद्यम और आर्थिक विकास का उत्पादन पर लगे प्रतिबन्धो के हाथों, जो व्यवस्थापित मूल्य निर्धारण का अवश्यम्भावी परिणाम है, गला ही घुँट जाएगा।

लेकिन क्या, आखिर क्या किया जा सकता है ?

एक उपाय जिस पर कम-से-कम विचार तो किया ही जाना चाहिए, यह है कि जब तक हमारी समूची अर्थ व्यवस्था पर मुट्ठी-भर निगमो का एकाधिकारी नियन्त्रण पूरी तरह स्थापित नही हो जाता, जब तक मूल्यो की होड़ पूरी तरह लुप्त नही हो जाती, और जब तक किसी भी उद्योग मे नई कम्पनियों का प्रवेश आज मोटर, इस्पात, कृपि-यन्त्र या रसायन उद्योग की ही तरह असम्भव नही हो जाता, इस ढर्रे को जैसा यह चल रहा है चलता रहने देना चाहिए। लेकिन यह जरा अविश्वसनीय लगता है कि जिस देश के आदि निर्माताओं ने स्वतन्त्रता की खोज मे तूफानी समुद्रो को पार किया था उसी देश की जनता स्वतन्त्रता का यों अन्त हो जाने देगी। परन्तु यदि जनता की निष्क्रियता शीघ्रातिशीघ्र रोषावेश मे परिणत नही हुई तो ठीक यही परिणाम होकर रहेगा।

दूसरा उपाय है न्यास-विरोधी कानूनों को सचमुच ही लागू कर देना। शरमन कानून बन जाने के बाद भी यह काम अभी तक हो नही पाया है। प्रभावशाली होने के लिए इन कानूनो मे इतना सशोधन करना पड़ेगा कि किसी भी उद्योग मे एकाधिकारी शक्ति का, फिर वह शक्ति कैसे ही क्यों न प्राप्त की गई हो, विद्यमान होना ही उसके खिलाफ प्रतीकारात्मक कारवाई करने का पर्याप्त कारण समझा जाना चाहिए।

लेकिन यह प्रश्न बड़ा टेढ़ा है कि प्रतीकारात्मक कारवाई किस प्रकार की हो ? क्या जनरल मोटर्स, जनरल इलेक्ट्रिक, जनरल फूड या दूसरे किसी भी 'जनरल' निगम को जोर-जबर्दस्ती तोड़ा जा सकता है ? और यदि तोड़ भी दिया जाए तो क्या वे टूटे हुए रहेगे ? और उनके तोड़े जाने के परिणाम-स्वरूप जो छोटी कम्पनियाँ बनेगी वे प्रतियोगिता और खास तौर पर मूल्य-निर्धारण की प्रतियोगिता कर सकेगी ?

ऐसे प्रश्नों का उत्तर दे पाना वास्तव मे बड़ा मुश्किल है।

काग्रेस के जिन सदस्यो ने हमारी अर्थ व्यवस्था मे एकाधिकार के प्रसार का तथ्यात्मक अनुशीलन किया है उनकी ओर से कई तरह के सुझाव पेश हुए है। एक सुझाव तो यह है कि मूल उद्योगो मे मूल्य वृद्धि की घोषणा पहले से की जानी चाहिए; इससे उन लोगो के मन पर, जो मनमाने तरीके पर मूल्य-वृद्धि को व्यवस्थापित कर देते है, आगा पीछा सोचने की कुछ तो रोक लग ही सकती है। दूसरा प्रस्ताव काफी पुराना है, जिसे सबसे पहले व्योमिग के सीनेटर ओ माहोनी ने पेश किया था; वह यह कि अन्तर्राज्यीय व्यवसाय करने वाले सभी निगमो को सघीय सरकार द्वारा लाइसेन्स दिया जाना चाहिए, इससे तथ्य-सम्बन्धी जानकारी देने मे अधिक तत्परता बरती जा सकेगी। लेकिन इससे इस बात का जवाब तो नही मिलता कि उन तथ्यो के आधार पर क्या कारवाई की जाएगी और कैसे की जाएगी।

उपभोक्ताओं की क्रयशक्ति को सगठित करना ही एकाधिकार के खतरों के खिलाफ सबसे पक्का और प्रभावशाली प्रतीकारात्मक कदम है। स्वीडन— जैसे देशों मे इस तरह के कदम काफी हद तक उठाये जा चुके है और जहाँ भी उठाये जायेगे वहाँ न्यास-विरोधी कानूनों की आवश्यकता नही होगी। उपभोक्ताओ के स्वामीत्व वाले सहकारी व्यवसाय आर्थिक मूल्य-निर्धारण, श्रेष्ठता और, सबसे अधिक, पूरे उत्पादन के द्वारा राष्ट्रीय हित की रक्षा करते है। इस तरह के उपभोक्ता स्वामीत्व वाले व्यवसाय सुसंगठित उत्पादकों से बराबरी के स्तर पर मोल-भाव ही नही कर सकते, अपने सहकारी भडारों की आवश्यकता-पूर्ति के लिए स्वयं उत्पादन भी आरम्भ कर सकते है और इस प्रकार प्रभावी प्रतिस्पर्द्धा के पुनरारम्भ की सही पद्धति के द्वारा एकाधिकार की पकड़ को तोड़ सकते है। लेकिन इस सम्बन्ध मे आगे किसी अध्याय मे विचार किया जाएगा।

लेकिन एक कदम है जिसे लघु व्यवसाय तत्काल और स्वयं उठा सकता है। वह कदम क्या है, यह कुछ उदाहरणों से स्पष्ट हो जाएगा। ।

थोड़ा समय हुआ एक गम्भीर विचारवान व्यक्ति, जो बचपन पार कर चुके थे, सहकारी लीग के दफ्तर मे आये। उन्होंने यह कह कर अपनी बात

शुरू की : "छोटे स्वतन्त्र स्वामीत्व वाले व्यवसायों के दिन अब आ लगे हैं। मैं स्वय नही जानता कि कितने दिन टिक पाऊँगा। वह समय दूर नही है जब हमारे छोटे कस्बों की मैन स्ट्रीट की सब दुकानें और सारा कारोबार बड़ी राष्ट्रीय कम्पनियों के हाथ मे चला जाएगा और हम सब छोटे व्यापारियों को घर मे बैठना पड़ेगा।"

सहकारी लीग के दफ्तर मे जिन सज्जन ने मुझसे यह बात कही वे कोई उग्र सुधारवादी नही थे वे पक्के प्रौढ व्यापारी और इलिनोइस के एक देहाती कस्बे मे किराना माल की बडी दुकान के सफल स्वामी थे। उनका कारबार, जैसा कि उन्होंने बताया, अब भी अच्छी तरह चल रहा था, लेकिन भविष्य उन्हे दिखाई दे गया था। और जो भविष्य दिखाई दिया वह उन्हे जरा भी पसन्द नही आया। वे इसमे विश्वास करते थे कि स्थानीय व्यवसाय स्थानीय लोगों के ही हाथ मे रहना चाहिए। वे स्वस्थ प्रतियोगिता मे विश्वास करते थे। यह उन्हे स्वीकार नही था कि देश व्यापी दुकान-शृंखलाओं वाला कोई विशाल कारबार उनके छोटे कामकाज को लील जाए; अपनी शक्ति-भर वे इसे रोकना चाहते थे।

इसे रोकने का एक उपाय उन्होंने सोच भी निकाला था। और उनका खयाल था कि यह उपाय केवल काम चलाऊ नही स्थायी है।

यही कारण था कि वे अपने कस्बे से चल कर सहकारी लीग के दफ्तर में हम लोगों से मिलने के लिए आये थे और उससे पहले दक्षिणी विसकोन्सिन के सहकारियों से मिल लिये थे और उत्तरी इलिनोइस के एक क्षेत्रीय थोक सहकारी से भी बात कर चुके थे।

वे अपने निजी कारबार को सहकारी रूप देना चाहते थे। उनका कहना था कि सहकारी बना देने पर जहाँ कारबार है उसी कस्बे के स्थानीय लोगों के स्थानीय स्वामीत्व का ही वह हमेशा-हमेशा बना रहेगा। यह बात उनकी समझ मे आ गई थी और बातचीत के दौरान उन्होंने कहा भी कि एकाधिकारी आर्थिक शक्ति के लिए जो धकमपेल मची हुई है उसमे एकमात्र सहकारी व्यवसाय ही टिके रह सकते है, सामना कर सकते है और अपनी स्वतन्त्रता को बनाये रख सकते है।

इन सज्जन ने अपने कस्बे के कुछ प्रभावशाली नागरिको की बैठक बुला कर उनसे इस बारे मे थोड़ी-बहुत चर्चा भी कर ली थी, और उन्होंने बताया कि उन लोगों की भी इसमे दिलचस्पी थी।

हमने उन्हें आश्वासन दिया कि आप जब भी बुलाएँगे हम सहायतार्थ हाजिर हो जाएँगे। अपना कुछ साहित्य भी दे दिया जो उनके काम आ सकता था। वे लोट गये यह कह कर कि घर जाकर अपने कस्बे वालो से इस सम्बन्ध मे और चर्चा करेगे और इस बात की थाह लेगे कि उनके व्यवसाय को सहकारी का रूप देने और गाँव की ही मिल्कियत बनाये रखने के लिए उसे खरीद लेने मे उन लोगों की कितनी-क्या दिलचस्पी है। यदि वे अपने इस अनुष्ठान मे सफल हुए तो वह उनके कस्बे के हित मे अच्छा ही होगा।

बहुत से उदाहरणों मे से अब एक और उदाहरण लीजिए। एक दिन इहोवा से एक लघु निर्माता सहकारी सेवा व्यवसायो के सगठन के सम्बन्ध मे जानकारी प्राप्त करने के लिए हमारे पास आये।

कारण बताते हुए उन्होंने कहा कि जिस माल का वे विनिर्माण कर रहे हैं उसमे माल तैयार करने की दक्षता का जहाँ तक प्रश्न है छोटी और बड़ी कम्पनी मे कोई अन्तर नही पडता। छोटी कम्पनी भी उतना ही श्रेष्ठ माल बना लेती है जितना कि बड़ी कम्पनी। प्रतियोगिता की समस्या माल के विनिर्माण को लेकर नही थी।

लेकिन देशव्यापी विज्ञापन के इस युग मे ('और इस कम्बख्त देश व्यापी विज्ञापन को भी तो अपना विज्ञापन करना पडता है।'—यही उन सज्जन ने कहा था।) छोटी कम्पनियों के लिए बड़ी कम्पनियों के मुकाबले अपना माल बेचना असम्भव हो गया है। छोटी कम्पनियों के लिए देशव्यापी पैमाने पर विज्ञापन कर पाना या बड़ी-सी विक्रेता पलटन रखना भी असम्भव ही है। इसलिए आज की व्यापारी दुनिया मे न तो अपने नाम और ट्रेडमार्क की साख बन पाती है और न माल को खपत के सन्तोषजनक जरिए ही निकल पाते है।

इसलिए उनके मन मे एक ऐसी सहकारी बिक्री और प्रचार सस्था बनाने का विचार उदित हुआ, जो उन्ही की तरह का माल बनाने वाले कई विनिर्माताओं की साझी सस्था होगी। कई छोटे विनिर्माताओं के संयुक्त साधनों

के बल पर ऐसी सस्था बड़े प्रतिस्पर्द्धियों के बिक्री और प्रचार विभाग का मुकाबला कर सकती है। माल तो सभी लोग अलग-अलग ही बनाते रहेंगे, परन्तु सब के माल के लिए आपस मे मिल कर कोई एक नाम और छाप तय की जा सकती है और बाजार मे उसकी साख और चलन को बढाया जा सकता है।

सहकारिता बहुत-सी छोटी इकाइयों को अपनी स्वतन्त्रता को अक्षुण्ण बनाये रखकर स्वेच्छा से साथ मिल कर काम करने का ऐसा अवसर प्रदान करती है जिससे आर्थिक जगत् मे अपनी सम्मिलित हैसियत के बल पर वे बडी-बड़ी कम्पनियों से होड़ बद सके। असल मे सहकारिता बड़ेपन की दुनिया मे 'छोटों' का एकमात्र आसरा है।

वास्तव मे कई हजार 'छोटे लोगों' ने इस आसरे को अपनाया भी है। स्वतन्त्र किराना भण्डार इसका उत्कृष्ट उदाहरण है।

राष्ट्रव्यापी दुकान-शृखलाओं को प्रतिस्पर्द्धा से जो जबर्दस्ती लाभ है उन्हे देखते हुए यह सोच कर आश्चर्य होता है कि इक्के-दुक्के स्वतन्त्र किराना भंडार जिन्दा कैसे रह सकते हैं।

लेकिन अभी तक तो एक-दो या तीन-चार नही हजारों जिन्दा हैं।

यह कैसे हुआ ?

साल्टलेक सिटी की एशोसिएटेड फुड स्टोर्स इन कारपोरेशन नामक फुटकर विक्रेताओं के स्वामीत्व की सहकारी थोक कम्पनी के मैनेजर डोनाल्ड पी० लायड ने १९५९ के जून महीने मे काग्रेस की एक समिति को इस सम्बन्ध मे जो कुछ बतलाया था उसका एक अश इस प्रकार है :

"अमरीका का सहकारी खाद्य वितरक (Co-operative Food Distributors of America) जनता को सीधा माल बेचने वाले लगभग २७ हजार छोटे फुटकर भण्डारों का प्रतिनिधित्व करने वाला व्यापार सघ है। ये फुटकर विक्रेता ही उन सौ के करीब थोक भडारो या इकाइयों के एकमात्र स्वामी है, जिन्हे लोग-बाग फुटकर विक्रेताओं की मिल्कियत वाली थोक किराना कम्पनियों के नाम से जानते है। सूखे किराने की हमारी वार्षिक बिक्री सात अरब डालर से भी अधिक की है, फिर भी हम लघु व्यवसाय ही हैं अर्थात् २७ हजार छोटे व्यावसायिक संगठन है। अपने १०० थोक भंडारों से हम ठीक

वही काम करते है जो कोई भी थोक किराना व्यापारी कर सकता है। लेकिन उसमे और हममे केवल एक फर्क है। थोक काम से लाभ कमाने के लिए हम इस व्यापार मे नही आये है। हम इस व्यापार मे है अपने एक-एक फुटकर सदस्य और उपभोक्ता-जनता को थोक खरीद शक्ति का लाभ पहुँचाने के लिए।

"खाद्य और किराना के फुटकर भडार हमारे देश मे प्रति वर्ष लगभग पचास अरब डालर का काम करते है। करीब दो-तिहाई काम एकल भडारो (एक-एक दुकान या छोटी शृखलाओं) के द्वारा किया जाता है; बाकी एक तिहाई (सही-सही ३७ प्रतिशत) बडी दुकान-शृखलाओ (ग्यारह या उससे अधिक दुकानोंवाली) के द्वारा। हम इसको सामान्यत. एक मानी हुई बात समझते है कि हमारे व्यवसाय मे एकल व्यापारी अधिकांश मे इसीलिए टिके हुए है कि हमारे सगठन की तरह के सगठनो की बदौलत अपेक्षाकृत छोटे भडार भी खरीदी और बिक्री मे बराबर की होड़ कर सकते है।"

मिस्टर लायड ने वस्तु स्थिति की बहुत ही ठीक निरूपण किया है। यदि आर्थिक सगठन की सहकारी पद्धति को अपनाया जाए तो आर्थिक स्वतन्त्रता, प्रभावी प्रतिस्पर्द्धा और 'छोटे आदमी' के लिए अवसर अब भी हो सकता है। बहुत-सी छोटी दुकानो की आवश्यकता-पूर्ति का यदि सम्मिलित स्वामीत्व वाला एक सहकारी स्रोत हो तो वे बाजार मे अपने बडे-से-बडे और ताकतवर प्रतिस्पर्द्धी का सचमुच ही मुकाबला कर सकती है।

१९५४ मे सयुक्त राज्य अमरीका के वाणिज्य विभाग ने यह विवरण दिया कि फुटकर विक्रेताओ के स्वामीत्व वाले सहकारी थोक खाद्य भडारो ने कुल १ अरब ३० करोड़ डालर की बिक्री की, जो सभी तरह के किराना माल की कुल थोक बिक्री का १७.७ प्रतिशत है।

'प्रोग्रेसिव ग्रासर' (प्रगतिशील किराना-विक्रेता) नामक व्यावसायिक पत्र का अनुमान है कि १९४८ से १९५७ के बीच स्वतन्त्र फुटकर विक्रेताओं के स्वामीत्व वाले सहकारी थोक किराना भडारों ने अपनी बिक्री २०० प्रतिशत से भी अधिक बढ़ा ली।

उपभोक्ताओं के स्वामीत्व वाले बहुत से सहकारी खाद्य भडार केवल अपने सहकारी थोक संगठनों के ही नही अपने क्षेत्र के फुटकर विक्रेताओं के स्वामीत्व

वाले सहकारी थोक सगठनों के भी सदस्य है।

पारस्परिक सहायता एकल व्यक्तियों के लिए ही नही छोटे व्यापारी अधिष्ठानों के लिए भी उपयोगी सिद्धान्त है।

जहाँ तक हम पता लगा सके है अमरीका मे इस तरह की सहकारिता पहले-पहले १८०४ मे दिखाई दी थी, जब कोनेक्टिकट के दूध उत्पादकों ने अपना एक सहकारी विक्री सघ बनाया था।

दूसरे छोटे व्यापारियों का एक ऐसा ही पहला तुलनीय काम १८८७ मे न्यूयार्क मे हुआ जब वहाँ के औषध विक्रेताओं ने किसी दुकान के पीछे वाले कमरे मे बैठक करके एक पीपा एप्सम लवण के अपने आदेशों का निकाय बनाने का निश्चय किया था। उनसे भी पहले शिकागो मुद्रक सहकारी सघ अपने सदस्यों के लिए पुस्तक और जाब प्रिंटिंग व्यवसाय लेने और वितरित करने का कार्य कर रहा था।

आज से सैकडो वर्ष पहले मध्य युग मे कारीगरों के जो शिल्पी सघ थे उनकी बहुत-सी बाते आधुनिक सहकारी से मिलती-जुलती थी। पारस्परिक सहायता के सिद्धान्त मे ही दोनो की जड़े निहित है।

आज एक लाख से भी अधिक स्वतन्त्र किराना विक्रेता सहकारी थोक-भंडारो के सदस्य और स्वामी है। और ८० हजार से ज्यादा औषध विक्रेता अपने-अपने क्षेत्रिय थोक भडारो से सहकारिता के आधार पर अपनी-अपनी दुकानों के लिए औषधियाँ खरीदते है। लौह खड के व्यापारी भी पीछे नही है, यद्यपि उनका थोक सेवा सस्थाओं के नाम के साथ 'सहकारी' शब्द शायद ही कभी दिखाई देता है, वैसे वे थोक सेवा सस्थाएँ सभी अर्थो मे पूरी-पूरी सहकारी है।

देश के अधिकाश समाचार पत्र एशोसिएटेड प्रेस के सदस्य और स्वामी है। यह सस्था शुद्ध सहकारी ढग से लाभार्जन विहीन आधार पर चलाई जाती है और 'लाभो' पर किसी भी प्रकार का कर नही दिया जाता।

लेकिन समाचार पत्र है कि स्वय तो अपने एशोसिएटेड प्रेस सहकारी से लाभान्वित होते है और जब दूसरे लोग, उदाहरणार्थ किसान या उपभोक्ता, अपनी आवश्यकताओ और समस्याओ के समाधान के लिए उन्ही सिद्धान्तों को

अपनाना और आचरण मे लाना चाहते है तो उन्हे बुरा-भला कहते है, उनके खिलाफ विष-वमन करते है।

लौह खड और औषधि विक्रेताओं की सहकारी थोक सस्थाओ के कतिपय सदस्य भी उपभोक्ताओ और किसानों की सहकारी सस्थाओं पर प्रचड प्रहार करते नही चूकते।

लेकिन इतना सब होते हुए भी किसी को यह आपत्ति नही हो सकती कि वे स्वय सहकारी पद्धतियों को क्यो अपनाये हुए है और कोई भी यह नही कहता कि वे सहकारी तरीके छोड दे या इन थोक सस्थाओ की सदा से चली आती औचित्यपूर्ण कराधान स्थिति मे परिवर्धन किया जाए।

सरक्षण धन वापसी जो सहकारी व्यवसायो को अपने ग्राहको को लौटानी होती है उन व्यवसायो की आस्तियाँ अथवा आय नही देयताएँ है। वे ग्राहक-स्वामियों की सम्पत्ति है और उनकी कर योग्य आय के अनुसार उन्ही से उनका कर लिया जाना चाहिए। और यह सिद्धान्त सभी प्रकार की सहकारी सस्था पर लागू होता है फिर चाहे वह उपभोक्ताओं की, किसानों की, समाचार पत्रों की, किराना-विक्रेताओ की, औषध विक्रेताओं की अथवा लोह खड के व्यापारियों की ही क्यों न हो।

सयुक्त राज्य अमरीका मे 'बडपन' की बेतहाशा बाढ के बावजूद जो-कुछ आर्थिक स्वतन्त्रता और स्वस्थ प्रतियोगिता अब भी दिखाई देती है वह अधिकांश उन सहकारी व्यवसायो की आभारी है जिन्हे छोटे-छोटे उद्यमों ने अपनी रक्षा के लिए सगठित किया है। यह हमारी आज की अमरीकी अर्थ व्यवस्था के सम्बन्ध मे बहुत ही कम ज्ञात पर निस्सन्देह उतना ही अधिक महत्त्वपूर्ण तथ्य है।

हमारी अर्थ व्यवस्था मे एकाधिकारी नियन्त्रण के कारण जिन छोटे व्यवसायियों को कष्ट उठाना पडता है उनमे सबसे बड़ा, सबसे महत्त्वपूर्ण और सबसे हानि मे रहने वाला समूह किसानों का है। जनता के किसी भी समूह की अपेक्षा किसानों मे सहकारी व्यवसायों की जड़े इतनी गहरी, इतनी व्यापक और इतनी परिपुष्ट होने का यही कारण है। किसान की सहकारी सस्थाओ ने ही उसे आर्थिक दृष्टि से मोल-भाव करने की आंशिक सामर्थ्य दे रखी है। सम्बद्ध व्यवसायों के सहकारी स्वामीत्व के बिना केवल छोटे एकल उत्पादकों

के रूप मे किसानों मे वह शक्ति हो नही होती कि आर्थिक मोलभाव कर सके। सहकारी सस्थाएँ यदि काफी बड़ी और शक्तिशाली हों तो किसान की स्थिति को कुछ तो आर्थिक दृढ़ता दे ही सकता है।

अगले अध्याय मे इस सम्बन्ध मे और भी विस्तार से चर्चा की जाएगी।

लेकिन यहाँ एक मामूली-सी सच बात बता देना बहुत जरूरी है। महानगरों के अखबार किसानो को दी जानेवाली 'आर्थिक सहायता'—उपदान की शिकायतें करते जरा भी नही चूकते। और अधिकाश नगर निवासी सम्भवतः यही मानने लगे है कि हमारी अर्थ व्यवस्था के दूसरे अग देश के किसानों को 'आर्थिक सहायता' कर रहे है। लेकिन वास्तव मे सचाई इसके ठीक विपरीत है। असल मे देखा जाए तो किसान ही बहुत बडा उपदान सारे राष्ट्र को दे रहे है। यदि एक परिवार भोजन और कपडा, जितना उनका वास्तव में मूल्य होना चाहिए उससे कम पर खरीदता है तभी वह मोटर और बिजली पर जितना उनका मूल्य होना चाहिए उससे अधिक दे सकता है। इस प्रकार किसान शेष सारी अर्थ व्यवस्था को जो उपदान दे रहा है वह उससे कही बडा है जो उसे कीमतों के सहारे के लिए यानी कीमतों की गिरावट को रोकने के लिए या गिर जाने पर आंशिक क्षति पूर्ति के रूप मे मिलता है। यदि किसानों के सारे लागत खर्च जोडे जाएँ, जैसे निवेश पर प्रति लाभ, मजदूरी, वेतन, मूल्य-ह्रास आदि तो यह पाया जाता है कि उन्हे आम तौर पर लागत से कम पर अपनी फसले बेचनी पडती है। और चूँकि कृषि एवं कुछ अन्य उद्योगों को, जिनमे प्रतिस्पर्द्धा अब भी विद्यमान है, लागत से कम पर या बहुत थोड़े मुनाफे पर बेचने के लिए विवश होना पडता है इसीलिए तो 'व्यवस्थापित मूल्य' वाले उद्योग अपने उत्पादनों को इतनी बेहद बढी-चढ़ी कीमते वसूल कर पाते है। यदि कृषि—जैसे प्रतिस्पर्द्धात्मक व्यवसायों को अपने माल के लिए उपभोक्ताओं के इतने थोडे-से डालर भी न मिले तो धातु के बने सामान, रसायन, तम्बाकू आदि की इतनी ऊँची कीमते चुकाने के लिए डालर कहाँ से आएँगे। फिर तो बहुत बड़े पैमाने पर मुद्रास्फीति ही एकमात्र उपाय रह जाएगा।

जनरल मोटर्स और उसके—जैसे अन्य निगमों को उपदान देने के लिए किसान जो ऊँची कीमते चुकाते है और किसानों ने अपनी रक्षा के लिए जो कदम उठाए हैं उस सब का वर्णन अगले अध्याय मे किया गया है।

---

७ | आधुनिक अमरीका की सबसे बड़ी कमजोरी

मानव-इतिहास के अधिकतर भाग मे मूल उत्पादकों का शोषण बहुत-कुछ तो इसलिए होता रहा है कि मूल उपजो का सारा क्रय-विक्रय, विनिर्माण और उन्हें पण्योपयोगी बनाने का काम दूसरे ही लोगों ने किया है।

इस तरह के शोषण के अन्त का अपेक्षाकृत एक सुगम मार्ग तो यही है कि मूल उत्पादक अपना क्रय-विक्रय और अपनी पैदावार के थोड़े-से अश का विनिर्माण और उन्हें पण्योपयोगी बनाने का काम स्वय करने के लिए अपनी निजी सस्थाएँ बनाएँ।

किसानो के सहकारी सगठन ठीक इसी प्रकार की सस्थाएँ है।

अब्राहम लिकन का एक ऐतिहासिक वाक्य है : "कोई जाति आधी गुलाम और आधी स्वतन्त्र जीवित नही रह सकती।"

इस शती की तीसरी दशाब्दी से हमे यह सबक सीखना चाहिए था कि अमरीकी अर्थ व्यवस्था आधी सम्पन्न और समृद्ध एव आधी विपन्न और अवनत दशा मे जीवित नही रह सकती।

लेकिन हमने यह सबक नही सीखा।

दूसरे महायुद्ध के बाद हमने बाकी जनसख्या को सम्पन्न बनाने का प्रयत्न किया, जब कि हमारी कृषि और उसमे काम करने वाले मन्दी, अवनति और विपन्नता मे छटपटाते रहे।

यह कभी चला नही।

यह कभी चलेगा नही।

यह कभी चल ही नहीं सकता।

जिस किसी भी जाति अथवा राष्ट्र ने इस अन्यायपूर्ण असन्तुलन को चलाने का प्रयत्न किया उसे दारुण दुख ही भोगने पड़े है।

इतिहास मे एक भी उदाहरण ऐसा नही मिलता कि कोई महान जाति अपनी कृषि-व्यवस्था को अवनत और अपने कृषकों की स्वतन्त्रता का अपहरण

बचने की उनके लिए कुछ आशा हो सकती है।

इसीलिए किसानों ने अपने सहकारी सगठन बनाये है। इन्हे आरम्भ हुए काफी समय हुआ। किसानो की जिस पहली सहकारी बिक्री सस्था का उल्लेख हमे मिलता है वह कोनेक्टिकर रीवर वैली के दूध उत्पादको ने १८०४ मे बनाई थी।

उन्नीसवी शताब्दी के उत्तरार्द्ध मे ग्रैगरों का हरावल मे वृक्षहीन मैदानो और अन्य स्थानों के सकट ग्रस्त किसानो मे विक्रय और उपभोक्ता दोनो ही तरह की सहकारी सस्थाएँ गठित की गई। उनमे से कम-से-कम एक तो अभी भी कन्सास के कैडमुस नामक स्थान मे काम कर रही है।

लेकिन कृषि-उपजों की बिक्री के लिए सहकारियों का बडे पैमाने पर विकास तो इस शताब्दी के साथ ही आरम्भ होता है। और फारम एव घर की आवश्यकताओ की पूर्ति करनेवाली सहकारी सस्थाओ की ठीक-ठीक उन्नति तो इसके पच्चीस वर्ष के बाद ही शुरू होती है।

विक्रय सहकारियों का निर्माण किसानो को सट्टा बाजार के अनिष्टकारी प्रभावों से बचाने के लिए किया गया। इन सहकारियों का निर्माण होने से पहले किसानो को अपनी फसल जो भी इक्का-दुक्का खरीदार मिल जाता उसी के हाथों, उसी की शर्तो पर और जो भी कीमत वह दे देता उतनी ही कीमत पर बेच देना पडता था। फसल जितनी ही ज्यादा होती लाभ उतना ही कम होता था। माल को रोकने, रखने और भरने का उनके पास कोई साधन नही था। बाजार मे माल की आवक बहुत अधिक हो जाने पर निवारण का कोई उपाय भी वे नही जानते थे। बिचौलिये सारा माल खरीद कर प्राय. कीमते बढा दिया करते थे, लेकिन उस मूल्य-वृद्धि से किसानो को कोई लाभ नही होता था। किसानों को माल रोकने-भरने के अपने साधनों और अपनी ही विक्रय सस्थाओं की आवश्यकता थी। विक्रय सहकारी सस्थाएँ उसी का परिणाम है।

विक्रय सहकारी सस्थाएँ बन जाने से किसानों को अपने माल की ज्यादा अच्छी और ज्यादा स्थिर कीमते मिलने लगी। लेकिन यह कहना कि इससे उपभोक्ताओं की जेब पर असर पडा और उन्हें ऊँची कीमतों पर खाद्य आदि खरीदना पड़ता है, सही नही है। उलटे हुआ यह है कि उपभोक्ताओं का पैसा

अधिकाधिक मात्रा मे किसानों और ग्रामीण समुदायो मे जाने लगा है जो पहले नही होता था। इसके अतिरिक्त विक्रय सहकारियों ने उपभोक्ता को बेचे जाने वाले खाद्यों की किस्म को सुधारने मे भी काफी सहायता की। उन्होंने स्तरीकरण, श्रेणीकरण और समूहीकरण पर काफी जोर दिया और इस प्रकार समूचे व्यवसाय मे खाद्य-वितरण की प्रणाली के स्तरो को काफी उन्नत कर दिया। सहकारी ढग से बेची जानेवाली खाद्य-वस्तुओं-जैसे सन्तरे, दूध, किशमिश, आलू, अण्डे, मुर्गियॉ, मक्खन, पनीर आदि के सौ व्यवसाय-नाम माल की श्रेष्ठता और उत्कृष्टता के सम्बन्ध मे इतने निर्भरता योग्य हो चुके है कि कोई भी अमरीकी उन्हे कही भी ऑख मूँद कर ले लेता है।

विक्रय सहकारियो और उपभोक्ता सहकारियो के दृष्टिकोण मे स्वाभाविक अन्तर है। इस पुस्तक मे जितने भी सहकारियो पर विचार किया गया प्राय वे सभी उपभोक्ता सहकारी है। किसानो के विक्रय सहकारी और छोटे व्यापारियों के सहकारी ये दो मुख्य अपवाद है। उपभोक्ता सहकारी सदस्यों द्वारा माल अथवा सेवाओं-सम्बन्धी अपनी आवश्यकताओं की जितनी हो सके उतनी प्रचुरता से पूर्ति के लिए गठित किये जाते है। उत्पादन और वितरण जितना ज्यादा होगा और सरक्षको की सख्या भी जितनी अधिक होगी उपभोक्ता सहकारो के लिए यह उतना ही ज्यादा अच्छा होगा। इसके विपरीत विक्रय सहकारो अपने सदस्यों का उत्पादन दूसरे लोगों को बेचने के लिए होते है। उनके दृष्टिकोण से एक माल के बहुत से उत्पादक हो सकते है और व्यवस्थित ढग से तत्काल बेचे जा सकने की अपेक्षा माल का उत्पादन भी अधिक हो सकता है।

सम्भवतः यही कारण है कि भूतकाल मे—आज तो बहुत ही कम—कुछ विक्रय सहकारी इसके लिए राजी नही होते थे कि उन्हे दूसरे सहकारियों के साथ रखा जाए और उनका समकक्ष बताया जाए। लेकिन इसका यह मतलब नही कि विक्रय सहकारी 'एकाधिकारी' व्यवसाय है अथवा सहकारी से भिन्न प्रकार के व्यवसाय है। वास्तव मे वे श्रमिक सघों की ही तरह के सगठन है जो उत्पादकों के बड़े समूहो को आय, जीवन-स्तर और क्रय-शक्ति की कुछ अंशो मे रक्षा करते है, क्योकि अकेला उत्पादक तो आर्थिक दृष्टि से बडा निःसहाय होता है और कुछ भी नही कर सकता।

सयुक्त राज्य अमेरिका मे सात हजार के लगभग विक्रय सहकारी सस्थाएँ है। ये प्रति वर्ष अपने कृषक सदस्यो की द्विरावृत्ति की गुँजाइश सहित कुल नौ-दस अरब डालर तक के मूल्य को चौदह प्रकार की प्रमुख पैदावारे बेचती है। अमरोका को समस्त कृषि-उपजो का चतुर्थांश खेत से उपभोक्ता की मेज तक पहुँचने के पहले एक या अधिक अवस्थाओं मे इन विक्रय सहकारियो के खर्चों से गुजरता है।

मुर्गी खाने और दूध के कुछ उत्पादन, कुछ प्रकार के ताजे फल और उनके उपोत्पाद उपभोक्ता के लिए तैयार होकर सहकारो से निकलते है। लेकिन अल्पातिअल्प मात्रा मे ये पदार्थ भो किसानो की सहकारी बिक्री सस्थाओं द्वारा सीधे उपभोक्ताओं को बेचे जाते है।

क्षेत्र-विशेष के अपने सदस्यों के उत्पादनो को इकट्ठा करके उन्हें व्यवस्थित ढग से, लेकिन बगैर तैयार किये हुए अर्थात् कच्ची हालत में बेचना ही बिक्री सहकारियों का ऐतिहासिक कार्य रहा है। लेकिन जब से इस मूल कार्य में सवेष्टन और पण्योपयोगी बनाने की क्रियाएँ जुड गई है और जब से विक्रय सहकारी सस्थाएँ क्षेत्रिय अथवा देशव्यापी बिक्री के लिए सघ बद्ध हो गई है किसानों को प्राप्त होने और उपभोक्ताओं द्वारा दिये जाने वाली कीमतों के बीच की 'खाई' बहुत कम हो गई है, और किसानों को उपभोक्ताओं का पैसा भी अधिक अनुपात मे मिलने लगा है।

दुग्धशाला के उत्पादन कुल सहकारी बिक्री का लगभग तृतीयाश हैं। १९५८–५९ के एक साल मे कोई २००० विक्रेता सहकारियों के द्वारा करीब तीन अरब डालर के दुग्धशाला उत्पादन बेचे गए। कुछ अशों मे तो ये उत्पादन उपभोक्ताओं या अधिक हुआ तो फुटकर बिक्री भडारों को सीधे ही बेच दिये जाते है। लेकिन अधिक मात्रा मे ये वस्तुएँ बिक्री सहकारियों द्वारा बड़े व्यापारियों और पण्योपयोगी बनाने वालो के ही हाथ बेची जाती है। दूध उत्पादक और विक्रय सहकारियो का राष्ट्रीय दूध उत्पादक महासघ (National Milk Producres Federation) नाम का एक राष्ट्रीय सगठन भी है। इधर के वर्षों में दुग्धशाला के उत्पादनों को राष्ट्रव्यापी सहकारी बिक्री के सम्बन्ध में काफी चर्चाएँ होती रही है।

सहकारिता के आधार पर बेची जानेवाली उपजों मे दूसरे नम्बर पर अनाज और सोयाबीन हैं, ये दोनों मिल कर प्रति वर्ष दो अरब डालर मूल्य की बेची जाती है। कुछ सोयाबीन कृषि-आपूर्ति सहकारियों को बेच दिया जाता है; और अधिकाश अनाज क्षेत्रीय सहकारियों सार्वविक अन्नागारों द्वारा बेचा जाता है; २७०० स्थानीय सहकारी अन्नागारों मे से अधिकांश इनसे सम्बद्ध है। अनाज सहकारी माल को पण्योपयोगी बनाने का काम अभी भी अपेक्षाकृत कम ही करते हैं। अधिकाश अनाज विक्रय सहकारी गल्ला सहकारियों के राष्ट्रीय महासघ (National Federation of Grain Co-operatives) से सम्बद्ध हैं; इसका प्रमुख कार्यालय वाशिंगटन डी० सी० मे है।

सहकारी अपने किसान सदस्यों के लगभग १ अरब और ६० करोड़ डालर वार्षिक मूल्य के पशुधन और पशुधनो के उत्पादन बेचते हैं; फल और सब्जियाँ प्रति वर्ष लगभग १ अरब डालर की बेची जाती हैं; कपास और उसके उत्पादन ४० करोड डालर से भी अधिक के और मुर्गियाँ एव मुर्गी खाने के उत्पादन ३५ करोड डालर के बेचे जाते हैं। सहकारियों के द्वारा अच्छी किस्म और और अच्छे दामों के लिए माल का बिलकुल सही और उचित श्रेणीकरण किया जाता है, इस पर किसानों को पूरा-पूरा विश्वास है। फल और सब्जियाँ की विक्री करने वाले कुछ सहकारियों को तो अपने बाजार मे माल को उत्कृष्टता के सम्बन्ध मे बड़ी धाक और ऊँची साख है और क्षेत्रीय एव राष्ट्रीय बाजारों मे उनका बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान बन गया है।

व्यापार की कूत डालरों मे की जाए तब तो कृषि उपज विक्रेता सहकारी संयुक्त राज्य अमरीका के अपने ढग के सबसे बड़े सहकारी व्यवसाय हैं। लेकिन किसानों की बुनियादी समस्याएँ तो फिर भी बिन सुलझी ही रह जाती हैं। यदि किसानों के स्वामीत्व वाले सहकारी व्यवसाय माल को पण्योपयोगी बनाने का काम, सवेष्टन, विज्ञापन और बिक्री राष्ट्र व्यापी बिक्री सगठनों के द्वारा करने लगे तो जो कुछ होगा उसकी केवल कल्पना ही की जा सकती है। निश्चय ही हालत एकदम बदल जाएगी--बहुत अधिक लाभ होगा और किसानों के हितों की बहुत अधिक रक्षा होगी।

और यदि किसानों के स्वामीत्व वाले व्यापारी संगठन से खेती की पैदावार

को काफी बडी मात्रा मे उपभोक्ताओ के स्वामीत्व वाले उद्यमो को सीधे बेच सके तो किसानों के पाने और उपभोक्ताओ द्वारा ही की 'खाई' काफी पट जाएगी और अन्तर केवल माल को पण्योपयोगी बनाने, उसकी ढुलाई और बिक्री की लागत भर करह जाएगा।

संकल्प और पूँजो का उचित सम्मिश्रण और सयोजन अब भी, सहकारिता के माध्यम से, अमरीकी किसान की हालत को आमूल बदल सकता है।

फसलों के बेचे जाने पर किसानों को उचित मूल्य दिलाने मे तो सहकारी बिक्री पूरी तरह प्रभावोत्पादक नही हो पाई; परन्तु कृषि और किसानो की आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाले सहकारियो ने किसानो की पैदावार की लागत को घटाने मे और फारमों एव घर-गिरस्ती के माल की खरीद मे उन्हे मोल-भाव की सार्थक शक्ति से सम्पन्न करने मे अवश्य उल्लेखनीय कार्य कर दिखाया है।

अमरीकी सहकारी आन्दोलन के विकास का मुख्य आधार वे ४३०० सहमध्य पश्चिमी (मिडवेस्टर्न) कस्बो मे और देश के दूसरे बहुत से भागो मे अव- स्थित हैं।

१९५९ मे इनके ३५ लाख से भी अधिक सदस्य थे और इन्होने लगभग २ अरब ४० करोड डालर का व्यापार किया। ये सहकारी अमरीकी ग्राम्य जनता की फारम और घर गिरस्ती कीप्रमुख बड़ी आवश्यकताओ का २० से ३५ प्रति-शत तक पूरा करते है। ये किसानो को उत्पादन की लागत को नियन्त्रण मे रखने और उसे कम करने की सक्षमता प्रदान करते हैं।

इस तरह का कोई भी सहकारी अपने पूरे जिले (काउटी) मे या जिले के काफी बड़े हिस्से मे व्यापार करता है। वह एक किराना दुकान, चारे, बीज और उर्वरक का भडार, पेट्रोल की बड़ी टकी और पम्प, आमतौर पर कृषि यन्त्रो का प्रदर्शन कक्ष और कोयले की टाल चलाता है। साधारणतः वह जिले के प्रमुख व्यापारिक केन्द्र मे अवस्थित होता है इसलिए दूर-दराज की कुछ छोटी बस्तियों मे इसकी शाखाएँ भी हो सकती है। काफी सख्या मे ये भडार अपने इलाके की गैर-किसान आबादी की जरूरते भी पूरी करते है।

राज्य अथवा अपने क्षेत्र के शक्तिशाली सहकारियों से सम्बद्ध होने के

कारण इन चार हजार देहाती सहकारियों मे से अधिकाश पर किसान बढ़िया किस्म के और भरोसे लायक उच्च विश्लेषण युक्त उर्वरक, उच्च कोटि के बीज और चारा, लौह खड का सामान, कृषि के यान्त्रिक उपकरण, इमारती सामान और रग-रोगन बिजली का सामान पेट्रोल और उसके विविध उत्पादन, ईंधन, कीटाणु नाशक और पौधों पर छिड़कने के घोल, किराना माल, कपड़े और दूसरे बहुत से सामान के लिए पूरी तरह निर्भर कर सकता है। फारमों द्वारा उपयोग किये जाने वाले मिश्रित चारे के चतुर्थाश उर्वरकों के पचमाश और पेट्रोल के २० प्रतिशत की आपूर्ति इन्ही सहकारियों के द्वारा की जाती है।

इनमे से अधिकाश वस्तुएँ 'ज्यादा मुनाफे वाला' माल है, इसलिए ये सहकारी अपने सदस्यों को सरक्षण धन वापसी की नियमित अदायगियाँ करते रहते है और किसानों के हित मे कीमतों को तेजी नही पकड़ने देते, नरमी पर ही बनाये रहते है। १९२५ के बाद काम और विस्तार शुरू होने के कारण इन ग्रामीण आपूर्ति सहकारियो ने थोक और फुटकर बिक्री का काफी अच्छा कामकाज जमा लिया है। महत्त्व की बात तो यह है कि इनका कारबार खास तौर पर 'मन्दी के बुरे दिनों' मे ही तेजी से बढ़ा है।

देश के प्रत्येक भाग मे इन फुटकर कृषि आपूर्ति और कृषि उपभोक्ता सहकारियो के या तो अपने क्षेत्रीय थोक और उत्पादक सहकारी है या ये इस तर के किसी क्षेत्रीय सहकारी से सम्बद्ध हैं।

इस तरह के महत्त्वपूर्ण क्षेत्रीय सगठनों मे से कुछ इस प्रकार है : कोआपरेटीव ग्रैग लीग फेडरेशन, इथाका, न्यूयार्क, सदर्न स्टेट्स् कोआपरेटिव, रिचमाड, विरजीनिया; ईस्टर्न स्टेट्स् फारमर्स एक्सचैंज, वेस्ट स्प्रिग फील्ड, मे मेसाचुसेट्स्; मिडलैण्ड कोआपरेटिव, इन कारपोरेशन मिनापोलिस, मिन्नेसोटा कञ्जूमर्स कोआपरेटिव एसोसिएशन, कनसास सिटी, मिसौरी, इलिनोइस फार्म सप्लाई कम्पनी, ब्लूमिग्टन, इलिनोइस; इडियन फार्म ब्यूरो कोआपरेटिव एसोसिएशन, इडियाना पोलिस, इडियाना; फार्मर्स यूनियन सेट्रल एक्सचेज, सेंटपाल, मिन्नेसोटा; फार्म ब्यूरो कोआपरेटिव एसोसिएशन कोलम्बस, ओहियो, फार्मर्स कोआपरेटिव एक्सचेज, रैले, नार्थ कैरोलिना; मिसौरी फार्मर्स एसोसिएशन; वाशिगटन कोआपरेटिव फार्मर्स एसोशिएशन; पेन्सिलवानिया फार्म ब्यूरो कोआप-

रेटिव एसोसिएशन; सेंट्रल कोआपरेटिव्स, इनकारपोरेशन, सुपीरियर, विसकोन्सिन; पैसफिक सप्लाई कोआपरेटिव, वल्ला वल्ला, वाशिंगटन, फ्रुट ग्रोअर्स सप्लाई कम्पनी, लासएंजिल्स, कैलीफोर्निया; फार्म ब्यूरो सर्विसेज, लानसिंग, मिचिगन; टेनेसी फार्मर्स कोआपरेटिव, फार्मर्स यूनियन स्टेट एक्सचेंज, ओमाहा, नेबास्का; और उटाह कोआपरेटिव एसोसिएशन।

ये क्षेत्रीय थोक सहकारी अपने सदस्य फुटकर बिक्री सहकारियों की उर्वरको, पशुखाद्यों, बीज, मोटर के सामान, लौहखड की चीजे, पेट्रोल उत्पादनों और कीटाणुनाशकों सम्बन्धी अधिकांश आवश्यकताओ को पूरा करते है। समय को देखते जितनी मॉग है उतनी तो नही परन्तु फिर भी काफी मात्रा मे ये सब वस्तुएँ इन क्षेत्रीय सहकारियों द्वारा या तो अपने निजी कारखानों मे या कई क्षेत्रीय सहकारियों के सम्मिलित स्वामीत्व वाले कारखानों मे ही बनाई और तैयार की जाती हैं। उदाहरणार्थ इन क्षेत्रीय सहकारियो द्वारा एक सौ से भी ज्यादा उर्वरक कारखाने चलाये जा रहे है। सहकारी स्वामीत्व वाले दो हजार से अधिक तो तेल के कुएँ ही है और दस सहकारी तेल परिष्करण शालाएँ।

स्वय उत्पादन आरम्भ कर देने से ये सहकारी अपने सरक्षकों को वे सब वस्तुएँ जो प्राय बडी कठिनाई से मिल पाती है या मिलती ही नही, पूरी-पूरी तादाद मे दे सकते है। स्वय उत्पादन करने का दूसरा लाभ यह है कि इसमे थोक और फुटकर बिक्री की अपेक्षा सहकारी सरक्षकों के लिए लागत और मूल्यों में कही अधिक बचत की जा सकती है। जो सहकारी उत्पादन करते है वे अपने सदस्यों को दूसरी जगह निर्मित माल की केवल बिक्री करके सरक्षण धन वापसी की जितनी अदायगी और सम्पत्ति पर जितना साम्या स्वामीत्व दे पाते उससे कही अधिक देते है। क्षेत्रीय थोक आपूर्ति सहकारियों मे सबसे बडे कन्जूमर्स कोआपरेटिव एसोसिएशन के सस्थापक और अध्यक्ष हावर्ड ए० फाउडेन का कहना है कि हमारी सस्था ने थोक का काम करके अपने सदस्यों के लिए जहॉ एक डालर की बचत की वही अपने कारखानो मे माल का उत्पादन करके उस एक डालर के मुकाबले उन्नीस डालरो की बचत की।

देश के दो सबसे बडे राष्ट्रीय थोक आपूर्ति सहकारी सयुक्त राज्य अमरीका और कनाडा के कुछ क्षेत्रीय सहकारियों के स्वामीत्व वाली संस्थाएँ है।

इनमे से एक ओहियो राज्य के अलायन्स नगर मे है और दूसरा मिन्नेसोटा के अल्बर्ट ली में। पहले का नाम है युनाइटेड कोआपरेटिव्स और दूसरे का नेशनल कोआपरेटिव्स। नेशनल कोआपरेटिव्स दूध दुहने और पानी गरम करने की मशीने बनाता है और उनकी अधिप्राप्ति और वितरण भी करता है।

अधिकांश कृषि-आपूर्ति क्षेत्रीय सहकारी अमरीकन इस्टीटयूट आफ कोआ, परेशन और नेशनल कौन्सिल आफ फारमर्स कोआपरेटिव के सदस्य हैं। बहुत मे सयुक्त राज्य अमरीका की सहकारी लीग और अपने राज्य के सहकारी सघो और कौन्सिलों के सदस्य है।

फुटकर और क्षेत्रीय दोनो ही प्रकार के कृषि-आपूर्ति सहकारियो की जो महत्त्वपूर्ण आवश्यकताएँ १९५० के बाद के वर्षों मे सामने आई वे इस प्रकार है :

१—सेवाओं और व्यापार के परिमाण मे विस्तार एव उनका और भी आधुनिकीकरण; विस्तार के लिए गैर-किसानों या आशिक किसानो या उपनगर की जनता मे से संरक्षकों की वृद्धि,

२—अधिकाधिक सदस्यो को सक्रिय करने के लिए सदस्यों की शिक्षा, क्योंकि सहकारी उद्यम की यही सबसे बड़ी कारोबारी पूँजी होती है;

३—उत्पादन की और भी वृद्धि और विकास, मूल कच्चे माल का अधिकाधिक उत्पादन और प्रबन्ध;

४—अधिकाधिक निपुणता और आर्थिक क्षमता प्राप्त करने के लिए कार्य विधियों और कारबारो का एकीकरण और कुछ मामलों मे विलयन तथा किसानों के लिए आवश्यक नई सेवाओं का प्रारम्भ;

५—इन उद्देश्यों और आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अनुकूल शर्तो पर वित्तीय प्रबन्ध के पर्याप्त साधनों की व्यवस्था। सहकारी सस्थाओं की बैंके और सहकारी बीमा कम्पनियाँ धन-सम्बन्धी आवश्यकता की कुछ पूर्ति कर सकती है। लेकिन नई, एकीकृत और बढ़ती जाती सेवाओ के वित्तीय प्रबन्ध के लिए पूँजी के अतिरिक्त स्रोतों को जुटाने की आवश्यकता भी स्पष्ट ही है।

१९६१ के आरम्भ होते ही इस दिशा मे उठाये जानेवाले कदमो के सम्बन्ध मे चर्चा और विचार विनिमय का सूत्रपात हो गया है।

जिन समस्याओं और अन्यायों से जूझने के लिए किसानों ने पचहत्तर वर्ष पूर्व सहकारियों का सगठन किया था, १९५१ से आरम्भ होनेवाली दशाब्दी मे वे और भी उग्र रूप से सामने आयी।

किसानो की उपज के खरीदारो की सख्या बहुत ही तेजी से गिर गई। १९६० तक हालत यह हो गई कि न्यूयार्क के बाजार मे किराने और मास की जितनी खरीद होती थी उसका ८० प्रतिशत बहुत बडे-बडे १७ खरीदारो के हाथो मे सिमट आया था। सीटल का बाजार १० खरीदारो के कब्जे मे था, पोर्टलैण्ड मे ८ खरीदार छाए हुए थे और ओमाहा मे तो और भी कम। १९४८ मे स्वतन्त्र किराना विक्रेता देश के ५० प्रतिशत खाद्य का क्रय-विक्रय करते थे और दुकान शृखलाएँ २९ प्रतिशत का। दस वर्ष बाद दुकान शृखलाओ का काम बढ़ कर ३८ प्रतिशत हो गया और स्वतन्त्र किराना विक्रेताओ का गिरते-गिरते ३० प्रतिशत ही रह गया। १९६० मे देश के बडे सवेष्टक (पैकर्स) स्विफ्ट, आरमर और कुडाही ने सघीय न्यायालय से इस बात की अनुमति माँगी कि उन्हे फुटकर खाद्य भडार खोलने और चलाने की अनुमति दी जाए।

एकाधिकारी नियन्त्रण जितनी व्यापकता से फैलते और जितने अधिक उद्योगों मे प्रविष्ट होते गए अर्थ व्यवस्था के प्रतिस्पर्द्धात्मक अगो की स्थिति उतनी ही अधिक शोचनीय होती गई।

लघु व्यवसाय के साथ यही मुसीबत थी।

और कृषि के साथ भी यही मुसीबत थी।

सक्षेप मे यह कि सयुक्त राज्य अमरीका का अधिकाश और जिससे किसानों का सीधा सम्बन्ध है वह तो सारे का सारा उद्योग एकाधिकारी हो गया। कीमतों की होड पुराने जमाने की बात रह गई; जो औद्योगिक माल किसानो को खरीदना पडता है उसकी कीमते हमेशा तेजी की ओर व्यवस्थापित होती है और उनका निर्धारण करते समय आर्थिक स्थितियो का, यहाँ तक कि माँग और आपूर्ति के सम्बन्धों का भी कोई विचार नही किया जाता। कीमतों की गिरावट को रोकने के लिए उत्पादन को गिराया जाता है, नियन्त्रित किया जाता है।

इसके विपरीत कृषि अब भी प्रतिस्पर्द्धात्मक व्यवसाय है। देश के ४० लाख किसानों में अकेला एक तो कोई भी ऐसा नही है जो समग्र सम्भरण को

किसी भी हद तक प्रभावित कर सके। और इस बात को सभी किसान जानते हैं। इसके अतिरिक्त दूसरे लोगों की भाँति किसान को भी अपनी आजीविका कमानी होती है। किसान की आजीविका का सीधा सम्बन्ध उसकी उपज की बिक्री से जुडा हुआ है, अर्थात् कितनी इकाइयों की बिक्री मूल्य की पूर्ति कर पाती है। इकाई का मूल्य जितना ही न्यून होगा किसान उतनी ही अधिक इकाइयों के उत्पादन का जीतोड़ प्रयत्न करेगा। कृषि उपज का न्यून मूल्य तथा-कथित 'अधिशेषों' को कम नही करता उलटे और बढ़ा देता है। फिर किसानों को फसल आने से बहुत पहले बोना और उसकी योजना बनानी पडती है। कीमतों को एक ही स्तर पर बनाये रखने के लिए वे उत्पादन पर नियन्त्रण नही कर सकते और मान लिया जाए कि कर ही लेते तो भी शायद ही करते।

इसलिए किसान जो कीमतें पाते है वे हमेशा निम्नगामी यानी गिरावट की ओर जानेवाली होती हैं और जो कीमतें किसानों को देना पडती हैं वे ऊर्ध्व-गामी यानी तेजी की ओर जानेवाली होती हैं। किसानों को मिलनेवाली कीमतें बाजार मे जो भी भाव हो उसपर बिके पूरे उत्पादन की कीमतें होती हैं। किसानों को जो कीमतें देनी पडती है वे अधिकाश मे निश्चित—और प्रायः व्यव-स्थापित ढग से निश्चित की हुई कीमतें होती हैं।

यही कारण है कि तुल्याक ८० के आसपास घूमता रहता है; जिसका अर्थ हुआ कि कृषि को राष्ट्रीय आय के उसके अधिकृत भाग के लगभग २० प्रतिशत से काफी समय से अन्यायपूर्वक वचित किया जा रहा है। और यही कारण है कि १९४७ से १९५७ के बीच जहाँ औद्योगिक उत्पादनों की कीमतें २६ प्रतिशत बढ़ी कृषि उपजों की कीमतों मे ५ प्रतिशत गिरावट हुई। और यह उस समय जब कि कृषि मे उत्पादन प्रति व्यक्ति-घटा९० प्रतिशत अधिक होता जा रहा था पर सारे कृषि-इतर उद्योगों मे केवल २४ प्रतिशत। कृषि ने औद्योगिक दक्षता के लाभ खरीदारों को हस्तान्तरित कर दिये। जिन उद्योगों से किसानों का सीधा सम्बन्ध है उन समेत दूसरे उद्योगों मे भी यदि यही किया जाता तो तुल्याक १०० या उसके आस-पास होता और तब किसानों को शिकायत का कोई अवसर न्यायत. नही रह जाता। लेकिन उलटे हुआ यह कि नवम्बर १९५९ मे किसानों को अपनी फसलों के लिए जो कीमतें मिलीं और सम्भरणों एवं सेवाओं

के लिए उन्हें जो कीमते चुकानी पड़ी उनका अनुपात ७७ तक गिर गया, जो १९४० के बाद निम्नतम बिन्दु है।

तो इस तरह सयुक्त राज्य अमरीका मे कृषिकार्य का सामान्यतः आधार है: पूर्ण-उत्पादन और बाजार-निर्धारित-मूल्य। जहाँ मूल्य-सहायता-कार्यक्रम आ जाते है उन्हें छोड कर किसानो को अपनी पूरी फसलो के लिए जितना बाजार दे दे वह ले लेना पड़ता है। इसलिए यह पूर्ण-उत्पादन ही, जिसका मूल्य उपभोक्ताओं के लिए बिना किसी बाधा-बन्धन के निश्चित किया जाता है, मुक्त अर्थ व्यवस्था मे ऐसा आधार-बल्कि एकमात्र ऐसा आधार प्रस्तुत करता जिसके सहारे हम पूरे रोजगार, पर्याप्त विकास और मूल्यो को स्थिर करने की आशा कर सकते है। हमारी अर्थ-व्यवस्था इतनी अधिक एकाधिकारी हो गई है कि उसमे किसानों को सिर्फ इसीलिए आर्थिक हानि उठानी पड़ती है, क्योंकि वे राष्ट्र के दीर्घकालीन हितों की संवर्धना के विचार से काम करते है।

औद्योगिकीय प्रगति तो निरन्तर होती ही जा रही है, इसलिए उससे होने वाले लाभ जब तक उपभोक्ताओ के रूप मे सारे राष्ट्र मे वितरित नही किये जाएँगे न तो खपत बढेगी और न व्यापक औद्योगिकीय बेकारी को उग्र रूप धारण करने से रोकने के लिए उत्पादन की पर्याप्त वृद्धि ही की जा सकेगी।

अमरीका के अधिकांश उद्योगो मे आज यही नही हो पा रहा है। और सबसे बड़ा दुःख तो इस बात का है कि कृषि उत्पादनों के जो अन्तिम उपभोक्ता हैं, उनका हित भी नहीं हो रहा है। किसानों को दिये जाने वाले न्यून मूल्यों से कृषि उत्पादनों को जो पण्योपयोगी बनाते और वेचते है ऐसे बिचौलिये ही माला माल हो रहे है। न्यून मूल्य लेकर किसान अपनी बिक्री नही बढाता; हाँ बिचौलियों की जेबे जरूर भर देता है, और उधर उपभोक्ताओं के भोजन की कीमत बढ़ जाती है। १९५० और १९५८ के बीच औसत परिवार के भोजन का मूल्य बढ़ कर १२२ डालर हो गया; लेकिन किसानों को १९५० की अपेक्षा १९५८ मे १२ डालर कम मिले, उधर पण्योपयोगी बनानेवाले और दूसरे बिचौलियों को १३४ डालर अधिक मिले। १९५९ मे उपभोक्ता ने अपने भोजन पर जो डालर खर्च किया उसमे किसान का हिस्सा सिर्फ ३८ सेंट था, बाकी ६२ सेंट बिचौलिये मार ले गए। और आगे हालत इससे भी बिगड़ती दिखाई देती है।

संयुक्त राज्य कृषि साख्यिकी विभाग (United States Department of Agriculture Statistics) के अनुसार असल उपभोक्ताओं के बेचे गए कृषि उत्पादनों का फुटकर बाजार मूल्य १९५१ मे ४२ अरब ६० करोड़ डालर था, जो १९५९ मे ५१ अरब डालर हो गया। लेकिन किसानो को फिर भी १९५९ मे १९५१ की अपेक्षा २० करोड डालर कम मिले। लेकिन फारम और फुटकर बिक्री भडार के बीच 'विक्रय खर्च' १९५१ मे २२ अरब ८० करोड डालर से बढकर १९५९ मे ३१ अरब २० करोड़ डालर हो गया।

इसलिए यदि १९५० की अपेक्षा १९५९ मे फारमो पर ३९ लाख लोग ही रह गए तो आश्चर्य नहीं होना चाहिए।

अमरीकी कृषि की दशा को ज्यादा अच्छी तरह से समझने के लिए एक राज्य का उदाहरण लेकर थोडे विवरण मे जाना ज्यादा उचित होगा।

मिन्नेसोटा की खेती की जमीन दुनिया मे सबसे उपजाऊ है। जो समतल मैदान दक्षिणी मन्निसोटा, उत्तरी इओवा, उत्तरी डकोटा मे रेड दीवर की घाटी और उत्तरी-पश्चिमी मिन्नेसोता तक फैला हुआ है वैसी श्रेष्ठ कृषि-योग्य भूमि कही पर भी नही है।

मिन्नेसोटा की कृषि-स्थिति की तथ्यात्मक जानकारी प्राप्त करने के लिए वहाँ के गवर्नर, आरविले एल० फ्रीमैन ने जो बाद मे केनेडी प्रशासन मे कृषि-सचिव (Secretary of Agriculture) हो गए, एक विशेष आयोग नियुक्त किया था।

उस आयोग ने जो चौकानेवाली जानकारी दी वह किसी भी विवेकशील पुरुष के खून को खौलाने के लिए पर्याप्त है। जानकारी इस प्रकार है:

मिन्नेसोटा मे समग्र कृषि-उत्पादन १९३२ से प्रति वर्ष ९ प्रतिशत की दर से बढता जा रहा है; यह देश के औद्योगिक उत्पादन की वृद्धि की दर के दूने से भी अधिक है। इसका कारण निगमित कृषि की वृद्धि नही था। बल्कि बात बिलकुल उलटी थी। पारिवारिक ढग के वैयक्तिक फारमो का प्रतिशत १९३९ मे जहाँ ६१ था वही १९५६ मे बढ़कर ६७ हो गया था। प्रति फारम औसत समग्र निवेश १९३९ मे १० हजार डालर के मुकाबले १९५६ मे ३० हजार डालर हो गया था।

१९५५ मे मिन्नेसोटा के ६३ प्रतिशत फारम-किसानों की आय दो हजार डालर से भी कम थी। मिन्नेसोटा मे कृषि की औसत प्रति व्यक्ति आय नागरिकों की औसत प्रति व्यक्ति आय की केवल ४३ प्रतिशत है।

सरल भाषा मे इसका अर्थ यह हुआ कि अपने व्यवसाय मे निवेश को तीन-गुना और उत्पादन की वृद्धि-दरो को अविश्वसनीय सीमा तक बढ़ा कर भी अमरीका के सबसे सम्पन्न कृषि राज्य के किसान परिवारो को नागरिक परिवारो की तुलना मे आधे से भी कम आय हो रही थी। इसका कारण क्या है ?

इसका बुनियादी कारण,, जो अब तक साफ हो जाना चाहिए, यह है कि अलग-अलग एक-एक किसान मे खरीदते अथवा बेचते समय आर्थिक मोल-भाव की पर्याप्त शक्ति नही होती। और इस तरह की आर्थिक मोल-भाव करने की शक्ति प्राप्त करने का जो एकमात्र निर्भरता योग्य उपाय अभी तक समझ मे आया है, वह है सहकारियो का संगठन।

लेकिन सहकारी अभी न तो इतने बडे हो पाये है और न इतने सशक्त कि समस्या का पूरी तरह सामना कर सके।

इतना तो मानना ही होगा कि किसानो के सहकारियो ने काफी बडा काम कर दिखाया है। उर्वरक व्यवसाय का केवल २० प्रतिशत इन सहकारियो के हाथ मे है फिर भी इन्होंने दिखा दिया है कि ये विशाल रासायनिक कम्पनियो से सफलतापूर्वक प्रतियोगिता कर सकते है। उस प्रतियोगिता का परिणाम क्या हुआ? १९५३ से १९५८ के बीच रासायनिक पदार्थों की कीमतों मे आमतौर पर ४ प्रतिशत वृद्धि हुई, लेकिन उर्वरकों के मूल्य मे मुख्य रूप से सहकारियो की प्रतियोगिता के कारण ढाई प्रतिशत का ह्रास हुआ। और कृषि (ग्रामीण) विद्युत्, साख, पेट्रोल, बीमा आदि कई प्रकार के सहकारी व्यवसायों से उदाहरण देकर यह सिद्ध किया जा सकता है कि सहकारी प्रतियोगिता ने सार्थक ढग से कृषि-उत्पादनों की लागत को कम किया और सम्बद्ध व्यवसायों के अर्जित लाभांशों से किसानों की आय मे अभिवृद्धि की।

काफी बड़ी मात्रा मे अपनी उन्नति और विकास करके ये सहकारी अमरीकी कृषि के लिए कितना-कुछ कर सकते है यह निम्न तथ्यों और आँकड़ों से स्पष्ट हो जाएगा।

१९५५ को हम युद्धोत्तर-काल का एक औसत वर्ष मान लेते है। स्थान के रूप मे कोई भी एक मध्य पश्चिमी ((Middle Western) राज्य ले लेते है जहाँ कई प्रकार के सहकारी संगठन है। किसानों के स्वामीत्व युक्त जिला सहकारी राज्य व्यापी थोक और उत्पादन सहकारी के स्वामी थे। इस प्रकार किसानों ने अपनी आवश्यकता के पेट्रोल और पेट्रोल निर्मित वस्तुओं के एक भाग का स्वय उत्पादन और परिष्करण किया, जिस चारे और उर्वरक का वे उपयोग करते थे उसके भी एक भाग का उत्पादन, सम्मिश्रण और वितरण स्वय ही किया, जितना गल्ला और मुर्गी खाने के उत्पादन वे बेचते थे उनके भी काफी अश को पण्योपयोगी बनाने और उसकी बिक्री व्यवस्था का काम स्वय किया। १९५५ मे इन सहकारी पद्धति से जितना सम्भरण प्राप्त किया गया उस पर किसानों को ६ प्रतिशत सरक्षण धन वापसी दी गई। और उत्पादित वस्तुओं को सहकारी ढग से बिक्री-व्यवस्था करने से अन्यथा होने वाली आय मे २ ७ प्रतिशत की वृद्धि हुई।

अब यदि १९५५ मे सारे किसान इसी तरह सहकारी व्यवसायों के स्वामी होते और उनकी सेवाओं का पूरा-पूरा उपयोग करते—जो कि वास्तविक नही है—लेकिन थोडी देर के लिए मान लिया जाए कि ऐसा होता तो सहकारी बिक्री-व्यवस्था की आमदनी से किसानों की आय मे ८० करोड डालर और जुड़ जाते, और सहकारी फारम आपूर्ति व्यवसाय के परिणाम स्वरूप उनकी लागत मे से १ अरब और ८० करोड डालर कम हो जाते। उस वर्ष किसानों की असली आय, १ अरब और १० खरब डालर जो हुई थी, उससे १७ ८ प्रतिशत अधिक होती।

यदि कोई व्यक्ति ईमानदारी से अमरीकी कृषि-व्यवस्था मे लगी बीमारी को सरकार पर निर्भर किये बिना दूर करने का उपाय खोजना चाहता है तो उसको उसे सहकारिता मे खोजना चाहिए। लेकिन साथ ही उस व्यक्ति को किसानों के स्वामीत्व युक्त सहकारियों को वह हर सम्भव प्रोत्साहन देने के लिए तैयार रहना होगा, जिससे वे शीघ्रातिशीघ्र वृद्धि और सार्थक एकीकरण कर सकें। और उस व्यक्ति को प्रचुर उत्पादन के इस युग मे उपभोग के मानदण्डो के सम्बन्ध मे भी नये ढग से काफी-कुछ सोचना-विचारना होगा।

१९५५ के बाद के वर्षों में फारम-आपूर्ति सहकारियों ने अपने व्यवसाय

को जो एक नई दिशा मे विस्तारित किया वह उस समय अमरीकी प्रजा मे हो रहे आर्थिक और समाज शास्त्रीय परिवर्तनो मे से ही उद्भूत हुआ था। समझदार व्यवस्थापक और सचालक मण्डल उपनगर वासियो और आशिक किसानो को अपना सरक्षक और सदस्य बनाने लगे थे। उनके लिए यह आवश्यक भी हो गया था। मिलवाडकी के समीपस्थ एक 'फारम-आपूर्ति' सहकारी का उदाहरण इस सम्बन्ध मे काफी दिलचस्प रहेगा। कुछ ही वर्ष पहले यह सहकारी एक महत्वपूर्ण कृषि-क्षेत्र से घिरा हुआ था। शहर बढते गए और फारमो को निगलते गए। लेकिन उन्होंने ऐसे परिवार भी पैदा किये जिनकी तेल-ईधन, मोटर के सामान, लौह खड, औजार, यहाँ तक की बीज और उर्वरको की माँग किसानो से कुछ ही कम थी। सहकारियो ने इस नये व्यवसाय को छोडा नही। वे इसे पाने मे लगे रहे और अन्त मे पा ही लिया। और सहकारी का कारबार दिन- दूना और रात चौगुना बढने लगा, जो यदि वह अपने आप को पूरे-पक्के किसानो का सदस्यता-सक्षकता तक ही सीमित रखता तो कदापि न हो पाता। लेकिन इसके लिए सहकारी के एक के उस सुविधा का परित्याग करना पडा जो उसे हिस्सो पर लाभाश वितरण किये जाने वाले रुपयों पर कर से छूट पाने के सम्बन्ध मे विशेष रूप से मिली हुई थी और जो कुछ विशुद्ध फारम सहकारियों क अब भी मिली हुई है। दूसरे, सहकारियो के बैंक (Bank of Co-operatives) से कर्ज पाने की, जैसा कि दसवे अध्वाय मे बताया गया है, सुविधा से भी हाथ धोना पड़ा; यह बैक अभी केवल उन्ही सहकारियो का कर्ज दे सकती है जिनका काफी अधिक कारबार पक्के-पूरे किसानो के साथ ही हो। लेकिन व्यापार मे बने रहने और निरन्तर ठोस उन्नति करने के लिए ये त्याग आवश्यक थे।

भोजन के उत्पादन, उसे पण्योपयोगी बनाने, उसके सवेष्टन और उपभोक्ता तक उसे पहुँचाने का सारा व्यवसाय बड़ा ही लाभकारी है। खेत मे उत्पादन को छोड़ कर इस व्यवसाय के बाकी सारे कार्मों मे लाभ-ही-ला है। आवश्यकता इस बात की है कि किसान भी खाद्य-व्यवसाय के इन अन्य लाभदायी कार्यो मे हाथ डाले। इससे भी अधिक आवश्यक यह है कि खाद्य-व्यवसाय के लाभदायी कार्य किसानों के स्वामीत्व युक्त हों। जैसा कि हम देख

आये हैं, इसे करने का एक तरीका है। अब हम यह देखेंगे कि सहकारिता का वह तरीका किसानों की बुनियादी समस्याओं को कैसे हल कर सकता है।

अमरीकी कृषि की वर्तमान दुरवस्था के तीन बुनियादी कारण हैं। पहला कारण तो हमारी कृषि के तरीके से यानी जिस तरह वह की जाती है, या अधिक सही यह कि जिस तरह की जानी चाहिए पर की नही जाती, उनसे सम्बन्धित है। शेष दोनों कारण कृषि-उपजों की बिक्री से सम्बन्धित है।

सबसे पहली बात तो यह कि अमरीकी कृषि के सारे अवयवों का ऊपर से नीचे तक जैसा चाहिए वैसा एकीकृत सघटन नही है। और जो कुछ है भी वह एकदम अपर्याप्त है।

इस्पात कम्पनियाँ काफी लोहा इस्तेमाल करती हैं, इसलिए वे कोयले की खानें खरीद कर उनकी मालिक बन जाती हैं और स्वय ही कोयला निकालती हैं। मोटर कम्पनियाँ काफी इस्पात इस्तेमाल करती है एसलिए वे इस्पात मिले और लोहा मिले खरीद कर उनकी मालिक बन जाती हैं। किसानों को दूसरी बहुत-सी चीजों के साथ-साथ चारे की और बीज की, बिजली की और उधार रुपए की जरूरत होती है। जिस तर्क से इस्पात कम्पनियाँ कोयला खानों की मालिक बन सकती हैं उसी तर्क से किसान तेल के कुओं, उर्वरक सयत्रों, बिजली कम्पनियों और बैंको के मालिक क्यो नही बन सकते; वे अवश्य बन सकते हैं। लेकिन वे ऐसा सिर्फ सहकारिता के द्वारा ही कर सकते हैं। अब यदि हम उद्योग के ऊपर से लेकर नीचे तक सारे अवयवों के एकीकृत सघटन के पक्ष मे हैं और इसकी अनुमति देते हैं, जो कि स्पष्ट ही हम दे रहे हैं तो कृषि की समस्या को वास्तव मे सुलझाने के लिए, यदि हम उसे वास्तव मे सुलझाने के लिए उत्सुक हैं तो हमे कृषि के ऊपर से लेकर नीचे तक सारे अवयवों का कारगर ढग से एकीकृत सघटन शीघ्रातिशीघ्र कर देना चाहिए।

थोडा-बहुत एकीकृत सघटन तो हो भी चुका है। कृषि के बाहर एक विशिष्ट प्रकार की सस्थाओं ने अपने कारबार मे किसान का समावेश करके इस काम को किया है। पशु-खाद्य बनाने वाली कम्पनियाँ ही अभी तक इसका उल्लेखनीय उदाहरण हैं; लेकिन शीघ्र ही पण्योपयोगी बनाने वाले निगम और भंडार-श्रृखलाएँ भी इसको अपना सकती हैं। इस तरह के एकीकरण का

सम्बद्ध कृषि-उपजों के अत्यधिक न्यून मूल्यों के रूप में उदाहरणार्थ ब्रायलर (Broilers)—काफी घातक परिणाम हुआ है, और वहाँ किसान की हैसियत गिर कर सिर्फ एक मजदूर की रह गयी है जिसकी आय का रोजमर्रा के बँधे काम की बँधी मजदूरी के अतिरिक्त और कोई भी साधन नहीं है।

इसके अतिरिक्त एक दूसरी प्रकार का एकीकृत संघटन भी है जिससे कृषि को पुन: सम्पन्नता की ओर ले जाने, कृषकों की आय में अभिवृद्धि करने और अमरीकी ढंग के ग्राम्य जीवन की अस्तित्व-रक्षा की काफी आशाएँ बँधती हैं। यह दूसरी प्रकार की एकीकरण किसानों द्वारा ऐसे सहकारी व्यवसायों के संगठन से कार्यान्वित होता है जिनमें किसान कृषि-उपजों से सम्बद्ध व्यापारों के, आंशिक सम्भरण कर्ता अथवा पण्योपयोगी बनाने और बिक्री व्यवस्था करने वाले के रूप में, स्वयं स्वामी होते हैं। इसमें सहकारिता का सिद्धान्त आर्थिक मोल-भाव करने वाली बहुत-सी कमजोर इकाइयों पर इस तरह लागू किया जाता है कि वे पारस्परिक सहायतार्थ सम्मिलित हो कर शक्तिशाली बनें। इस प्रकार जो व्यवसाय किसानों को पेट्रोल-निर्मित वस्तुएँ बेचते हैं उनमें से कुछेक के स्वामी बन कर अत्यधिक समृद्ध पेट्रोल उद्योग की कमाई का कुछ अंश अपनी आय में समाविष्ट करना किसानों के लिए सम्भव हो जाता है। इसी प्रकार उर्वरक व्यवसाय के कुछेक भाग के स्वामी बनना और उत्पादन-क्षमता का पूरा उपयोग करते हुए बिना घाटे की न्यूनतम लागत पर उस उद्योग को अपने ही हित में चलाना भी किसानों के लिए सम्भव हो जाता है। जब से किसान उर्वरक उद्योग के कुछ भाग को स्वयं चलाने लगे हैं, परिणाम यह हुआ है कि १९५३ से १९५८ के बीच के वर्षों में जहाँ कृषि के लिए आवश्यक अन्य सारी वस्तुओं के मूल्यों में ५ प्रतिशत की वृद्धि हुई वहीं उर्वरक के मूल्य ढाई प्रतिशत कम हुए। इसका कारण यह है कि उर्वरकों का उपयोग करने वाले लोग ही उर्वरक उद्योग के चतुर्थांश के स्वामी हैं।

जो उद्योग कृषि में लगने वाली वस्तुओं का सम्भरण करते हैं, सहकारिता के आधार पर, उनमें से कुछेक के स्वामी बन कर किसानों में अपने कारबार की लागतों का आंशिक नियन्त्रण करने की क्षमता तो अवश्य ही आ जाती है। इस तरह के सहकारी कृत्यों से किसान कुछ अंशों तक आर्थिक मोल-भाव करने

मे भी समर्थ हो जाते है, जिसके अभाव मे आज की अर्थ व्यवस्था मे नितान्त निस्सहाय वे कुछ भी नही कर सकते।

लेकिन यह एकीकृत सघटन तभी कारगर हो सकता है जब इसमे सम्भरण के मूल स्रोतों का, जैसे कि मूल उर्वरक तत्वो, विद्युत्-शक्ति-जनित्रण और कच्चे पेट्रोल आदि सभी आवश्यक अवयवो का समावेश किया जाए।

इन उपायों का अवलम्बन करके जो भी सहकारी सगठन अमरीकी कृषि को आर्थिक दृष्टि से अधिक शक्ति-सम्पन्न बनाने का प्रयत्न कर रहा हो उसे जितना भी हो सके कम-से-कम ब्याज पर कर्ज दिया जाना चाहिए।

सहकारियो के इस ढग के विस्तार से जिनमे किसान अपने कृषि-कार्य मे आवश्यक वस्तुओ और सेवाओ का स्वय क्रय और उत्पादन कर सके कृषि उत्पादन की लागत ही नही घटेगी इन सम्बद्ध उद्योगो की कुछ कमाई से कृषि की आय मे वृद्धि भी होगी।

कृषि की लागत कम करने और आय बढाने का दूसरा उपाय यह है कि मूल उत्पादकों को ही कृषि उपजो को पण्योपयोगी बनाने, सवेष्टन, प्रसार, प्रचार, विज्ञापन, वितरण और उपभोक्ताओ को सीधे माल बेचने के काम करने दिये जाएँ और इन कामो पर स्वामीत्व भी उन्ही का (किसानों का) हो। यही कृषि को दूसरी बडी समस्या सामने उपस्थित होती है। वह समस्या यह है कि जब किसानो को मिलनेवाली कीमते गिरती है, तो उन्ही वस्तुओं के लिए उपभोक्ता जो कीमते देते है वे नही गिरती, उलटे बढ जाती है।

फारमों की लगभग एक चौथाई फसले सहकारी बिक्री सगठनो के द्वारा बेची जाती है। लेकिन तथाकथित कृषि-समस्या का सच्चा हल तो तभी निकल सकता है जब खाद्य-सम्बन्धी उपजो को पण्योपयोगी बनाने, सवेष्टन और वितरण का नियन्त्रण ही नही इनमे से होने वाली आय पर भी किसानो का उपभोक्ताओ के साथ अधिकार हो। यदि कृषि उपजों के खेत से उपभोक्ताओं की मेज तक पहुँचने के बीच की सारी प्रक्रियाओं-तैयारी, सवेष्टन, वितरण आदि—पर किसानों या उपभोक्ताओ या दोनों का सहकारी स्वामीत्व हो तो कृषि-उपजों का मूल्य गिरने पर उपभोक्ताओं द्वारा चुकाई जानेवाली कीमतो मे जो कमी नही होने पाती वह गडबड़ कदापि न होगी। इस तरह के सहकारी व्यवसायों की

प्रतियोगिता के परिणामस्वरूप या तो किसानो को अपनी पैदावार के अच्छे दाम मिलेगे या उपभोक्ताओं को अपने भोजन पर कम पैसा खर्च करना पड़ेगा या दोनों ही बाते होने लगेगी। यदि कृषि-उपजों को खेत से उपभोक्ता की मेज तक पहुँचाने वाली समस्त प्रक्रियाओ पर किसानो अथवा उपभोमताओ का सहकारी स्वामित्व रहे तो उससे किसानों और उपभोक्ताओ मे सीधा सम्पर्क स्थापित हो जाएगा। इस सीधे सम्पर्क का परिणाम यह होगा कि जब उपभोक्ता ऊँची कीमते चुकाएँगे तो कृषि की आय बढ़ जाएगी और जब किसानो के मलि की कीमते गिरेगी तो उपभोक्ता कम पैसा खर्च करके ज्यादा माल खरीद सकेगे और यों किसानों की बिक्री बढ जाएगी। इसके साथ ही, दोनो ही स्थितियो मे, कृषि पर निर्भर और उससे सम्बन्ध उद्योगो की कमाई के कुछ अश से ग्रामीण अमरीका की आय मे वृद्धि होगी और यों आर्थिक सन्तुलन पुनः स्थापित हो जाएगा और हमारी अर्थव्यवस्था को लगा रोग दूर हो सकेगा।

कृषि-समस्या के व्यावहारिक हल के रूप मे प्रायः हर आदमी यह कहता सुना जाता है कि हमे उद्योगों का विकेन्द्रीकरण करना चाहिए, देहातो मे ज्यादा-से ज्यादा छोटे उद्योग शुरू करना चाहिए। लेकिन वह बात कोई नही बताता जिससे इस तरह का विकेन्द्रीकरण स्थायी हल बन सकता है।

और वह बात है इन उद्योगों पर वही के लोगों का—किसानों और ग्राम्य जनता का स्वामीत्व। इसका अर्थ हुआ सहकारी स्वामीत्व। और यह स्वामीत्व उर्वरकों, पेट्रोल, विद्युत-उत्पादन और विक्रय-सस्थाओं तक ही सीमित नही रहना चाहिए, इसे पण्योपयोगी बनाने वाले और सवेष्टन के सयत्रो पर भी लागू किया जाना चाहिए। यदि उपभोक्ताओ द्वारा चुकाई जानेवाली और किसानों को मिलनेवाली कीमतो मे पायी जानेवाली चौडी खाई का एकमात्र कारण माल को पण्योपयोगी बनाने और सवेष्टित करने की लागत है तो उस खाई को पाटने का एक मात्र उपाय पण्योपयोगी बनाने और सवेष्टित करने के साधनों और व्यवसायों पर किसानों या उपभोक्ताओ या दोनो का सहकारी स्वामीत्व स्थापित कर देना है।

यदि इस तरह कृषि से सम्बन्धित उद्योगों का किसानो के सहकारी स्वामीत्व मे विकेन्द्रीकरण हो जाए तो कृषि समस्या के दूसरे कारण का हल भी

निकल आता है।

लेकिन 'कृषि-समस्या' को यदि केवल कृषि से सम्बन्धित समस्या के ही रूप में देखा-परखा जाएगा तो उसे कभी भी हल नहीं किया जा सकेगा। और यह समस्या तब तो और भी हल नहीं हो सकती यदि किसानों से कृषि में 'स्वतन्त्र बाजार' की नीति पर चलने के लिए कहा जाए, क्योंकि दूसरे तो किसी भी उद्योग में 'स्वतन्त्र बाजार' है ही नहीं। वास्तव में कृषि की समस्या समूचे ग्रामीण अमरीका की समस्या है। और इसका एक ही मौलिक समाधान है और वह यह कि जिन उद्योगों का कृषि से घनिष्ठ सम्बन्ध है, उन पर सहकारी पद्धति से ग्रामीणों का, स्थानिकों का स्वामीत्व स्थापित किया जाए और उनकी कमाई से होने वाली आय को कृषि से होनेवाली आयमें जोड दिया जाए।

समस्या के इस तरह के समाधान में न तो सरकार का मुँह ताकने की बात है, न छोटे किसानों को जमीन से बेदखल करने की जरूरत है और न उत्पादन को बनावटी ढग पर गिराते जाने की तरकीब है।

हमारी खेती की बर्बादी का तीसरा बुनियादी कारण यह है कि हम प्रचुर उत्पादन और प्रचुर उपभोग की बात ही नहीं जानते और न इस दिशा में सोचने को ही तैयार हैं।

हम तो १९६० की दुनिया में भी १८९० के ढग से सोचने-विचारने के अभ्यस्त हैं और उसी विचार-पद्धति पर बराबर जोर देते जा रहे हैं।

लेकिन वह विचार-पद्धति आज काम नहीं आ सकती।

अमरीकी किसान औद्योगिकीय और मनोवैज्ञानिक दोनों ही दृष्टियों से प्रचुर उत्पादन के लिए सन्नद्ध हो चुके हैं; दुनिया की कोई शक्ति अब इसे सम्भवतः बदल नहीं सकती।

असल में जरूरत विचार-पद्धति को ही बदलने की है। कुछ लोगों की—लेकिन सच तो यह है कि बहुत ही ज्यादा लोगों की—अभी तक भी यह मान्यता है कि कभी-कभी भूखा रहना लोगों के चरित्र-निर्माण के लिए अच्छी बात है।

इसमें तो कोई सन्देह नहीं कि जब आवश्यक हो जाए तब अभाव, कष्ट और त्याग से चरित्र का विकास और निर्माण होता है। जब किसी वस्तु की कमी या अभाव होता है तो हम भले लोग उन्हीं को कहते हैं जो अपना हिस्सा दूसरों

के लिए छोड देते हैं ।

लेकिन जब सबके लिए काफी है या हो सकता है उस समय भी लोगो के अभावग्रस्त रहने पर जोर देने मे भला क्या तुक है !

२२ मई १९६० को न्यूयार्क 'टाइम्स' के अन्दर के पृष्ठो मे, दूसरे लेखो के घटाटोप मे छिपा, किसी कोने मे एक लेख प्रकाशित हुआ था जो इस अभाव-समर्थन की विचारधारा का खण्डन करनेवाला था। उस लेख का शीर्षक था . 'गेहूँ का बाहुल्य . शुभांशा का सकेत'। इतनी दक्षता से गहूँ की इतनी प्रचुर फसल के लिए इस लेख मे किसानो के भारी अपराध और दुराचरण का, अन्य लेखको की भाति, रोना नही रोया गया था, न किसानो को 'इतनी भयकर समस्या' खडी कर देने के लिए कोसा ही गया था। 'टाइम्स' पत्र के उस विशेष लेखक जे० एच० कारमाईकेल ने कुछ और ही बात कही थी। उनके लेख का कुछ अंश इस प्रकार है :

संयुक्त राज्य मे गहूँ की दूसरी प्रचुर फसल अब आने ही वाली है। ऐसे समय जबकि अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिमे आसन्न सकट के चिन्ह दृष्टिगोचर हो रहे है, यह फसल स्वतन्त्र विश्व के लिए वरदान हो सकती है।

१ जुलाई से शुरू होनेवाली संयुक्त राज्य की नई मौसम मे पिछली फसलों की बचत जोड़कर गेहूँ की कुल आमद ढाई अरब बुशल (१ बुशल=२९ सेर) से भी अधिक होने की आशा की जाती है। गेहूँ की इतनी अधिक पैदावार न तो कभी हमारे यहाँ हुई और न किसी दूसरे देश मे । १९६१ की नई फसल आने तक हमे घरेलू उपयोग के लिए इस बार की पैदावार के सिर्फ चतुर्थांश की आवश्यकता होगी। तो इस चौगुनी फसल से स्वतन्त्र विश्व की भोजन-सम्बन्धी आपत्कालीन आवश्यकता को बड़े मजे से पूरा किया जा सकता है।

इसके साथ ही ये अधिशेष स्वतन्त्र विश्व के विरुद्ध युद्ध छेडने का मनसूबा करनेवाले किसी भी समूह के लिए अवरोधक का काम भी कर सकते है । क्योंकि परमाणु अस्त्रों के कारण यद्यपि युद्ध का स्वरूप बदल गया है, फिर भी जिस राष्ट्र के पास कई बरसों के भोजन का प्रबन्ध हो उसके खिलाफ कोई एक देश या राष्ट्रों का समूह सहसा युद्ध छेड़ने की बात नही सोच सकता—उसे काफी आगा-पीछा सोचना होगा।

लेकिन हमारे देश ने तो कभी चाहा भी नहीं था कि गेहूँ की इतनी प्रचुर फसल हो। सरकार ने वर्षों से गेहूँ का क्षेत्रफल सीमाबद्ध कर रखा है। लेकिन अनुसंधान और औद्योगिकीय विकासों के कारण गेहूँ की प्रति एकड़ पैदावार लगातार बढ़ायी ही जाती है। यही कारण है कि इस वर्ष की फसल जो लगभग १ अरब २२ करोड़ ५० लाख बुशल के लगभग कूती गई है लगभग सवा छः लाख एकड़ भूमि में बोई गई थी। १९३९ में, जब यूरोप में दूसरा महायुद्ध शुरू हुआ तो अमरीकी किसानों ने ठीक इतनी ही भूमि में केवल ७४ करोड़ बुशल गेहूं पैदा किया था।

वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थित की दृष्टि से दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि कम्यूनिस्ट संसार को गेहूं के उत्पादन में इतनी सफलता नहीं मिल पायी है। उत्पादन बढ़ाने की जी तोड़ कोशिशों के बाद भी इधर की खबरों से पता चलता है कि सोवियत संघ, पोलैण्ड और दो-एक दूसरे आश्रित राष्ट्रों में इस वर्ष भी गेहूँ की फसल कम ही हुई है। कुछ ही वर्ष पहले रूस को घरेलू आवश्यकता की पूर्ति के लिए निजी उत्पादन के अतिरिक्त बाहर से गेहूं आयात करना पड़ा था। व्यावसायिक पर्यवेक्षकों की ऐसी निश्चित धारणा है कि सोवियत संघ को इस वर्ष भी विदेशों से गेहूँ खरीदना पड़ेगा।

इस प्रचुर पैदावार के कारण संयुक्त राज्य स्वतन्त्र विश्व के दूसरे देशों के साथ गेहूँ की बिक्री को बढ़ावा दे रहा है। अभी हाल में संयुक्त राज्य की सरकार ने भारत के साथ एक करार किया है जिसके अनुसार ५८ करोड़ ८० लाख बुशल गेहूँ चार वर्ष की अवधि में भारत को दिया जाएगा। प्रतिवर्ष १४ करोड़ ७० लाख बुशल गेहूँ भारत भेजा जाएगा और उसका मूल्य भारतीय मुद्रा में ही ग्रहण किया जाएगा।

पता चला है कि इसी तरह के करार कुछ अन्य देशों के साथ भी किये जाने वाले है जिनमे से एक पाकिस्तान भी है। बहुत-से देशों के पास, जो इस गेहूँ का अतिरिक्त संचय के रूप मे उपयोग करेंगे, मूल्य चुकाने के लिए पर्याप्त विदेशी मुद्रा नही है। अपनी ही मुद्रा मे मूल्य चुका कर वे देश अपनी अर्थ व्यवस्था की इस अर्थ में सहायता करेंगे की संयुक्त राज्य की सरकार को इस तरह जो पैसा मिलेगा वह वापिस गेहूँ खरीदने वाले देशों को ही विभिन्न निर्माण-योजनाओं को पूरा करने के लिए कर्ज दे दिया जाएगा।

क्या हम यह अनुभव करने लगे है कि जब तक एक भी मनुष्य की आवश्यकता पूरी नही होती कोई भी चीज 'अधिशेष' नही है और मानव जाति का मुख्य भोजन तो कदापि नही? केनेडी प्रशासन ने आते ही जो कदम उठाये है वे तो यही इंगित करते है।

प्रचुर अन्न और वस्त्र के वितरण और उपभोग-उपयोग की शब्दावली में कैसे सोचे यह हमे सीखना है। वैलेस-होमस्टेड द्वारा सचालित किसानो के एक

जनमत-सग्रह ने यह सिद्ध कर दिया है कि किसान तो इस दिशा मे सोचने भो लगे है। इस जनमत-सग्रह मे किसानो से पूछा गया था कि छ. तथाकथित कृषि-कार्यक्रमो मे वे सबसे अधिक समर्थन किसका करते है। ५३ प्रतिशत किसानों ने अपनी सूची के सबसे ऊपर यह लिखा . "स्कूल मे दुपहर के भोजन का कार्य-क्रम वर्तमान की अपेक्षा दुगुने बच्चो के लिए कर दिया जाए।" ४१ प्रतिशत ने स्कूलों मे दिये जाने वाले दूध के विशेष कार्यक्रम को दुगुने बच्चो के लिए कर देने की बात कही। ३८ प्रतिशत ने खाद्य-टिकट योजना (Food-Stamp Plan) शुरू करने का सुझाव दिया, जिससे अधिशेष भोजन अभावग्रस्तो को सुलभ हो सके। इन तीन सुझावों को ही सबसे अधिक मत मिले। बाकी किसी भी प्रस्ताव को जनमत-सग्रह मे भाग लेने वाले किसानो के २९ प्रतिशत से अधिक मत नही मिले।

सचाई तो यह है कि संयुक्त राज्य अमरीका के उन सभी ८० लाख परि-वारों को, जिनका वार्षिक आय २००० डालर से कम है यदि पर्याप्त भोजन मिलता तो उनका अतिरिक्त उपभोग १९५७ से १९५९ तक पूरे तीन वर्षों के तथाकथित खाद्य 'अधिशेषो' के बराबर हो जाता।

और शेष दुनिया के उन १ अरब लोगों का क्या हो जो रोज बिलकुल भूखे रहते है ? सयुक्त राज्य निश्चय ही अपने कृषि अधिशेषों को पिण्ड छुडाने के लिए दूसरे देशों मे बिखेर नही सकता। लोगो को भोजन बाँटना भी सीधी-सी बात नही है—और न हमेशा समझदारी की ही बात होती है। लेकिन चिरकालिक भूख और चिरकालिक अधिशेषों को एक दूसरे के समीप लाने और कम करने की कोई विश्व खाद्य योजना सोची ही न जा सके यह बात तो किसी भी तरह मानी नही जा सकती।

लेकिन यह तभी हो सकता है जब हम बनावटी अभाव और विरलता की स्थिति को श्रेयस्कर समझने के बदले प्रचुर उत्पादन और प्रचुर उपभोग को श्रेष्ठ और श्रेयस्कर समझे और उनके अभ्यस्त होते जाएँ। प्रचुरता को श्रेष्ठ समझना और उसका अभ्यस्त होते जाना इसलिए और भी आवश्यक है, क्योंकि अमरीकी कृषि पर लादी गई बनावटी कमी कभी सफल नही हुई और न आगे कभी हो पाएगी।

यदि हमारी कृषि-समस्याओं को सुलझाने के लिए सहकारी पद्धति का व्यापक रूप से उपयोग किया जाए तो उसपर बनावटी कमी लादने के प्रयत्नों की कभी आवश्यकता ही न हो। लेकिन शर्त यही है कि हम सहकारिता को उसके व्यापकतम अर्थों मे अपनाये और उसका उपयोग करे, अर्थात् मानवी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए सारी दुनिया के लोगों के साथ मिल कर काम करे।

किसानों की समस्याओं को सुलझाने के लिए सहकारी पद्धति के उपयोग का नैतिक और समाज शास्त्रीय पक्ष इतना परिपुष्ट है कि हमारे देश के गिरजाघरों ने भी १९५१ से इस पद्धति का खुले रूप से समर्थन करना आरम्भ कर दिया है। ४ जून १९५८ को सयुक्त राज्य के गिरजाघरो की राष्ट्रीय कौन्सिल के जनरल बोर्ड ने (General Board of the National Council of Churches of Christ in the United States) 'कृषि-नीति के नैतिक लक्ष्य' नामक एक वक्तव्य प्रकाशित किया था। इस वक्तव्य मे एक जगह यह अनुच्छेद आता है :

किसानों में स्वेच्छिक संगठन, सहकारिता और पारस्परिक सहायता को प्रोत्सहना। प्रभु और पड़ोसी को प्यार करने के ईश्वरीय आदेश की व्यावहारिक अभिव्यक्तियों के रूप-में पारस्परिक सहायता और सहकारिता पर ईसाई परम्परा ने सदेव जोर दिया है। पारस्परिक सहायता और सहकारिता के लिए अपने आपको स्वेच्छिक संगठनों में संघ वद्ध करके कृषको ने बडा ही उत्तम कार्य किया है। स्वतन्त्र विवेचन निर्णय क्षमता, उत्तरदायित्व का वहन आदि गुणों के द्वारा चरित्र-निर्माण का अवसर प्रदान करनेवाली ऐसी इस संघवद्धता को उत्साहित करना चाहिए। गिरजा घरों को चाहिए कि वह पारस्परिक सहायता और सहकारिता के ऐसे संगठनों में सदस्यों की पूरी सक्रियता को, समाज के लिए ईसाई और जनवादी आदर्शों के सच्चे योगदान के रूप में, बढावा दे।

१९६० मे राष्ट्रीय कैथोलिक ग्राम्य जावन सम्मेलन (National Catholic Rural life Conference) ने अक्तूबर महीने मे अपने मुख-पत्र "कैथोलिक रूरल लाइफ" का सहकारी सस्थाओं तथा किसानों और ग्राम्य जीवन मे उनके मूल्य एव महत्त्व पर एक पूरा विशेषाक ही प्रकाशित किया। इस विशेषाक के मुख्य लेख मे फोर्ट वेईन-साउथ बेण्ड के बिशप परम आदरणीय लियो ए० पर्सलो क एक अनुच्छेद इस प्रकार था :

सामाजिक न्याय का सिद्धान्त, जिसके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को सर्व सामान्य हित की संवर्द्धना के लिए अपना योगदान करना चाहिए, मानव जाति की एकता और समाज की अन्तरवर्ती रचना से आविर्भूत होता है। सहकारी संस्थाओ द्वारा निर्बाध और अन्यायपूर्ण प्रतियोगिता से एक दूसरे को वंचित करना रोका जा सकता है। इन सहकारी संस्थाओं के माध्यम से हम अपने नियन्ता द्वारा अभिप्रेत जीवन प्रणाली पर आचरण कर सकते हैं। सहकारी आन्दोलन इस धारणा से उद्भूत होता है कि सभी वर्ग आपस में जुड़े हुए है और एक वर्ग का हित सभी का हित है और सबकी समृद्धि के बिना एक वर्ग कभी समृद्ध नहीं हो सकता। सहकारी संस्थाएं वस्तुओ के स्वामीत्व को अधिकाधिक लोगों में प्रसारित करने में सहायक है। स्वामीत्व उत्तरदायित्व और स्थिरता प्रदान करता है। इस प्रकार सहकारी संस्थाएं मानव-जाति की एकता और व्यक्ति की गौरव-गरिमा को परिपुष्ट करनेवाले सधान और ईसाइयत तथा जनतन्त्र के शक्तिशाली आधार हैं।

---

८ | तेल के व्यापार में जनता

एक जमाना था जब तेल व्यापार मे उत्पादन, समन्वेषण और कच्चे तेल के अधिकार पर जोर दिया जाता था। लेकिन आज, कच्चे तेल के ज्ञात संचय-स्रोतों का लगभग ८५ प्रतिशत बड़ी कम्पनियों के हाथों मे चले जाने और विश्व-उत्पादन माँग से कही अधिक हो जाने के कारण सारा प्रयत्न बिक्री-निकासों के अधिकार पर केन्द्रित हो गया है। लेकिन इस तरह के निकासों के बिना स्वतन्त्र उत्पादक ओर परिष्करण कर्ता। अपने व्यापार से हाथ धोते जा रहे हैं।

१९५७ मे चोदह छोटो तेल विक्रेता कम्पनियाँ विशाल एकीकृत कम्पनियों मे या तो विलीन हो गई या उनका अधिग्रहण कर लिया गया। १९५८ में आठ और कम्पनियों का यह हाल हुआ। और १९५९ मे न कम न ज्यादा पूरी छत्तीस छोटी कम्पनियाँ इस रास्ते गायब हो गई।

१९६० का आरम्भ होते ही तेल-व्यवसाय के गुर को समझने और अन्द-रूनी बातों को जानने वाले लोग यह भविष्यवाणी करते सुनाई देने लगे कि स्वतन्त्र विक्रेताओ के ही नही स्वतन्त्र उत्पादकों और स्वतन्त्र परिष्करण कर्ताओ के दिन भी अब आ लगे है। सुस्थापित विक्रेता अधिष्ठानों की सम्पत्ति और नाम के लिए बड़ी कम्पनियाँ खुले हाथों मुँह माँगी कीमते देने लगी, बल्कि कहना चाहिए कि लुटाने लगी। नाम तो शायद ही कभी बदले जाते है। उपभोक्ता यही समझता है कि वह एक स्वतन्त्र व्यापारी से तेल खरीद रहा है, लेकिन हर महीने हालते कुछ ऐसी होती जा रही है कि वह वास्तव में किसी बड़ी कम्पनी के अनुषंगी निकास का प्रतिपोषण कर रहा होता है। तेल-व्यापार मे केन्द्रीकरण बढ़ता जाता है।

'पेट्रोलियम वीक' (६ नवम्बर १९५९) ने टेक्सास के एक प्रमुख तेल महा-जन (बैंकर) का निम्न अतरण उद्धृत किया था :

> उस समय स्वतन्त्र कारबार करने वाले बहुत से लोगों ने इस बात को नही समझा और आज भी कई ऐसे है जो इसे नही समझते कि प्रोरेशन

(Proration) लागू कर दिये जाने से कच्चे तेल का सारा बाजार एकदम बड़ी कम्पनियों के हाथ मे चला गया है। तेल-उत्पादकों की आज गैस-उत्पादकों से तुलना कीजिए। गैस-उत्पादक के पास करारनामा होता है; ज्यादातर करारनामो मे माल की न्यूनतम लेवाली और स्थिर मूल्यों का स्पष्ट उल्लेख रहता है और आमतौर पर उनकी अवधि बीस वर्ष की होती है। तेल-उत्पादक के पास ऐसा कोई करारनामा नही होता। वह अपनी बिक्री किसी बडी तेल कम्पनी के मार्फत ही कर सकता है। और वह बडी कम्पनी जब चाहे कीमतो मे अदला-बदली कर सकती है, और चाहे तो कल से उसका तेल लेना भी बन्द कर दे। आज तेल का सम्भार इतना अधिक है कि बड़ी कम्पनी को सयोजन (कनेक्शन) बदलने के लिए विज्ञापित मूल्यो पर दिये जाने वाले कुछ अधिशुल्क के बाहर प्राय उत्पादक को और कोई अभिप्रेरण नही देना पड़ता।

तेल के स्वतन्त्र व्यापारी शायद इस बात को सचमुच ही भूल चुके है कि सहकारी बिक्री व्यवस्था भी हो सकती है। कोई भी ऐसी वैधानिक या नैतिक बाधा नही है जिसके कारण स्वतन्त्र व्यापारी अपना सहकारी विक्रय सघ नही बना सकते।

अब जो बची रह गई है वे स्वतन्त्र तेल कम्पनियाँ व्यापार मे टिके रहने के लिए सहकारिता की पद्धति को अपनाती है या नही यह तो अभी देखने की बात है; लेकिन पेट्रोल-उत्पादनो के कई लाख उपभोक्ताओ ने इस काम को काफी सफलता के साथ कर दिखाया है और अपने-आप को तथा सभी तेल उपभोक्ताओं को जितना लाभ पहुँचाया है उसका सही-सही अनुमान लगा पाना कठिन ही है।

कुछ साल पहले यह कहा जाता था कि रोमन कैथोलिक चर्च, स्टैण्डर्ड आयल कम्पनी और फ्रान्सिसी सेना—ये दुनिया के तीन सबसे शक्तिशाली सगठन है।

द्वितीय महायुद्ध ने फ्रान्सिसी सेना का नाम तो इस सूची से खारिज कर दिया। कैथोलिक चर्च अवश्य अपने लाखो-करोड़ो भक्तों पर अब भी वैसा ही शक्तिशाली प्रभुत्व रखता है।

और स्टैण्डर्ड आयल कम्पनी का भी उससे भिन्न प्रकार का अधिकार लगभग अपने ही लोगो की जेबों पर है। बहुत-सी बड़ी तेल कम्पनियो के अभ्युदय के

बाद भी 'स्टैण्डर्ड की विज्ञापित कीमते' आज भी सयुक्त राज्य अमरीका और अधिकाश विश्व के पेट्रोल व्यवसाय के लिए निर्देशात्मक और अन्तिम रूप से निर्णयात्मक होती है।

प्राय. एक आध शहर के पेट्रोल के फुटकर बिक्री पम्पों पर कीमतों की लाग-डॉट हो जाया करती है और होड़ा-होड़ी मच जाती है, लेकिन यह ज्यादा समय तक चल नही पाता। कच्चे और परिष्कृत दोनो ही तरह के माल को कीमते बडी कम्पनियों का 'भाई चारा' अपने अच्छे-खासे नियन्त्रण मे रखता है। इस बात के सकेत भी मिलने लगे है कि पचास बरस पहले न्यास-विरोधी काररवाइयो के जो परिणाम हुए थे उनका शीघ्र परावर्तन कर दिया जाएगा। स्टैण्डर्ड आयल कम्पनियो मे की कुछ कम्पनियाँ जो उस अकेले न्यास की उत्तराधिकारी है आज अपने विलय की चर्चा करने लगी है। और उस जमाने से भिन्न आज की उग्र मन स्थिति मे उनका यह कृत्य किसी उल्लेखनीय जन-विरोध के बिना सम्भवत स्वीकार भी कर लिया जाएगा।

यह तो एक दस्तावेजी हकीकत है कि संयुक्त राज्य अमरीका और कम्यूनिस्ट गुट के बाहर शेष सारी दुनिया का पेट्रोल उत्पादन सात कम्पनियो के कब्जे मे है। लेकिन न्याय विभाग (Department of Justice) ने इस समूह की अमरीकी कम्पनियो के विरूद्ध अपने न्यास-विरोधी वाद को समाप्त कर दिया। ऐसा करने का कोई भी कारण आज तक नही बताया गया; लेकिन इसका उत्तर तो इसी बात से मिल जाता है कि जहाँ अमरीकी जीवन का कोई कोना-अतरा और कोई छेड़-दरार काग्रेस स्तरीय खोज-बीन से बच नही पाई वहाँ तीस वर्षों से भी अधिक समय होने आया तेल-व्यापार को किसी भी जाँच-पडताल के द्वारा छेडा नही गया। तेल की आवाज ऊँची नही है, लेकिन वह बोलता है एकछत्र अधिकार के दर्प से।

अकेले इसी उद्योग मे शास्ता शासितो के अधिकार मे देखे जाते है। संयुक्त राज्य मे उपलब्ध पेट्रोल के परिमाण के प्राक्कलन के लिए खनि विभाग (Bureau of Mines) बडी तेल कम्पनियो द्वारा प्रस्तुत आँकडो का ही उपयोग करता है। और इस विभाग ने तेल उद्योग को अप्रसन्न करने वाली कोई बात कही या की हो; कोई महत्त्वपूर्ण निर्णय या कम-से-कम प्रकाशन ही किया था

उसका समर्थन किया हो ऐसा तो आज तक कभी हुआ नही।

यह भविष्यवाणी तो अब आम होती जा रही है कि निकट भविष्य मे ही पेट्रोल व्यवसाय के समस्त स्वतन्त्र व्यापारी खत्म हो जाएँगे और बड़ी कम्पनियों से प्रतियोगिता करने के लिए केवल सहकारी सस्थाएँ ही रह जाएँगी। स्वतन्त्र तेल परिष्कर्ता सघ (Independent Oil Refiners Association) के अध्यक्ष ने सहकारी स्वामीत्व की किसी परिष्करण-शाला की एक नई इकाई का उद्‌घाटन करते हुए यह कहा था कि सहकारियों के इस व्यवसाय मे आने के लिए बड़ी कम्पनियों को उनका कृतज्ञ होना चाहिए। क्योंकि, अध्यक्ष महोदय की राय मे, इस व्यवसाय मे सहकारियों की विद्यमानता ही वह बड़ा कारण थी जो सरकार को एकाधिकारी स्थिति को सुधारने के लिए कोई कडा कदम उठाने से रोके रही। उन अध्यक्ष महोदय के इस तरह की बात कहने का कारण भी था। जिस शहर मे (कुशिग, ओक्लाहामा) उन्होंने यह बात कही वहाँ कुछ समय पहले चौदह परिष्करण शालाएँ थी, जिनमे से अधिकांश स्वतन्त्र थी; लेकिन जिस समय उन्होंने उद्‌घाटन किया वहाँ केवल दो परिष्करण-शालाएँ थी—एक तो किसी बड़ी कम्पनी की और दूसरी सहकारी सस्था की। इसीलिए ऐसी टिप्पणी करने का यह काफी उचित कारण था।

सहकारी संस्थाओं द्वारा की जानेवाली प्रतिस्पर्धा निराले प्रकार की है। यह प्रतिस्पर्द्धा व्यापार मे पिट कर बिक जाने वाली प्रतिस्पर्द्धा नही है। सबसे पहली बात तो यह कि सहकारी सस्थाएँ 'पैसा कमाने के लिए' नही, बल्कि अधिमूल्यन के भार मे बुरी तरह दबे किसानों के लिए पैसा बचाने को उद्देश्य में ही तेल व्यवसाय मे आई हैं। जैसे-जैसे सहकारी सस्थाओं की वृद्धि होती गई और वे अपने कार्य-व्यापारों का एकीकरण करती गई उनका उद्देश्य भी व्यापक रूप धारण करता चला गया। अब इस उद्देश्य मे अपने सदस्यों को एक बड़े उद्योग के कुछ अंश का स्वामी बनाकर उनकी आर्थिक स्थिति को दृढ़ करने की बात और जुड़ गई। मुँह माँगा दाम पाकर बडी कम्पनियों के हाथ अपने को बेच देने से तो इन दोनों ही उद्देश्यों की उपलब्धि नही हो सकती।

जनता द्वारा तेल-व्यापार की जोखिम उठाने का आरम्भ किसी नाटकीय घटना से कम नही है। १९२० के बाद के वर्षों मे ट्रैक्टर के आगमन से भी इसका

घनिष्ठ सम्बन्ध है। ट्रैक्टर के ईंधन के लिए काफी पैसा चाहिए। और खेती की तो रीढ़ वैसे ही टूटी जा रही थी, इतने महँगे ईंधन के लिए ढेर सारा पैसा आये कहाँ से! मिन्नेसोटा मे किसानों का एक समूह अँगीठी के आगे बैठा आपस मे सलाह-मशविरा करने लगा कि क्यों न अपनी गाढ़ी कमाई के कुछ पैसे को लगाकर अपने लिए पेट्रोल का एक पम्प और बडी टकी बना ली जाए। इस कारबार को सहकारी ढग से स्वय करके एक तो वे पेट्रोल-उत्पादन सम्बन्धी अपनी और अपने पड़ोसियों की आवश्यकताओं को पूरा कर सकते थे और दूसरे उन्हे यह भी मालूम हो जाता कि पेट्रोल की लागत और कीमत क्या बैठती है। यह मिन्नेसोटा के काटन वुड कस्बे की १९२१ की बात है। तेल के व्यापार मे जनता का यह पहला कदम था। और पहले ही दिन से यह कदम काफी सफल रहा।

लेकिन काटन वुड के लोगो को शीघ्र ही यह पता चल गया कि खाली फुटकर बिक्री का कारबार तो खतरे से खाली नही होता और बाज वक्त उसे चलाना ही मुश्किल हो जाता है। राज्य की दूसरी बस्तियो मे जो पेट्रोल सहकारी सस्थाएँ काम कर रही थी उनका भी यही अनुभव था। प्रायः तेल पाना ही मुश्किल हो जाता था। इसलिए अन्त मे १९२६ के एक दिन, अपने क्षेत्र के सभी सहकारियों को पेट्रोल उत्पादन का सम्भरण करने के लिए, शुभ मुहूर्त देखकर, प्रार्थना और शुभाकाक्षा और बड़ी-बडी सद्भावनाओं के साथ मिडलैण्ड सहकारी थोक सस्था (Midland Cooperative wholesale) की स्थापना की गई।

आरम्भ के वर्षो मे तेल सहकारी सस्थाओं ने अपने सदस्यों को औसत १६ प्रतिशत के आस पास सरक्षण धन वापसियाँ की।

उधर ओहियो, इडियाना और इलिनोइस के किसानो को भी समझ मे यह बात नही आ रही थी कि कस्बे की टकी से सिर्फ फारम तक लाकर देने मे ट्रैक्टर के द्रव-ईंधन की कीमत सात सेट प्रति गैलन कैसे हो जाती है! और शीघ्र ही उन्होने मालूम कर लिया कि यह कीमत तो आधी भी नही होनी चाहिए। यह भेद उन्होंने जाना मिन्नेसोटा के किसानों की तरह अपनी निजी तेल-वितरण सहकारी सस्थाओं की स्थापना करके। लेकिन इनके सामने भी वही समस्या

आई और इन्हे भी सम्भरण के लिए थोक सहकारी सस्था की आवश्यकता महसूस हुई। और तीनो ही राज्यों मे फारम ब्यूरो ने जिला सहकारियो की मॉग का निकाय कर आपूर्ति प्रयत्नो के लिए राज्य व्यापी सहकारी थोक सस्थाए प्रायोजित की।

लेकिन इन थोक सहकारी सस्थाओ के सामने भी ठीक वही कठिनाई आई। अपने सम्भरण कर्ताओ से, जो इनके एकीकृत प्रतिस्पर्द्धी भी थे, इन्हे बडे विचित्र ढग से और सहसा ही माल मिलना बन्द हो जाता था।

अक्सर ऐसे अवसर आ जाते थे जब कुछ कच्ची हिम्मत वाले यह सलाह देने लगते कि इस खटराग को बेच-बाचकर छुट्टी की जाए। लेकिन उनकी बात चल नही पाती थी।

इसके विपरीत उधर कन्सास के मैदानो मे १९२५ के बाद के वर्षो मे अमरीकी इतिहास मे पहली सहकारी तेल परिष्करण-शाला का अभ्युदय हुआ। उसके बाद देश के विभिन्न भागो मे इस तरह की और कई परिष्करण-शालाए बनी, जिन्हे विभिन्न सहकारी सस्थाओ ने या तो स्वय निर्मित किया या किसानो से खरीद लिया। कन्सास की परिष्करण शाला को उचित मात्रा मे कच्चा तेल किसी भी तरह मिलना सम्भव न हो सका तो मामले को जॉच-पडताल के लिए न्याय विभाग को सौपने की धमकी देनी पड़ी और तभी आवश्यक मात्रा मे और ठीक समय पर तेल मिलना शुरू हुआ और तभी वह परिष्करणशाला ठीक ढग से चलने लगी।

लेकिन जनता का तेल-व्यापार अभी तक एकीकृत नही हो पाया था, जो उसके जीवित रहने के लिए नितान्त आवश्यक था, और न वह स्वतन्त्र ही हो पाया था, जो केवल सम्पूर्ण एकीकरण के बाद ही सम्भव था।

जनता को यह सिद्ध कर के दिखा देना था कि वह कच्चे तेल के उत्पादन से लेकर परिष्करण, थोक वितरण और फुटकर बिक्री तक सारे काम स्वय कर सकती है।

और लोगों ने यह करके दिखा भी दिया।

१९३९ की सर्दियों मे फिर कन्सास के मैदानों मे एक अलाव के चारो ओर उपभोक्ता सघ (Consumers Cooperative Association) के

लोगों का एक छोटा-सा समूह आग ताप रहा था। वे लोग सारी रात इसी तरह बैठे प्रतीक्षा करते रहे थे। अन्त मे जैसे ही सवेरा हुआ उनकी चिन्ता मिटी और लम्बी प्रतीक्षा का फल मिला। पहली बार जमीन के अन्दर से वह तेल निकला जिसके स्वामी वही लोग थे जिन्हे उस तेल के परिष्कृत उत्पादनो की स्वय अपने लिए आवश्यकता थी। पहली बार, सब लोगों के लाभ के लिए भगवान् की कृपा से प्रकृति की प्रक्रियाओं द्वारा पेट्रोल मे सग्रहीत ऊर्जा का वह महत् सचय कुएँ से पाईप लाइन द्वारा सीधे उन साधनों मे पहुँचाया गया जो इन लोगों की आवश्यकताओं को सीधे-सीधे पूरा करने के लिए बनाये गए थे।

१९४३ मे मिडलैण्ड कोआपरेटिव्स ने कुशिग, ओक्ला होमा मे एक परिष्करणशाला खरीदा जिसकी पूरी कीमत उसी की तीन साल की बचतो से निकल आई।

इस कहानी का अधिक विस्तार अनावश्यक ही है। आज सयुक्त राज्य के किसानों द्वारा जितना पेट्रोल खर्च किया जाता है उसका १८ से २२२ प्रतिशत सहकारी सस्थाएँ अपने कुओ से थोक टकियो और फुटकर पम्पो तक पहुंचाती है। मध्य पश्चिम (middle west) के ऊपरी हिस्से के राज्यो मे तो यह अनुपात और भी अधिक है। कुछ जिलों मे ४० से ५० प्रतिशत पेट्रोल का पूरा व्यवसाय सहकारी सस्थाओं के हाथ मे है।

उन्नति का यह क्रम बडा ही उत्साहवर्द्धक है। उदाहरण के लिए १९५० मे सहकारी सस्थाओ ने सयुक्त राज्य के फारमो पर खर्च किये जानेवाले पेट्रोल उत्पादनों के १६ प्रतिशत का सम्भरण किया। १९५७ मे यह बढकर २०.४ प्रतिशत हो गया। इन सात वर्षो मे सहकारी सस्थाओ के पेट्रोल उत्पादन के कुल कारबार के असल मूल्य मे ३३ ७ प्रतिशत वृद्धि हुई, जब कि उसी अवधि मे किसानों के तेल-उत्पादनो के कुल व्ययो मे केवल १४.४ प्रतिशत बढ़ती हुई।

सहकारी सस्थाएँ अपने सदस्यों और ग्राहको को जितना तेल बेचती है उसका अधिकाश स्वय उन्ही की परिष्करण-शालाओ से प्राप्त होता है। १९५७ मे सहकारी सस्थाओं ने १,९५,७०,००,००० गैलन द्रव ईधन के रूप मे पेट्रोल बेचा, इसमे से सहकारी परिष्करण-शालाओं ने १,८३,३०,००,०० गैलन तैयार किया था। दो हजार सहकारी तेल कुओ की पैदावार परिष्करण आदि के बाद २७००

बडी टंकियाँ और २००० पम्पों को चलाने वाली कोई २७०० स्थानीय पेट्रोल सहकारी संस्थाओं के मार्फत उपभोक्ताओं को बेची जाती है।

सहकारी संस्थाओं का लगभग २००० तेल कुओं पर स्वामीत्व है। वे १० परिष्करण शालाएँ चलाते है, जो पहले से संख्या मे अवश्य आधी है, लेकिन उनकी कुल क्षमता पहले से काफी ज्यादा है। देश के कुल पेट्रोल उत्पादन के लगभग २ २ प्रतिशत का सहकारी संस्थाओं द्वारा अपनी पाईप लाइनों, ट्रकों, थोक और फुटकर निकासों के द्वारा वितरण किया जाता है। १.६ प्रतिशत का वे परिष्करण करती है। उनकी सबसे बडी कमी यह है कि अपनी परिष्करण-शालाओं के लिए जितना कच्चा तेल चाहिए उससे उन्हे अपने कुओं से १५ प्रतिशत कम मिल पाता है। परिष्करणशालाओं के सन्तुलित और निश्चिन्त संचलन के लिए उन्हे कोई ५० प्रतिशत की आवश्यकता है।

एक महान उद्योग के इतने छोटे-से कारबार से भी सहकारी संस्थाओं ने काफी-कुछ कर दिखाया है। वे संरक्षण धन वापसी के रूप मे किसानों को, फारम को आय को, देहाती कस्बों और उनकी आय को लाखों-करोड़ों डालर लौटा चुकी है। ये वापसियाँ वह बचत है जो थोक और फुटकर बिक्री के अन्तर के कारण हुई है, अर्थात् वह बचत जो वास्तविक लागत और बाजार मे चालू कीमतों के अन्तर के कारण हुई हैं। इस बचत मे उत्पादन और परिष्करण का अन्तर भी समाविष्ट है। यह मुनाफे की वह भलाई है जो किसानों और ग्राम्य जनता से वसूली जाती, परन्तु घूम-फिर कर उन्ही के पास उनके सहकारी स्वामीत्वकृत तेल कुओं और परिष्करणशालाओं के माध्यम से लौट आई।

ये सब तो प्रत्यक्ष लाभ हुए, लेकिन इसके अप्रत्यक्ष और अप्रकट लाभ भी कई है। यदि १९१०–१९१४ को आधार अवधि मानकर मूल्यों का सूचकांक १०० स्थिर किया जाए तो १९५९ में किसानों को आवश्यक सम्भरणों और यन्त्रादि के लिए जो कीमतें देनी पड़ी उसका सूचकांक २७५ हो गया। लेकिन सहकारियों के दो सबसे तगड़े बारबार पेट्रोल और उर्वरक मे मूल्यों का सूचकांक क्रमशः १७५ और १५२ ही रहा।

मिन्नेसोटा, विसकोन्सिन और दूसरे कुछ राज्यों मे १९३४ के मुकाबले १९५९ मे जिन्सों की कीमतों मे आमतौर पर जो बढती हुई उसकी तुलना में

गैसोलीन (पेट्रोल) के मूल्य मे केवल दो-तिहाई वृद्धि हुई। यह किस हद तक उस क्षेत्र की शक्तिशाली सहकारी सस्थाओ की प्रतियोगिता का परिणाम है इसका ठीक-ठीक निश्चय कर पाना तो असम्भव ही है। लेकिन इस बात को तो मानना ही होगा कि सहकारियो की प्रतियोगिता का इसमे काफी बड़ा हाथ है।

सहकारियो के आर्थिक प्रयोजन बहुत सीधे और साफ हे। उनका हेतु है अपने ग्राहकों को, जो उनके स्वामी भी होते है, उत्कृष्ट कोटि का माल, बिना घाटे की न्यूनतम असली कीमत पर प्रदान करना है। अपने-आप से मुनाफा कमाने मे कोई तुक नही है। इसलिए पेट्रोल उद्योग की सहकारी संस्थाओ का अपने संरक्षक-स्वामियो के लाभ के लिए उत्पादन की किस्म को निरन्तर सुधारते रहने का प्रयत्न समूचे उद्योगो पर एक ऐसा प्रभाव है. जिसे नापना बडा मुश्किल है, लेकिन जिसने उन अनगिनत लोगो को गौण रूप से लाभान्वित किया है, जो इन तेल सहकारियो के अस्तित्व तक से अनभिज्ञ है।

काफी विल्ले (कन्सास) की सीसीए की, कुशिग (ओक्लाहामा) की मिडलैण्ड की, या मेक्फरसन (कन्सास) की राष्ट्रीय सहकारी परिष्करण सघ (National Cooperative Refining Association) द्वारा सचालित सहकारी परिष्करण शालाओं से अधिक दक्ष और श्रेष्ठ क्या कोई दूसरी भी है, यह प्रश्न सम्भवत अनुत्तरित ही रहा। राष्ट्रीय सहकारी परिष्करण सघ वाली परिष्करणशाला तो सात क्षेत्रीय पेट्रोल सहकारी सस्थाओ के सयुक्त स्वामीत्व और संचालन मे एक केन्द्रीय प्रतिष्ठान है। इसकी दैनिक क्षमता २६ हजार पीपे है।

सहकारियों के कार्य संचालन के इस नियम को कि उनकी प्रवृत्ति मुनाफो को, जिसका मजा उनके सदस्यों को केवल एक ही बार मिलता है, आम जनता मे वितरित करने की है, अभी तक भी बहुत कम समझा गया है। और आज तो यह बात शायद ही किसी को याद होगी कि तीस बरस पहले शहर से फारम तक ईंधन (पेट्रोल) पहुँचाने मे उसका दाम सात सेट प्रति गैलन होता था। सहकारियों ने यह अनुभव किया कि इन दरों को ढाई या तीन सेट प्रति गैलन तक घटाया जा सकता है और जब घटा दिया तो सारे पेट्रोल उद्योग को भी ऐसा करना पडा।

अमरीकी अर्थ व्यवस्था मे तेल का व्यापार कुल मिला कर सबसे अधिक लाभ का व्यवसाय है। यद्यपि बीस लाख सहकारी सदस्यो का इस उद्योग के बहुत ही छोटे हिस्से पर स्वामीत्व है, फिर भी उन्हे जो लाभ होता है वह बिलकुल उजागर ही है।

उदाहरण से इस बात को स्पष्ट करने के लिए हम मध्यम दर्जे के मिडिल वेस्टर्न कस्बे के एक चौराहे को ले सकते है। चौराहे के तीन कोनो पर तीन पेट्रोल पम्प हैं। एक पम्प तो किसी बडी तेल कम्पनी का है, दूसरा किसी स्वतन्त्र ठेकेदार का है और तीसरा सहकारी सस्था का है।

प्रकट ही है कि दूसरे और तीसरे क्रम के पम्प तो स्थानीय स्वामीत्व कृत उद्यम है, लेकिन पहला अन्यत्रवासी अनुपस्थित स्वामी का है। बड़ी तेल कम्पनी के पम्प पर लाभदायी फुटकर बिक्री, माल की भराई-ढुलाई, थोक-बिक्री, परिष्करण या उत्पादन से जो कमाई होती है उसमे से उस बस्ती में कुछ भी रहता नही। केवल वही है जो तनख्वाह और मजदूरी के रूप मे उस पम्प पर काम करने वालों को दिया जाता है। दूसरा पम्प जिसका मालिक स्थानीय आदमी है और जिसने अपने सम्भरण के लिए एक तेल कम्पनी से सविदा किया है उसकी स्थिति कुछ भिन्न है। यहाँ काम करनेवाले का पारिश्रमिक ही नही फुटकर बिक्री का मुनाफा भी बस्ती मे ही रहता है। लेकिन सम्भरणकर्ता तेल कम्पनी की कमाई मे से इस पम्प के स्वामी को भी कुछ नही मिलता।

सहकारी इन दोनो से ही भिन्न प्रकार का व्यवसाय है। जो लोग इसकी सेवाओं का प्रयोग करते और इसके उत्पादन खरीदते है यह उन्ही की सम्पत्ति है और सदैव रहेगा। वे स्थानीय लोग है—उसी कस्बे के किसान और दूसरे लोग। फिर उनके स्थानीय सहकारी के क्षेत्रीय थोक और उत्पादन सहकारियों मे हिस्से भी है। इस तरह कस्बे का पम्प चलाने वाले लोगों की तनख्वाह और मजदूरी ही बस्ती के घर-की-घर मे नही रहती, फुटकर बिक्री, थोक के काम, परिष्करण, परिवहन और उत्पादन की कमाई (इसे सहकारी शब्दावली मे बचत कहते है) के सारे सीमान्तों का उचित सानुपातिक अंश बस्ती मे ही रहता है। क्योकि थोक और उत्पादन सहकारी द्वारा ये उपार्जन संरक्षणधन वापसियो के रूप मे प्रति वर्ष अपने स्थानीय सहकारी सदस्यो को लौटा दिए जाते है। और वह

रकम पेट्रोल पम्प मे उनके संरक्षण के अनुपात से पुनः बस्ती वालों की जेब मे लौट आती है क्योंकि वे ही तो उस पम्प के ग्राहक और मालिक भी है।
एक जमाना था जब पेट्रोल पम्प के ग्राहकों की और मालिकों की सख्या बहुत ही सीमित हुआ करती थी, क्योंकि सहकारी पेट्रोल पम्प न तो इतने आकर्षक, न इतने व्यवस्थित, न इतने साफ-सुथरे और न इतने रगे-चुंगे ही होते थे जितने कि प्रतिस्पर्द्धियों के हुआ करते थे। कुछ बस्तियों मे आज भी यही हाल है। एक स्थानीय सहकारी पेट्रोल पम्प के व्यवस्थापक का वह किस्सा तो सभी को मालूम है जिसने यह कहकर नये साइनबोर्ड का विरोध किया था : "नया साइनबोर्ड क्यों लगाते हो? सदस्य तो सभी जानते है और दूसरा कोई फटकता नही।"

सच है, दूसरे शायद ही फटकते होंगे।

लेकिन अब समय बदल गया है। १९५१ के आरम्भ से ही पेट्रोल सहकारियों का काया पलट होने लगा; चमक-दमक वाली कार्यकुशल परिष्करण-शालाओं का रग-रोगन और चेहरा-मुहरा ही नही स्थानीय पेट्रोल पम्पों और बड़ी टंकियों की शकल-सूरत भी एकदम बदल गई। पेशे से सम्बन्धित कार्यों के विकास और साधन-सामग्रियों की एकरूपता के कार्यक्रम के लिए क्षेत्रीय थोक सहकारियों ने पैसा दिया। गन्दे, बुरी जगहों मे बने हुए अनाकर्षक सहकारी पेट्रोल पम्पों के स्थान पर चमक-दमक वाले, अच्छी तरह सजे-सँवारे, साफ-सुथरे और आकर्षक सेवा-साधन-केन्द्र दिखाई पडने लगे, और जिन्हे अपने सदस्यों के अतिरिक्त दूसरे लोगों से भी व्यवसाय मिलने लगा। देश का सर्वोत्कृष्ट पेट्रोल पम्प और सेवा-केन्द्र मिन्नियापोलिस की महानगरी मे मिडलैण्ड कोआपरेटिव्स इन कारपोरेशन का है जिसे वह स्वय चलाती है और जो इस बात का जीता-जागता प्रमाण है कि सहकारी सेवा कितना बढिया-से-बढिया काम कर सकती है।

तेल के व्यापार मे जनता १९२० के बाद के वर्षों मे, मुख्य रूप से किसानों और कृषि पर बढ रहे आर्थिक बोझ को कम करने के लिए, आई थी। आज भी तेल-उत्पादनों के अधिकांश सहकारी व्यापार पर किसानों का स्वामीत्व है और वे मुख्य रूप से किसानों और ग्रामीण बस्तियों की ही सेवा करते है। लेकिन दूसरे महायुद्ध के बाद से देश का शहरातीकरण तेजी से बढता जा रहा है और नगर ग्रामीण क्षेत्रों मे फैल गए है और पूरे-पक्के किसानों की संख्या कम हो गई है।

तेल सहकारियो ने समय के इस सकेत को देखा और समझा। उन्होंने अपने व्यापार को और खासतौर पर वाष्पीय तेलो और मोटर के ईधन एव तेल के कामकाज को शहरो मे फैलाना शुरू कर दिया। उन्होने उपनगरीय बस्तियो मे पेट्रोल पम्पो का अधिग्रहण किया और इक्के-दुक्के पेट्रोल पम्प शहर के ठीक मध्य मे भी प्राप्त कर लिये। इसी बीच नागरिक आधार वाले उपभोक्ता सहकारियो ने बाजार के रुख को परख कर पेट्रोल पम्प और मोटर सम्बन्धी-सेवाओ का सारा काम अपने यहाँ और बढा लिया; ये सहकारी अपना पेट्रोल और तेल क्षेत्रीय सहकारियों से लेने लगे, जो कभी एकमात्र किसानो को ही माल दिया करते थे।

इन नये रुझानो का दिलचस्प उदाहरण ओहियो राज्य की कुया होगा काउटी मे देखने को मिलता है।

१९३४ मे जब जिला (काउटी) फारम ब्यूरो कोआपरेटिव बनाया गया तो कुया होगा काउटी मे १२३० फारम थे। १९५९ मे पचास एकड या उससे अधिक क्षेत्रफल वाले मुश्किल से सौ फारम रहे होगे। लेकिन पाँच और दस एकड के बगीचे और छोटे खेतो की सख्या काफी बढ़ गई और ये सब नगर का काम करने वाले लोगो के पास थे। पक्के-पूरे किसान परिवार क्लीवलैण्ड नगर सहित पूरे जिले की आबादी के १ प्रतिशत के पचमाश से भी कम ही होगे।

ऐसी स्थिति मे फारम ब्यूरो कोआपरेटिव का कारबार बड़ी आसानी से बन्द हो जाता अगर वह पुराने ढर्रे पर ही काम करता रहता। लेकिन इसका सचालक-मण्डल और व्यवस्थापक दूरदर्शी थे। कृषि-योग्य उर्वरको की बिक्री कम होने लगी तो उन्होंने वाटिकाओ मे बोये जानेवाले बीज और उद्यानोपयोगी उर्वरक की बिक्री शुरू कर दी। खेती के उपकरणो की बिक्री गिरी तो उद्यानोपयोगी औजारों और घर-गिरस्ती के साधन-साधित्रो की बिक्री शुरू कर दी और ये चीजे बिकने भी तेजी से लगी। लेकिन सबसे अधिक और महत्त्वपूर्ण वृद्धि हुई शहर और कस्बे के ग्राहकों मे गैसोलीन, द्रव ईधन आदि पेट्रोल निर्मित वस्तुओ की बिक्री की। यह व्यापार काफी बढ़ा। १९३६ मे पेट्रोल निर्मित वस्तुओ की बिक्री २६,८०० डालर की हुई थी, १९५८ मे वही ५,०२,२०० डालर तक पहुँच गई। १९५३ मे मोटरो के द्रव ईधन की बिक्री शुरू की गई थी और यह वृद्धि उसी का परिणाम थी।

सहकारी की समग्र बिक्री मे भी काफी बढ़ोत्तरी हुई। १९३४ मे जहाँ समग्र बिक्री मुश्किल से सत्रह हजार डालर थी वहाँ १९५८ मे दस लाख डालर के आसपास पहुँच गई।

किसान अब भी अधिकार से चिपटे हुए है। नगरवासी वैसे तो सरक्षण धन वापसी का अपना पूरा हिस्सा पा रहे है, परन्तु उनकी हैसियत बिना मताधिकार के केवल 'सहायक' सदस्यों की है। लेकिन समय इस स्थिति को भी शीघ्र ही बदलेगा। क्योंकि इस सहकारी ने बडे ही व्यावहारिक ढग से आवश्यक वस्तुओं के उपभोक्ताओं के रूप मे फारम और नगरवासियों के सामान्य हितों को बहुत अच्छी तरह से पहचान लिया है और मान भी लिया है।

जनता तेल व्यवसाय मे स्थायी रूप से रहेगी। इस उद्योग मे जनता के सहकारी उतने ही कार्यक्षम और सुसचालित है जितने कि उद्योग को चलाने वाले अन्य घटक। और इस उद्योग की समृद्धि इस बात की सूचक है कि व्यापारी कम्पनियाँ काफी मुनाफा करती है, इसलिए उद्योग के सहकारी अग के स्वामीग्राहको को काफी सरक्षण-धन वापसियाँ की जा सकती है। इन सहकारियों का अभी और भी एकीकरण करना आवश्यक है। कच्चे तेल के आवश्यक सम्भारों पर और अधिक अनुपात मे इनका स्वामीत्व होना भी उतना ही आवश्यक है।

जैसा कि अभी दिखाई दे रहा है बड़ी कम्पनियाँ 'स्वतन्त्र' व्यवसायियों की सारी प्रतियोगिता का अधिग्रहण कर उसे समाप्त करके ही रहेगी। लेकिन कुछ भी हो जाए सहकारी, अर्थात् तेल के व्यापार मे आई हुई जनता, अपने कारबार को उनके हाथों कभी नहीं बेचेगी, क्योंकि बेचने का अर्थ है उस उद्देश्य और प्रयोजन से ही पराङ्मुख होना जो उन्हे इस व्यापार मे ले आया है। और बेचने का अर्थ होगा अमरीकी जनवादी परम्परा के ओज की सबल अभिव्यक्ति को, उसके अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रमाण को नष्ट कर देना।

सयुक्त राज्य अमरीका के अत्यधिक एकीकृत उद्योग के काफी अच्छे अश पर बीस लाख औसत अमरीकी परिवारों का स्वामीत्व और विश्व के कतिपय सर्वाधिक शक्तिशाली अर्थ (आर्थिक) दानवों से उनकी सफल प्रतियोगिता—यह वास्तव मे कितना महान दृश्य है। और यह सब उनके इस निर्णय की बदौलत कि ऐसा करना समझदारी का काम है, और वह निर्णय सम्भव हुआ व्यापार को चलाने की सहकारी पद्धति के अस्तित्व की बदौलत।

६ | जनता का पैसा

यह जनता का पैसा है।

सारा पैसा जनता का है—या एक समय था।

जितना भी पैसा और साख है वह सब या तो जनता की बचतों का फल है, या बैकों, बीमा कम्पनियों और अन्य महाजनी (वित्तीय) संस्थाओ द्वारा उन बचतों का उपयोग है, या बैको अथवा सरकार द्वारा जनता की साख का मुद्रीकरण है, या सरकार अथवा निजी संस्थाओ द्वारा जनता की साख का उपयोग है।

एक बीमा कम्पनी, न इससे कम और न इससे ज्यादा, सिर्फ यही तो है कि लोगों का एक समूह मिलकर जीवन की एक समान आपत्तियों-विपत्तियो मे साझो बनने को तैयार हो जाता है, और जब भी वे विपत्तियाँ आये उनका सामना करने के लिए अपनी बचतों का निकाय करता है। जनता की इन्ही बचतों पर तो बीमा-व्यवसाय का सारा साम्राज्य टिका हुआ है।

बैंक किसानों, मकान मालिकों और व्यापारियों को कर्ज देते है और जमानत मे उनके खेत, मकान या व्यापारी सम्पत्ति को बन्धक रखते है। लेकिन क्या बैंक ने इन्हे अपना रुपया या अपनी साख उधार दी है? नही, कदापि नही। वास्तव मे बैंक ने किसानों, या मकान मालिकों या व्यापारियों की उस साख का मुद्रीकरण कर दिया है जो पहले से उन लोगों के पास है, लेकिन जिसे मुद्रा मे परिवर्तित करने का उनके पास कोई साधन नही है।

जब ग्रामीण विद्युत सहकारी संस्थाएँ सरकार से रुपया उधार लेती है तो वे किसी दूसरे को साख उधार नही ले रही होती है। वास्तव मे वे अपनी ही साख पर उधार लेती है। क्योंकि ४५ लाख ग्रामवासियों और किसानों ने निश्चय ही सारी जनता की साख मे अपने सानुपातिक हिस्से से अधिक कर्ज नही लिया होता है, इसलिए कि सारी जनता की उस साख के निर्माण मे अपनी उत्पादनशीलता से उन्होंने भी सहायता की है।

इस प्रकार हमारी अर्थ-व्यवस्था के अन्दर की प्रक्रिया मे सारी पूँजी, सारा रुपया और सारी साख कभी-न-कभी सीधे-सादे, सामान्य नागरिको के हाथ में रही है, जिनमे से कुछ धनी हैं, बहुत से मध्य वित्त श्रेणी के हैं और अधिकाश गरीब हैं।

थोड़ा ध्यान से सोचा जाए तो ये सारी बाते विस्मयकारी तो जरा भी नहीं है। आश्चर्य की बात केवल इतनी ही है कि लोग इनके बारे में सोचते ही नहीं हैं। लेकिन फिर भी कुछ लोग अवश्य हैं जो सोचते हैं, और कुछ लोग सोचकर उनपर आचरण भी करते हैं। ऐसे लोग क्या करते हैं और क्यों करते हैं, यही इस अध्याय का विषय है।

यह अध्याय लोगों के पैसे, साख और बचतों के बारे मे है। यह बैंकों, बीमा कम्पनियों और साख सस्थाओं के बारे मे है। इसमे जनता की बचत सस्थाओं, जनता की बीमा कम्पनियों और जनता की साख सस्थाओं का वर्णन भी है।

इस अध्याय मे यह भी बताया गया है कि जनता की साख का उपयोग—और दुरुपयोग भी—कैसे किया जाता है, उस साख को कैसे आधुनिक जीवन का शक्तिशाली उपकरण बनाया जाता है, और जिनकी वह साख है उन्ही लोगों के जीवन को नियन्त्रित करने वाला हथियार भी। और संक्षेप मे हम कर्ज के उस भयकर अभिशाप का भी उल्लेख करेंगे जो जीवन भर नहीं चुकाया जा सकता और बहुत से तथाकथित 'कम विकसित' देश के निवासियों की प्रगति को अवरुद्ध करने वाला गले का पत्थर बना हुआ है।

ये ऐसी बातें हैं जिनके बारे मे सामान्य जन से बार-बार कहा जाता है, बल्कि उसे विश्वास दिलाया जाता है कि वह इन्हे पूरी तरह नहीं समझ सकता। अज्ञान को असाध्य समझ लेने की यह गलत धारणा ही तो हमारी अधिकाश गम्भीर आर्थिक समस्याओं का मूल कारण है।

राष्ट्रपति जान एडम्स ने, जो उग्र सुधारवादी तो कदापि नहीं थे एक जगह लिखा है:

"अमरीका की सारी परेशानियाँ गडबड़ी और तकलीफों का कारण हमारे विधान या सघ मे खामियों का होना अथवा हम लोगों मे सद्गुण

या सम्मान की कमी नही, उनका असली कारण है सिक्के, साख और चलन के बारे मे हमारा घोर अज्ञान।"

राष्ट्रपति एडम्स का यह कथन आज भी सच है। इसलिए हम बचत से शुरू करेगे, क्योंकि सारी आर्थिक प्रगति की कुन्जी यही है।

परिवारो, जन-समुदायों और राष्ट्रो की सारी आर्थिक प्रगति का राजमार्ग बचत के सिहद्वार से होकर ही जाता है। आर्थिक प्रगति के लिए पहले से बचत किये बिना उस दिशा मे मनुष्य कोई कदम उठा नही सका है।

आदि मानव अपनी तात्कालिक आवश्यकता से कुछ अधिक भोजन यदि अपनी कन्दरा मे एकत्रित न कर लेता तो वह कभी प्रगति कर ही नही सकता था। लेकिन जब उसके पास कम-से-कम एक ही दिन का भोजन जमा हो गया तभी वह उस दिन का उपयोग अपक्षेपी[1] बनाने मे कर सका, जिससे कम श्रम मे अधिक वन्य पशुओ का आखेट कर सके, या वह उस दिन का उपयोग जगली बीजों को बोने मे कर सका जिससे अनाज की फसल प्राप्त कर सके।

सगृहीत भोजन बचत का पहला ढग था।

कन्दरा मे सगृहीत भोजन रहने पर आदि मानव पत्थर के अनगढ औजार बनाने के लिए अथवा अपने और अपनी जाति के दूसरे लोगो के लिए आश्रय स्थान बनाने को समय निकाल सका।

अब बचत ने पत्थर के औजारो, आश्रय स्थलो और भोजन का रूप ले लिया।

आगे चलकर धातु के औजारो के रूप मे बचत की जाने लगी, या हो सकता है कि धातु के ही रूप मे, जिससे बहुत-सी चीजे बनाई जा सकती थी, बचत की जाने लगी हो।

ये बचते सही अर्थो मे धन की, जीवन को टिकाये रखने और उसकी रक्षा करने वाली वस्तुओ की बचते होती थी। इन बचतो का अर्थ होता था तात्कालिक आवश्यकताओं से मुक्ति। इनका अर्थ होता था नये काम करने की, आगे बढने और प्रगति की स्वतन्त्रता।

---

१. पाषाण युगीन मानव द्वारा निर्मित पत्थर फेकने का पहला यन्त्र, जो बहुत ही भद्दा और आदिम ढग का था।　　　　—अनु०

बचत के बिना मनुष्य या तो उन लोगों का दास है जिनके पास बचतें हैं या फिर वह दास है जीवन को टिकाये रखने के लिए भोजन उपलब्ध करने की अपनी ही मौलिक आवश्यकता का।

स्वतन्त्र केवल वे ही लोग हो सकते हैं जिनके पास बचत है।

और इस प्रकार बचतों पर अधिकार और नियन्त्रण स्वतन्त्रता का प्रवेश-द्वार है, ठीक जिस प्रकार बचतें आर्थिक प्रगति का प्रवेश द्वार है।

सभी युगों और सभी समाजों में लोग कुछ-न-कुछ बचतें करते ही आये हैं। सभी युगों और सभी समाजों में जो तेज-तर्रार और चतुर लोग होते हैं वे शेष सब की बचतों पर यदि नहीं तो उन बचतों के सार्थक नियन्त्रण पर तो अपना अधिकार अवश्य स्थापित कर लिया करते हैं।

निरंकुश सत्ताधिकारी राजाओं, सम्राटों या अधिनायकों द्वारा शासित समाजों में शासकों की निरंकुश सत्ता जनता की बचतों पर उनके अधिकार और मन की मौज पर उन बचतों के अपहरण के रूप में अभिव्यक्त होती रही है।

हमारे युग में भी ठीक यही सिद्धान्त लागू होता है। केवल ढंग बदल गए हैं। हम मुख्यतः मुद्रा की शकल में बचत करते हैं। इस तरह की कुछ बचतों के उपयोग के बिना परिवारों, समुदायों अथवा राष्ट्रों की हैसियत से हम कोई भी आर्थिक प्रगति नहीं कर सकते। हम अपने परिवार की कल की आवश्यकताओं का प्रबन्ध भी नहीं कर सकते यदि हमारे पास उसके लिए बचत उपलब्ध न हो। यदि हमारे पास अपनी निज की बचतें नहीं हैं तो हम दूसरे लोगों से उनकी बचतें उधार लेने का प्रयत्न करते हैं। लेकिन तब हम सही अर्थों में स्वतन्त्र नहीं रह जाते, क्योंकि इसके लिए हमें मुँह माँगी कीमत, कर्ज के रूप में, देनी पड़ती है और प्राय: अपनी कुछ सम्पत्ति को भी जोखिम में डालना पड़ता है।

पुराने समाजों की ही तरह हमारे अपने समाज में भी अधिकांश लोग समय-समय पर बचत करते हैं। और पुराने समाजों की ही तरह आज भी अधिकांश लोग अपनी बचतों पर अधिकार नहीं रख पाते—जिन्हें अपनी बचतों का अधिकार सौंपते हैं उन्हीं के आश्रित हो जाते हैं।

इसे बदला जा सकता है। ऐसे तरीके हैं जिनके द्वारा लोगों के समूह—चाहे वे बहुत थोड़ी ही बचत करते हों—अपनी बचतों को अपने अधिकार में रख

सकते हैं और अपने लिए स्वतन्त्रता और आर्थिक सुरक्षा का दृढ़ आधार निर्मित कर सकते हैं।

लेकिन अकेले तो इस काम को कोई कर नही सकता। केवल लोगों के समूह पारस्परिक सहायता के लिए सम्मिलित हो कर और उस पारस्परिक सहायता को प्रभावी बनाने के लिए सही ढग का साधन अपना कर ही इस काम को कर सकते हैं।

इस तरह के साधनों मे हैं साख सघ (क्रेडिट यूनियन्स), सहकारी ढग की पारस्परिक बीमा कम्पनियाँ, सहकारी कृषि-साख संस्थाएँ, पारस्परिक बचत बैंके, बचत और ऋण सघ, पारस्परिक निवेश निधियाँ और इसी प्रकार की अन्य पारस्परिक सहायता संस्थाएँ।

बचत के ठीक विपरीत है उधार लेना। यदि लोग साथ मिल कर बचाएँ—अपनी बचतों और अपनी साख का निकाय करे—तो वे साथ मिल कर उधार ले सकते हैं और साथ मिल कर निवेश कर सकते हैं। यही है वित्त मे प्रयुक्त सहकारी सिद्धान्त।

जब घर का कमाने वाला मर जाता है, या बच्चा कालेज जाने लगता है, या कपड़ा धोने की मशीन टूट जाती है, या सहसा कोई बीमारी आ धमकती है तो औसत परिवार को इन कठिनाइयों से पार पाने के लिए उधार लेने की जरूरत पड़ जाती है और वह साख का ऐसा स्रोत ढूँढ़ता है जहाँ से उधार मिल सके। साख-सघ का आविर्भाव इसी आवश्यकता मे से हुआ है। साख-संघों के पहले भी औसत परिवारों को उधार मिल जाया करता था। लेकिन वैध बैंके तो उन लोगों को रुक्कों पर छोटे कर्ज देती नही, जिनके पास कोई जमानत न हो, क्योंकि उनकी साख नही होती, जब कि साख की ऐसे ही लोगो को सबसे अधिक आवश्यकता है। तो दूसरा उपाय होता था किसी महाजनी पीढ़ी के आगे हाथ फैलाना, जो कस कर ब्याज लेती थी; या फिर निरुपाय होकर किसी सूदखोर की शरण जाना, जिसका पठानी ब्याज आँते ही निकाल लेता था।

इस स्थिति को सुधारने वाली साख-संघ की परिकल्पना सरलता का प्रत्यक्ष

उदाहरण और सहकारिता का सार ही है। अकेला एक परिवार न तो महाजन पेढ़ी के ऊँचे ब्याज की दरों को कम करवा सकता है और न बैंकों को बगैर जमानती छोटे उधारो का प्रावधान करने के ही लिए राजी कर सकता है। लेकिन ऐसे परिवारों का काफी बड़ा समूह-चाहे वे परिवार गरीब ही क्यो न हों——यदि काम करने के लिए सयुक्त हो जाए तो इस समस्या के समाधान का साधन सुलभ कर सकता है। उधार के लिए साख की अ.वश्यकता को नियमित बचत के आचरण से सयुक्त करके इस काम को किया गया। एकल सदस्यों को जब भी उधार लेने की आवश्यकता हो पूरे समूह द्वारा लोगो की अपनी ही बचतो का उपयोग करके उन आवश्यकताओ को पूरा किया जा सकता है। यदि एक समूह के काफो लोग किसी साख-सघ मे पाँच डालर वाले हिस्से खरीद ले तो जब भो किसी को कर्ज लेने की आवश्यकता पडे वह अपने ही समूह से उचित दरो पर उधार ले सकता है, अपने ही समूह को कर्ज चुका सकता है और उपार्जन का अपना अश भी प्राप्त कर सकता है।

साख-सघ की सदस्यता समान हित वाले लोक-समुदाय मे ही होती है, जैसे कि एक हो मालिक के यहाँ नौकरी, एक ही गिरजाघर के सदस्य, एक ही श्रमिक सघ, या ऐसा ही कोई दूसरा सगठन या अडोस-पडोस मे रहने वाले लोग आदि। सघ अथवा राज्य के अधिकारी समय-समय पर सभी साख-सघो के काम काज की जाँच-पडताल करते रहते हैं, खास तौर पर यह देखा जाता है कि धन्धे मे कुल कितनी पूँजी लगी हुई है और वह जमानतो से बढ़ तो नहीं रही है——साख-सघो के कारबार की आर्थिक सुदृढ़ता के लिए पूँजी निवेशो को, सरकारी हस्तक्षेप से, जमानतो की सीमा मे बाँधे रखना बहुत जरूरी है।

१९२१ मे सयुक्त राज्य अमरीका मे केवल १९९ साख-सघ थे। १९६० तक इनकी सख्या कोई बीस हजार हो गई, इनके सदस्यो की सख्या १ करोड १० लाख से भी ज्यादा और कुल आस्तियाँ ५ अरब डालर के लगभग। इस देश मे प्रति वर्ष एक हजार से भी अधिक नये साख-सघ बनाये जाते है। सयुक्त राज्य मे कुल अशांश उधार (वह उधार जो किश्तों मे लौटाये जाते हैं) का ८ प्रतिशत साख-सघों द्वारा दिया जाता है।

सहकारी संस्थाओ की ही तरह साख-सघो का जन्म सूत्र भी पुरातन युगों

मे कही दबा पडा है, ये सस्थाएँ उतनी ही पुरानी है जितनी लोगों मे पारस्परिक सहायता। और चूँकि पारस्परिक सहायता मानवी सभ्यता का मूलाधार है इसलिए साख-सस्थाएँ अवश्य ही बहुत-बहुत पुरातन होनी चाहिए।

साख-सघों से मिलती जुलती सस्थाएँ भारत मे और दूसरे देशो मे भी पिछली कई शताब्दियों से चली आ रही है। लेकिन आधुनिक ढग के साख-सघों का जन्म स्थान जर्मनी है। १८वी शताब्दी के मध्यकाल मे प्राय' एक ही साथ हरमन शुल्ज-देलित्ख नगर मे और फ्रेडरिक राईफी सेन देहात मे दरिद्रता, ऋण और ब्याज की जिन जबर्दस्त दरों के मारे ऋण चुकाये नही चुकता, उस युगो पुरानी समस्या के बारे मे कुछ करने की सोच रहे थे। राईफी सेन फ्लैमर्सफेल्ड नामक छोटे से जर्मन कस्बे के मेयर थे। लोगो की दुरवस्था के बारे मे सोचते-सोचते जब वे लगभग निराश हो ही गए तो सहसा एक विचार उनके मस्तिष्क मे कौध गया, जो हमारे युग का सबसे ओजस्वी विचार है। वह विचार था सहकारी उधार पद्धति का। उन्होंने सोचा कि ऋण ग्रस्त किसानो मे से अकेला एक तो वर्तमान दरो से अधिक सुविधाजनक शर्तों पर उधार पा नहीं सकता, लेकिन यदि किसानों का एक समूह आपसी ऋण चुकाने की असीमित देयता के लिए सम्मिलित रूप से वचन बद्ध हो जाए तो कुछ किया जा सकता है। उन्होंने इस दिशा मे प्रयत्न किये। उन्होने लोगों को समझाया। अन्त मे उन्होंने एक सघ बनाया, जिसमे अधिकतर किसान थे और जो सम्मिलित रूप से अर्थात् सहकारिता के आधार पर वचनबद्ध होने और उधार के लिए अपनी-अपनी साख का निकाय करने के लिए तैयार थे। इसके बाद राईफी सेन ने छोटी-सी निधि एकत्रित की, जो उस पहले साख-सघ का बीजाकुर बनी। वह प्रयोग काफी सफल रहा। उसके द्वारा ब्याज की उचित दरो पर उधार दिया गया, पुराने कर्ज बेबाक किये गए, और उस समय पर उधार चुकाया गया। आज हजारों राईफीसेन समितियाँ देहाती बैंकों, एव बचत तथा उधार सभाओं के रूप मे जर्मन-भाषी ग्रामीणों की सेवाएँ कर रही है।

शुल्ज-देलित्ख ने ठीक इसी तरह का जो काम जर्मन नगरो के श्रमिको के लिए किया उसका सम्मान जर्मन फेडरल रिपब्लिक ने १९५८ मे उनकी स्मृति मे एक डाक टिकट निकाल कर किया।

उन्नीसवी शताब्दी के मध्य काल के बाद के वर्षों मे जर्मनी के आदर्श पर ही इटली मे भी काम हुआ। वहाँ कैथोलिक चर्च ने इसका समर्थन किया। आज इस चर्च के प्रमुख सामाजिक उद्देश्यों मे से एक है दुनिया के सभी देशों मे साख-सघों को बढावा देना।

कई वर्षो तक असीमित देयता की प्रथा का पालन किया गया। इटली के कई भागों मे यह प्रथा आज भी है। लेकिन अनुभव से इसकी अनावश्यकता सिद्ध होती गई और क्रमश. इसका परित्याग किया जाता रहा। इसका स्थान न्यासी सदस्य के अनुमोदन ने ले लिया। इस आन्दोलन के इतालवी प्रवर्तक लुजाती ने इसे 'ईमानदारी का पूँजीकरण,' कहा है।

जैसा कि हम आगे चल कर देखेंगे, सयुक्त राज्य के साख-सघों पर भारत का साख समितियों का अमिट ऋण है। लेकिन अमरीकी साख-सघों का जो रूप हमे आज दिखाई देता है वह हमारे यहाँ कनाडा होता हुआ यूरोप से ही आया है—जर्मनी और इटली के आरम्भिक प्रयत्नों की प्रति छाया के रूप मे। क्यूबाई पत्रकार अलफोंज डेस जार्डिन्स कनाडा के साख-सघो के पिता और महान नेता थे। १९०९ मे न्यू हैम्पशायर के मैंचेस्टर नगर के सेंट मेरी नामक मुहल्ले मे सयुक्त राज्य अमरीका का पहला साख-सघ भी उन्ही ने स्थापित किया था।

अमरीका का साख-सघ सम्बन्धी पहला विधान मेसाचुसेट्स् मे राज्य के बैंक-व्यापार के आयुक्त पीर जय की जाँच-पडताल के बाद पारित हुआ था। इस जाँच-पडताल से न केवल यही बात सामने आई कि सूदखोरों से लड़ने के लिए एक शस्त्र की आवश्यकता है वलिक यह भी पता चल गया कि वह उत्कृष्ट आयुध कौन-सा है। डेस जार्डिन्स इस पड़ताल मे अभि साक्ष्य के लिए कनाडा से आये थे।

बोस्टन के करोडपति व्यापारी एडवर्ड ए० फिलेन ने भी गवाही दी थी। उन्होंने बताया कि अपनी भारत यात्रा मे मैं डब्ल्यू० आर० गौरले से मिला था जिसे ब्रिटिश सरकार ने भारत के गाँवों मे साख समितियाँ बनाने के लिए सेवा-नियुक्त किया था। फिलेन ने गौरले के साथ गाँवों का दौरा भी किया और भारत की अत्यधिक गरीब ग्रामीण जनता की ये समितियाँ जो ठोस सेवा कर रही थी उससे और इस कार्य के पूरे विचार से वे बहुत ही अधिक प्रभावित

हुए थे। उन्होंने ये सब बाते मेसाचुसेट्स् के विधायको को बताई और अपने अत्यधिक उत्साह से सभी को अभिप्रेरित कर दिया। साख-सघो के कानून को पारित कराने मे फिलेन के उत्साह का भी कुछ कम हाथ नही था।

उस दिन से लेकर १९३७ मे अपनी मृत्यु तक फिलेन की सारी सम्पत्ति, लगन और उत्साह सयुक्त राज्य मे साख सघो की उन्नति और विकास मे लगे रहे। हमारे यहाँ इस कार्य की वृद्धि का अधिकाश श्रेय उन्ही के प्रयत्नो को है। १९२१ मे उन्होंने पूरे जो-जान से यह कार्य शुरू किया। उसी वर्ष उन्होने राय एफ० वरगेन ग्रेन की सहायता से साख सघ राष्ट्रीय विस्तार कार्यालय (क्रेडिट यूनियन नेशनल एक्सटेन्शन ब्यूरो) की स्थापना की और वरगेनग्रेन को उसका मन्त्री नियुक्त किया। इसी बीच साख-सघो को कार्यान्वित करनेवाले तीन राज्य कानून और पारित हो गए और १९९ साख-सघो की स्थापना हो गई।

फिलेन के ब्यूरो [illegible] उद्देश्य थे साख-सघो के कार्यान्वितपन के लिए आवश्यक कानून बनवाना, [illegible]नूनो के रूप मे साख-सघो की स्थापना करना; साख-संघो की सख्या मे इतना वृद्धि करना कि उनकी प्रत्येक राज्य मे आत्म निर्भर प्रादेशिक सस्थाएँ और ऐसी सब प्रादेशिक सस्थाओ का एक अखिल देशीय सघ स्थापित किया जा सके। १९३४ मे जब क्रेडिट यूनियन नेशनल एसोसिएशन का विधान बनकर उस पर दस्तखत हो गए तो ये चारों उद्देश्य भी पूरे हुए।

राय एफ० वरगेनग्रेन १९३४ मे क्रेडिट यूनियन नेशनल एसोसिएशन के स्थापना काल से १९४५ तक इसके प्रबन्ध निर्देशक रहे। १९४५ मे उन्होंने त्याग पत्र दे दिया। १९४६ मे उन्हें सेवायुक्त प्रबन्ध निदेशक का सम्मान प्रदान किया गया। उनके बाद साख-सघो के प्रवर्तक नेता और संगठन कर्ता टामस डब्ल्यू० डोहग १९५५ तक इस पद पर काम करते रहे, फिर उनका स्वास्थ्य खराब हो गया और वे अलग हो गए। जब तक १९५७ मे प्रबन्ध-निदेशक के पद पर एच० वान्स आस्टिन का चुनाव नही हो गया तब तक की अन्तरिम अवधि मे टेक्सास के साख-सघो के नेता और क्रेडिट यूनियन नेशनल एसोसिएशन के भूतपूर्व अध्यक्ष एच० बी० येट्म् इस पद पर कार्य करते रहे।

१९३४ से ही साख-संघ के मूल उद्देश्यो की प्रगति की दिशा मे भी बराबर कार्य होता रहा : कांग्रेस और प्रायः सभी राज्य के विधान मण्डलो ने और कनाडा

की प्रादेशिक सरकारों ने साख-संघो के उपयुक्त और समर्थकारी कानून बनाये। राज्य की सभाएँ और राष्ट्रीय संघ (National Association) साख संघों के कार्यक्षेत्र को विस्तृत करने और उनकी कार्य विधियों को अधिक सक्षम और प्रभावशाली बनाने मे सतत सहायता करते हैं। कनाडा और वाशिंगटन के कार्यालय राष्ट्रीय सघ के मैडीसन (विसकोन्सिन) स्थित प्रधान कार्यालय की हर तरह से सहायता करते हैं। १९३४ मे सयुक्त राज्य मे साख सघो की संख्या १०,४५६ थी, जो फेडरल क्रेडिट यूनियन्स के कार्यालय के प्रयत्नो के फल-स्वरूप दूसरे महायुद्ध के आरम्भ काल तक दुगुनी हो गई। जब दूसरा महायुद्ध आरम्भ हुआ तो सदस्यों की सख्या ३५,३२,००६ तक पहुँच चुकी थी और समग्र पूंजी ३२,२५,१५,००० डालर थी।

लेकिन सही अर्थों मे व्यापक विस्तार तो दूसरे महायुद्ध की समाप्ति के बाद ही हुआ। १९५८ तक सारे विश्व मे साख सघो की सख्या २५,०००, उनके सदस्यो की सख्या लगभग १,३०,००,००० और कुल आस्तियाँ ४,७०,००,००,००० डालर तक पहुँच चुकी थी।

इनमे से अधिकाश सयुक्त राज्य अमरीका और कनाडा मे थे। १९५९ की समाप्ति तक केवल अमरीका मे ही साख-सघो की सखाया १९,८००. उनके सदस्यो की संख्या १,१३,००,००० और आस्तियाँ ४,३८,२०,००,००० डालर (मुख्यतः सदस्यो की हिस्सा पूंजी) एव सदस्यों को दिया हुआ कर्ज ३,७०,००,००,००० डालर था। लेकिन साख-सघो मे सारे ही पश्चिमी गोलार्ध और विश्व के दूसरे भी अनेक देशों के लोगो की अभिरुचि बराबर बढती जा रही थी। साख सघो से लाभान्वित होने की इस विश्व व्यापी प्रवृत्ति की संवर्द्धना और सन्तुष्टि के लिए १९५४ मे क्रेडिट यूनियन नेशनल एसोसिएशन ने अपना एक नया विभाग विश्व विस्तार विभाग (World Extension Division) के नाम से खोला।

साख-सघ का सरलतम सिद्धान्त यह है कि एक समान सम्बन्धों और एक समान हितों वाले लोगो का समूह अपनी बचतो और उधार के लिए अपनी साख को अपने ही नियन्त्रण मे रखता और इन दोनों का समूह के पारस्परिक लाभ के लिए उपयोग करता है।

जिसे साख-सघो का 'मूल मन्त्र' कहा जा सके वह कुछ इस प्रकार होगा। किसी स्त्री अथवा पुरुष का आदर-मान इसलिए नही किया जाना चाहिए कि **उसके पास क्या है**, बल्कि इसलिए किया जाना चाहिए कि **वह क्या है**। इसीलिए साख-सघ के सदस्यो को उधार देते समय यह कभी नही देखना चाहिए कि उनके पास जमानत कितनी है, क्योकि तब तो सच मे उन्हे उधार लेने की जरूरत ही नही है बल्कि देखना यही चाहिए कि उन्हे सचमुच उधार लेने की आवश्यकता है, क्योकि उनके पास सिर्फ अपना अच्छा भला नाम है और उनके साथी सदस्य उस अच्छे-भले नाम का आदर करते है। इस सिद्धान्त और इस मूल-मन्त्र ने अनेक स्थानो मे अनेक बार चमत्कारिक काम किया है। और ये आगे अभी और भी चमत्कार करेगे।

नोवा स्कोटिया मे मन्दी के घनघोर दिनो मे सन्त फ्रान्सिस जेवियर विश्वविद्यालय के कुछ स्कॉटिश कैथोलिक पादरियो ने मछुओ को यह सुझाया कि पहले अपना साख-सघ बनाकर उसके बाद वे अपनी निजी विक्रय सहकारी सस्था, लावस्टर 'कारखाने' और अपनी मछलियों के उचित मूल्यार्जन के अन्य साधन कैसे सुलभ कर सकते है। नया और सरल तरीका यह था कि मछुओ ने अपनी मछलियाँ बिचौलियों के हाथ रुलाने वाली कीमतों के बदले बोस्टन और न्यूयार्क के बाजारों मे उचित मूल्यों पर स्वय सीधे बेचना शुरू कर दिया। उनके साख सघों ने उनके लिए अपने ही भडार और अपने ही पण्योपयोगी सयत्रो की सुविधा कर दी जहाँ वे अपनी मछलियों को उचित कीमत के आने तक रोके रख सकते थे।

भारत मे आज सहकारी साख समितियों ने किसानों को सूदखोर महाजनो के चगुल से अपने-आप को छुडाने और उसके कर्ज की नाग फास से अपने गले को मुक्त करने की सामर्थ्य प्रदान की है। जिस देश के लोग सदियों से कर्ज के भी भीषण बोझ तले पिसते रहे हों और जहाँ बाप के बाप का कर्ज बेटे का बेटा भी न चुका सकता हो वहाँ के लिए यह कितनी बडी बात है।

फिजी द्वीप के निवासी यह सीखते जा रहे है कि मुद्रा क्या है, इसका मतलब क्या होता है और यह किस काम आती है। साख-समितियों के निर्माण के लिए उनके यहाँ काफी बडा आन्दोलन है। वे मिल-जुलकर अपना-अपना पैसा बचा रहे हैं। अपने और अपने पड़ोसियों के रुपए के निकाय से कर्ज के लिए आवेदन

करने का अर्थ वे सीख रहे हैं। यथोचित ब्याज पर ऐसे कर्जों को चुकाना और अपने ही चुकाये ब्याज से स्वय अपनी निधि के निकाय का निर्माण करना भी वे सीख रहे हैं। प्राय: आदिम अवस्था से सभ्य जीवन की ओर अपनी प्रगति की प्रारम्भिक स्थितियों मे वे सीख रहे है कि लोगो के एक समुदाय के बीच पारस्परिक सहायता उस समुदाय को अपनी बचतो पर अधिकार बनाये रखने की ही नही अपने आर्थिक कल्याण की भी क्षमता प्रदान करती है। इन द्वीप वासियों को, और दूसरे भी बहुत-से लोगों को इस काम की प्रेरणा दी है और नेतृत्व भी कर रहे हैं। बीसवी सदी के आधुनिक ढग के रोमन कैथोलिक ईसाई मिशनरी जमैका से ठेठ मदरास तक ऐसे अनेक पादरी मिल जाएंगे जो सूदखोरी के खिलाफ और अपने पडोसी भाई का सरक्षक बनने के बाइबिल के उपदेशों को अक्षरश: लोगों के आचरण मे उतार रहे हैं।

लेकिन इसका यह अर्थ नही कि साख-सघो ने केवल अभाव ग्रस्तों और विपत्तिग्रस्तों को ही स्वावलम्बन और सामूहिक सहायता का साधन उपलब्ध किया है। सयुक्त राज्य अमरीका का सबसे बडा साख-सघ डेट्रोइट के शिक्षकों का है। इस साख सघ ने २ करोड डालर, जो इसकी कुल आस्तियों का बहुत ही छोटा-सा भाग है, अपने सदस्यों को सहकारिता के आधार पर रिहायशी कमरो वाली कई सुन्दर इमारतें बनाने के लिए कर्ज दिया है, इमारतें बन जाने पर ये सदस्य स्वय ही उनमे रहेंगे।

मिचिगन के साख-सघ के नेताओं ने एक गृहनिर्माण-और-ऋण सघ की स्थापना की है और उसमे राज्य-अधिकृत कुछ साख-सघो ने भी अपनी अतिरिक्त पूँजी का कुछ अश लगाया है। इस गृह निर्माण और ऋण सघ का उद्देश्य निम्नवित्त परिवारों के लिए ऐसे मकानो के निर्माण मे वित्तीय प्रबन्ध करना है जिनका मूल्य इन परिवारों की सामर्थ्य से अधिक न हो।

न्यूयार्क सिटी के साख-सघो ने अपने सदस्यों के लिए नगर के मध्य भाग मनहट्टन मे एक सहकारी रिहायशी कमरो वाले मकान की निर्माण योजना ही नही प्रायोजित की उसकी पहली नकद किश्त चुकाने के लिए उन्हे कर्ज भी दिया। इस प्रकार सामान्य आय वाले परिवारो को विश्व के सबसे बडे नगर के मध्य भाग मे अपने निजी मकान रहने के लिए मिल सके। लेकिन यह इतना

बड़ा काम केवल इसीलिए सम्भव हो सका कि पहले लोगो ने साख-सघ के पाँच डालर के हिस्से खरीदे और उसके बाद अपनी बचतों का स्वय नियन्त्रण करने की कला सीखी।

न्यूयार्क के इस चमत्कार के प्रणेता का नाम है मिस्टर विलियम रीड, जिन्हें १९५९ मे न्यूयार्क सिटी हाउसिंग एसोसिएशन का अध्यक्ष नियुक्त किया गया।

कोलोरेडो के एक मुहल्ले के कैथोलिक साख सघ को जब यह पता चला कि मेक्सिकोई वशानुक्रम के उनके ६४ सदस्य परिवारों को किराये के झोंपडो से बेदखल किया ही जाने वाला है तो उसने उस जमीन के अधिकार-त्याग का पट्टा (दाखिल खारिज) प्राप्त कर लिया और तब स्वय कर्ज देकर उन परिवारो को उसी जमीन के अलग-अलग टुकडे खरीदवा दिये। उसके बाद उसी जमीन पर अपने छोटे-छोटे आरामदेह मकान बनाने के लिए उन्हे कर्ज भी दे दिया। इस प्रकार जिस जमीन पर पहले सताये हुए किरायेदार अस्त-व्यस्त दशा मे पडे हुए थे वही मकान मालिकों की एक अच्छी-खासी बस्ती बन गई।

सीटल मे जब परिवारो को पुगेट साउण्ड की सामूहिक स्वास्थ्य योजना (Group Health Cooperative of Puget Sound) मे सम्मिलित होने की आवश्यकता पडती है तो सामूहिक स्वास्थ्य साख सघ (Group Health Credit Union) उन्हे सदस्यता शुल्क के सौ डालर चुकाने के लिए कर्ज देता है। इस सहकारी स्वास्थ्य योजना के चार चिकित्सा केन्द्रों और एक अस्पताल से लगभग साठ हजार लोगो को सभी आवश्यक स्वास्थ्य परिचर्या और साधारण कीमतों से आधे दाम पर दवाएँ भी मिलती हैं। यहाँ स्वास्थ्य परिचर्या और चिकित्सा सेवा पर प्रति व्यक्ति जितना खर्च आता है वह औसत व्यक्ति द्वारा आकस्मिक, आ पाती और कभी-कभी जरूरत पड़ने वाली महँगी चिकित्सा से कही कम होता है।

इडियाना, कनसास और दूसरे बहुत से राज्यो के किसानों ने भी अपने कृषि आपूर्ति सहकारियों के सदस्यो मे साख-सघो के सगठन की आवश्यकता को अनुभव किया। इसका कारण यह था कि किसानों के पास साल के कुछ खास मौकों पर जरूरत पड़ने वाले महँगे कृषि यन्त्रों या प्रचुर मात्रा मे लिये

जाने वाले कृषि-सम्भरणों के लिए काफी नकद पैसा नही रहता। सहकारियों द्वारा लेन-देन का काम शुरू करना काफी खर्चीला पड जाता है और फिर उसमे सदस्यता-सम्बन्धी कुछ कठिनाइयाँ भी है। लेकिन साख-सघ तो कारबार ही रुपये के लेन-देन का करते है और इस तरह को खरीदियों के लिए तुरत पैसा दे सकते है। फारम-आपूर्ति सहकारियो वाला हिसाब-किताब की बारीकियों और सदस्यता-सम्बन्धी झमेला भी यहाँ नही है। सहकारी मे लेन-देन का नया खाता खोलने की समस्या को सहकारी काम-काज को एक नये क्षेत्र मे निजी लेन-देन मे विकसित करके आसानी से हल कर लिया गया।

जो कुछ थोडे-से कार्य ऊपर वताये जा चुके है वैसे चमत्कारपूर्ण कार्यों को पूरा कर दिखाने का बहुत से लोगो ने साख-सघो को काफी उपयोगी साधन पाया है। ऐसे लोग साख-सघो को काफी महत्त्व की सहकारी सस्थाएँ मानते है और विश्वास करते है कि वे सामाजिक और आर्थिक उन्नति की तीव्र आवश्यकता को पूरा करने मे बड़ी हद तक सहायक हो सकते है।

सयुक्त राज्य अमरीका मे अधिकांश साख-सघ प्रायः मालिक कम्पनियों द्वारा उदारता से प्रायोजित औद्योगिक और वाणिज्य संस्थाओं के कर्मचारियों के सगठन है। सामान्यतः साख-सघों के सदस्य अपनी इन संस्थाओं को बचत की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन देने वाली, कर्ज चुकाने मे सदस्यो की आर्थिक सहायता करने वाली और जरूरत पडने पर छोटी रकमे उधार देने वाली सस्थाएँ ही समझते है——इससे अधिक कुछ भी नही। इनमे और सहकारिता के दूसरे रूपो मे जरा भी सम्बन्ध नही समझा जाता। इन कर्मचारी साख-सघो के बहुत से नेता तो इनके काम-काज को छोटी रकमे उधार देने आदि की मामूली सुविधाओं से जरा-सा भी आगे ले जाने के पक्ष मे नही है, बल्कि ऐसे प्रयत्नो का बड़ी सक्रियता से विरोध करते है। फिर मालिक कम्पनियो द्वारा उदारता से प्रायोजित होने के कारण इनके सदस्य प्रायः स्वामीभक्त होते है और सामाजिक तथा आर्थिक मामलो एव मतान्तरों मे अधिकतर मालिको का ही पक्ष ग्रहण करते पाये जाते है।

साख-सघ के कार्य क्षेत्र के बारे मे बड़े गहरे मतभेद है। एक ओर तो ऐसे साख-संघ और उनके सदस्य है जो अपने काम के अनुभव को दूरगामी महत्त्व का समझते है। वे साख-संघ को लोगों का सर्वाधिक मौलिक ढग का सहकारी

अथवा पारस्परिक उद्यम मानते है। उनकी ऐसी मान्यता कि साख-सघ और, उसकी आर्थिक शक्ति को आधार बना कर दूसरे ऐसे काम भी अवश्य आरम्भ किये जाने चाहिए जो न केवल सदस्यों अपितु अपने क्षेत्र के पूरे जन-समुदाय को लाभ पहुँचाएँ। साख-संघों को सहकारी लीग आदि व्यापक केन्द्रीय सगठनों से सम्बद्ध किये जाने का वे बडे उत्साह से समर्थन करते है, और अपने अनुभव तथा साधनों से दूसरे प्रकार की सहकारी सस्थाओ के उन्नयन और विकास मे सहायता पहुँचाने को सदैव तत्पर रहते है।

दूसरी ओर कम्पनी कर्मचारियो के साख सघ है। इनका दृष्टिकोण बड़ा ही सकुचित और अनुदार है। ये चाहते हैं कि साख सघ केवल साख सघो का हो और जैसी कि उनकी अपनी समझ है सिर्फ लेन-देन का ही काम करे—उससे अधिक कुछ भी न करे। वे यह कदापि नही चाहते कि साख-सघ बैंको और अन्य महाजनी सस्थाओ के काम से होड़ करे और न यही चाहते है कि ये सस्थाएँ साख सघ के कार्य क्षेत्र मे किसी प्रकार का हस्तक्षेप करे। और इनका यह विश्वास भी है कि यदि साख-सघो का आन्दोलन उनकी नीति पर चले तो बडे-बडे आर्थिक हितों की ओर से साख-सघो पर किये जाने वाले प्रहार कभी होगे ही नही।

लेकिन उनकी यह धारणा भ्रान्त है। साख सघो पर जो प्रहार—और य सर्वथा अनुचित है—किये जाते है उनका सिर्फ एक ही कारण है।

और वह कारण है साख-सघो का बडी तेजी से बढते जाना।

साख सघो के आन्दोलन मे जितने भी गुट है वे सभी और समस्त विचार-शील अमरीकी भी इस बात से पूर्णतः सहमत है कि हमारी अमरीकी अर्थ-व्यवस्था की वर्तमान स्थिति मे साख सघो का तेजी से बढते जाना सभी प्रकार से वाछनीय है।

१९५० मे उपभोक्ता ऋण का परिमाण १८,००,००,००,००० डालर था। १९५९ के आरम्भ मे वह ४७,९०,००,००,००० डालर हुआ और उसी वर्ष के अन्त तक ५२,००,००,००,००० डालर हो गया। समस्त उपभोक्ता आय का १५ प्रतिशत अशाश ऋण की अदायगी मे अधिबद्ध था; और यो निम्न वित्त परिवारो की आय का ३० से ४० प्रतिशत 'बन्धक' हो गया था। इसके अतिरिक्त यह भी स्पष्ट दिखाई दे रहा था कि यदि उपभोक्ता ऋण मे वृद्धि न होती चली

गई तो स्वचलित उद्योग माल-असबाव का जो ढेर लगाने जा रहे थे उसकी खपत का प्रभावी बाजार नही रह जाएगा।

ऋण का फैलाव किसी जगह पर पहुँच कर खतरा बन जाता है। वह खतरे का बिन्दु ठीक किस जगह पर है यह कुछ तो ब्याज की दर पर और कुछ अर्थ-व्यवस्था की कुल मिलाकर जो स्थिति होती है उस पर निर्भर करता है। ब्याज की दरें जितनी ही तेज होंगी हम खतरे के बिन्दु के निकट ऐसी जगह पहुँच जाएँगे जहाँ लोगों के लिए एक साथ दोनों काम—अपना कर्ज चुकाना और माल तथा सेवाओं की सामान्य माँग का निर्वाह करते जाना असम्भव हो जाएगा। और ऋण का परिमाण जितना ही अधिक होगा आर्थिक क्रियाशीलता मे जरा-सी भी मन्दी, बेकारी मे थोडी-सी भी वृद्धि और इन दोनो के परिणाम स्वरूप परिवारों की कर्ज चुकाने की क्षमता मे जरा-सी भी कमी बहुत ही भयंकर रूप धारण कर लेगी।

आज के उपभोक्ता ऋण का इतना अधिक परिमाण बैंकों या अन्य महाजनी संस्थाओं द्वारा मुद्रा या उधार की निर्मिति का ही कुपरिणाम है। जनता को उधार के जितने अधिक 'अवसर' या 'सुविधाएँ' दी जाती हैं वे सभी ब्याज की भारी-भरकम दरों या 'व्यवस्था' खर्चों के अत्यधिक बोझ से लदी हुई होती हैं। १९६० में 'वाल स्ट्रीट जनरल' ने बिलकुल ठीक ही बताया था कि मोटर विक्रेताओं ने नई मोटरों की बिक्री से जो औसत ७० डालर मुनाफा कमाया उसमें मोटर की असली बिक्री का मुनाफा तो सिर्फ २७.०० डालर है और शेष ४३.०० डालर व्यवस्था और वित्तीय खर्चों के नाम पर वसूला गया है। उसी समाचार पत्र ने आगे यह भी बताया कि फरनीचर भण्डारों के कुल मुनाफों का ५७ प्रतिशत उधार माल देने के खर्चों की अर्थात् 'उधारी की' कमाई है।

यदि हमारी अर्थ व्यवस्था मे उपभोक्ता ऋण का बहुत बडे परिमाण में रहना आवश्यक ही हो तो उसके लिए दो बाते अवश्य की जानी चाहिए : एक तो यह ऋण फूलने-फैलाने वाला अर्थात् स्फीतीकारी ऋण न हो और दूसरे ब्याज की दरें बिलकुल उचित हों। साख संघ ठीक यही काम करते है और इसीलिए वे हमारी आज की अर्थ व्यवस्थाये इतने महत्त्व के सृजनशील घटक हैं। व्यापारी बैंकों या अधिकांश महाजनी संस्थाओं की तरह साख-संघ उधार

देने के लिए न तो नये रुपये का निर्माण करते हैं और न प्रत्यय जमाओं का ही। वे तो सिर्फ उस रुपये को उधार देते हैं जिसकी उनके सदस्य पहले से बचत कर के रख लेते हैं। और अदत्त अवशेष पर साख संघों द्वारा लिया जाने वाला एक प्रतिशत मासिक ब्याज उन दरों से निश्चय ही बहुत कम है जो अकसर उपभोक्ता-ऋणदाताओं से वसूला जाता है।

इसके अतिरिक्त साख संघ आर्थिक परिस्थितियों की विषमता और 'चलन की तंगी' के कारण भी कभी अपने ब्याज की दरों में बढोतरी नही करते। १९५९ मे जब सारे पूँजी बाजार मे ब्याज की दरें आसमान छू रही थी तब अकेले साख-संघ ही थे जिन्होंने अपने ब्याज की दरों मे कोई वृद्धि नही की। क्यों नही की ?

केवल इसलिए कि उन्हें जरूरत नही थी और वे चाहते भी नही थे। साख-संघ **ब्याज देने वाले** लोगों को संस्थाएँ हैं **ब्याज वसूलने वालों** की नही। उनका उद्देश्य सदस्यों की पारस्परिक सहायता है, ब्याज वसूल कर मुनाफा कमाना नही। साख संघों की सारी कमाई उनके सदस्यों की सम्पत्ति है जो उन्हें उनके हिस्सों के लाभांश के रूप में अथवा उनके द्वारा चुकाये ब्याज के एक अंश की संरक्षण-धनवापसी के रूप मे वापिस कर दी जाती है।

सारा अन्तर पारस्परिक सहायता के उद्देश्य के ही कारण है।

१९५९ मे मिचिगन राज्य के साख संघों ने अपने उधार लेने वालों को ३०,००,००० डालर संरक्षण-धन वापसी की। और सारे देश के १९,००० साख-संघों मे से २,७३७ ने भी ऐसी ही संरक्षण-धनवापसियाँ की। ऐसा करने वालों की यह संख्या १९५७ से दुगुनी है।

साख-संघ किसी भी समाज के लिए अत्यन्त उपयोगी और निर्माणकारी गतिविधि है। लेकिन इनके पूरी तरह क्रियाशील और प्रभावशाली होने के मार्ग में कुछ स्वाभाविक और अनिवार्य बाधाएँ भी हैं। एक तो यह स्वभाव सिद्ध बात है कि लोग अपनी सारी या अधिकांश बचतें कभी भी साख-संघों मे जमा नही कराएँगे। दूसरे आधुनिक उद्योगों को, जिनमे सहकारी उद्योग भी सम्मिलित हैं, आज जिस बड़े पैमाने के वित्तीय प्रबन्ध की आवश्यकता है, वह साख संघों के बूते की बात नही।

संयुक्त राज्य अमरीका के समस्त साख-सघों की कुल आस्तियाँ न्यूयार्क या कैलीफोर्निया की किसी भी एक विशालतम बैंक की कुल आस्तियों का आधा भी मुश्किल से हो पाएँगी। और जहाँ तक निजी बचतों का प्रश्न है उनका तो ३ प्रतिशत से भी कम साख सघो मे जमा होगा। हाँ, बचतों का यह अनुपात स्थिर नही है, निरन्तर बढ़ता जा रहा है।

यह बड़े सौभाग्य की बात है कि वित्तीय क्षेत्र मे जनता अकेला साख सघो का ही आयुध चलाना नही जानती, उसने कुछ और भी सीख रखा है।

कृषि मे लम्बी मन्दी का एक कारण यह भी था कि किसानों को ब्याज की बहुत ऊँची दरे, अनचाहे भी, चुकानी पड़ती थीं। वह मन्दी १९२० मे, फेडरल रिजर्व सिस्टम द्वारा जान बूझकर की गई अवस्फिती के कारण, शुरू हुई थी और दूसरे महायुद्ध के आरम्भ होने तक बनी रही। १९२० के बाद को दशाब्दी मे किसानों को १०, १२, १६ और इससे भी अधिक प्रतिशत ब्याज की दरों पर कर्ज देना आम बात थी। कर्ज बैंके देती थी और बे अपने स्टाकधारियों के लाभ के लिए व्यवसाय कर रही थी इसलिए इतनी ऊँची दरों के समर्थन मे उनके पास दलीलें भी थीं।

उनकी दलीले यों तो बड़ी सीधी-सादी पर वास्तव मे बड़ी भयकर थी।

सक्षेप मे उनका तर्क इस प्रकार था : किसान की हालत जितनी ही गिरी हुई और खेती की आर्थिक हालत जितनी ही बिगड़ी हुई होगी किसानों को रुपया उधार देने मे उतनी ही अधिक जोखिम होगी; इसलिए ब्याज की दरे जोखिम के हिसाब से तय की जानी चाहिए।

लेकिन सबसे बड़ी कठिनाई तो यह थी कि ब्याज की ऊँची दरे उनके सारे उद्देश्य को ही चौपट कर देती थी। क्योंकि ब्याज की दरे जितनी ही ऊँची होगी कर्ज को चुका पाना उतना ही कठिन हो जाएगा और खासकर उस समय तो और भी कठिन जब रुपए का मूल्य गिर रहा हो। अवस्फिती के उन दस वर्षों मे किसानों की पैदावार के दाम बुरी तरह गिरते चले गए। यदि किसी किसान ने जब गेहूँ के भाव एक डालर प्रति बुशल थे, उस समय एक हजार डालर कर्ज लिये और बाद मे गेहूँ का दाम प्रति बुशल पचास सेंट गिर गया तो

उसपर कर्ज का बोझ एकदम दुगुना हो गया। अब उस किसान को दो हजार बुशल गेहूँ पैदा करके हजार डालर का कर्ज चुकाना होगा, जो रकम उधार लेते समय केवल हजार बुशल के बराबर थी।

१९३० के बाद की दशाब्दी में प्रायः ऐसा होता था कि जब ऋणदाता ब्याज न चुका पानेवाले असामी के खेत की कुर्की-निलामी करवाता तो किसान अपनी संगठित काररवाई से उसे विफल कर देते थे। निलामी की जगह पर बहुत बड़ी संख्या में किसान जमा हो जाते और नाम-मात्र की बोली से किसी को भी आगे नहीं बढ़ने दिया जाता था। बिक्री खतम हो जाने पर खेत उसके असली मालिक को उसी समय फिर नाममात्र के डालरों में बेच दिया जाता था।

इस तरह करते-करते किसानों को एक विचार सूझा। यह ठीक वैसा ही विचार था जिसने ग्रामीण विद्युत सहकारियों, आवास सहकारियों और पारस्परिक सहायता के दूसरे सभी प्रकार के उद्यमों को जन्म दिया था, जिनके बारे में यह पुस्तक है।

विचार यह था कि लाभ के लिए उधार का उपाय कई स्थितियों में चल नहीं पाता। वास्तव मे तो यह उलटा चलता था। ब्याज की दरों के जितना ही कम होने की जरूरत होती लाभ के लिए उधार पद्धति से वे और भी ऊँची चढ़ जाती थीं। ऐसे में किसानों को उधार की आवश्यकता के लिए साख संस्थाओं की जरूरत थी। उन्हें जरूरत किसी ऐसे तरीके की थी जिससे कर्ज के और सो भी कम-से-कम दरों पर—सख्त जरूरतमन्द किसान उधार की अपनी आवश्यकता और अपने अच्छे-भले नामों का (साख) निकाय करके ऐसी शर्तों पर कर्ज पा सके कि फिर उसे आसानी से चुकाया भी जा सके।

परिणाम स्वरूप कृषि साख प्रणाली (Farm Credit System) अस्तित्व में आई। इसने न्यू डील (New Deal)[1] के १९३२ में जन्म लेने की प्रतीक्षा भी नहीं की और शुरू कर दी गई, यद्यपि उसके बाद भी कई आवश्यक उदार संशोधन पारित किये गए। कृषि साख प्रणाली के तीनों कार्य सरकारी

---

१. संयुक्त राज्य का किसान सहायक कानून, जो उन्हें मन्दी और ऊँचे मूल्यों से राहत देने के लिए बनाया गया था।—अनु०।

पूँजी के साधन से ही आरम्भ किये गए। अब तो सरकार की अधिकाश पूँजी लौटा दी गई है और उसका स्थान किसानो की पूँजी ने ले लिया है; लेकिन उस समय भी सरकारी पूँजी ही वह एकमात्र बुनियाद नही थी जिस पर इस प्रणाली के तीनो भागो की तीन इमारते—भूमि बैक सस्थाएँ, उत्पादन साख सस्थाएँ और सहकारियो की बैके (Banks for Cooperatives) निर्मित की जा सकी।

मूल तत्त्व था पारस्परिक सहायता का विचार। जिस काम को अकेला एक आदमी अपने लिए नही कर सकता उसे लोगो का एक समूह अपनी-अपनी आवश्यकताओ, अपनी-अपनी जोखिमो और उधार के लिए अपनी-अपनी साख का निकाय करके बखूबी कर सकता था। समाज मे सभी की—यहाँ तक कि मन्दी की मार से अर्द्ध मृत किसान की भी थोडी-बहुत साख तो होती ही है। वह साख बनती है या तो उसकी सम्पत्ति से, या उसकी योग्यता से, या काम और उत्पादन करने की उसकी तत्परता से या अपने वायदों और अपनी जिम्मेवारियो को पूरा करने की उसकी ईमानदारी और उसके अच्छे-भले नाम से।

लेकिन अकेला कोई भी आदमी—यदि उसकी अपनी बैक नही है तो अपने नाम के चेक छाप कर उनसे अपने देयको की अदायगियाँ नही कर सकता। इस तरह की वैयक्तिक मुद्रीकृत साख को न तो बाजार मे कोई मानता है और न वह चलन ही पा सकती है। लेकिन जब लोगो का एक समूह अपनी साख को सगठित करने के लिए तैयार हो जाता है तो वह ठीक इसी काम को कर सकता है।

उदाहरण के लिए मेसन सिटी (इओवा) की उत्पादन-साख संस्था (Mason City Production Credit Association) की १९३४ मे जब उन्तीस किसानो ने स्थापना की तो ठीक यही बात हुई। यह सच है कि उनके पास काम शुरू करने के लिए राष्ट्रीय साख का उनका अपना हिस्सा था। यह भी सच है कि कुछ सरकारी पूँजी भी उन्हे काम चलाने के लिए मिल गई थी। लेकिन इन दोनों मे भी अधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है यहाँ और देश के दूसरे हिस्सो मे भी कुछ किसानो की ऋण की अपनी आवश्यकताओ को संगठित करने, उधार पाने के अपने श्रोतो का निकाय करने और आपस मे उधार

देने एव सरकारी पूँजी को लौटाने की जोखिमों मे सहभागी बनने की तत्परता। पारस्परिक सहायता अथवा सहकारी साख सस्था की, या जैसा कि हम इसके लिए ऊपर कह आये है उधार पाने की आवश्यकता के लिए साख सस्था की सफलता के आवश्यक मूल तत्त्व यही है।

इस बात को अवश्य स्वीकार करना पड़ेगा कि यदि इस सस्था का प्रबन्ध कुशलता से न किया जाता तो किसान १,४५,००० डालर की सरकारी पूँजी कभी न लौटा पाते और न २,००,००० डालर की अधिशेष पूँजी ही बना पाते। सस्था के कृषक संचालक मण्डल ने इस काम के लिए कुशल प्रबन्धको की सेवा प्राप्त करने की समझदारी अवश्य दिखाई।

और यदि उत्पादन-साख संस्था के सदस्यो ने अपने स्वामीत्व को ठीक-ठीक न समझा होता और संस्था की सेवाओ का ठीक-ठीक उपयोग न किया होता तब भी सफलता नही मिल पाती। जहाँ तक किसान सदस्यो के उत्पादन-साख सहकारी संस्था के स्वामीत्व को ठीक से समझने की बात है वह तो इसी से सिद्ध हो जाता है कि उन्होंने इसके हिस्सो (स्टाक) मे अपनी लगभग १,७५,००० डालर पूँजी का निवेश कर दिया। बिना समझे भला कौन कही पूँजी लगाता है। फिर स्वामीत्व का अर्थ समझने की बात इससे भी सिद्ध हो जाती है कि सस्था के जीवन के प्रारम्भिक वर्षो मे सस्था के किसानों ने सस्था के ही किसानों को ३,००,००,००० डालर उधार दिये और कर्ज का आखरी सेंट तक ब्याज सहित चुका दिया गया। लेकिन वह ब्याज स्वयं उन्ही को लौटा दिया गया। ऋणदाता महाजन को ब्याज दिया जाता है मुनाफे के लिए, यहाँ जो ब्याज दिया गया उससे जमा प्रत्ययों और बचतों के तथा पहले से जिन लोगो की साख थी, अर्थात् उधार लेने वालो के, जो इस सस्था के स्वामी भी है, साधन-स्रोतों के निकाय मे वृद्धि हुई।

इस प्रकार अपने ही कर्ज से लोगों के जमा प्रत्यय और उधार पाने की साख निर्मित होती है; किसी भी महाजनी सस्था के सघटन मे जब सहकारिता के सिद्धान्त को और पारस्परिक सहायता को लागू किया जाता है तो बिलकुल यही होता है। इसी सिद्धान्त और इसी विचार पर सारी कृषि साख प्रणाली का निर्माण और प्रचलन हुआ है।

आज कृषि साख प्रशासन (Farm Credit Association) के निरीक्षण में सहकारी कृषि साख प्रणाली किसानों और उनकी सहकारी संस्थाओं को सन्तुलित उधार-सेवा प्रदान कर रही है। इस प्रणाली की संस्थाओं से किसान खेत के स्वामीत्व के लिए, फसलों और पशुधन की पैदावार के लिए, फारम उपयोगी वस्तुओं की खरीद के लिए और अपनी पैदावार की बिक्री-व्यवस्था के लिए धन प्राप्त कर सकते हैं।

इस प्रणाली की निम्नलिखित विभिन्न सहकारी संस्थाएँ है : लगभग १००० सघीय (केन्द्रीय) भूमि बैंक समितियाँ और १२ सघीय भूमि बैंक, जो किसानों के खेतों को बन्धक रख कर लम्बी अवधि का कर्ज देती है; ४७९ उत्पादन साख समितियाँ और १२ संघीय मध्यवर्ती साख बैंकें (Federal Intermediate Credit Banks) जो खेती के काम-काज के लिए छोटी और मध्यम अवधि के कर्ज देता हैं; और १३ सहकारी संस्थाओं की बैंकें (Banks for Cooperatives) जिनसे किसानों की विक्रय और क्रय एवं उपभोक्ता सेवा सहकारी सस्थाएँ लम्बी और छोटी अवधि के कर्जे प्राप्त कर सकती हैं।

इनमे से कोई भी बैंक जमा रुपये से कारबार करने वाली बैंक नहीं है। लेकिन सहकारी कृषि साख प्रणाली के माध्यम से किसान वडे पूंजी केन्द्रों के निवेश बाजारों से निगमों द्वारा दिये जाने वाले ब्याज की दरों पर ही आवश्यक धन राशि प्राप्त कर सकते है।

सघीय भूमि बैंकें फारमों के मूल बन्धकों वाले बांड वेचती है, जिनके भुगतान का बारहों बैंकों का सम्मिलित दायित्व रहता है। संघीय मध्यवर्ती साख बैंके और सहकारी संस्थाओं की बैंके बाण्ड और डिबेचर दोनों ही बेचती हैं। इनके भुगतान का भी अपने-अपने समूह की समस्त बैंकों का सम्मिलित दायित्व है। लेकिन इन बांडों और डिबेचरों की सरकार की ओर से कोई गारंटी नहीं की जाती।

३० जून १९६० को समाप्त होने वाले वर्ष में कृषि साख प्रणाली की बैंकों और सभा-समितियों ने ४ अरब डालर की रकम उधार दी। उस समय भूमि बैंकों के ३.७६,००० और उत्पादन साख संस्था के २,९२,००० उरवार खातों मे और २,७५४ कृषि सहकारी संस्थाओं के नाम प्रणाली का ४ अरब ८० करोड़

डालर का खड़ा ऋण था। उसी तिथि को कृषि साख बकों और सभा-समितियों मे किसानों एव कृषि सहकारी सस्थाओं के ३६ करोड़ ९० लाख डालर के पूँजीगत हिस्से थे।

सुविधा की दृष्टि से सारे सयुक्त राज्य को बारह क्षेत्रो मे बॉट दिया गया है और हर क्षेत्र म एक भूमि बैंक, एक मध्यवर्ती साख बैंक और एक सहकारी सस्थाओ की बक है। सहकारी सस्थाओं की तेरहवीं बैंक सहकारी सस्थाओ की केन्द्रीय बक हे और उसका कार्यालय वाशिगटन डो० सी० मे है।

स्थानीय साख सहकारी समितियाँ, सघीय भूमि बैंक समितियाँ और उत्पादन साख समितियाँ हरएक क्षेत्र म स्थान-स्थान पर इस तरह सगठित की गई है कि सारे किसान उनकी सेवाओ से लाभ उठा सक। कहना नही होगा कि हर उधार लेने वाला इन सहकारी सस्थाओं का स्वामी होता है।

स्थानीय समितिया के सदस्य अपन मे से एक सचालक मण्डल का चुनाव करते है। सचालक मण्डल समिति की नीतियाँ निर्धारित करता है और दैनन्दिन काम चलान के लिए एक वैतनिक सचिव जो कोषाध्यक्ष भी होता है की नियुक्ति करता है।

सघीय भूमि बैंक से किसान को उस सघीय भूमि समिति के मार्फत जिसमे उसन अपने कर्ज के ५ प्रतिशत के बराबर पूँजागत हिस्से खरीदे होते है, सीधे ही कर्ज दिया जाता है।

उत्पादन साख समितियाँ अपने सदस्यो को कर्ज देती है और सदस्यों के तमस्सुको का सघीय मध्यवर्ती साख बेंक मे हुण्डावन करके इसके लिए निधि प्राप्त करती है। उत्पादन साख समिति के सदस्यों का भी उसमे अपने कर्ज के ५ प्रतिशत के बराबर पूँजागत हिस्सा होना चाहिए।

सघीय भूमि बैंको और उत्पादन साख समितियो से मिलने वाला कर्ज किसी भी प्रकार के कृषि-कार्य मे खर्च किया जा सकता है।

सघीय भूमि बैंकों से उधार लेने वाले अपने कर्ज की अदायगी वार्षिक या अर्द्ध वार्षिक ब्याज सहित ऐसी किश्तो मे करते है कि सारा कर्ज कम-से-कम पाँच और ज्यादा-से-ज्यादा चालीस वर्षो मे बेबाक किया जा सके।

उत्पादक साख समितियाँ का अधिकाश कर्ज, जो खेती के चालू कामों को

पूरा करने के लिए खर्च किया जाता है, साल-भर मे अदा हो जाना चाहिए। लेकिन यदि कोई किसान कर्ज की इस रकम का कोई हिस्सा मशीन या पशु आदि खरीदने की पूंजीगत मद मे खर्च कर देता है तो जाहिर है कि साल-भर मे पूरा खाता उठाया नहीं जा सकता; ऐसी हालत मे जमा-नामे का हिसाब करके बाकी खाता नया कर दिया जाता है। इस तरह की खरीदो के लिए उत्पादक साख समितियाँ पाँच वर्ष की लम्बी अवधि का कर्ज भी देती है।

उत्पादन साख प्रणाली की कार्य पद्धति की खास विशेषता यह है कि उसकी ऋण समिति मे दो किसान निदेशक और संस्था का सचिव-सह-कोषाध्यक्ष भी रहते है। निदेशकों को स्थानीय परिस्थितियो और अपने क्षेत्र के कृषि कार्यो की व्यावहारिक जानकारी होती है।

कृषि सहकारी संस्थाएँ अपने क्षेत्र के सहकारियो के बैंक से सीधे कर्ज पाती है। इस काम के लिए बैंको के अपने कर्मचारी होते है, जिनसे सम्बद्ध सहकारी संस्थाओ के बारे मे सही और पूरी जानकारी की अपेक्षा की जाती है। ये कर्मचारी व्यापार-व्यवहार के बारे मे ही ठीक सलाह देने की योग्यता नही रखते संस्थाओ के नव-निर्माण और आधुनिकीकरण के बारे मे भी सुझाव दे सकते है।

कई वर्ष तक ऐसा कानूनी प्रतिबन्ध रहा जिसके कारण सहकारी संस्थाओ की बैंको से उधार लेने वाली कृषि सहकारी संस्थाएँ कर्ज बेबाक हो जाने के बाद उन बैंको मे अपना पूंजीगत हिस्सा रख नही सकती थी। कर्ज की पूरी अदायगी पर बैंक ऋण चुकाने वाली संस्थाओ के हिस्सो का विमोचन कर देती थी। इससे न तो सरकारी पूँजी लौट पा रही थी और न बैंक उधार लेने वालो के स्वामीत्व वाली सच्ची सहकारी संस्थाएँ ही बन पा रही थी।

इसलिए १९५५ मे कांग्रेस ने एक विधेयक पारित किया जिससे सहकारी संस्थाओं की बैंको मे सहकारी संस्थाओ का पूँजी निवेश सरकारी पूँजी का स्थान ग्रहण कर सका। इस विधेयक की मुख्य गवाही ७वी कृषि साख क्षेत्रीय सभा के निदेशक आर्थर जे० स्माबी ने दी थी। स्माबी महोदय सहकारी लीग के भी निदेशक है और उक्त गवाही मे उन्होने लीग का प्रतिनिधित्व भी किया था। अपने अभिसाक्ष्य को समाप्त करते हुए स्माबी ने कहा था: "कृषि साख मण्डल (Farm Credit Board) ने विधेयक की जिस रूप मे सिफारिश

की है उसी मूल रूप मे इसे पारित करना अमरीकी कृषि को आत्म निर्भरता की ओर बढाने वाला बड़ा ही महत्त्वपूर्ण कदम होगा।"

१९५५ के अधिनियम के बडे शुभ परिणाम रहे। उधार लेने वाली सहकारी सस्थाओं के पूंजीगत हिस्से अब बैंकों मे बने रहते है और बैंके सरकारी पूंजी की इतनी ही रकम लौटा देती है। उधार लेने वाली सहकारी सस्थाओं की संरक्षण धन वापसियाँ भी अब बैंको मे जमा रहती हैं और उनका उपयोग भी सरकारी पूंजी को चुकाने मे किया जाता है। इतना ही नही, ब्याज की अदायगियों की भी १५ से २० प्रतिशत रकम से सहकारी पूंजी चुकाई जाती है।

१९५५ मे उक्त विधेयक पारित होते समय यह परिकल्पना की गई थी कि सारी सरकारी पूंजी चुकाने और सहकारी संस्थाओं की बैंकों को पूरी तरह सहकारी स्वामीत्व कृत संगठन बनाने में कोई तेरह वर्ष का समय लग जाएगा। १९६० के आर्थिक वर्ष की समाप्ति तक ३,२०,००,००० डालर सरकारी पूंजी चुका दी गई है और इतनी ही रकम का सहकारी संस्थाओं का पूंजी निवेश हो चुका है। लेकिन उस समय तक भी ११,८०,००,००० डालर के हिस्से सरकार के पास थे। जिस गति से सरकारी पूंजी लौटाई जा रही है उसे देखते हुए आशा की जा सकती है कि सारी सरकारी पूंजी तेरह वर्ष की अवधि से बहुत पहले ही चुका दी जाएगी।

संघीय भूमि बैंकों और उत्पादन साख सभाओं का मामला पहले से ही इसलिए अच्छा था कि उनके विधान मे आरम्भ से ही सदस्यों के पूंजी निवेश को अपने यहाँ रोक रखने और सरकार की पूंजी को लौटाने का प्रावधान था। बारहों संघीय भूमि बैंकों मे तो १९४७ से ही कोई सरकारी पूंजी नही रही, सब-की-सब उसके पहले ही लौटा दी गई। अब तो उनकी सारी पूंजी सदस्यों की पूंजी है। स्थानीय संघीय भूमि बैंक समितियों की तो सारी पूंजी आरम्भ से ही किसान-सदस्यों के हिस्सों की पूंजी रही है।

जून १९५९ तक ४९५ उत्पादन साख समितियों मे से ४५४ पर पूरी तरह सदस्यों का स्वामीत्व स्थापित हो चुका था। उधार लेने वाले किसानों की पूंजी इन ४५४ उत्पादन साख समितियों की सारी सरकारी पूंजीका स्थान ले चुकी थी इसके अतिरिक्त शेष ४१ समितियों में सदस्यों की १४,५६,००,०००

डालर पूंजी के मुकाबले केवल ३९,००,००० डालर सरकारी पूंजी शेष थी।

अब तो थोड़े ही समय की बात है जब कि कृषि साख प्रणाली का सारा पूंजीगत निवेश उसके सदस्यों और केवल सदस्यों का ही होगा। और इस चमत्कार के चरितार्थ होने की सरलतम प्रक्रिया होगी किसानों का अपनी साख पर अधिकार, किसानों द्वारा अपनी साख का मुद्रीकरण, किसानो का अपनी ही साख को उधार लेना और स्वयं अपने को ब्याज चुकाना। यह सभी कुछ सहकारी साख की सकलपना मे अन्तर्निहित है। वास्तव मे सहकारी साख है भी इसी का नाम : अपने ही पैसे और अपनी ही साख का अपनी ही आवश्यकताओं के लिए जनता द्वारा उपयोग।

यहाँ सहकारी सस्थाओं की बैंकों के भविष्य के सम्बन्ध में दो शब्द कह देना अप्रासंगिक नही होगा। अभी ये बैंके ऐसी ही सहकारी संस्थाओं को उधार दे सकती हैं जिनमे मतदान का ९० प्रतिशत अधिकार खेती करने वालों यानी पक्के-पूरे किसानों के हाथ में हो। लेकिन पूरी आबादी के मुकाबले किसानों की संख्या निरन्तर कम होती जा रही है और कुछ समय खेती और बाकी समय दूसरा काम करने वाले आंशिक किसानों की संख्या मे वृद्धि होती जाती है। ग्रामीण और उपनगरीय परिवार एक-दूसरे के समीप और समीपतर आते जा रहे हैं। कृषि-सम्भरण-सहकारी संस्थाओं के व्यापार के लिए ऐसे परिवारों के जो पक्के-पूरे किसान नही हैं, अधिकाधिक सरक्षण को प्राप्त करते जाना अपरिहार्य होता जा रहा है। इसलिए जैसे-जैसे समय बीतता जाएगा सहकारी सस्थाओं की बैकों के कार्य विधि-सम्बन्धी वर्तमान नियमों को अधिकाधिक उदार करते जाना होगा। १९६१ मे कृषि-साख-मण्डल ने एक सुझाव का समर्थन किया था जिसके अनुसार सहकारी संस्थाओं के लिए सहकारी सस्थाओं की बैकों से कर्ज पाने की शर्त मे 'पक्के-पूरे किसानों के ९० प्रतिशत नियन्त्रण' के स्थान पर ७५ प्रतिशत कर दिया जाना चाहिए।

प्रत्येक सहकारी व्यवसाय अपनी मूल पूंजी के लिए अपने सदस्यों के पूंजी-निवेश पर निर्भर करता है। यह भी एक ढंग है जिसके द्वारा लोग अपने पैसे पर स्वयं अधिकार रख सकते हैं और अपने लाभ के लिए उसका उपयोग कर सकते हैं।

सदस्यो के पूँजी-निवेश के मुख्य तीन ढग है। सबसे पहले तो प्रत्येक सदस्य को सस्था के सादे पूँजीगत हिस्सो मे से अपनी सदस्यता का कम-से-कम एक हिस्सा अवश्य ही खरीदना चाहिए। कई सदस्य ज्यादा हिस्से भी ले सकते है, लेकिन ज्यादा हिस्से लेने से मतदान की क्षमता मे किसी प्रकार की वृद्धि नही होती, क्योकि सहकारी सस्थाओ मे एक व्यक्ति केवल एक ही मत दे सकता है, हिस्से उसके पास कितने ही क्यो न हो। सहकारी सस्था के सादे हिस्सो मे कोई भी व्यक्ति तेजी-मन्दी के विचार से पूँजी नही लगाता, क्योकि शेयर बाजार मे इन हिस्सो का सट्टा नही होता और हिस्सो की कीमते कभी बढ़ती नही, सदा एक-सी बनी रहती है। इसलिए सिवाय उस व्यक्ति के जिसे सहकारी सस्था की सेवाओ या माल की जरूरत है दूसरा कोई भी व्यक्ति सस्था के सादे हिस्से क्यो लेगा और क्यो उसे लेना चाहिए। सहकारी सस्थाओ के हिस्सो का 'बाजार मूल्य' निर्धारित कर पाना जो इतना कठिन है उसका कारण भी यही है कि 'बाजार' सहकारी की परिभाषा के अनुसार, उसके ग्राहको और सरक्षको तक ही सीमित रहता है।

सदस्यो द्वारा सहकारी सस्था मे पूँजी लगाने का दूसरा ढग है सामान्य हिस्सो के अतिरिक्त दूसरी प्रतिभूतियाँ जैसे कि डिवेन्चर, अधिमानित (प्रिफर्ड) हिस्से या प्रमाणित ऋणपत्र आदि खरीदना। ये सभी सव्याज प्रतिभूतियाँ है और सहकारी सस्था के सदस्यो के अतिरिक्त दूसरे निवेश कर्ताओ, व्यक्ति और सस्थाएँ दोनो—के लिए भी इनमे पूँजी रोकना लाभदाई होता है। जब सदस्य इन प्रतिभूतियो मे पैसा लगाते है तो वे अपनी पूँजी का सीधे अपने लाभ के लिए उपयोग करते है। और सस्था के ग्राहक एव सरक्षक के रूप मे अपने पूँजी निवेश पर अपने लाभार्जन को भी स्वय ही सुनिश्चित करते है।

सदस्यो द्वारा सहकारी सस्थाओ मे पूँजी लगाने का तीसरा ढग सहकारी व्यवसायो का अपना ही विशिष्ट ढग है। यह ढग है सरक्षण-धन वापसियो के निवेश का यह तो पहले भी बतलाया जा चुका है कि सहकारी सस्थाओ का सारा शुद्ध उपार्जन उनके सरक्षकों और सदस्यो की सम्पत्ति है, सस्थाओं की नही। ये उपार्जन सहकारी संस्थाओं की देयताएँ है, आस्तियाँ नही, और किसी समुचित रूप मे अपने वास्तविक स्वामियो को, उनके संरक्षण के अनुपात मे, लौटाई जानी

चाहिए। कभी-कभी संरक्षण-धन वापसियाँ, पूरी-की-पूरी या उनका कुछ अंश, नकद रुपए की शकल में, की जाती हैं। लेकिन आमतौर पर उनकी अदायगी साम्या स्वामीत्व के वृद्धि-सूचक प्रमाण पत्रों, हिस्सों अथवा सव्याज प्रतिभूतियों के रूप में की जाती है। अधिकांश सहकारी संस्थाओं के उपनियमों में इस आशय का प्रावधान होता है कि सदस्यों को अपनी संरक्षण-धन वापसियाँ नकद रुपयों में अथवा किसी अन्य रूप में लेना स्वीकार है। यदि सदस्यों ने नकद लेना स्वीकार न किया और उन्हें संरक्षण-धन वापसी सामान्य हिस्सों या स्वामीत्व के प्रमाणपत्रों के रूप मे की गई तो स्पष्ट है कि वे अपनी संरक्षण-धन-वापसी सहकारी संस्था में ही निदेशित कर देते हैं। सहकारी संस्थाओं की काफी पूंजी इसी प्रकार उपलब्ध होती है।

यह पद्धति है भी बहुत अच्छी। सहकारियों को अपनी सब पंजी के लिए मख्य रूप में सदस्यों के पंजी निदेश पर निर्भर करना चाहिए। उनके सदस्यों मे से साधन-सम्पन्न तो कोई भी नहीं होता। अपनी संस्थाओं में पूंजी निदेश का उनके लिए सबसे अच्छा समय वही होता है जब उन्हें संरक्षण-धन वापसी की अदायगियाँ की जाती हैं।

जिन लोगों को सहकारी संस्थाओं का ज्ञान नहीं है वे संरक्षण-धन वापसी के निदेश की प्रक्रिया को नहीं समझ पाते। यह बात उनकी समझ में नहीं आ पाती कि संरक्षण धन वापसी को नकद लेकर फिर उस रुपए से सामान्य हिस्से. स्वामीत्व के प्रमाणपत्र आदि खरीदने और उसका सीधे ही निदेश कर देने में कोई भी अन्तर नहीं है; विधियाँ दो हैं, लेकिन अन्तिम परिणाम तो दोनों का एक ही है। दूसरी बात जो उनकी समझ में नहीं आ पाती यह है कि सहकारी संस्था के सदस्य का आर्थिक लाभ किस में है: संरक्षण धन वापसी के निदेश से चारे की बढ़िया मिल, उर्वरक संयंत्र, किराना भण्डार, या विद्युत शक्ति का प्रबन्ध हो जाने में या सदस्य को संरक्षण-धन वापसी नकद मिल जाने में!

लेकिन कुछ लोग हैं जो इन बातों के सूक्ष्म अन्तर को बहुत अच्छी तरह से समझते हैं और इसीलिए सहकारियों को अपने सदस्यों की पूंजी के मख्य स्रोत से वंचित करके अक्षम कर देना चाहते हैं। ये लोग बहुत दिनों से शोर मचा

रहे है कि सहकारी सस्थाओ से सदस्यो द्वारा निदेशित सारी धनवापसियो पर एक विशेष दण्ड कर वसूल किया जाना चाहिए। उनके अभियोग का मुख्य मुद्दा यह है कि सहकारी सस्थाएँ 'कर मुक्त पूँजी पर अपना विकास कर रही' है। लेकिन इसमे इतनी ही सचाई है जितनी यह बात कहने मे कि निगम अपनी जिस कमाई को हिस्सो मे लगाता है उस पर कर लगना चाहिए, यद्यपि सभी निगम अपनी कमाई को हिस्सो मे लगाते है और उनसे उस निवेश पर कोई कर नही लिया जाता।

यह सच है कि सहकारी सस्थाओ के लिए यह उचित नही कि वे सरक्षण-धन वापसी की अदायगी ऐसे निर्दिष्ट तिथिहीन और बिना ब्याज के कागज मे करे, जो वर्षो तक बिना मोचन के पड़ा रहता है। यह भी सच है कि सहकारी सस्था के सदस्यों पर किसी भी रूप मे प्राप्त होनेवाली सरक्षण-धन वापसी की आय पर, यदि वह कराधान के योग्य हुई तो कर लगना चाहिए और उन्हे वह कर हर हालत मे चुकाना ही चाहिए। यह भी सच है कि सदस्य अपना कर चुका सके इसलिए सभी सहकारी सस्थाओ को काफी सरक्षण-धन वापसियाँ नकद देनी चाहिए और अधिकाश देती भी है। और यह भी सच है कि कुछ अदालतो ने, अधिकाश सहकारी नेताओ की राय मे गलती से, सरक्षकों-सदस्यों को इस आधार पर कि सहकारी सस्थाओ के हिस्सों और अन्य प्रतिभूतियो का 'बाजारमूल्य' निर्धारित नही किया जा सकता, इस प्रकार के करों की अदायगी से मुक्त कर दिया है। बाजार मूल्य का निर्धारण क्यो नही किया जा सकता यह बात पीछे बताई जा चुकी है। लेकिन इन सबसे सरक्षण-धनवापसी के स्वामीत्व की मूल स्थिति मे कोई अन्तर नही होता। वह न तो सहकारी सस्थाओ की मिल्कियत है और न उनका उस पर कोई अधिकार ही है; हर सूरत मे वह उसकी देयता है जो उसे अपने सरक्षकों को देनी ही होगी। और सहकारी सस्था के किसी पूँजी-निवेश पर यह मानकर कि वह उसका लाभ है कर लगाना अनुचित और अन्याय ही नही पक्षपात भी होगा।

सहकारी सस्थाएँ पूँजी के लिए आज की अपेक्षा आरम्भिक वर्षो मे अपने सदस्यों द्वारा संरक्षण-धन वापसियों के निवेश पर ज्यादा निर्भर करती थी। आज सहकारी संस्थाएँ, अपने सदस्यों अथवा बाहरी निवेश कर्ताओ को अधिका-

धिक मात्रा मे प्रतिभूतियो की सीधी बिक्री करके पूँजी प्राप्त करने का प्रयत्न करती है। पूँजी उगाहने के वित्तीय कार्यक्रम अपनाये जाते है और कइयों मे तो आशातीत सफलताएँ मिलती है। ओहियो फार्म ब्यूरो कोआपरेटिव एसोसिएशन, मिडलैण्ड कोआपरेटिव्स, इनकारपोरेशन, कन्जूमर्स कोआपरेटिव एसोसिएशन और इडियाना फार्म ब्यूरो कोआपरेटिव एसोसिएशन-जैसे क्षेत्रीय कृषि-सम्भरण-सहकारी-सगठन अधिमानित हिस्सो और अन्य प्रतिभूतियो की सीधी बिक्री करके हमेशा काफी पूँजी इकट्ठी कर लेते है। इन पर काफी अच्छा ब्याज बड़े नियमित रूप से दिया जाता है और इसलिए इस प्रकार की प्रतिभूतियों की खपत निरन्तर बढ़ती जा रही है। इस प्रकार के पूँजी-निवेशो मे, विशेष रूप से सदस्यों को, आकर्षित करने के लिए ओहियो फार्म ब्यूरोकोआपरेटिव एसोसिएशन ने एक बाड निकाला है, जो निवेशकर्ता को स्फीती से रक्षा करता है। इन बाडो को ब्याज की दरे जीवन-निर्वाह के सूचकांक से बँधी होती है। जीवन-निर्वाह के सूचकाक मे श्रमिक सांख्यिकी मडल (Bureau of Labor Statistics) जितनी वृद्धि की घोषणा करता है उसी अनुपात से इन बांडो के ब्याज की दरे बढ़ जाती है।

इधर के वर्षो मे नगर की कुछ उपभोक्ता सहकारी सस्थाओं ने भी पूँजी प्राप्त करने के लिए, मुख्य रूप से अपने ही सदस्यो मे, कई वित्तीय कार्यक्रम आरम्भ किये और उनमे पूरी सफलता प्राप्त की। सफलता का एक कारण तो यह है कि वे काफी समय से और नियमपूर्वक अपने हिस्सों पर पाँच प्रतिशत लाभांश देती आ रही है। दूसरा कारण अपने कारबार मे उनकी सफलता है। लेकिन तीसरा कारण निस्सन्देह बस्ती की एक महत्त्वपूर्ण सस्था के स्वामीत्व का गौरव है जो सहकारी-सदस्यता से स्वय ही प्राप्त हो जाता है। प्रमाण-स्वरूप शिकागो के दक्षिणी विभाग (South Side) की हाईडपार्क उपभोक्ता सहकारी समिति (Hyde Park Consumer Cooperative Society) का उदाहरण लिया जा सकता है जिसके हिस्सों की अक्सर बहुत अधिक माँग रहती है और सस्था को यह सावधानी बरतनी पड़ती है कि कही अतिशय पूँजी- करण न हो जाए।

लेकिन फिर भी सहकारी संस्थाओं के सदस्यों को अपनी सहकारी संस्थाओं

मे जितनी अधिक पूँजी लगानी चाहिए उतनी उन्होंने अभी तक भी लगाई नहीं है। ऐसा अनुमान किया जाता है कि किसानों ने अपनी सहकारी संस्थाओं में अपने कुल निवेशों की सिर्फ दो से तीन प्रतिशत के ही लगभग पूँजी लगाई होगी। और यह स्थिति है इस वास्तविकता के बाद कि दूसरी जगह पूँजी लगाकर प्रति डालर जितना लाभ होता है सहकारी संस्था में पूँजी लगाने पर उससे कहीं अधिक होता है।

इसलिए सहकारियों का यह भी एक आवश्यक कर्त्तव्य हो जाता है कि ज्यादा मात्रा में पूँजी लगाने के लिए वे अपने सदस्यों की उचित शिक्षा पर ध्यान दें। सदस्यों की शिक्षा की दिशा में दो कार्य किये जाने चाहिए। एक तो सहकारी संस्थाओं द्वारा अपने सदस्यों को उच्चकोटि की आर्थिक और सामाजिक सेवाएँ प्रदान की जानी चाहिए। और दूसरे शिक्षा और सूचना का अबाध कार्यक्रम, जिससे यह बात साफ-साफ उनकी समझ मे आ सके कि अपनी सहकारी संस्था में ज्यादा पूँजी लगाना क्यों आवश्यक है।

जहाँ ये दोनों काम किये गए हैं वहाँ हमें कुछ बडे ही उत्साह वर्द्धक परिणाम देखने को मिलते हैं। १९५९ में पुगेट साउण्ड की सामूहिक स्वास्थ्य सहकारी संस्था ने २५,००,००० डालर उगाहने के लिए अपने पचपन हजार सदस्यों में बांड बेचने का निश्चय किया। जितने बांड बेचने के लिए निकाले गए थे वे कुछ ही महीनों में अति-दत्त हो गए। सहकारी स्वास्थ्य योजना के सदस्य स्वयं अपने को एक-एक करके समष्टिगत रूप से ब्याज देते रहेंगे। बाहरी कर्ज लेने की जरूरत नहीं होगी। इस तरह जनता का पैसा ही जनता के अस्पताल को बना रहा है।

न्यूयार्क सिटी की उसी पुरानी अमलगामेटेड हाउसिंग कोआपरेटिव (समामेलित आवास सहकारी संस्था Amalgamated Dwellings Housing Cooperative) ने १९६० में अपनी बन्धक पूँजी के अन्तिम ढाई लाख डालर जमा करने के लिए ४ प्रतिशत ब्याज पर पाँच सौ डालर मूल्य के बन्धक बाण्ड अपने ही सदस्य-आवासी-स्वामियों और पास-पडोस की सहकारी-गृह-निर्माण-योजनाओं में रहने वाले लोगों को बेचने का काम हाथ मे लिया। कुछ ही महीनों में ढाई लाख डालर की अपेक्षित पूँजी इकट्ठी हो गई। कुछ खरीदारों

की प्रतिक्रिया बड़ी ही उत्साहवर्धक थी। उनका कहना था : "अपने रुपए को किसी बचत बैंक मे जमा करने या कही और लगाने के बदले अपने ही मकानों मे क्यो न लगाया जाए ? दूसरी जगह जमा करने या लगाने पर अपने मकान मे लगाने के लिए अपना ही रुपया उनसे उधार लेकर उनका ऋणी बनना होगा !"

इस प्रकार सहकारी संस्थाओ के वित्त प्रबन्ध मे प्रगति होती जा रही है।

लेकिन यदि ऊपर बताये उपायों का ही अवलम्बन किया जाता रहा तो यह प्रगति धन की दृष्टि से बहुत अपर्याप्त और गति की दृष्टि से बहुत शिथिल होगी। कई प्रकार की सहकारी सस्थाएँ इस बात को प्रदर्शित कर चुकी है कि उनमे विकास और विस्तार की महान क्षमताएँ है और हमारे समाज की वर्तमान आवश्यकताएँ उनके इस विकास और विस्तार का पूरा-पूरा समर्थन करती है। यदि पूँजी का प्रबन्ध हो जाए तो सहकारी गृह-निर्माण योजनाएँ, सहकारी समूह स्वास्थ्य योजनाएँ, सहकारी विद्युत् सेवाएँ, नगरो मे सहकारी वृहद् भण्डार (सुपर मार्केट), सहकारी तेल कम्पनियाँ आदि सहकारी ढग के कई उद्यम है जो बहुत तेजी से उन्नति कर सकते है और करेंगे और सारे समाज को लाभ पहुँचाएँगे।

सौभाग्य से और सम्भवत. इसी भविष्य को दृष्टि मे रख कर पिछले तीस वर्षो मे सहकारी ढग की बहुत-सी पारस्परिक बीमा कम्पनियाँ स्थापित की गई है। क्योंकि इस समय अमरीकी जनता की बचतों की मुख्य धारा बीमा करवाने की ओर ही प्रवाहित हो रही है। किसी जमाने मे अमरीकी उद्योग के वित्तीय भविष्य की निर्णायक 'बाल स्ट्रीट' हुआ करती थी। अब नही। अब वह शक्ति देश की जबर्दस्त बीमा कम्पनियों के हाथ मे आ गई है। जनता की बचतो और पूँजी का बहुत बड़ा अंश आज उन्ही को सौपा जा रहा है। यहाँ तक कि सरकारी बाण्डो के ब्याज की दर भी उन्ही के खरीदने या न खरीदने से प्रभावित होती है। उन्ही की निवेश-नीतियाँ सारे देश की निवेश निधियो का दिशा-निदेशन करती है।

'वालस्ट्रीट' के उत्कर्ष काल मे फिर भी सच्ची प्रतियोगिता प्रचुर परिमाण मे विद्यमान थी। आज हमारे अधिकाश शक्तिशाली उद्योगो मे उस प्रतियोगिता

का निरा औपचारिक रूप ही बचा रह गया है। इसलिए थोड़े-से हाथों मे औद्योगिक एकाधिकार के साथ वित्तीय एकाधिकार भी यदि सिमट आया तो उन हाथों आर्थिक स्वतन्त्रता का गला घुटने की आशका एक वास्तविकता बन जाएगी।

लेकिन यदि ऐसे उपाय खोजे जा सके जिनके द्वारा जनता, जिसकी बचते ही पूँजी के महान निकायो का निर्माण करती है, उस पूँजी का सफल और सार्थक निदेशन और निर्देशन कर सके तो हमारी जनवादी और स्वतन्त्र सस्थाओ मे ओज और प्राणवत्ता की आशा की जा सकती है।

हमारे युग की आर्थिक समस्या का एकमात्र समाधान है ऐसे उपायो का अवलम्बन जिनके द्वारा महत्तम दक्षता वाले विशालतम उद्योग-व्यवसायो पर बहुत से लोगों का जनवादी स्वामीत्व और बहुत-से लोगों का जनवादी नियन्त्रण तो हो ही, साथ ही वे जनता के साधन-स्रोतों अर्थात् जनता की पूँजी के सच्चे और निष्ठावान न्यासधारी भी हों।

सहकारी बीमा कम्पनियों के इतने अधिक महत्त्वपूर्ण होने का यही कारण है।

जन-समुदायों द्वारा 'अपनी सुरक्षा का भार स्वयं वहन करने, के विचार मे से ही सहकारी पारस्परिक बीमा का जन्म हुआ। जैसा कि पहले बताया जा चुका है, बीमा कम्पनी वास्तव मे एक समान दुःख-तकलीफों वाले, उन दुःख-तकलीफों को मिल-बाँटने के लिए सम्मिलित होने वाले और उनका सामना करने के लिए अपनी कुछ बचतों का निकाय करनेवाले लोगों का समूह है। इसलिए लोगों का कोई भी समूह यदि सचमुच चाहे तो अपने से और सुरक्षा-सम्बन्धी अपनी आवश्यकताओ से एक बीमा कम्पनी बना सकता है, लेकिन शर्त यह है कि वह समझदारी से और कुशल प्रबन्ध के अन्तर्गत काम करे।

बेंजामिन फ्रैंकलिन इस विचार को अमरीकी जीवन मे लाये। उन्होंने फिलाडेलफिया के निवासियों मे १७५२ में एक पारस्परिक अग्नि-बीमा कम्पनी संगठित की।

इधर-इधर तो पारस्परिक बीमा के विचार को कई जन समूहों ने अपनाया और उसका उपयोग किया है। उन्होंने इस विचार का उपयोग किया अपने-आप को प्रीमियम देने और अपनी बचतों का स्वयं नियन्त्रण करने वाले

माध्यम के रूप मे। अधिकांश सहकारी उद्यमों की भाँति इस तरह के सहकारी बीमा का बिल्कुल आरम्भ का रूप, आवश्यकता के कारण ही अस्तित्व मे आया। व्यापारिक बीमा कम्पनियाँ किसानों का अग्नि-सुरक्षा बीमा नही करती थी, और जैसा कि नियम है आज भी नही करती। अग्नि सुरक्षा विभागों से खेतों को यथोचित सहायता और प्रभावी सेवा नही प्राप्त होती थी। इसलिए उन्नीसवी शताब्दी के अन्तिम वर्षो मे किसानो की पारस्परिक बीमा कम्पनियाँ—फारमर्स म्युचूअल्स-बनने लगी। आरम्भ से ही वे एकदम शुद्ध सहकारी उद्यम रही हैं। उनकी कार्य विधि भी वहुत ही सरल होती है। वे आग की जोखिम का निकाय कर लेती है और यह समझौता कि यदि उनमे से किसी की भी आग से हानि हुई तो सब मिल कर क्षतिपूर्ति कर देगे, अर्थात् हानि के मूल्य को आपस मे बाँट लेगे। बहुत-सी फारमर्स म्युचूअल्स बगैर प्रीमियम के काम करती है; आग की हानि का दावा होने पर हानि के कुल मूल्य में अपने सदस्यों (पालिसी धारियों)का हिस्सा निर्धारित कर देती है। इस समय दस हजार से भी अधिक फारमर्स म्युचूअल्स या जैसा कि कभी-कभी उन्हें कहा जाता है टाउन शिप म्युचूअल्स लाखों किसानों को और ग्रामवासियों को आग, बवण्डर और ओला वृष्टि से सुरक्षा प्रदान कर रही है।

इन छोटी सहकारी बीमा कम्पनियों ने काफी उपयोगी कार्य किया और आज भी कर रही हैं। उन्होंने एक ऐसी आवश्यकता की पूर्ति की है जो अन्यथा कभी न हो पाती। और उन्होंने उस आवश्यकता की पूर्ति विशुद्धतम सहकारी ढग से की है।

लेकिन इतना ही काफी नही था। १९२५ के आसपास सहकारी विचार वाले लोगो ने अपनी ही बीमा-सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अपनी ही बीमा कम्पनियाँ बनाना शुरू किया। इस बार भी नेतृत्व किसानों का ही रहा। ओहियो फार्म ब्यूरो के मरे डी० लिंकन—जैसे कृषक सदस्यता संगठन के नेताओं को सहकारी बीमा कम्पनियाँ अपने सदस्यों के लिए धन बचाने और अपनी बचतों पर अधिकार रखने एवं उनका उपयोग करने के साधन के साथ ही दूसरे प्रकार के सहकारी उद्यमो मे लगाने के लिए सुरक्षित ऋण-पूँजी के सबल स्रोत भी दिखाई दीं। इसी अन्तर्दृष्टि के परिणाम स्वरूप नेशन वाइड

इन्श्यूरेन्स कम्पनीज-अस्तित्व मे आई, जो पहले-पहल १९२६ मे ओहियो की फारम ब्यूरो इन्श्यूरेन्स कम्पनीज आफ ओहियो के रूप मे सगठित की गई थी और आज देश के सारे बीमा व्यवसाय मे बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। म्युचूअल सर्विस इन्श्यूरेन्स कम्पनीज, जो मिन्नेसोटा और विसकान्सिन के किसानो द्वारा १९२० के बाद की दशाब्दी में इसी उद्देश्य से गठित पाँच बीमा कम्पनियो के पारस्परिक विलयन से बनी है, आज एफ० एफ० रोण्डयू की अध्यक्षता मे मिडवेस्ट के ऊपरी भाग की सबसे महत्त्वपूर्ण संस्थाओ मे है। फारमर्स यूनियन कम्पनीज और दूसरी भी बहुत-सी कम्पनियो ने यही मार्ग अपनाया है।

साख संघ के नेताओं को भी ऋणों की अन-अदायगियों के लिए साख सघों का बीमा करवाने की आवश्यकता अनुभव होने लगी। वे इस मानवतावादी विचार के कायल होते जा रहे थे कि ऋणी की मृत्यु के साथ ही उसका ऋण भी समाप्त हो जाना चाहिए। इसी विचार से प्रेरित होकर और ऋण की सुरक्षा एवं आजीवन-बचत बीमा सुलभ करने के लिए उन्होंने क्रेडिट यूनियन नेशनल एसोसिएशन म्युचूअल इन्श्यूरेन्स सोसाइटी (साख संघ राष्ट्रीय सभा पारस्परिक बीमा समिति) (Cuna Mutual Insurance Society) के नाम से एक बीमा कम्पनी स्थापित की।

परिणाम इसके बहुत ही अच्छे और अक्सर चकित कर देने वाले रहे। ये बीमा कम्पनियाँ पालिसी धारियों की थी--और आज भी है--इसलिए जितना अधिक-से-अधिक घटा सकती थी प्रीमियम की दरे आसानी से घटा देती। कई बार तो व्यापारी बीमा कम्पनियों से इनके प्रीमियम की दरे ४० प्रतिशत तक कम होती थी। लेकिन यह सहकारी बीमा व्यवसाय के आरम्भिक दिनों की बात है। अब तो दूसरी भी कई व्यापारी कम्पनियों ने सहकारी बीमा कम्पनियों की प्रतियोगिता मे प्रीमियम की अपनी दरे कम कर दी है।

लेकिन सबसे महत्त्वपूर्ण बात, जिसे सहकारी बीमा कम्पनियों ने अपने आचरण से सिद्ध कर दिखाया यह है कि बीमा कम्पनियो को सौपा गया सारा पैसा वास्तव मे पालिसी धारियों का ही है।

और यह पैसा थोडा नही है, बहुत ही ज्यादा है। १९४५ से १९४९ के बीच बीमा कम्पनियों की समग्र पूँजी औसतन ३ अरब ६० लाख डालर प्रति

वर्ष के हिसाब से बढ़ती रही है। जीवन-बीमा कम्पनियों की समग्र पूँजी हर दस बरस मे दूनी हो जाती है और इस समय उनकी पूँजी संयुक्त राज्य के समस्त राष्ट्रीय धन के दशमांश से कुछ अधिक ही होगी। यहाँ यह तथ्य उल्लेखनीय है कि देश की समस्त जीवन-बीमा कम्पनियों की कुल स्वीकृत आस्तियों का ७० प्रतिशत दस सबसे बड़ी जीवन-बीमा कम्पनियों के अधिकार मे है। ऐसी कम्पनियों के अधिकारियों को प्रति वर्ष आठ-दस अरब डालर के निवेश का अधिकार भी है और अवसर भी। 'वाल स्ट्रीट' के उत्कर्ष काल मे वहाँ के सब निवेश कर्ता बैंकर जितनी पूँजी का नियन्त्रण करते थे उससे यह रकम दूनी है. केवल यही नही कि अधिकांश बड़े उद्योगों की ऋण-सम्बन्धी आवश्यकताओ को पूरा करना बीमा कम्पनियो के हाथ मे है, बल्कि इधर-इधर तो जिन उद्योगो मे पूँजी लगाना सभी तरह सुरक्षित है उन उद्योगो के हिस्से भी इन्होने स्वय खरीदना शुरू कर दिया है। अभी कुछ ही राज्यों मे इसकी अनुमति मिल पाई है। लेकिन इससे बीमा-व्यवसाय के सूत्रधारियो के हाथ मे इतनी शक्ति तो आ ही जाती है कि वे जिस कम्पनी को चाहेगे जिन्दा रखेगे और उन्नति करने देगे और जिसे चाहेगे खत्म कर देगे।

इस तरह के अधिकार का उपयोग अथवा दुरुपयोग कैसे किया जा सकता है यह बात विद्युत-शक्ति व्यवसाय की ओर देखने से स्पष्ट हो जाती है। बीमा कम्पनियाँ पैसा लगाने का सबसे अच्छा साधन बिजली कम्पनियों के बांडों को समझती हैं। यही कारण है कि बिजली कम्पनियों को अपेक्षाकृत सस्ती दर पर कर्ज मिल जाता है। अब यदि किसी दिन ग्रामीण विद्युतीकरण के विरोधियों का बस चल ही जाए और वे कांग्रेस पर जोर डाल कर ग्रामीण विद्युतीकरण प्रशासन (Rural Electrification Administration) को, जो ग्रामीण विद्युत सहकारी सस्थाओं के कर्ज पाने का एकमात्र स्रोत है खत्म करवाने मे सफल हो जाएँ तो क्या होगा ? क्या विद्युत सहकारी सस्थाओं को बीमा कम्पनियों से कर्ज मिल सकेगा ? है कोई सम्भावना ? विसकोन्सिन की विद्युत् सहकारी सस्थाओं की औसत ग्राहक सख्या लाइन के प्रति मील पर सिर्फ एक है, जब कि उनकी प्रतिद्वन्द्वी बिजली कम्पनियों की नौ है। कुछ राज्यों मे तो यह अन्तर और भी ज्यादा है। विद्युत् सहकारी संस्थाओं को अपनी

की बैठकों मे शायद ही कोई शरीक होता और वोट दे पाता है। इसलिए आमतौर पर निदेशक-मण्डल और अधिकारी काफी लम्वी अवधियो तक अपने पदों पर बने और अनिश्चित काल तक पालिसी धारियों की बचतो का नियन्त्रण करते रहते हैं। कम्पनी जितनी ही बड़ी होती जाएगी और जितने ही अधिक लोगों का पैसा उसके पास जमा होता रहेगा यह स्थिति वहाँ उतनी ही अधिक होगी।

बीमा कम्पनी, जैसा कि हम देख आये हैं, जनता की सर्व सामान्य सुरक्षा के लिए उनकी बचतो के निकाय पर आधारित महान और बहुत ही आदर्श-वादी संस्था है।

लेकिन आज तो बीमा कम्पनियाँ जनता की बड़ी-बड़ी बचतो पर अबोध अधिकार जमाए उस धन से अनाप-शनाप मुनाफा कमा रही हैं। यद्यपि कम्पनी का सारा अस्तित्व पालिसी धारियो के प्रताप से है, लेकिन बहुत-सी बीमा कम्पनियाँ जनता की बचतो पर अपने अधिकार का उपयोग मोटे मुनाफे कमाने मे ही करके अपने कर्त्तव्य की इति श्री मान लेती हैं, पालिसी धारियो के व्यापक हितों का वे कुछ भी विचार नही करती।

आशा तो यही की जानी चाहिए कि पारस्परिक बीमा कम्पनियो के बारे मे यह बात सच नही होगी, क्योकि वे जनता की बीमा-सम्बन्धी माँग को इस तरह से पूरा करने के लिए बनाई जाती हैं कि सारे लाभ बीमाधारी जनता को ही प्राप्त हो।

लेकिन दुर्भाग्य से कुछ पारस्परिक बीमा कम्पनियाँ केवल नाम को ही पारस्परिक हैं। उनके उद्देश्य भुलाये जा चुके हैं। उनका नियन्त्रण पालिसी धारियो के हाथ मे नही है। उनकी बचते, जो आर्थिक प्रगति की कुन्जी हैं, उनके हाथ से निकल चुकी है। उन बचतों के निवेश और नियन्त्रण का काम प्रबन्धकारी समूह करते है, जो उन बचतों के वास्तविक स्वामी, पालिसी धारियो के प्रति अपनी कोई भी जिम्मेवारी नही समझते।

इस तरह का आचरण अमरीका के लिए भयावह हो सकता है। जब जनता अपनी बचतो पर, और विशेषकर जब वे बचते बड़े-बडे निकायों के मकलित रूप मे हों, अपना अधिकार गँवा बैठती है तो उस देश मे जनवाद के लिए

जबर्दस्त खतरा उपस्थित हो जाता है।

यहाँ पाठक पूछ सकते है कि बीमा मे जमा की हुई अपनी बचतों पर अपना अधिकार फिर से पाने के लिए जनता के सामने कोई रास्ता है या नही ! रास्ता जरूर है। वह रास्ता है नई 'सहकारी' ढग की बोमा कम्पनियाँ, जिनके उद्देश्य और प्रयोजन और दृष्टिकोण और काम करने का ढग, सभी कुछ सही अर्थों में पारस्परिक होता है और जिस तरह की कम्पनियों के कुछ उदाहरण हम ऊपर दे आये है।

ये पारस्परिक कम्पनियाँ इस उद्देश्य से बनाई गई थी कि जिन लोगो को बीमा की अत्यधिक आवश्यकता है, वे अपनी बचतो का जो निकाय करे, उस पर उन्ही के नियन्त्रण को बनाये रख उन्हे बीमा की सेवा-सुविधाएँ प्रदान की जा सके। और ये कम्पनियाँ इस बात को भी प्रमाणित करने के लिए बनाई गई थी कि यदि जनता जी-जान से चाहे तो अपनी ही कम्पनियो के द्वारा अपने लिए बीमा की सेवा-सुविधा प्राप्त कर सकती है।

ये पारस्परिक बीमा कम्पनियाँ वित्तीय कारबार करने वाली दूसरी सस्थाओं की ही तरह 'जनता के उपयोग के लिए जनता के नियन्त्रण मे जनता का पैसा' वाले सिद्धान्त का अमल करती है। इनमे सब तो नही लेकिन बहुत-सी कम्पनियाँ ऐसे जन समूहों मे गठित हुई है जो पहले से किसी-न-किसी सहकारी उद्यम से सम्बद्ध है।

कानून की दृष्टि से इन कम्पनियों को भले ही सहकारी न कहा जा सके, परन्तु वास्तव में ये 'सहकारी' बीमा कम्पनियाँ ही है, जो दूसरी (पुराने ढग की) बीमा कम्पनियों से कई बातो मे भिन्न है।

एक तो यही कि कम्पनी के नीति-सम्बन्धी निर्णयों मे पालिसी धारी भाग ले सकें इसलिए ये कम्पनियाँ कई तरह के उपाय करती है। फिर कम्पनी पर पालिसी धारियों के प्रभावी नियन्त्रण के लिए भी अनेक प्रकार के प्रयत्न किये जाते हैं।

उदाहरण के लिए एक 'सहकारी' कम्पनी है—समूह स्वास्थ्य पारस्परिक बीमा कम्पनी। इसका सारा कार्य क्षेत्र कई हलकों मे बँटा हुआ है। हर हलके की नियमित बैठकें होती है और सभी पालिसी धारियों को उनमे सम्मिलित होने के

लिए प्रेरित किया जाता है। बैठकों मे सम्मिलित होने वाले प्रतिवेदन और विवरण प्राप्त करते है, कम्पनी के वार्षिक अधिवेशन के लिए प्रतिनिधियों का चुनाव करते है और प्रचलित विषयों पर मतदान के सम्बन्ध मे उन प्रतिनिधियों का मार्ग-दर्शन करते है।

जिन पारस्परिक बीमा कम्पनियों का गठन किसी दूसरे सहकारी उद्यम से सम्बद्ध जन-समूह मे किया गया है उनमे से कुछ उस सदस्यता-सगठन से निकट सम्बन्ध बनाये रखकर जनवादी नियन्त्रण को कार्यान्वित करने का प्रयत्न करती है। इस तरह की कम्पनियों मे नेशनल एण्ड नेवास्की फारमर्स यूनियन इन्श्यूरेन्स कम्पनी, कुछ राज्यों की फार्म ब्यूरो कम्पनियाँ, विसकोन्सिन विद्युत् सहकारी द्वारा हाल मे गठित एक कम्पनी और राष्ट्रीय एव राज्य स्तर की सहकारी सस्थाओ द्वारा गठित और भी कई कम्पनियों के नाम गिनाये जा सकते है।

नेशन वाइड इन्श्यूरेन्स कम्पनीज ओहियो मे फार्म ब्यूरो इन्श्यूरेन्स कम्पनीज कृषि मण्डल बीमा कम्पनियों के रूप मे आरम्भ की गई थी। १९६० तक इनके कार्य क्षेत्र का विस्तार देश के आधे राज्यों मे हो चुका था। काम के विस्तार के सिलसिले मे ये कम्पनियाँ जिस किसी भी राज्य में गई वहाँ इन्होंने किसी एक जनवादी ढग से नियन्त्रित सदस्यता-सगठन से 'प्रायोजी' करार किया। इस तरह के सदस्यता-सगठनो मे से कुछ तो राज्य स्तरीय क्रेडिट यूनियन लीग है, पर अधिकाश राज्य स्तरीय अथवा क्षेत्रीय सहकारी सगठन है, जैसे कि कैरोलिनास मे फारमर्स कोआपरेटिव एक्सचेज या ओहियो और पेनसिलवानिया मे फार्म ब्यूरो कोआपरेटिव एसोसिएशन्स या न्यूयार्क मे ईस्टर्न कोआपरेटिव्स आदि। 'प्रायोजक' सस्था का कार्य होता है नेशनवाइड के काम को अपने राज्य मे सभी उचित प्रकारों से आगे बढ़ाना; इन सेवाओ के पारिश्रमिक स्वरूप प्रायोजक को नेशनवाइड से नकद धन के अतिरिक्त अपने निर्देशक मण्डल में एक सदस्य नियुक्त करने का अधिकार भी दिया जाता है। इधर कुछ समय से तो 'पालिसी धारियों की सलाहकारी परिषदे' नामक योजना पर बहुत अधिक जोर दिया जा रहा है। नेशनवाइड बीमा कम्पनियों का एजेण्ट पालिसी धारियों को स्थानीय बैठकों से आरम्भ करता है। इन बैठको मे कम्पनी की रीति-नीति पर जमकर चर्चा की जाती है और इसी तरह की क्षेत्रीय बैठकों के लिए

प्रतिनिधियों का चुनाव किया जाता है। क्षेत्रिय सम्मेलन पचास व्यक्तियों को चुनते हैं, जो प्रति वर्ष नेशनवाइड के अतिथि बनकर दो दिन के लिए कोलम्बस जाते हैं और कम्पनी के अधिकारियों को नेशनवाइड के 'राष्ट्र व्यापी' पालिसीधारियों के विचारों और आकांक्षाओं से अवगत करते हैं।

लेकिन अपनी ही बचतों के संचित कोष के निवेश और उपयोग पर पालिसी-धारियों के अभीष्ट सार्थक नियन्त्रण का जो उपाय म्यूचूअल सर्विस इन्श्यूरेन्स कम्पनी ने, जिसका प्रधान कार्यालय सेंट पाल मे है, कई वर्षो के प्रयत्नो के बाद खोज निकाला है उसे अनेक अर्थो मे अचूक उपाय कहा जा सकता है। इस कम्पनी ने अलग से एक वैधानिक सस्था म्युचूअल सर्विस कोआपरेटिव के नाम से बना दी है। इस सस्था मे हिस्से खरीदकर मतदान का अधिकार केवल कृषि-सम्भरण, विक्रय, उपभोक्ता, विद्युत् या अन्य प्रकार की सहकारी सस्थाओ को, साख-सघो को या किसानो की पारस्परिक कम्पनियो को ही है। इस समय ये मतदायी-हिस्से (वोटिंग शेअर्स) इस तरह के पॉच सौ से भी ज्यादा स्थानीय सहकारी सगठनो के पास है, और उन स्थानीय सहकारी सगठनो मे से अधिकांश के सदस्य म्युचूअल सर्विस इन्श्यूरेन्स कम्पनी के पालिसी धारी है। ये पालिसी-धारी बीमा कम्पनियो की वार्षिक बैठको मे अपने मत देने के लिए म्युचूअल सर्विस कोआपरेटिव के निदेशक मण्डल को अपना प्रतिपत्री नियुक्त कर देते है। और जिन स्थानीय सहकारी सस्थाओ के पास मतदायी हिस्से है उनके द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधि इस निदेशक-मण्डल का चुनाव करते है। इस तरह, जिन लोगों ने रुपया दिया है उनके सीधे नियन्त्रण से इन कम्पनियो का बच पाना मुश्किल ही है। चाहे तो भी वे बच नही सकती, हालाँकि वे कभी चाहती भी नही।

दूसरे यह कि 'सहकारी' बीमा कम्पनियाँ अपने पालिसी धारी सदस्यो को वैधानिक दृष्टि से और सरलता से भी जितना हो सके उतने न्यून मूल्य पर बीमा की सेवा-सुविधा प्रदान करती हैं। यह दो तरह से किया जाता है : एक तो प्रीमियम को जितना सम्भव हो सके घटा कर और दूसरे अपने पालिसी धारियों को जितना अधिक-से-अधिक हो सके लाभांश देकर। पालिसियो के कुछ वर्ग ऐसे है जिनमे मूल प्रीमियम का चालीस प्रतिशत तक लाभॉश दिया जाता है।

तीसरे यह कि 'सहकारी' बीमा कम्पनियाँ इस बात को जानती और मानती है कि पालिसी धारियों ने अपना रुपया उनके विश्वास पर छोड़ा है, इसलिए उस रुपए का निवेश उन लोगों के लाभ के लिए किया जाना चाहिए जिनकी बचतों से ही वह निवेश सम्भव हुआ है। इसलिए सहकारी बीमा कम्पनियाँ अपनी आस्तियों का जितना बडा भाग दूसरे प्रकार के सहकारी व्यवसायों मे लगाना चाहे लगा सकती है और उन्हे लगाने दिया जाता है। वे कृषि-आपूर्ति और नगर-उपभोक्ता सहकारी सस्थाओं को, गृह निर्माण सहकारी सस्थाओं और सहकारी स्वास्थ्य योजनाओं को ऋण देती है, जहाँ पैसा बिलकुल सुरक्षित है।

लेकिन जैसा कि हम अन्य सहकारी वित्तीय सगठनो के सम्बन्ध मे देख आये है, सहकारी बीमा कम्पनियाँ के मार्ग मे कुछ ऐसी वास्तविक रुकावटे है जिनके कारण वे इस दिशा मे जितना करना चाहिए कर नही पाती। एक बाधा, जो बहुत अच्छी भी है, यह कि बीमा-कम्पनी के अधिकारी पहले खूब ठोक-बजाकर देख लेते है कि सहकारी सस्था मे लगाई गई पूँजी के प्रति लाभ का स्तर दूसरे किसी भी पूँजी-निवेश के समकक्ष है या नही, यदि न्यून पाया जाता है तो वे सहकारी सस्था मे पूँजी लगाने से इनकार कर देते है। जिन सहकारी सस्थाओ की हालत अच्छी नही होती उनके लिए यह बडा माकूल इलाज है। इसके अतिरिक्त कई राज्यो मे ऐसे बीमा कानून बने हुए है जिनके कारण अच्छी जमानतो के रहते हुए भी बीमा कम्पनियाँ अपनी आस्तियो के ५ प्रतिशत से अधिक रकम किसी सहकारी व्यवसाय मे न तो लग[illegible] ती है और न कर्ज ही दे सकती है। दूसरे राज्यो मे कानून अवश्य इतन[illegible]डे नही है, लेकिन सहकारी सस्थाओं मे निवेश या उन्हे ऋण देने की स[illegible] वहाँ भी निर्धारित है, जो कुल आस्तियों के बहुत छोटे से अश से आगे नहीं जा पाती, चाहे बीमा कम्पनी कितनी ही सहकारिता-अभिप्रेरित क्यों न हो।

यह तो सहकारी बीमा कम्पनियों का माना हुआ नियम है कि वे सबसे पहले उत्कृष्ट कोटि की बीमा कम्पनी है; क्योंकि इसके बिन[illegible] सहयोगी उद्यमों की उन्नति में सहायता क[illegible] उनका अभीष्ट कभी पू[illegible] नहीं हो सकता।

इन दोनों उद्देश्यों के समन्वय के उपायों पर विचार और उनके कार्यान्वियन के लिए १९४७ मे सहकारी लीग ने सहकारी पद्धति की अधिकांश बडी और महत्त्वपूर्ण बीमा कम्पनियो का एक अनौपचारिक संघ बनाया जो सहकारी लीग का बीमा सघ (The Insurance Conference of the Cooperative League) कहलाता है। इस सघ के निम्नलिखित उद्देश्य निश्चित किये गए, जिनमे इस पुस्तक के लिखे जाने के समय तक कोई परिवर्तन नही हुआ; और सहकारी बीमा कम्पनियो के दोनों मूल प्रयोजनों का इन उद्देश्यों मे पूर्णतः समावेश कर लिया गया है।

१—बीमा-व्यवसाय मे प्रतियोगिता-स्वातन्त्र्य की रक्षा करना और बीमा सेवाओं का उपयोग करने वालों के हितों के अनुरूप बीमा-व्यवसाय में स्वतः प्रेरणा, उपक्रम, उन्नति और विकास को प्रोत्साहित एवं सुनिश्चित करना।

२—बीमा-व्यवसाय के बारे मे जनता की समझ को प्रोत्साहित और अभिवर्द्धित करना।

३—सदस्यो की रुचि के विषयो का पता लगा कर सम्बन्धित जानकारी प्रसारित करना।

४—सर्व-सामान्य समस्याओ पर चर्चा एव उनके अध्ययन और निराकरण के लिए विचार-गोष्ठियों का प्रबन्ध करना।

५—सदस्यों मे पारस्परिक लाभ के व्यापारिक सम्बन्धों को सुगम बनाना।

६—सघ और बाकी सभी क्षेत्रो मे सहकारी उद्यम के आपसी सम्बन्धों पर शिक्षा का कार्यक्रम आयोजित करना।

७—बीमा करवाने वाली जनता और सघ के सदस्यों के हितों का सभी उचित उपायों से रक्षण और सवर्द्धन करना।

८—वे सभी कार्य और कार्यवाहियाँ करना जो उपर्युक्त से सम्बन्धित हों।

सहकारी बीमा कम्पनियाँ और अन्य प्रकार की सहकारी सस्थाएँ पारस्परिक लाभ के लिए साथ मिल कर कैसे काम कर सकती हैं इसका मिडलैण्ड सेण्ट्रल म्युचूअल कारपोरेशन काफी अच्छा उदाहरण है। इस तरह साथ मिल कर काम करना सहकारी बीमा कम्पनियों की ऋण देने को सामर्थ्य को विकसित करने और अपनी सहकारी संस्थाओं मे जनता की निवेशित पूँजी के सार्थक

उपयोग का अत्यन्त सफल और सुरक्षित साधन है। मिडलैण्ड सेण्ट्रल म्युचूअल कारपोरेशन दो क्षेत्रीय थोक सहकारी संस्थाओं और एक 'सहकारी' बीमा कम्पनी का निगम है। इन तीनों संस्थाओं के नाम क्रमशः इस प्रकार हैं : मिडलैण्ड कोआपरेटिव इनकारपोरेशन, सेण्ट्रल कोआपरेटिव्स इन कारपोरेशन और म्युचूअल सर्विस इन्श्यूरेन्स कम्पनीज। ये तीनों कम्पनियाँ मिडवेस्ट के ऊपर के भाग मे काम करती हैं। मिडलैण्ड सेण्ट्रल म्युचूअल कारपोरेशन सही अर्थों मे भू-स्वामी और विकास कार्यों को करने वाली संस्था है। यहाँ इस निगम की कार्यविधि सम्बन्धी बारीकियों मे जाने की आवश्यकता नही है; सक्षेप मे बताने से ही काम चल जाएगा। यह निगम स्थानीय सहकारी सस्थाओं की जमीन मे पैसा फँसाने की आवश्यकता को अपने ढग से पूरा कर उस पैसे को कृषि कारबार मे लगाने मे उनकी सहायता करता है। जिस जमीन की सहकारी संस्थाओं को अपने काम के विकास के लिए आवश्यकता होती है उसे निगम या तो उनसे खरीद लेता है या अधिग्रहण कर लेता है। फिर निगम की ओर से वे जमीनें दोनों मे से किसी एक थोक सहकारी सस्था को पट्टे पर दे दी जाती हैं और थोक सहकारी सस्था उन्हें स्थानीय सहकारी सस्थाओं को उठा देती हैं। स्थानीय सहकारी के साथ पट्टेदारी करने से पहले थोक सहकारी की ओर से काफी गहरी जाँच-पडताल कर ली जाती है और एक करारनामे के रूप मे शर्तों को लिखा-पढ़ी भी कर ली जाती है इतनी छान-बीन और लिखा-पढी के बाद निगम अपनी सम्पत्ति पर कर्ज पाने के लिए जो जमानत पेश करता है वह साधारण बन्धक की अपेक्षा काफी मूल्यवान होती है; और इसीलिए निगम की तीसरी स्वामी सस्था, म्युचूअल सर्विस इन्श्यूरेन्स कम्पनी सम्पत्ति के वास्तविक मूल्य से काफी अधिक धन राशि उधार दे पाती है, जो वह अन्यथा नही दे सकती थी।

इस प्रकार अपनी बीमा कम्पनियों के विश्वास पर छोडा गया जनता का अधिकतर पैसा उन्हीं की स्थानीय सहकारी सस्थाओं के वित्तीय प्रबन्ध मे लगाया जा सकता है। फिर जनता का पैसा जमीन-जायदाद मे कम-से-कम फँसना चाहिए जिससे ज्यादा पैसा साधित्र-सरंजाम, तनख्वाह, सेवाओं के विस्तार और दूसरे कारबारी कामों पर खर्च किया जा सके।

देश के दूसरे भागों मे भी भूमि-सम्पत्ति के विकास कार्यो मे लगी सहकारी संस्थाएँ कुछ इन्ही से मिलते-जुलते तरीकों पर काम करने लगी है।

आज से तीस बरस पहले जब इनका जन्म हुआ था तभी से 'सहकारी' बीमा कम्पनियाँ बहुत तेजी से बढती और उन्नति करती आई है। क्योंकि ये कम्पनियाँ बीमा करवाने वाले स्त्री-पुरुषों की आवश्यकताओ से निर्देशित और उन आवश्यकताओं का पूरा करने के ज्यादा अच्छे और नये उपायो के अन्वेषी दूरदर्शी पुरुषो से निदेशित होती है। अधिकाश कम्पनियाँ १९२८-२२९ मे या मन्दी के वर्षो मे बड़ी अकिंचनता से, मामूली साधनो के सहारे खड़ी हुई थी वहाँ आज तेरह विशाल सहकारी बीमा कम्पनियाँ है और उनका सम्पूर्ण चालू बीमा व्यवसाय ७ अरब डालर से भी अधिक होगा। सहकारी लीग ने इन कम्पनियो के काम-काज के बारे मे १९५० से १९५७ तक के जो तथ्य एकत्रित किये है उनमे से कुछ इस प्रकार हैं:

सहकारी हताहत और अग्नि बीमा कम्पनियो ने इन सात वर्षों मे प्राप्त होने वाले प्रत्यक्ष प्रीमियम मे ७,६५,००,००० डालर से १८,०१,००,००० डालर की वृद्धि की जबकि १९५७ मे वे इस क्षेत्र मे हमारे देश के कुल बीमा व्यवसाय का केवल १·५ प्रतिशत प्रीमियम प्राप्त कर रही थी। सहकारी बीमा कम्पनियों की इस १३५ प्रतिशत वृद्धि के मुकाबले देश के इस क्षेत्र के कुल बीमा व्यवसाय के प्रीमियमो मे केवल ७८ प्रतिशत वृद्धि हुई।

जीवन-बीमा का काम करनेवाली सहकारी कम्पनियों की प्रगति के आँकड़े तो और भी प्रभावोत्पादक है। १९५० मे उनके पास १ अरब ७ करोड़ डालर मूल्य के बीमे थे जो १९५७ मे बढ़कर ५ अरब १४ करोड़ डालर के हो गए; यह वृद्धि पाँच गुने के लगभग है। १९५७ मे उनके पास देश के समस्त जीवन-बीमा व्यवसाय का केवल १·१ प्रतिशत था, लेकिन उनकी इस ३८२ प्रतिशत वृद्धि की तुलना मे देश के इस क्षेत्र के कुल व्यवसाय मे केवल ९९ प्रतिशत वृद्धि हुई।

इन कम्पनियों ने बीमा व्यवसाय मे पालिसी धारियों को लाभ पहुँचाने वाली कई नई पद्धतियो क प्रचलन किया और अन्य व्यापारी कम्पनियाँ को भी प्रतियोगिता मे टिके रहने के लिए उन पद्धतियों को अपनाना पड़ा। इधर

के वर्षों मे सहकारी बीमा नेताओ के सामने एक नई समस्या आ खड़ी हुई है; वह है स्फीती के दौरान बीमा-व्यवसाय मे निवेशित डालर के निरन्तर अवमूल्यन से अपने पालिसी धारियों की रक्षा की समस्या। १९५२ मे नेशनवाइड इन्श्यूरेन्स ने म्युचूअल इनकम फाउण्डेशन को उसकी समस्त आस्तियों सहित खरीद लिया। इस सुस्थित निवेशकर्ता कम्पनी के माध्यम से नेशनवाइड ने अपने पालिसी धारियों के लिए सुव्यवस्थित कम्पनियों की अच्छी आय और सतत वृद्धिशील लाभवाली प्रतिभूतियों मे अपनी बचतों को लगाने का एक बहुत ही अच्छा अवसर उपस्थित कर दिया। नेशनवाइड के विक्रेता अपने ग्राहकों को बीमा की पालिसियो के साथ-साथ म्युचूअल इनकम फाउण्डेशन के हिस्से भी बेचते है। १९५९ के एक ही वित्तीय वर्ष मे म्युचूअल के हिस्सो के पूँजीगत शुद्ध मूल्य मे २५ प्रतिशत की वृद्धि हुई। हिस्से धारियों को अपने निवेश पर ३.६ प्रतिशत लाभांश मिला और ७.२ प्रतिशत पूँजी गत लाभ हुआ। बीमा करवानेवालों ने इस अवसर से पूरा-पूरा लाभ उठाया; और म्युचूअल की शुद्ध आस्तियों की निधि इस एक ही वर्ष मे ४९ लाख डालर से बढ़कर १ करोड़ २७ लाख डालर हो गई; ६३ लाख डालर मूल्य के हिस्से बिके और बीमा के कारबार मे भी बहुत अधिक वृद्धि हुई।

पालिसी धारियों की इस नई वित्तीय सेवा मे नेशन वाइड इन्श्यूरेन्स की अत्यधिक सफलताओं से प्रेरित होकर सहकारी लीग ने १९५९ और १९६० मे अपने निदेशक-मण्डल की कई बैठको मे काफी विचार-विमर्श के बाद व्यापक आधार वाले वित्त विनियोजन के लिए अमरीकन कोआपरेटिव्स के नाम से एक नया कार-बार शुरू करने का निश्चय किया।

सम्मिलित निवेश निधियाँ छोटे निवेशकर्ताओं के लिए तेजी से बढ़ने वाले पूँजी निवेश का बड़ा ही सुलभ और प्रिय साधन हैं। ये साधन औसत परिवार या छोटी व्यापारी संस्था को अत्यधिक सुरक्षित और एक ही साथ कई तरह की प्रतिभूतियों में अपनी बचतें लगाने का अवसर देते है। इसके अतिरिक्त ये निम्मलित निधियाँ सभी दृष्टियों से मूलतः विशुद्ध सहकारी सस्थाएँ है।

इसी से सहकारी लीग के निदेशकों के मन मे यह विचार उत्पन्न हुआ कि देश के कई सहकारी बीमा व्यवसायों की प्रवर्तकता में एक सम्मिलित निधि ही

क्यों न संगठित की जाए और क्यो न उसे सन्तुलित, वैविध्यमुखी (बहु प्रयोजनीय) और खुली निधि रखा जाए ? इसका अर्थ यह हुआ कि उस निधि के अर्द्धांश को तो उन सहकारी व्यापारो की प्रतिभूतियो मे निवेशित किया जा सकेगा जिनकी निरन्तर लाभदायी निवेश के रूप मे बहुत ही अच्छी ख्याति है। शेष अर्द्धांश को ऐसे वाणिज्योय (सहकारी नही) व्यवसायो के सामान्य हिस्सों मे निवेशित किया जायेगा जो केवल उपार्जन की ही नही वृद्धि और पूँजीगत लाभ देने की क्षमता भी रखते हों। इस तरह की निधि, यदि उसका प्रबन्ध अच्छी तरह और कुशलता से किया गया, जो कि करना ही होगा, तो सभी के लिए पूँजी लगाने का सुदृढ़ और आकर्षक साधन होगी। विशेष रूप से अपनी सदस्य संस्थाओं के, जो अभी एक बार मे केवल एक ही सहकारी उद्यम मे पूँजी लगा सकती है, कुल निवेश के काफी बडे अंश को अपनी ओर आर्कषित कर सकेगी। सम्मिलित निधि के माध्यम से वे एक साथ कई सहकारी संस्थाओं की अलग-अलग प्रति-भूतियों मे अपनी पूँजी लगा सकेगी। जहाँ अभी सहकारी सदस्य परिवारों का सहकारी व्यापारो के कुल निवेश मे दो या तीन प्रतिशत भी नही है वहाँ इस तरह की सम्मिलित निधि चालीस या पचास प्रतिशत क्यो नही ला सकते ? और सामान्यतः यही तर्क सहकारी व्यवसायों के अपने अधिशेषों के निवेश पर भी जिनका काफो-कुछ अंश सहकारियों के प्रतिस्पर्द्धियो की जेबो मे पहुँच गया है, लागू होता है। यदि सम्मिलित निधि सहकारी-निवेश-अभिमुखी होकर सफलता और ख्याति प्राप्त कर सकती है तो जनता की सहकारी सस्थाओं द्वारा निय-न्त्रित जनता के धन के अधिशेषो को क्यों बड़े निकायो मे प्रवाहित नही किया जा सकता और जनहित मे उनका इकहरे के स्थान पर द्विगुणित उपयोग भी क्यो नही किया जा सकता ?

इसके अतिरिक्त लीग के सलाहकारी और सचालक मण्डल इतनी अधिक पूँजी की आवश्यकता महसूस करते है जिसकी उन्होंने पहले कभी कल्पना भी नही की थी। निम्न और मध्यवित्त परिवारो की आर्थिक-सहायता-प्राप्त मकानो की आवश्यकता को पूरा करने की दिशा मे अकेले न्यूयार्क क्षेत्र मे जो प्रयत्न किया गया उसकी इतनी सराहना हुई और माँग इतनी अधिक बढ़ी कि अकेले उसी क्षेत्र के लोगों और समुदायों को लाभान्वित करने के लिए करोड़ो डालरो

की आवश्यकता है। कतिपय सहकारी स्वास्थ्य योजनाओं ने चिकित्सा-व्यवस्था के निरन्तर बढ़ते हुए मूल्यों की समस्या को हल करने और उच्च कोटि की व्यापक स्वास्थ्य और चिकित्सा सेवाओं को सामान्य परिवार के लिए सुलभ करने में काफी प्रशसनीय कार्य किया है; इसलिए इन योजनाओं की—सुस्थापित और नई दोनों ही-साधन-सुविधाओं की वृद्धि के वित्तीय प्रबन्ध के लिए भी काफी धन की आवश्यकता है। पिछली दशाब्दी में देश के सभी भागों में सौदा खरीदने के उपभोक्ता सहकारी केन्द्र—सहकारी बाजार—काफी बड़ी सख्या में स्थापित हुए हैं। देश की वितरण-प्रणाली पर उपभोक्ताओं के स्वामीत्व को तेजी से बढ़ाते जाने का समय भी हो चला है, जिससे इस महत्त्वपूर्ण क्षेत्र में लाखों नये परिवारों का स्वामीत्व विस्तारित किया जा सके और एकाधिकार के प्रसार को रोका जा सके।

लेकिन इन सब कार्यों के लिए इतनी अधिक पूँजी की आवश्यकता है जिसे मारे वर्तमान सहकारी वित्तीय सगठन मिलकर भी शायद ही पूरा कर सके।

सबसे बड़ी और तात्कालिक आवश्यकता तो अमरीकी किसानों की है। अमरीकी कृषि की उत्पादन शीलता और औद्योगिकीय दक्षता में विविध प्रकार की क्रान्तिकारी उन्नति के बावजूद उनकी आय निरन्तर गिरती जा रही है—कौन जाने उनकी आय में यह ह्रास इन नये क्रान्तिकारी परिवर्तनों के ही कारण हो! और इस हालत को सुधारने के लिए सिर्फ एक प्रस्ताव सुझाया जा सका, उसके अतिरिक्त कहीं से किसी ने भी कोई सुझाव नहीं दिया। और वह एक मात्र सुझाव है कृषक-स्वामी त्वकृत सहकारी सस्थाओं के कार-बार में, कार्यक्षेत्र और परिमाण दोनों ही दृष्टियों से, अधिकाधिक विस्तार करते चले जाना। इसी तरीके से किसानों की आर्थिक मोल-भाव करने की अपहृत शक्ति को पुनः प्राप्त किया जा सकता है। इसी तरीके से किसान उन उद्योगों की कुछ आय को, जो पहले कृषि से पैसा कमाया करते थे, अपनी आय में जोड सकते हैं। सहकारी कृषक-स्वामीत्व के अन्तर्गत एकीकरण कृषकों के उस एकीकरण से बहुत भिन्न है, जो वाणिज्यीय हित अपने पशु-खाद्य व्यवसाय की उन्नति के लिए करना चाहते हैं।

इसलिए १९५९ का अन्त होते-होते सहकारी लीग के निदेशक मण्डल ने

एक सम्मिलित निधि स्थापित करने के पक्ष मे निर्णय कर लिया। अभिसविदा मे यह तय किया गया कि निधि खुली होगी अर्थात् जब भी कोई चाहे हिस्से खरीद सकेगा और जिस समय भी चाहे हिस्सों को निधि के तात्कालिक मूल्य पर निधि को ही बेच भी सकेगा। दूसरे यह कि निधि सन्तुलित होगी, अर्द्धांश सहकारी और अन्य प्रकार की निरन्तर लाभदायी प्रतिभूतियों मे निवेशित होगा और शेष अर्द्धांश दूसरे प्रकार के व्यवसायों के हिस्सों मे। तीसरे यह कि निधि वैविध्य मुखी होगी, अर्थात् एक बार मे किसी भी एक कम्पनी मे उसकी कुल आस्तियों के पाँच प्रतिशत मे अधिक नही लगा रहेगा।

सम्मिलित निधि की व्यवस्था और सचालन के लिए जो हामीदार और निवेश-प्रबन्धक कम्पनी बनाई जाने को थी उसके स्वामीत्व मे सहभागी बनने के लिए सभी सहकारी व्यवसायों को खुला निमन्त्रण दिया गया। और जो सहकारी लीग के सदस्य नही थे उनमे से भी बहुतो ने इस कम्पनी मे अपनी पूँजी लगाई।

सहकारी वित्त-विनियोजन—जनता की आवश्यकताओं और जनता के व्यापार मे जनता का पैसा—के क्षेत्र मे इस नये उद्यम का भविष्य इतनी जल्दी बता पाना तो असम्भव ही है; लेकिन यह निर्विवाद है कि आज अमरीका के सहकारी व्यवसाय के नेताओं मे एक नये प्रकार की नीति-मर्मज्ञता दिखाई दे रही है; और उससे यह आशा बँधती है कि जनवाद के इस विश्व व्यापी संकट काल मे सहकारिता का सिद्धान्त और आचरण अमरीकी जनता के एक भाग को मानव-इतिहास मे प्रथम बार सम्भवतः यह प्रदर्शित करने की योग्यता प्रदान कर सके कि जनता के पैसे, जनता की साख और जनता की बचतों का कम-से-कम कुछ अंश तो जनता के अधिकार मे रखा और जनता के लाभ के लिए उपयोग मे लाया ही जा सकता है।

आरम्भ मे कहा गया था कि इस अध्याय मे यह भी बताया गया है कि "जनता की साख का उपयोग—और दुरुपयोग भी-कैसे किया जाता है; उस साख को कैसे आधुनिक जीवन का शक्तिशाली उपकरण बनाया जाता है, और जिनकी वह साख है उन्ही के जीवन का नियन्त्रित करने वाला हथियार भी।"

अध्याय को समाप्त करने से पहले इस विषय पर भी कुछ कह देना आवश्यक है।

इसमे जितनी भी सहकारी वित्तीय संस्थाओं की चर्चा की गई है उनमें से काई भी हमारे देश की मुद्रा-प्रणाली के प्रभाव क्षेत्र से बाहर नही है। इस-लिए इस मुद्रा प्रणाली की कुछ विशिष्टताओं और खतरों का उल्लेख कर देना आवश्यक है, क्योंकि ये दोनो विशेषताएँ अपनी बचतों का और अपनी साख के उपयोग का नियन्त्रण करने वाले लोगों को अत्यधिक महत्त्वपूर्ण बना देती है। और जहाँ तक नियन्त्रण का प्रश्न है वह तो सहकारी वित्तीय सस्थाओं के इतने महत्त्वपूर्ण निष्पादन के बाद भी अभी आरम्भिक अवस्थ मे ही है।

हमारी वर्तमान मुद्रा-प्रणाली ने हमारी आर्थिक सम्पन्नता को ऋण की निरन्तर वृद्धि का वशवर्ती बना दिया है। समुचित विकास और अधिकतम रोजगार के लिए आवश्यक रुपया हम ऋण का निरन्तर बढ़ाते रह कर ही पा सकते है। हमारी मुद्रा का निर्माण निजी व्यापारी बैको के द्वारा उस समय किया जाता है जब वे कर्ज देती है और उस समय भी जब वे बचत-प्रत्ययों के बाहर की रकम का निवेश करती है। मुद्रा का निर्माण मूलतः राजकीय कार्य-व्यापार है, इसे निजी हितों के हाथ मे देना बड़ी विचित्र और करीब-करीब अवैधानिक बात है; लेकिन यह परिणाम है आशिक आरक्षित कोष की उस पद्धति का जिसपर हमारी व्यापारी बैंकदारी प्रणाली चल रही है। इसका मतलब यह हुआ कि बैंको को इस बात की अनुमति है कि वे जितना रुपया लगाना और कर्ज देना चाहें उसका केवल एक अश सचित कोष के रूप मे अथवा हाजिर रख सकती है। बाकी वे जो भी कर्ज देती और निवेश करती है वह सब उधार है जिसे उन्होंने अपनी खाता बहियों मे आँकड़ो की लिखा-पढ़ी करके 'बना लिया है', या कहना चाहिए कि 'गढ़ लिया है' फेडरल रिजर्व बोर्ड ने बैंकों के लिए आरक्षित कोष २० प्रतिशत से भी कम निर्धारित किया है। इससे बैंकों को यह सुविधा हो गई है कि वे हुकमी-जमा-उधारियाँ (ऐसा उधार जो माँगे जाने पर तुरत जमा किया जाए) मनचाही मात्रा मे गढ़ कर ब्याज से कर्ज पर चला सकती हैं। केवल २० प्रतिशत आरक्षित निधि से बैकों नई दर्शनी मुद्रा तुरत-फुरत गढ़कर पाँच गुने डालर तक उधार पर उठा देती है, मानो फेडरल रिजर्व बैंक की बहियों मे नकद या उधार उनका इतने डालरो का सचित कोष दर्ज हो। इसी प्रकार जब बैके सरकारी बाण्ड खरीदती है तो वे उनको

खरीदने के लिए सरकार और जनता की साख का, उधारी का, अर्थात् मुद्रा का निर्माण करने की शक्ति का उपयोग करती हैं। इसका मतलब यह हुआ कि बैंकों को जो ब्याज मिलता है वह उनको राष्ट्र की ओर से दिया गया उपदान है। और इसका मतलब यह भी हुआ कि सरकार अपनी ही उधार पर स्वयं ब्याज चुकाती है।

१९५१ मे राष्ट्रीय ऋण पर लगभग ५३ अरब डालर ब्याज हुआ था। १९५९ मे वह ९ अरब डालर हो गया, जिसका एक प्रमुख कारण ब्याज की दरों मे वृद्धि भी थी।

राष्ट्र ने मुद्रा-निर्माण का अपना अधिकार यों हस्तान्तरित कर दिया है इसलिए ऐसा माना जाता है कि स्वय उसे उस अधिकार का उपयोग नही करना चाहिए। वह स्वयं तो ऐसा कभी नही करता; लेकिन जब फेडरल रिजर्व बैंके बैंक-प्रदत्त उधार का नया सचित कोष गढ़ती हैं तो कुछ-कुछ ऐसा आभास होता है मानो राष्ट्र अपने हस्तान्तरित अधिकार का उपयोग कर रहा हो। इसका कारण यह है कि सभी फेडरल रिजर्व बैंके निजी कम्पनियो के स्वामीत्व की होते हुए भी उन पर कुछ अशो मे तो काग्रेस और कार्यपालिका के द्वारा राष्ट्र का सार्वजनिक-नियन्त्रण रहता ही है। जब तक फेडरल रिजर्व बोर्ड और बैंके यह स्वीकार करती रहेगी कि वे मुद्रा के निर्माण और नियन्त्रण के मूलतः सार्वजनिक एव राजकीय कार्य को कर रही है तब तक ऋण की निरन्तर वृद्धि वाली चिरकालिक समस्या के अतिरिक्त इस प्रणाली के ठीक-ठाक चलते रहने की सम्भावना है।

लेकिन इसके लिए यह आवश्यक है कि आरक्षित कोष वाली पद्धति जनता के हित मे काम करे न कि निजी ऋण दाता और महाजनी संस्थाओ के हित मे।

फेडरल रिजर्व बोर्ड ने ऐसा इक्की-दुक्की बार किया है लेकिन उतना ही काफी नही है, उसे ऐसा अधिक बार करना चाहिए।

यह बात किसी भी तरह समझ मे नही आती कि ऋण बढा कर मुद्रा प्राप्त करने वाली पद्धति पर निर्भर करके हम यथोचित विकास, अधिकतम रोजगार और मूल्यों का स्थिरीकरण कैसे कर सकते है ? ऋण की बढ़ती ही वह मूल्य है जिसे चुका कर आवश्यक मुद्रा का निर्माण किया जाए और तब कही जाकर

आर्थिक विकास हो। इस तरह जो कृत्रिम मुद्रा अस्तित्व मे आती है वह ऋण के कम होते ही सहसा गायब भी हो जाती है। और इस बीच संयुक्त राज्य को सरकार विवश होकर अपनी ही उधार जमा पर स्वयं ब्याज देती रहेगी।

समय का तकाजा है कि इस पद्धति मे कुछ परिवर्तन किये जाएँ।

अर्थ व्यवस्था मे उत्पादन क्षमता को बढ़ाने और मूल्यो की यथोचित स्थिरता को बनाये रखने के लिए पर्याप्त नई मुद्रा—लेकिन पर्याप्त से जरा भी ज्यादा नही—अपने कार्यो से और कर्ज के परिमाण को बढ़ाये बिना समय-समय पर स्वयं निर्माण करने का उत्तरदायित्व संयुक्त राज्य की सरकार को ग्रहण करना चाहिए।

जिस अनुपात मे सरकार मुद्रा-निर्माण के अपने उचित कर्त्तव्य को पूरा करे उसी अनुपात मे निजी व्यापारी बैंको की मुद्रा-निर्माण करने की शक्ति कम कर दी जानी चाहिए।

इस तरह की वैज्ञानिक मुद्रा-प्रणाली से ही हमारे वर्तमान राष्ट्रीय ऋण के पर्वताकार बोझ को क्रमशः घटाया जा सकेगा। इस प्रणाली का अवलम्बन करके ही मुद्रा की स्फीति अथवा अव स्फीति को सार्थक ढग से रोका जा सकेगा। आर्थिक समस्याएँ केवल आर्थिक नही राजनीतिक भी होती है और राजनीतिक समस्याओ पर विचार करना इस पुस्तक का अभीष्ट नही है। परन्तु एक नागरिक के नाते तो वे हमारी चिन्ता और चिन्तन का विषय है ही।

---

१० | उपभोक्ताओं की संगठित क्रय-शक्ति

इस पुस्तक मे हमने जितने भी प्रकार के सहकारी उद्यमो की चर्चा की है वे या तो उपभोक्ता सहकारी है अथवा 'उपयोक्ता' सहकारी। किसानों की विक्रय सहकारी सस्थाओ के बारे मे भी यही बात कही जा सकती है। किसानो को अपनी फसले सहेज कर रखने की सुविधाओ और उन्हे व्यवस्थित ढग से बेचने का प्रबन्ध करने वाली संस्था की आवश्यकता होती है। विक्रय सहकारी सस्थाएँ ठीक यही सेवाएँ प्रदान करती है और किसान उनका उपभोग या उपयोग करते है।

यदि इसे शब्दों की खीचा-तानी समझा जाए तो यह खीचा-तानी केवल विक्रय सहकारी सस्था के ही सम्बन्ध मे सच हो सकती है। सहकारी स्वास्थ्य योजनाएँ उन जन-समूहो को स्वास्थ्य-परिचर्या प्रदान करने के लिए सगठित की जाती है जिन्हे इस तरह की परिचर्या की आवश्यकता है और जो उसका उपभोग करते है। गृह-निर्माता सहकारी सस्थाएँ मकानो के उपभोक्ताओ के द्वारा बनाई जाती है और वे ही उनके स्वामी होते है। विद्युत् सहकारी सस्थाएँ ग्रामीण जनता के उपभोग के लिए बिजली प्रस्तुत करते है; यदि ये विद्युत् सहकारी न होते तो ग्रामीण जनता आज भी बिजली की अपभोक्ता न बन पाती। फारम-आपूर्ति सहकारी तो विशेषतः ऐसे उत्पादनो का सम्भरण करने वाली सहकारी सस्थाएँ हैं जिनका किसानों को अधिकाधिक मात्रा मे उपभोग करना चाहिए ताकि वे अपने कृषि-सम्बन्धी कार्यो को दक्षतापूर्वक कर सके। साख-संघ ऐसी उपभोक्ता सहकारी सस्थाएँ है जो अपने सदस्यो की ऋण और साख-सम्बन्धी माँगों को पूरा करती है। सहकारी बीमा कम्पनियों का उद्देश्य बीमा सेवाओ के उपभोक्ताओं को इस योग्य बनाना है कि वे अपनी बचतो का प्रभावशाली नियन्त्रण स्वय कर सके। विभिन्न प्रकार की उधार-सुविधाएँ प्रदान करने वाली फारम उधार प्रणाली के किसान उपभोक्ता हैं। पेट्रोलियम सहकारी

पेट्रोल-विनिर्मित वस्तुओं के उपभोक्ताओं के हितों मे चलाई जाने वाली और उन्ही के स्वामीत्व की सस्थाएँ हैं, फिर वे उपभोक्ता ट्रेक्टर के लिए प्रचुर आवश्यकता वाले किसान हों या अकेली मोटर गाड़ी के लिए पेट्रोल चाहने वाले नगरवासी हों। यहाँ तक कि स्वतन्त्र फुटकर विक्रेताओं के थोक सहकारी भी अपने सदस्यों को थोक माल और थोक की सेवाएँ प्रदान करते हैं और उनके सदस्य उस माल और उन सेवाओं का अपने व्यापार के दौरान में उपयोग करते हैं।

इसलिए यह अध्याय 'उपभोक्ता' सहकारी सस्थाओं के बारे में नहीं है। उनके बारे में पिछले अध्यायों मे जितना कहा गया है उतना ही इस अध्याय मे भी है।

लेकिन यह अध्याय उन सहकारी सस्थाओं के बारे में अवश्य है जिनका विचार 'उपभोक्ता सहकारी' शब्दों के बोले जाते ही अधिकाश लोगों के मन मे घूम जाता है।

वे हैं सहकारी खाद्य स्टोर्स, वृहद् भण्डार (सुपर मार्केट्स्) और सौदा खरीदने के केन्द्र यानी सहकारी बाजार।

'उपभोक्ता सहकारी' शब्दों के साथ मन मे इनका विचार आना असंगत भी नही है। क्योंकि औसत परिवार अपनी आय का ४० प्रतिशत भोजन पर खर्च करता है। उपभोक्ता के नाते जनता की सबसे अधिक और एकमुखी रुचि खाद्य-भण्डार मे या उसके इर्द-गिर्द ही होता है। उपभोक्ता के नाते जनता की सगठित क्रयशक्ति का कुछ प्रभाव तो अर्थ व्यवस्था पर पड़ता ही है, चाहे वह क्रयशक्ति तेल, स्वास्थ्य-परिचर्या, बचत और उधार आदि किसी भी व्यापार मे क्यों न हो।

लेकिन किसी राष्ट्र की अर्थव्यवस्था पर सहकारी उद्यम का पूरा प्रभाव केवल तभी अनुभव किया जा सकता है जब जनता की बड़ी-बड़ी आवश्यकताओं को सहकारी ढग से पूरा किया जाए, जब जनता अपने बड़े खर्चों वाली आवश्यकताओं को पूरा करने वाले व्यवसायों की स्वामी बने। 'उपभोक्ता अधिमान्यता' का केवल तभी कुछ अर्थ हो सकता है। और केवल तभी अत्यधिक दृढ़ता से संगठित उत्पादकों के उद्दण्ड बल के विरुद्ध श्रेयस्कर प्रतितुलित शक्ति के रूप मे उपभोक्ता के हित का दावा और समर्थन किया जा सकता है।

कुछ देशों मे यह हुआ भी है। स्कैण्डिनेविया, स्विट्जरलैण्ड और आस्ट्रिया इसके उत्कृष्ट उदाहरण है। ग्रेट ब्रिटेन, पश्चिमी जर्मनी और हालैण्ड के नाम भी गिनाये जा सकते है। स्वीडन मे कुल विनिर्माण का ४ प्रतिशत और कुल राष्ट्रीय व्यापार का १७ प्रतिशत सहकारी सगठनो द्वारा किया जाता है। वहाँ का राष्ट्र अपना ३० प्रतिशत से भी अधिक भोजन सहकारी भण्डारो से खरीदता है। आरम्भकालीन उपभोक्ता-स्वामीत्व कृत भण्डार केवल किराने माल का काम करते थे। उसके बाद उपभोक्ताओ द्वारा प्रमुख उपभोक्ता हित का सहकारी स्वामीत्व मे व्यापक सगठन किया गया। इस आधार पर घर-गिरस्ती की आवश्यकताओ, कपड़े-लत्तो, साधित्र-सरजामो आदि की आपूर्ति का व्यापक उपभोक्ता सभरण व्यापार खड़ा हुआ। और अन्त मे विनिर्माण इसका अत्यन्त स्वाभाविक परिणाम हुआ।

बीसवी शताब्दी के आरम्भ काल मे स्वीडन मे विद्युत् प्रदाय, जूते, आटा आदि कई व्यवसायो मे जबर्दस्त इजारदारियाँ थी। आज वहाँ इस तरह के व्यवसायो मे कोई एकाधिकार नही है। इसका यह कारण नही कि सरकार को 'न्यासविनाशक' कदम उठाने पड़े। नही, स्वीडन म न्यास-विरोधी कानून है ही नही।

वहाँ उनकी जरूरत ही नही हुई। क्योकि वहाँ सहकारी सगठन राष्ट्र का ४ प्रतिशत विनिर्माण करते है और आवश्यकता हुई या उचित समझा गया तो वे ४४ प्रतिशत भी कर सकते है।

सहकारिता के आधार पर अधिकाश विनिर्माण कोआपरातिवा फोर बुन्देत नाम का राष्ट्रीय सहकारी थोक सगठन करता है। स्वीडन की फुटकर बिक्री का उपभोक्ता सहकारी सस्थाएँ इस सगठन का स्वामी है। पुकारने की सुविधा के लिए लोगों ने कोआपरातिवा का 'के' और फोर बुन्देत का 'एफ' लेकर इसका सक्षिप्त नाम बना लिया है 'केएफ या कोफा'। कोफा ने विनिर्माण इसलिए आरम्भ किया क्योंकि स्वीडनी जनता के अर्द्धांश से भी अधिक की क्रयशक्ति उनकी अपनी सहकारी सस्थाओं मे सगठित कर ली गई थी। उपभोक्ताओ के आर्थिक हित की रक्षा करना अब इन सहकारी सस्थाओं का काम था। इसलिए जब यह बात सामने आई कि उपभोक्ताओं को कुछ वस्तुओं के बड़े महँगे दाम देने पड़ते है, क्योंकि एकाधिकारियों या अर्द्ध एकाधिकारियो ने उनके

मूल्यों को 'व्यवस्थापित' कर रखा है तो कोफा के नेताओं ने इस दिशा मे कुछ करने को ठानी।

वे जो करना चाहते थे उसका नकशा बिलकुल साफ था। इजारेदारियों से प्रतिस्पर्द्धा करो जिससे वे एकाधिकारी बने ही न रह सके और उन्हे अपने उत्पादनों का कोमत मन चाहे 'व्यवस्थापन' से नही, बाजार को प्रतियोगिता से निर्धारित करनी पडे।

इसलिए कोफा ने बिजली के लट्टू बनाने का काम शुरू किया और उनके दाम चालीस प्रतिशत कम हो गए। फिर कोफा ने ऊपरी जूते (ओवर शू) बनाना शुरू किया, जो स्वाडन की प्राथमिक आवश्यकता है। और ऊपरी जूतों की कीमतें भी ग्राहकों के लिए लाभकारी स्तर तक घट गई। आटे और कुछ दूसरी वस्तुओं के सम्बन्ध मे भी ठीक यही बात हुई।

इस तरह का काम सहकारी ही कर सकते है। जहाँ व्यवसाय के दूसरे प्रकार मजबूती से जमे हुए एकाधिकार को चुनौती नही दे सकते वहाँ सहकारी, यदि उनके सदस्यों को सख्या काफी बड़ी है तो इस काम को बखूबी कर सकते है। क्योंकि सदस्यों की काफी अधिक संख्या रहने पर उन्हें अपने विनिर्मित माल की खपत की चिन्ता नही रहती—उनका बाजार सुनिश्चित रहता है।

यहाँ पर यह पूछा जा सकता है कि यदि ऐसी बात है तो स्वीडनी सहकारी सगठन ने अपने विनिर्माण कारबार को चार प्रतिशत से आगे क्यो नही बढ़ाया, वही क्यो रुक गए ? वे इसलिए रुक गए कि उपभोक्ता के रूप मे सारे राष्ट्र के आर्थिक हितों का सार्थक सुरक्षा के लिए उन्हे उससे आगे जाने की आवश्यकता नही थी, उन्होंने जितना किया उतना ही काफी था।

कोआपरातिवा फोरबुन्देत ने यह सिद्ध करके दिखा दिया कि यदि जनता को करना ही पड़े तो वह अपने कारखानो मे विनिर्माण और उत्पादन कर सकती है और पूरी सफलता से अत्यन्त शक्तिशाली एकाधिकारों से प्रतियोगिता भी कर सकती है और मूल्यो मे उचित स्तर तक कमी भी।

इतना कर लेने के बाद, बहुत ऊँची कीमते वसूल करने वाले उद्योगपतियों के मन पर सगठित उपभोक्ताओं का आतक जमाने के लिए कोफा के निदेशक-

मण्डल का किसी नई वस्तु के विनिर्माण को आरम्भ करने के प्रश्न पर केवल विचार करने के लिए अपनी बैठक आयोजित करना और लोगो को उसकी भनक पड़ जाना ही काफी है।

लेकिन ऐसा केवल तभी सम्भव हुआ जब आरम्भ मे जनता की बड़ी उपभोग्य क्रय-वस्तु-भोजन-खरीदने की शक्ति का स्वीडन के गाँवो, कस्बो और नगरो मे सहकारी स्वामीत्वकृत खाद्य भण्डारो मे व्यापक सगठन कर लिया गया।

स्वीडन और इग्लैण्ड के उपभोक्ता सहकारियों का अन्तर पाठको के लिए रुचिकर होगा। १९६० आरम्भ हुआ तब भी स्वीडनी सहकारी सगठन काफी अच्छी प्रगति करते जा रहे थे। सहकारिता से जीवन-मानो को उन्नत करने मे आर्थिक दृष्टि से अविकसित देशो के निवासियो की सहायतार्थ वहाँ ऐच्छिक चन्दे के रूप मे काफी बड़ी-बडी रकमे इकट्ठी की जा रही है। स्वीडनी जीवन, विचार और नीति पर सहकारी आन्दोलन का प्रभाव भी कम नही है। इन पक्तियों के लेखक ने एक बार एक स्वीडनी सहकारी नेता से पूछा था कि क्या आपका सगठन कोआपरातिवा फोरबुन्देत स्वीडनी आम चुनावों मे हस्ताक्षेप का प्रयत्न करता है? उन्होने तपाक से उत्तर दिया कि नही, बिलकुल नही। स्वीडन मे सहकारी आन्दोलन एकदम 'अराजनैतिक' है। लेकिन साथ ही उन्होने यह भी कहा कि जब भी जन-नीति-सम्बन्धी कोई प्रश्न उपस्थित होता है हम अपने अनुसन्धान विभाग को काम पर लगा देते है और उपभोक्ता के रूप मे जनता के हिताहित से उस नीति के सम्बन्धो पर प्रतिवेदन तैयार करवा कर प्रसारित कर दिया जाता है। ऐसे प्रतिवेदनों का हमारी सरकार पर काफी प्रभाव पडता है।

इसके विपरीत इग्लैण्ड का सहकारी आन्दोलन कटु वाद-विवाद और सुस्थापित निर्णयो की खीचातानी मे पडा हुआ है। वहाँ की सहकारी सस्थाएँ कमजोर होती जा रही है। उनका व्यापार निरन्तर घटता जा रहा है। जन-नीति पर उनका प्रभाव कुछ भी नही है।

इस अन्तर का कारण क्या है? स्वीडनी सहकारी आन्दोलन को विनिर्माण क्यों और कैसे शुरू करना पड़ा यह हम देख आये है। एकाधिकार द्वारा नियन्त्रित कुछ वस्तुओ के अधिमूल्यन को समाप्त करने के लिए उन्होंने विनिर्माण

आरम्भ किया था। यह बात तो साफ है कि इससे केवल सहकारी सदस्यों का ही नही सारी जनता को लाभ हुआ। और यही दृष्टिकोण स्वीडन के सभी उपभोक्ता सहकारियों द्वारा अपनाया गया। वे अपने सदस्यों की संरक्षण-धन वापसियों की बडी रकमे चुकाने की इतनी चिन्ता नही करते जितनी इस बात की कि सदस्यों और सभी स्वीडनासियों को लाभ पहुँचाने के लिए देश के आर्थिक जीवन को कैसे प्रभावित किया जाय; और उनका सारा प्रयत्न इसपर केन्द्रित होता है।

यह प्रयत्न सहकारी क्षेत्रों मे 'सक्रिय मूल्य नीति' के नाम से जाना जाता है।

इसका अर्थ यह हुआ कि सहकारी सस्थाएं अपना माल चालू बाजार भाव पर तभी बेचती है जब उन मूल्यो का औचित्य अर्थ नीति-सगत हो। लेकिन ठोस आर्थिक सगतियो से यदि वे कीमते ऊँची पाई गई तो सहकारी सस्थाएं उन्हे घटा देती है। इस प्रकार, सरक्षण-धन-वापसी की मोटी रकमे देकर केवल सदस्यों को ही लाभान्वित करने के स्थान पर सहकारी सस्थाओ द्वारा सदस्यों और सरक्षको को मुख्य लाभ न्यून मूल्यों के रूप मे बिक्री मे दिया जाता है। इसका प्रभाव दूसरे प्रतिस्पर्द्धियों पर भी पड़ता है और उन्हे भी कीमते घटानी पड़ती है। और यों समस्त स्वीडनी उपभोक्ताओ को लाभ होता है।

इग्लैण्ड मे ठीक इसकी विरोधी नीति का अवलम्बन किया जाता है। वह है चालू बाजार भाव पर ही बेचने की परम्परागत 'रोशडेल' नीति और संरक्षण-धन वापसी, या जैसा कि इग्लैण्ड मे इसका नाम है, 'दिवी', की राशि पर, जो सहकारी सदस्यों का प्राप्तव्य है, बहुत अधिक जोर दिया जाता है। वस्तुओं की लागत और बाजार भाव मे अन्तर कितना ही क्यों न रहे ब्रिटिश सहकारी सस्थाएँ हमेशा चालू बाजार भाव पर ही माल बेचती है और उसी अनुपात मे 'दिवी' की राशि बढा देती है। इससे सहकारी सदस्यों की सारी रुचि, और सो भी बहुत जोरों से, लाभाश पर केन्द्रित हो जाती है। लेकिन इसका दूसरा अर्थ यह हुआ कि ब्रिटिश सहकारी सस्थाएँ अपने देश की अर्थ-व्यवस्था की मूल्य-संरचना को जरा भी प्रभावित नही कर पाती। इसीलिए तो इग्लैण्ड मे स्वीडन की तरह यह नही कहा जा सकता कि सहकारी आन्दोलन द्वारा प्रसारित प्रतिवेदनों का 'बहुत अधिक प्रभाव' पड़ता है। स्कैण्डिनेविया

का भी शायद यही कारण है। यदि वहाँ के सहकारी सगठन और व्यक्ति गहरी निष्ठा और सक्रिय अभिरुचि को प्रशसनीय गुण समझते है और चाहते है कि उनके सदस्यो मे ये गुण हो तो पारस्परिक सहायता और सहकारिता के व्यापक आदर्शो को उन्हे सही अर्थो मे व्यावहारिक रूप देना चाहिए।

औसत अमरीकी तो अभी तक भी उपभोक्ता सहकारियो के बारे मे कुछ नही जानता। इसका स्पष्ट कारण यह है कि बढते हुए नगरो मे लोगों का ध्यान आकर्षित करने के लिए अभी सहकारी भण्डार और वृहद् भण्डार (सुपर-मार्केट्स्) इतनी अधिक सख्या मे नही है। ग्रामीण क्षेत्रो मे स्थिति इससे भिन्न है। वहाँ तो कई प्रकार की सहकारी सस्थाएँ है, जो अमरीकी ग्रामीण जीवन का अविभाज्य अग बन गई है।

जो प्रवृत्तियाँ १९५० के बाद की दशाब्दी मे आरम्भ हुई थी वे यदि चलती रही तो बहुत शीघ्र अमरीका का नगरवासी भी अपने देहाती भाई की तरह उपभोक्ता सहकारियो से अभिज्ञ हो जाएगा।

वास्तव मे आज इसकी बडी आवश्यकता है। आज उपभोक्ता के रूप मे अमरीकावासियों को अपना एक पक्षपोषक चाहिए। न्यास-विरोधी कानूनो का शायद ही कभी उपयोग किया गया है—खास कर बड़े अपराधियो के खिलाफ तो कभी भी नही किया गया। उपभोक्ता-हितों की रक्षा के लिए जो तथाकथित 'नियामक' आयोग बनाये गए थे उनमे, १९५० के बाद वाली दशाब्दी मे, उन्ही उद्योगों के प्रतिनिधियो को भर दिया गया जिनके नियमन की उनसे आशा की जाती है।

टेलीविजन के हर पर्दे से चमक कर, रेडियो के हर बक्से से चीत्कार कर और सभी समाचार पत्रों एवं पत्र-पत्रिकाओं से बहका-फुसला कर आज उपभोक्ताओं की जेब, मनोबल और मानसिक शक्ति पर जो चतुर्दिक आक्रमण हो रहे है उनकी तुलना मे किसी पक्षपोषक या समर्थक का न होना तो बहुत ही मामूली समस्या है।

कोई भी विचारशील व्यक्ति अमरीकन उद्योग की उपलब्धियो की प्रशसा किये बिना नहीं रह सकता। बड़े पैमाने पर उत्पादन अपनाकर इस उद्योग ने पारिवारिक बजट की पहुँच मे ऐसे सावित्र और साधन सुलभ कर दिये है जिनसे

जीवन के दैनन्दिन कार्यो और विशेष रूप से गिरस्ती के कमरतोड धन्धों मे समय और शक्ति की काफी बचत हो जाती है।

इससे नारी सार्वजनिक क्षेत्र सहित जीवन के दूसरे सभी क्षेत्रो मे सक्रिय भाग लेने के लिए आज जितनी स्वतन्त्र हो गई है उतनी मानव-इतिहास मे इससे पहले कभी नही हो पाई थी। इसका परिणाम होना चाहिए था ज्यादा अच्छी सभ्यता, ज्यादा ऊँची सस्कृति और भरा-पूरा, आध्यात्मिक जीवन।

लेकिन वास्तविकता यह है कि अति आधुनिक भवन बनाये जाते है और उनमे पुस्तकों के लिए कोई व्यवस्था नही होती।

और दूसरी बात यह कि बड़े पैमाने के उत्पादन को कोई खास बढ़ावा भी नहीं दिया जाता।

फिर सबसे बडी बात तो यह कि हमे इन न्यामतों के लिए कर्ज लेना चाहिए। और छोटे कर्ज का इलाज हमे यह बताया जाता है कि बडा कर्ज गले लगा लो-बिना यह पूछे कि शर्तें क्या है और बिना यह पता लगाये कि ब्याज की दर क्या है; बस, आँख मूँद कर ले ही लो।

१९६० के आते-आते इस सबने इतना गम्भीर रूप धारण कर लिया और अंशाश ऋण पर कुछ छिपे खर्च इतने बढ़ा दिये गए, उदाहरण के लिए मोटर को अशास उधार कि इलिनोइस के सोनेटर डगलस को इस आशय का एक विधेयक प्रस्तुत करना पडा कि ऐसी सभी भड़कीली उधार व्यवस्थाओं मे वार्षिक ब्याज को वास्तविक दरों का ईमानदारी से खुलासा करना आवश्यक होना चाहिए। इस विधेयक के प्रबल समर्थक थे श्रमिक सघ, सहकारी सस्थाएँ, साख-सघ और महिलाओं के सगठन। लेकिन ज्यादातर वाणिज्यीय हितो ने इसका विरोध किया, जो स्वाभाविक भी था, क्योंकि अधिकांश वे ही तो थे जो माल की बिक्री को अपेक्षा उस बिक्री के वित्तीय प्रबन्ध मे से अनाप-शनाप पैसा पीट रहे थे।

१९५० के बाद के वर्षों मे हमसे यह कहा गया कि हमारा देश 'बहुत गरीब' है इसलिए अपने बच्चों को शिक्षा के लिए यथेष्ठ स्कूली इमारते नही बना सकता और न शिक्षकों को ठीक ढग का वेतन ही दे सकता है। हमारा राष्ट्र 'बहुत गरीब' है इसलिए हम अपने जल स्रोतों के प्रदूषण और वायु के संदूषण को नहीं

रोक सकते। हम 'बहुत गरीब' है इसलिए गन्दी बस्तियो के उन्मूलन और अपने नगरो के पुनर्वास के लिए कोई सार्थक कदम नही उठा सकते !

लेकिन हमारी अर्थ व्यवस्था की तेजी को बनाये रखने के लिए उपभोक्ताओं को जितनी ज्यादा हो सके विलास प्रियता को अपनाना और अपने कर्ज के बोझ को बढाते जाना होगा। क्योंकि उपभोक्ताओं के क्रमश. बढ़ते हुए कर्जो और सैनिक खर्चो के बहुत बड़े परिमाण पर ही तो उत्पादक कम्पनियो के उस माल की खपत निर्भर करती है जिसे वे बाजार मे अन्धाधुन्ध फेकते रहना चाहते है। और किन चीजो का उत्पादन किया जाए इसका निश्चय भी बड़े उत्पादकों के निर्णय से होता है, उपभोक्ताओं की अधिमान्यता, उनकी माँग और आवश्यकता से नही। 'वाल स्ट्रीट जनरल' ने बिक्री-व्यवस्था के एक प्रमुख विशेषज्ञ के मन्तव्य को यों उद्धृत किया था : "बिक्री-व्यवस्था से सम्बन्धित समस्याओं का यह हल आवश्यक नही कि उपभोक्ता जो चाहें वह उन्हे दे दिया जाए, बल्कि सच्चा हल यह है कि जो हम, बिक्री व्यवस्थापक, चाहें, उपभोक्ता भी उसी को चाहे।"

इधर के वर्षों मे इस सिद्धान्त का परम आस्था से पालन करने वाला एक बिलकुल नया व्यवसाय ही चल पडा है। यह 'अभिप्रेरणात्मक अनुसन्धान' नाम का नया समाज शास्त्र है। इन अभिप्रेरणात्मक अनुसन्धाताओ ने स्तम्भित करने वाली एक जबर्दस्त खोज की है। उनकी उस खोज के अनुसार मनुष्य स्वभाव से अधम, पतित और स्वार्थी जीव है। उसे विलास की ओर प्रवृत्त करना होता है और इसी तरह उसकी ईर्ष्या, अहंकार, तृष्णा, प्रदर्शनेच्छा, लोभ, लिप्सा, आत्म प्रेम आदि की पुष्टि करके चीजों की खरीदारी की ओर। लोग वायुयान मे समय बचाने और अधिक लोगों से सम्पर्क करने के लिए सवार नही होते; वे सवार होते है न चढ़ पाने वालो की आत्म ग्लानि से अपने अह को सम्बोधित करने के एकान्त उद्देश्य से। अभिप्रेरणात्मक अनुसन्धाताओं का तो कम-से-कम यही विचार है। और ऐसे ही धुरन्धरों और उनके चेले-चपाटों को अमरीकी उद्योग प्रति वर्ष बारह अरब डालर की रकम सौप देता है सिर्फ इसलिए कि वे उनकी अभीष्ट 'अपीलों' को प्रभावकारी बना सके।

लेकिन मानव स्वभाव के बारे मे उनकी यह खोज कोई नयी बात नही है।

पुरातन धर्म ग्रन्थ (ओल्ड टेस्टामेण्ट) के रचयिताओं ने आज से चार हजार वर्ष पहले ठीक यही बात कही थी। लेकिन उन्होंने इसकी भर्त्सना की थी और, इसे इसलिए बदलने पर जोर दिया था कि कही भगवान का कोप सारी मनुष्य जाति पर ही न उतर पड़े।

लेकिन आज हमे एक सर्वथा भिन्न दृष्टिकोण दिखाई दे रहा है।

अभी कुछ ही समय हुआ शिकागो की एक बचत सस्था ने अपने रेडियो विज्ञापन को बदल कर इस तरह कर दिया है : "बचत का खयाल आप का, 'पछियों के लिए' नेक और दुरुस्त है समाज की निगाह मे। बचत आप की हमारे पास, आपके अपने मौज-शौक की ज्यादा चीजों का बढ़िया खुदगर्ज तरीका है।"

अभिप्रेरणात्मक अनुसन्धाताओं की इस स्तम्भित करने वाली खोज' मे कि उच्च अभिप्रेरकों की अपेक्षा मनुष्य को निम्नअभिप्रेरकों के माध्यम से अधिक सरलता से अभ्यर्थित किया जा सकता है, कुछ भी नया नही है। लेकिन महान जातियों और महान समाजों ने सदैव अपने नागरिकों के उच्च अभिप्रेरकों को ही बढ़ावा देने का प्रयत्न किया और असृजनशील समाज विरोधी अभिप्रेरको को नियत्रण मे रखने का। जब अहंकार, मिथ्यादर्प और अहम्मन्यता की हर भावना और स्वार्थपरता के हर आवेग को विकसित करना समाज का स्वीकृत प्रतिमान बन जाता है तो किसी भी उच्च राष्ट्रीय उद्देश्य की ग्राह्यता के लिए उस समाज के लोगों को उद्बुद्ध करना वास्तव मे ही कठिन हो जाता है।

हमारी अर्थ व्यवस्था मेंउपभोक्ताओं के महत्त्व पर किताबे लिखी जा रही हैं; और अनेक 'उच्च जीवन स्तर' पर भी लिखी जा रही हैं। लेकिन 'उपभोक्ता अधिमान्यता' पर कोई एक शब्द भी नही कहता। वह तो लुप्त ही होता जा रहा है। बड़ी कम्पनियाँ जितनी ही बड़ी होती जाती हैं और छोटी को आत्मसात् या विलयित करती जाती हैं और छोटी मरती जाती हैं, उपभोक्ताओं को उतने ही जोर से यह आदेश सुनाया जाता है कि वे "राष्ट्र व्यापी स्तर पर विज्ञापित छापा और ठप्पा वाली चीजें ही खरीदें।" लेकिन इस तथ्य की ओर तो शायद ही कभी ध्यान दिलाया जाता है कि ऐसा करके उपभोक्ता सभी स्वतन्त्र छोटे व्यापारी की असामयिक मृत्यु और सभी मूल उद्योगों मे छाई हुई

मुट्ठी-भर विशाल कम्पनियों के हाथों मे हमारी अर्थ व्यवस्था का अन्तिम नियन्त्रण सुनिश्चित कर देंगे।

टलीवीजन उद्योग मे लगे लोग प्राय इस बात की ओर इशारा करते रहते है कि राष्ट्रव्यापी टेलीविजन विज्ञापन का सारा काम सिर्फ बीस कम्पनियाँ बड़ी खूबी से सँभाल सकती है। तो "राष्ट्रव्यापी स्तर पर विज्ञापित छापों और ठप्पो वाली चीजों" को खरीदने का अर्थ हुआ उन बीस मे से कभी इस या कभी उस कम्पनी को प्रश्रय देना।

लेकिन खाद्य भण्डारो के कारोबार मे अवश्य ही जबर्दस्त प्रतियोगिता दिखाई देती है। कम-से-कम फुटकर बिक्री के स्तर पर तो हालत यही मालूम पड़ती है। पशुधन, फल और सब्जी बाजारो पर अवश्य बड़ी-बडी दुकान शृंखलाओं का एक छत्र साम्राज्य है; वहाँ कीमते वे ही तय करती है और प्रायः विशेष सुविधाएँ भी प्राप्त कर लेती है। परन्तु खाद्य-व्यापार की फुटकर बिक्री मे प्रतियोगिता से अभी तो गृहिणियाँ ही लाभान्वित होती दिखाई दे रही है।

जानकारो का ऐसा ख्याल है कि हवा के रुख को देखते तो वे दिन दूर नही लगते जब खाद्य-व्यापार की फुटकर बिक्री पर भी मुट्ठी-भर कम्पनियो का नियन्त्रण हो जायगा। और उनमे नियन्त्रण होते ही रोटी और सेम-सब्जी का भी 'व्यवस्थापित मूल्यन' शुरू हो जाएगा।

सुपर मार्केट उद्योग के सुप्रसिद्ध अग्रवर्ती राष्ट्रीय नेता मिस्टर आर० जी० जिफरमैन ने १९५६ के बोस्टन वितरण-सम्मेलन मे सच ही कहा था:

> "वर्तमान प्रवृत्तियो के हमारे अध्ययन का यदि कोई अर्थ हो सकता है तो हमे यही भविष्य दिखाई देता है कि दस या बीस बरसो मे खाद्य-पदार्थो की फुटकर बिक्री का व्यवसाय बहुत ही थोड़े हाथों मे सिमटकर रह जाएगा। १९६५ तक खाद्य-व्यापार के ७५ प्रतिशत पर गिने-चुने विशालतम सुपर मार्केट संगठनों का नियन्त्रण सर्वथा अकलपनीय बात नही है।"

'व्यवस्थापित मूल्यन' का उपभोक्ताओं की समस्या को विषम करने में कितना बड़ा हाथ होता है यह एक इसी तथ्य से स्पष्ट हो जाएग कि यदि तथाकथित 'स्वाभाविक' आर्थिक प्रभावो को अपना काम करते रहने का अवसर

दिया जाता तो १९५० के बाद की दशाब्दी में मूल्यों का जो स्फीतीकरण हुआ वह कदापि न होता। हमारी अर्थ-व्यवस्था का प्रतिस्पर्द्धी क्षेत्र १९५३ से १९५८ के बीच हुई मूल्य वृद्धि के केवल एक प्रतिशत का उत्तरदायी है। लेकिन उन वर्षों में उपभोक्ताओं के रूप में उन उद्योगों और सारे ही राष्ट्र पर थोक बिक्री के मूल्य के सूचकाक में ८ प्रतिशत समग्र वृद्धि का बोझ लाद दिया गया। इस वृद्धि के ८५ प्रतिशत की जिम्मेवारी कीमतों मे 'व्यवस्थापित मूल्यन' से बढ़ोतरी करने वाले एकाधिकारी उद्योगों पर है।

हमारी अर्थप्रणाली में उपभोक्ताओ के हितो के प्रभावी स्वत्वद्योतन का मार्ग भी अवश्य है। और ऐसा उपाय भी है जिसका अवलम्बन करके न केवल वस्तुओं के मूल्य और किस्म के सम्बन्ध में बल्कि इस सम्बन्ध में भी कि कौन सी वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन किया जाए, 'उपभोक्ता अधिमान्यता' को फिर से अर्थपूर्ण बनाया जा सकता है।

वह उपाय है उपभोक्ताओं की क्रय शक्ति को सगठित करना, जिससे वे सम्मिलित रूप से अपना दावा पेश कर सकें और जिससे उस दावे का पूरा-पूरा वजन पडे। और वह उपाय है स्वय उपभोक्ताओं को उपभोक्ता की आवश्यकताओं को पूरा करनेवाले कुछ व्यवसायों के स्वामीत्व के योग्य बनाना और इस प्रकार सार्थक प्रतियोगिता के द्वारा उपभोक्ता-हितों को प्रवर्तित करना।

लेकिन यह काम आसान नहीं है। विशेषकर उपभोक्ता के खर्च के सबसे बड़े क्षेत्र, खाद्य-व्यवसाय में तो बहुत ही कठिन है। क्योंकि आज उपभोक्ताओं को यह विश्वास दिला पाना मुश्किल ही है कि उन्हे अधिकाधिक खाद्य-भण्डारों और सुपर मार्केटों की आवश्यकता है। कई बार तो ऐसा लगता है मानो उनकी भरमार हो गई है। हालत उन दूसरे बहुत-से क्षेत्रों की तरह तो नहीं ही है जहाँ सहकारी सस्थाएँ सफल हुई। जब तक आवश्यकता ग्रस्तों ने अपनी सहकारी सस्थाएँ नहीं बना डाली ग्रामीण विद्युत् का क्षेत्र करीब-करीब खाली ही पड़ा था। यही बात खुले सूत्रवाले उच्च विश्लेषणयुक्त उर्वरक के बारे मे भी है। औसत परिवार जिनका मूल्य आसानी से चुका सकें ऐसे अच्छे और सस्ते मकानों की निर्माण योजनाएँ भी तो अभी बहुत ज्यादा नहीं है। उच्चकोटि की स्वास्थ्य-परिचर्या या सुविधाओ का भी यही हाल है। इस तरह के और भी

कई नाम गिनाये जा सकते है।

लेकिन खाद्य भण्डार ऐसी आवश्यकता नही है जिसका अभाव अमरीकी उपभोक्ता को खलता हो। १९७५ के आस पास सम्भवत: यह स्थिति हो जाए, आज तो नही है।

अमरीकी सहकारी आन्दोलन द्वारा उपभोक्ता सहकारी भण्डार की स्थापना की कहानी काफी हानि उठाने और अनेक मर्माघात सहने की कहानी है।

हमे इस बात की सही-सही जानकारी नही है कि सयुक्त राज्य अमरीका मे किराना माल का पहला उपभोक्ता सहकारी भण्डार कब स्थापित हुआ था।

सहकारिता का जो इतिहास उपलब्ध है उसके अनुसार वह १८४४ से पहले तो बन नही सकता; क्योंकि उसी वर्ष रोशडेल (इंग्लैण्ड) के उन अट्ठाइस गरीब बुनकरों के अपार कष्ट, आँसू और पसीने और वर्षो की बचत मे से पहले सच्चे उपभोक्ता सहकारी का जन्म हुआ था।

पहले अमरीकी उपभोक्ता सहकारी भण्डार का जन्म भी उसके बहुत बाद का नही होना चाहिए; यद्यपि कोई विवरण नही मिलता, हो सकता है कि खो गया हो, पर अनुमान किया जाता है कि पहला अमरीकी उपभोक्ता सहकारी भण्डार १८४४ के दो-चार वर्षो बाद ही कही स्थापित हुआ होगा।

१८७१ से लेकर १८९० तक की दो दशाब्दियों के बारे मे हमारा ज्ञान अधिक निश्चयात्मक है। ये वर्ष बडे मैदान के निवासियों के लिए घोर सकट के थे और उनसे मुक्ति पाने के लिए ग्रैगर आन्दोलन के तत्त्वावधान मे वहाँ सहकारी सगठनों की एक लहर-सी चल पडी थी। इन सगठनों के बारेमे सबसे ज्ञातक बात यह है कि उनमे से कई कार्य विधि की दृष्टि से वर्तमान शताब्दी के सहकारी 'जनरल स्टोर' की तरह के सहकारी उपभोक्ता भण्डार और फार्म आपूर्ति सहकारी सस्थाएँ थी। उनका उद्देश्य बड़े मैदान के किसान परिवारों को कम कीमत पर दैनन्दिन जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति करना था। उस समय के ग्रैगर-सस्थापित सहकारियों मे का एक इस समय भी कनसास राज्य के कैडमस में कारबार कर रहा है।

भौगोलिक विस्तार के वर्षो में, जबकि बस्ती पश्चिम की ओर बढ़ती जा रही थी और औद्योगिक उन्नति और विकास के वर्षो मे सारी अमरीकी जनता

का ध्यान उत्पादन पर केन्द्रित रहा। बीसवी शताब्दी के मध्यकाल तक यही स्थिति रही। यह सच है कि कही-कही किसी इक्के-दुक्के आदर्शवादी गुट ने उपभोक्ताओं की सहकारिता की दिशा मे भी अवश्य यत्न किये, लेकिन जनता की विचारधारा का सारा प्रवाह और प्रयत्नों का सारा जोर उत्पादन से अपनी आय मे वृद्धि करने की ही ओर रहा। अपने कमाये हुए डालरो से उपभोक्ता के रूप मे ज्यादा अच्छा काम लेने की ओर लोगो का ध्यान बहुत ही कम गया।

यही कारण है कि दूसरे प्रकार के उपभोक्ता सहकारियों से एकदम भिन्न उपभोक्ता सहकारी खाद्य भण्डारो का इतिहास ठेठ द्वितीय महायुद्ध के परवर्ती काल तक निरन्तर असफलताओं और भग्न आशाओ का इतिहास रहा है।

बीसवी शताब्दी के आरम्भिक वर्षो मे कुछ श्रमिक संघो ने, खासतौर पर खनि श्रमिक सघ (Mine Workers) ने अपने सदस्यों के लिए उपभोक्ता सहकारी भण्डार स्थापित करने का प्रयत्न किया। लेकिन वे भण्डार चल नहीं पाये; क्योंकि हेतु कितना ही उदार और आशय कितना ही उच्च क्यो न हो दूसरी सस्थाओ द्वारा जनता के लिए स्थापित सहकारी सस्थाएँ कभी सफल नही होती। जिन सहकारी सस्थाओं को जनसमूह स्वय अपने उपयोग के लिए स्थापित करते है केवल उन्ही की सफलता की अधिक सम्भावनाएँ होती है। खनि श्रमिक सघ ने जब अपने सदस्यो से कहा · "यह तुम्हारा भण्डार है इसका पोषण-सवर्द्धन करो;" तो सब लोग लगे उस दान की बछिया के मुँह फाड़-फाड़कर दाँत गिनने; और खनिको की पत्नियो ने तो थन भी टटोल डाले! और उन्होंने हर बार यही पाया कि सारा कारबार बडे ही घटिया किस्म का है और जो आदमी प्रबन्धक बना बैठा है उसकी एकमात्र योग्यता केवल इतनी है कि वह सगठित श्रमिको से सहानुभूति रखता है!

१९४० के बाद वाली दशाब्दी मे डेट्रोइट मे भी ठीक यही प्रयोग दुहराया गया, जिसका बहुत ही खेदजनक परिणाम हुआ। पुराने खेवे के श्रमिक नेता खाद्य-भण्डार के ढग की उपभोक्ता सहकारी सस्था के इतने प्रतिकूल हो गए कि उन भण्डारों को सयुक्त राज्य अमरीका मे श्रमिको का वह समर्थन नही मिल पाया जो पश्चिमी यूरोप के श्रमिक सघो से बराबर मिलता आ रहा था।

बड़ी मन्दी के वर्षों मे सहकारिता के प्रति, जो कई रूपो मे अभिव्यक्त हो

रही थी, लोगो का नये सिरे से रुचि लेना अनिवार्य हो गया। सहकारी लीग के प्रमुख सस्थापक जेम्स पीटर बारवेस की पुस्तके अधिकाधिक पढ़ी जाने लगी। उपभोक्ताओं की सहकारिता का विचार लोगो के मन मे घर करता चला गया। इस विचार के उत्साही समर्थक 'खरीदार क्लब' के सदस्यो को किराना माल देने के लिए अपने गैराज—बेशक मोटरो से खाली—देने लगे। कैलिफोर्निया मे बेकारों को अपनी आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए स्वयं उत्पादन करने के योग्य बनाने वाली अप्टनसिक्लॅअर की महाकाव्योचित रम्य, रोचक और भव्य योजना की १९३४ मे पराजय के बाद, पहली बार कई समुदायों के लोग अपनी वर्तमान आर्थिक स्थितियो को सुधारने के आशास्पद उपाय के रूप मे उपभोक्ता सहकारियों के संगठन की ओर उन्मुख होने लगे। लेकिन पूजी इन उद्यमियो के पास प्रायः होती नही थी। साधारणत: किसी बेकार को व्यवस्थापक बनाकर बिठा दिया जाता था। इसलिए इनमे से कोई भी ज्यादा दिन चल नही पाया।

लेकिन असफलताओं के इस दौर मे कुछ अपवाद भी अवश्य थे। उत्तरी यूरोप से आकर जो लोग अमरीका मे अपने समुदाय बनाकर बस गए थे वे अपने साथ 'पुराने देश' से सहकारी सफलता की परम्परा भी लेते आये थे। विशेष-कर स्कैण्डिनेवियाई और फिन लोगों मे यह परम्परा काफी पुष्ट थी। न्यू इँग्लैण्ड के कुछ समुदायों मे, कैलिफोर्निया के खाड़ी वाले प्रदेश मे, लेक सुपीरियर के हेड आफ दि लेक्स क्षेत्र मे और कुछ दूसरे स्थानो मे बीसवी शताब्दी के शुरू के वर्षो मे ठोस आधार वाले सुदृढ उपभोक्ता सहकारी भण्डार स्थापित किये गए जो आज भी धीरे-धीरे उन्नति करते जा रहे है। न्यू कोआपरेटिव कम्पनी हमारे देश के सबसे पुराने उपभोक्ता-वस्तु सहकारी भण्डारों मे से है; यह १९०८ मे दक्षिण-पूर्वी ओहियो मे चेक किसानों और चेक खनिको द्वारा स्थापित की गई थी।

१९३९ मे यूरोप मे युद्ध आरम्भ होने के साथ-साथ कहते दुख: होता है कि—जो आर्थिक सम्पन्नता आई उस समय देश मे उपभोक्ता खाद्य भण्डारों की सहकारिता का एक अस्त-व्यस्त-सा आधार अवश्य था।

दूसरे महायुद्ध के काल को हम खाद्य-भण्डार आन्दोलन मे आत्म-प्रवचना का युग कह सकते हैं। इस काल मे कई उपभोक्ता सहकारी भण्डार संगठित

किये गए। पहले से स्थापित क्षेत्रीय थोक फारम आपूर्ति सहकारियों मे से भी कइयो ने किराना माल का कामकाज शुरू कर दिया। उनका और नेशनल कोआपरेटिव का, जो बहुतसी चीजों का केन्द्रीय सम्भरण कर्ता है, व्यापार फूलता-फलता दिखाई देने लगा। लेकिन किसी ने भी यह समझने की कोशिश नही की कि लड़ाई के जमाने मे जब उपभोक्ता-वस्तुओं की तंगी हो जाती है; किसी भी प्रकार का व्यापार फलता-फूलता ही दीखता है। और इस तथ्य की ओर तो शायद ही किसी का ध्यान जा पाया कि खाद्य-पदार्थों की बिक्री करने वाला दूसरा बहुत-सी कम्पानयों के मुकाबले सहकारी बहुत-ही कम उन्नति कर पा रहे थे। ओछी पूंजी की जीर्ण बीमारी तो थी ही और प्रबन्ध बिल्कुल काम चलाऊ ढंग का। सारी कतर-ब्योंत भण्डारों की साज-सज्जा मे ही की जाती थी। इसलिए असफलताओं का दूसरा दौर वस आरम्भ होने को ही था।

इसे विडम्बना ही कहा जाएगा कि इस दौर की सबसे बड़ी असफलता ऊपर बताई गई कमजोरियों को दूर करने के प्रयत्न स्वरूप ही हुई। शिकागो मे, सहकारी भण्डारों मे रुचि रखने वालों से नगर व्यापी पैमाने पर, पूँजी उगाहने और प्रबन्ध की समुचित देखरेख एवं कन्द्रीय प्रशासन-व्यवस्था के अन्तर्गत भण्डारों की एक शृंखला स्थापित करने की दिशा मे अभियान आरम्भ किया गया। इस प्रयत्न मे तो कोई खराबी नही थी। सच पूछा जाए तो बीमारी का इलाज भी यही था। लेकिन कमजोरी यह रही कि देखरेख की व्यवस्था को ठीक से विकसित नहीं किया जा सका। भण्डार के व्यवस्थापक इसके लिए बनाई गई योजना को पूरा करने मे असमर्थ रहे। भण्डारों के लिए स्थान के चुनाव और उनकी साज-सज्जा पर जरा भी ध्यान नहीं दिया गया। ऐसे स्थानों में भण्डार आरम्भ करने की जल्दबाजी की गई जहाँ पास-पड़ोस के परिवारों ने हिस्सों मे पूँजी लगा कर भण्डारों मे अपनी रुचि और उत्सुकता अभी दिखाई भी नही थी। इस सब के परिणामस्वरूप कुछ ही महीनों मे सारा प्रयत्न एकदम व्यर्थ हो गया और पूरी योजना भहरा कर गिर पड़ी।

इस प्रकार द्वितीय महायुद्ध के तत्काल बाद के वर्ष उपभोक्ता सहकारी खाद्य भण्डारों की असफलताँ के दूसरे दौर के वर्ष सिद्ध हुए। मिडिलवेस्ट के कई क्षेत्रीय थोक सहकारी संगठनों ने किराना माल के कारबार को बन्द कर

दिया। और १९५० के लगते-लगते असफलता के महासागर मे सफलता के कुछ ही द्वीप डूबते-उतराते बचे रह सके।

१९५१ मे सहकारी लीग ने उपभोक्ता सहकारी खाद्य भण्डारो के व्यवस्थापकों का एक सम्मेलन आयोजित किया। उस सम्मेलन के विचार-विनिमय और चर्चा का मुख्य विषय यह था कि जिन सहकारियों का व्यापार निरन्तर गिरता जा रहा है उन्हे बन्द होने से कैसे बचाया जा सकता है। इस बात का बडी बारीकी से पता लगाया गया कि इन पिछले दु.खदाई वर्षो मे असफलता किन-किन कारणो से हुई। इस छानबीन मे सफलता के कारणो का भी साथ ही साथ पता चल गया और यह भी मालूम हो गया कि सफलता के लिए क्या करना चाहिए।

तब से उपभोक्ता सहकारी भण्डारों के व्यवस्थापको का सम्मेलन प्रतिवर्ष होता आ रहा है। १९५९ मे व्यवस्थापको के एक ऐसे ही सम्मेलन मे उपभोक्ता सहकारी व्यवस्थापक सघ (Consumer Cooperative Managers Association) की स्थापना की गई। इस सघ मे सबसे बडे और सबसे सफल सुपर मार्केटो और बाजार-केन्द्रों के, जिनकी सख्या आजकल तेजी से बढती जा रही है, व्यवस्थापकों की प्रधानता है। ऐसे व्यवस्थापकों और उनके निदेशक-मण्डलों में यह आत्म विश्वास स्पष्ट ही परिलक्षित होता है कि वे अपने व्यापार मे राष्ट्र व्यापी शृंखलाओ सहित किसी भी व्यापारी सगठन से मुकाबला कर सकते हैं।

इन प्रयत्नों का परिणाम क्या हुआ ?

उपभोक्ता सहकारी खाद्य भण्डार और उपभोक्ता बाजार केन्द्रो का आन्दोलन उन्नति की ओर अग्रसर हुआ। इसने एक नितान्त आवश्यक बुनियादी सबक सीखा। वह सबक है : एक अच्छा विचार ही काफी नही होता। यहाँ तक कि मनुष्य की सबसे महान नैतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक आवश्यकताओ मे आरोपित श्रेष्ठ क्रान्तिकारी आदर्श भी अपने-आप मे अकेला किसी व्यापारी उद्यम की सफलता को सुनिश्चित नही कर सकता। वे विचार और आदर्श किसी भी व्यापारी उद्यम के लिए अनमोल सम्पदा तो अवश्य है लेकिन स्वतः उनमे प्रतिफलन की क्षमता नही होती। अकेले तो वे पल्लवित और पुष्पित भी नही हो सकते। उन्हे आवश्यकता होती है प्रबन्ध कुशलता, समुचित पूँजी, बड़े पैमाने

पर कारबार करते रहने के लिए निवेश के माध्यम से काफी परिवारों की निश्चित सहभागिता और अच्छे स्थानो मे आकर्षक साज-सज्जा वाले ऐसे अधिष्ठान जो प्रतियोगियों से घटिया तो कदापि न हो। इतने सब के सयुक्त हो जाने पर भी ही किसी व्यापारी उद्यम की निरन्तर प्रगति और विकास सुनिश्चित हो पाती है।

उदाहरणार्थ :

१९४८–१९४९ के आसपास जीवन-निर्वाह के मूल्यों मे तेजी से जो वृद्धि होती जा रही थी उसे रोकने के श्रमिक सघो के प्रयत्न भी पराकाष्ठा पर थे। इन प्रयत्नो मे कुछ वैसी ही गलतियाँ दुहराई गई जो पहले महायुद्ध के समय की गई थी। लेकिन सारे विश्व के रबर उद्योग की राजधानी, ओहियो राज्य के अक्रोन नगर के युनाइटेड रबर वर्कर्स आफ अमरीका के सदस्य अपना सबक बहुत अच्छी तरह सीख चुके थे। उन्हे एक उपभोक्ता सहकारी भण्डार की अत्यन्त आवश्यकता थी; लेकिन वह ऐसा होना चाहिए जो चलता रहे, चार दिन चल कर बन्द न हो जाए। वे जानते थे कि यदि उनका भण्डार अक्रोन के बढ़िया-से-बढ़िया भण्डार की टक्कर का न हुआ तो चल नही सकेगा। इसके लिए पूँजी की जरूरत थी—दो लाख डालर के आसपास तो होने ही चाहिए। वे यह भी जानते थे कि मूल पूँजी उगाहने का सिर्फ एक ही रास्ता हो सकता है। जो परिवार नये सहकारी भण्डार के सदस्य, स्वामी और ग्राहक बनने वाले थे उन्हें हिस्से बेचकर पूँजी इकट्ठी कर ली जाए। लेकिन डेट्रोइट क्षेत्र के अनुभवो से वे यह सीख चुके थे कि केवल श्रमिक सघ के सदस्यो की आम दिलचस्पी ही काफी नही होती। उनकी पत्नियो को भी उदघाटन और शुभारम्भ से पहले सहकारी भण्डार का महत्त्व समझाना आवश्यक था। श्रमिक संघ के नेताओं और सदस्यों की आगेवानी मे अक्रोन के निवासियो ने अपने लिए एक लक्ष्य निर्धारित किया। जब तक वे बस्ती के परिवारो मे सवा लाख डालर के हिस्से नही बेच लेगे भण्डार खोलने का नाम न लेगे। यह साधारण नही, बहुत बड़ा काम था, क्योंकि उन्हे दस-दस डालर मूल्य के हिस्से एक-एक कर बेचने थे।

लेकिन उन्होने इस काम को कर डाला।

स्वयसेवको ने इस काम को किया। पूरा साल भर वे स्थापित किये जाने वाले सहकारी भण्डार के बारे मे लोगो को समझाते-बुझाते और स्त्री-पुरुषों को

दस, बोस या कभी-कभी पचास डालर के हिस्से लेकर उसका स्वामी बनने के लिए राजी करते रहे।

जब सवा लाख डालर का सकल्प पूरा होने को आया तो उन्होंने स्थानीय श्रमिक सघों के हाथ अविनानित हिस्से बेचना शुरू कर दिया। इस तरह एक लाख डालर और जमा हो गया। लेकिन अब ये सवा दो लाख डालर भी काफी नही थे, क्योंकि नये सिरे से प्राक्कलन करके आवश्यक पूँजी की मात्रा बहुत अधिक बढ़ा ली गई थी, इसलिए उन्होंने नेशन वाइड इन्श्यूरेन्स कम्पनीज से काफी मोटी रकम कर्ज लेना का निश्चय किया।

और जब कर्ज मंजूर हो गया केवल तभी सगठन कर्ताओं ने अपना सुपर मार्केट खोलने की ओर निश्चित कदम उठाये।

आखिर कोआपरेटिव एण्टर प्राइजेज आफ अक्रोन के नाम से उनका भण्डार खुल गया और खुलते ही खूब धडल्ले से व्यापार होने लगा। कारबार उस पहले दिन से आज तक बराबर बढ़ता जा रहा है। मूल भण्डार ही इतना अच्छा था कि हर सदस्य को उस पर नाज हो सकता था। व्यवस्थापक जन्म जात प्रोन्नायक था और स्थान के चुनाव एवं साज-सज्जा के बारे में उसे किसी के आगे आँखे झुकाने की जरूरत नही थी। इस कम्पनी की अपनी परेशानियाँ न हो सो बात नहीं, दूसरे सफल सहकारी भण्डारों-जैसी दक्षता भी नही है, लेकिन बावजूद इस सब के बराबर उन्नति होती जा रही है। अब यह कम्पनी पाँच भण्डार चलाती है; और इस बात का उत्कृष्ट उदाहरण कि एक नये उपभोक्ता सहकारी भण्डार को शुरू करने का सही तरीका क्या है।

ग्रीन बेल्ट कन्जूमर्स सर्विसेज सयुक्त राज्य अमरीका का सबसे बडा सहकारी सुपर मार्केट है। १९६० मे इस सहकारी ने वाशिगटन डी० सी० क्षेत्र में अपना दसवाँ केन्द्र खोला है। इसका कुल वार्षिक व्यापार दो करोड डालर के आस-पास पहुँच गया है। यों ग्रीनबेल्ट है तो स्थानीय सस्था, परन्तु अखिल देशीय स्तर पर सभी बड़ी शृखलाओं सहित समस्त फुटकर बिक्री खाद्य भण्डारों मे अपनी सदस्यता वाला यह सबसे बड़ा चौथा सगठन है। ग्रीनबेल्ट के व्यवस्थापक सैम्युअल एफ० ऐशेलमैन सहकारी व्यवसाय के सबसे बढ़िया और सदैव असन्तुष्ट रहने वाले व्यक्ति हैं। उनके नेतृत्व मे ग्रीन बेल्ट के सुयोग्य प्रबन्धक

दल ने कारबार को नये समुदायों मे विस्तारित करने, नये भण्डार खोलने, उन्हे पहले ही दिन से सफल बनाने और सेवा की उत्कृष्टता पर सदस्यता को बढ़ाते जाने के बडे सफल ढग विकसित कर लिये है। ग्रीनवेल्ट ने सुनियोजित, अडिग, ऊर्जस्व गति से निरन्तर प्रगति और विस्तार करते जाने का अनुकरणीय आदर्श उपस्थित किया है। इसने दिखा दिया कि उपभोक्ता सहकारी व्यापार को भी महानगरो के बाजार का काफी बड़ा और महत्त्वपूर्ण अग बनाया जा सकता है। निरन्तर प्रगति की ओर अग्रसर होते हुए, कुछ अशों मे सहकारी लीग के भी प्रयत्नो के फलस्वरूप, रोशडेल कोआपरेटिव्स का इसके साथ विलयन हो गया। आज ग्रीनवेल्ट क्षेत्रीय फारम-आपूर्ति थोक सहकारी संस्था, सदर्न स्टेट्स् कोआपरेटिव्स के पेट्रोल-उत्पादनो की सबसे बडी ग्राहक है। इसके सदस्यो की सख्या इतनी अधिक हो गई है कि जनवादी नियन्त्रण के लिए नितान्त आवश्यक सदस्यों की वार्षिक सभा आयोजित की ही नही जा सकती; इसलिए सारे सदस्यो का मण्डलो मे विभाजन कर मण्डल-सगठनो के आधार पर 'काग्रेस' प्रणाली और प्रतिनिधि सरकार का ढग निकाला गया जो काफी सफल रहा। 'काग्रेस' प्रणाली का मूल विचार स्वीडन की कन्जूमर्स कोआपरेटिव सोसाइटी आफ स्टाक होम से लिया गया है। ग्रीन वेल्ट केवल विचार ही लेकर रह गया हो सो बात नही, वह आइसलैण्ड के सहकारी सगठनो से मास, डेनमार्क के सहकारियो से फरनीचर और यहाँ तक कि पोलैण्ड से शूकरमांस भी आयात करता है।

यदि यह सब वाशिंगटन मे किया जा सकता है तो दूसरी जगह क्यों नहीं किया जा सकता ?

देश के उस पार सैन फ्रासिस्को खाडी के क्षेत्र मे वास्तव मे ऐसी प्रगति हो भी रही है।

वहाँ बर्कले की कन्जूमर्स कोआपरेटिव सोसाइटी इन सब कामो को कर रही है। इसके सुयोग्य व्यवस्थापक युगीन मनीला के पास एक अनमोल निधि है, वह है उनका सदस्य-कार्यशीलता-कार्यक्रम, जो सयुक्त राज्य की किसी भी सहकारी सस्था के इस तरह के कार्यक्रमो मे सम्भवत. सर्वश्रेष्ठ है। विशिष्ट मासिक सभाओ में नये सदस्यों का स्वागत किया जाता है और उन्हे सदस्यों

के लाभ के लिए सस्था जो बहुत से कार्य करती है उनकी जानकारी दी जाती है। इस कार्यक्रम, सुदक्ष प्रगतिशील सेवाओ और ग्राहको-सदस्यो मे अच्छी प्रतिष्ठा के कारण बर्कले ने केवल तीन वर्ष की छोटी-सी अवधि मे अपनी क्षमता को एक से चार भण्डारो तक बढ़ा लिया; और कारोबार एव सदस्य-सख्या तो इससे भी कम समय मे दुगुनी हो गई। अपने काम के विस्तार के सम्बन्ध मे बर्कले की नीति प्रादेशिक मर्यादाओ तक ही सीमित नही है। इसके निदेशक-मण्डल की नीति यह है कि जहाँ भी निम्नलिखित शर्ते पूरी की जा सके वही भण्डार खोल देना चाहिए :

१—समुदाय कारबार को पाँच हजार परिवारो तक बढा ले जाने की क्षमता वाला हो।

२—कम-से-कम पच सौ परिवार पचास हजार डालर सहकारी सस्था के हिस्सो मे लगाने को तैयार हो।

३—ये पाँच सौ परिवार साल-भर मे सदस्यता और पूँजी को दूना करने अर्थात् पाँच सौ नये सदस्य और पचास हजार डालर लाने का बचन दे और उसे पूरा करे।

४—समुदाय सस्था के सबसे पुराने भण्डार से पच्चीस मील के अन्दर-अन्दर हो। यह उल्लेखनीय है कि पच्चीस मील के घेरे मे घनी जन सख्या वाली सैन-फ्रासिस्को खाडी का पूरा क्षेत्रफल आ जाता है।

यहाँ से कुछ ही मील दक्षिण मे पालो आल्टो की कञ्जूमर्स कोआपरेटिव सोसाइटी भी अमरीकी सहकारिता आन्दोलन के इतिहास मे ठीक ऐसा ही अध्याय लिख रही है। इसका कार्य क्षेत्र सैन फ्रासिस्को खाडी के दक्षिणी भाग के पश्चिम मे अवस्थित वह प्रायद्वीप है जो इन दिनो बहुत तेजी से अपना विकास और उन्नति कर रही है।

१९६० के जुलाई महीने मे सहकारी लीग के पत्र 'इकानामिक बुलेटिन' (आर्थिक विवरणिका) ने दस लाख डालर या इससे अधिक का कारबार करने वाले सहकारी सुपर मार्केट्स का वार्षिक सर्वेक्षण प्रकाशित किया था। उस सर्वेक्षण का एक अश यहाँ उद्धृत किया जाता है, जिससे उपभोक्ता की सहकारिता के इन प्राथमिक सगठनो की राष्ट्र व्यापी उन्नति और विकास की

पूरी तसवीर सामने आ जाती है।

'बुलेटिन' का वह उद्धरण इस प्रकार है

१९५६ के बाद से चार और सहकारी सुपर मार्केटो ने दस लाख डालर की वार्षिक बिक्री सीमा को पार कर लिया है। प्रमुख उपभोक्ता सहकारियों से सम्बन्धित हमारे इस वर्ष के प्रतिवेदन में इन चारों का नाम प्रथम बार समाविष्ट किया जा रहा है। चार ऐसे सहकारियों का नाम भी इसमें और जोड लिया गया है जिनकी वार्षिक बिक्री दस लाख डालर के आसपास पहुँच रही है; ये चारों अपने-अपने क्षेत्र के प्रमुख सहकारी संगठन हैं। इस प्रकार अब कुल संख्या ३३ हो जाती है।

इन सहकारियों की उन्नति काफी प्रभावोत्पादक है। १९५३ में ७४,००० सदस्य थे, जो १९५९ मे १,३६,००० हो गए; इस प्रकार सदस्यता मे ८४ प्रतिशत वृद्धि हुई। सात वर्षों में (१९५३ से १९५९ जोडकर) ६०,३३,००० डालर संरक्षण धन वापसियाँ अदा की गई। एक १९५४ के अपसर्पण को छोडकर हर वर्ष पिछले वर्ष की अपेक्षा सदस्यों को अधिक राशि दी गई। आज इस उद्योग मे जैसी कडी प्रतियोगिता है उसे देखते हुए यह काफी महत्वपूर्ण है।

बिक्री में दुगुने से भी अधिक वृद्धि हुई। १९५३ में बिक्री ४,१७,७६,००० डालर थी, १९५९ में वह ८,६२,०९,००० डालर हो गई; इस प्रकार १०६ प्रतिशत वृद्धि रही। इन छह वर्षों मे केवल एक सहकारी की सदस्यता में कमी हुई, जो बहुत मामूली है; यह संस्था फार्मों के बीच काम करती है और वहाँ की जनसंख्या निरन्तर कम होती जा रही है। दो संस्थाओं की बिक्री मे कमी हुई; ये दोनों भी फारमो के बीच काम करती हैं। इनमें से एक ने नया केन्द्र शुरू किया है, इसलिए इस वर्ष बिक्री बढने की आशा है।

यह प्रगति तो महत्वपूर्ण है ही, लेकिन यदि सारे उद्योग से इन सहकारियों के कार्य-चालन की तुलना की जाए तो वह और भी महत्वपूर्ण है। चार को छोडकर बाकी सभी संस्थायें अपने सुपर मार्केट चलाती हैं, और इन सभी की बिक्री का मुख्य साधन सुपर मार्केट ही है। निम्न तालिका में संयुक्त राज्य के सभी सुपर मार्केटो के बिक्री पर शुद्ध लाभ से सहकारियों की बिक्री पर शुद्ध बचत से तुलना की गई हैं। प्रतिशत शुद्ध बचतें बिक्री की हैं और करो से पहले के शुद्ध अन्तर या चलन अनुपात को मूल इकाई माना गया है।

करों से पहले के शुद्ध अन्तर

	सुपर मार्केटों सहित		संयुक्त राज्य के
	सभी ३३ सहकारी	२० सहकारी	सभी सुपर मार्केट
वर्ष	(शुद्ध बचतें बिक्री के प्रतिशत रूप में)		(शुद्ध लाभ बिक्री के प्रतिशत रूप में)
१९५३	२.१९	२.१५	—
१९५४	१.९८	१.९८	२ ४६
१९५५	२.१७	२.१६	२.५६
१९५६	२.२८	२.२७	२.१३
१९५७	२.३२	२.४५	२.२६
१९५८	२.२५	२ ३२	२.२०
१९५९	२.३३	२.३९	२.३०

इस सस्थाओ में से कुछ और भी हैं जिनके बारे मे थोड़ा विस्तार से बताना आवश्यक है। शिकागो की हाईड पार्क सहकारी समिति शहर का सबसे बड़ा सुपर मार्केट चलाती है। यह शिकागो के मिश्रित जातियो वाले साउथसाइड के हाईडपार्क-केनवुड पुनर्विकास क्षेत्र के मध्य मे एक बिलकुल नये बाजार के अन्दर है। हाईडपार्क सहकारी समिति के व्यवस्थापक वाकर सैंडबेख व्यावहारिक आदर्शवादी, यदि किसी आदर्शवादी के लिए यह विशेषण प्रयुक्त किया जा सके, व्यक्ति है और यह सस्था सही अर्थो मे सामुदायिक सस्था है। इसने सतत परिश्रम से यह प्रतिष्ठा और मान्यता अर्जित की है। इसकी स्थापना शिकागो विश्वविद्यालय के आसपास रहने वाले परिवार-समूहो ने की थी, जिनमे सीनेटर पाल एफ० डगलस भी थे, जो उन दिनो शिकागो विश्वविद्यालय में प्राध्यापक थे। आज साउथ साइड के कोई छः हजार परिवार इसके स्वामी हैं। यह केवल नगर के अभिमान की सुदक्ष व्यापारी सस्था ही नही है, परन्तु साउथ साइड के सभी उल्लेखनीय सामुदायिक उपक्रमो और जनकल्याण-कार्यों की प्रबल समर्थक और परिपोषक भी है। इसके वेतन भोगी कर्मचारियो मे दुनिया के सभी राष्ट्रो और सभी जातियों के लोग है।

हाईडपार्क सहकारी समिति को नये बाजार मे सुपर मार्केट के लिए जगह का पट्टा देने का जबर्दस्त विरोध किया गया। लेकिन सामुदायिक आग्रह उससे कही शक्तिशाली सिद्ध हुआ। क्योंकि एक तो अडोस-पडोस के रहने वाले हजारों परिवार पहले से इसके स्वामी थे, दूसरे यह अन्यत्रवासी स्वामियों का व्यवसाय नही था और न आगे कभी हो सकता था और तीसरे उस क्षेत्र मे इसकी जडे इतनी गहरी थी कि वहाँ से हटने या कारबार समेटने की बात भी नही सोची जा सकती थी, फिर इसे पट्टा देने से किस बिरते पर इनकार किया जाता।

कुछ इसी तरह की बात, लेकिन बिलकुल ही भिन्न प्रकार के समुदाय मे, विसकोन्सिन राज्य मे यू क्लेअर की उपभोक्ता सहकारी समिति की अद्भुत सफलता का कारण हुई। इसके सदस्यो मे आधे तो आसपास के देहाती क्षेत्र के किसान परिवार है और आधे नगरवासी, जिनमे से अधिकतर यूक्लेअर के प्रमुख उद्योग, टायर फैक्टरियों, मे काम करते है। सस्था के व्यवस्थापक रैथीसेन पन्द्रह मिनट का दैनिक रेडियो कार्यक्रम प्रसारित करते है। यह सहकारी अपने

सदस्या के चेक ही नही भुनाती इस सुविधा के लिए उन्हे कुछ शुल्क भी देती है। और इस सस्था का साख-सघ नगर की सबसे शक्तिशाली और उपयोगी महाजनी सस्था है।

जब लोग अपने जीवन की एक आवश्यकता को पूरा करने के लिए साथ मिल कर पूँजी लगाना और व्यापार करना सीख लेते है तो दूसरी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए इसी ढग को अपनाना उनके लिए अपेक्षाकृत आसान हो जाता है।

१९५० तक न्यूयार्क सिटी उपभोक्ता सहकारी भण्डारों की दृष्टि से निरा रेगिस्तान था। उसके बाद एक-एक करके सहकारी गृह निर्माण योजनाएँ गन्दी बस्तियों का उन्मूलन कर वही अच्छे मुहल्लो और आदर्श पास-पड़ोस का निर्माण कर सम्मिलित स्वामियो को अपने निजी घरो मे पूरी सफलता के साथ बसाती चली गई। सहकारिता ने इन परिवारो की सबसे बडी आर्थिक माँग——मकानो की आवश्यकता को पूरा किया। इसका परिणाम यह हुआ कि इन सहकारी गृह निर्माण योजनाओ मे उपभोक्ता सहकारी भण्डार सगठित किये जाने लगे। पहले इस तरह के कई प्रयत्न असफल हो चुके थे, लेकिन इस बार के य प्रयत्न सफल हुए। और एक समय वह भी आयेगा जब 'सहकारी भण्डारो का रेगिस्तान' न्यूयार्क अमरीका का सहकारी गृह-निर्माण योजनाओ की राजधानी ही नही दूसरे अनेक प्रकार के उपभोक्ता सहकारी उद्यमो की राजधानी भी होगा।

कृषि मे सहकारिता की शक्ति का केन्द्र है क्षेत्रीय थोक और निर्माता सहकारी सस्थाएं। इन थोक सस्थाओ पर स्थानीय अथवा जिला फुटकर विक्रता सहकारी सस्थाएं अनेक प्रकार की सहायता के लिए निर्भर होती है। एक अपवाद के अतिरिक्त, उपभोक्ता सहकारी सुपर मार्केट आन्दोलन की शक्ति निहित होती है फुटकर विक्रेता सहकारी सस्थाओ मे और थोक सहकारी अधिकतर उनके लिए माल खरीदने वाली संस्थाएँ होती हैं।

उस अपवाद का कोई खास महत्त्व नही है। लेक सुपीरियर के चारो ओर का इलाका——उत्तरी मिन्नेसोटा, विसकोन्सिन और मिचीगन का ऊपरी प्रायद्वीप—सेण्ट्रल कोआपरेटिव इनकारपोरेशन का कार्य क्षेत्र है। इसके मुख्य गोदाम और प्रधान कार्यालय विसकोन्सिन के सुपीरियर नगर मे है। १९१७ मे इसकी

स्थापना मुख्यत फिन आप्रवासियों ने की थी, तब से इसका इतिहास बड़ा लम्बा और वैविध्यपूर्ण रहा है। यह अपनी सदस्य सहकारी सस्थाओ को, जो इसकी स्वामी भी है, कृषि उपयोगी और उपभोक्ता वस्तुएँ दोनो ही प्रकार के माल का सम्भरण करता है। दो सौ से भी अधिक फुटकर विक्रेता सहकारी सस्थाएँ इसकी सदस्य है; ये सब छोटे भण्डार है और आर्थिक दृष्टि से विभिन्न धुर उत्तरी देहातों के छोटे-छोटे समुदायो की सेवा करते है। लेकिन जे० वाल्डेमर कोस्की के थोक के प्रधान व्यवस्थापक बनाये जाते ही इस क्षेत्र मे उपभोक्ता सहकारिता की भूमिका एक नया रूप ग्रहण करने लगी। वह नया रूप है 'क्षेत्रीय विकास'। पूरे क्षेत्र की आर्थिक स्थिति का अध्ययन और पर्यवेक्षण किया गया। उसके बाद खूब अच्छी तरह सोच-विचार कर यह तय किया गया कि पूरी तरह अधुनातन सुपर मार्केट की स्थापना किस जगह करना उचित रहेगा। निर्णय हो चुकने के बाद थोक सगठन स्थानीय सहकारी के साथ मिल कर उन स्थानों मे सुपर मार्केट की स्थापना करता है। सभी सुपर मार्केटो की इमारते, साज-सज्जा और फर्नीचर भी एक-सा ही रखने पर जोर दिया जाता है। विशेष आग्रह इस बात का रहता है कि सहकारी सेवा-संस्थाएँ सज-धज मे भी अपने टक्कर की एक ही हों। व्यवस्था, प्रबन्ध-कौशल और कार्यकर्ताओ की शिक्षा के पाठ्यक्रम होते है। कुछ पुराने सहकारी नेताओ को इस सब का महत्त्व समझने मे काफी समय लगा। शुरू मे वे इन सब कामो को बकवास समझते रहे। लेकिन १९६० के आरम्भ मे जब सारे क्षेत्र का सबसे सुन्दर, सबसे चित्ताकर्षक भण्डार मिन्नेसोटा के क्लोकेट नगर मे उस क्षेत्र की सबसे पुरानी सहकारी सस्था ने खोला और पहले ही दिन धडल्ले से कारबार चल निकला और बिक्री निरन्तर बढ़ता ही गई तो अनुदार-से-अनुदार पुराने नेताओ की आँखे खुल गई और नये तौरतरीको का महत्त्व तुरंत उनकी समझ मे आ गया।

सेण्ट्रल काआपरेटिव्स इनकारपोरेशन के सहकारी अपने प्रदेश का लगभग ५ प्रतिशत खाद्य-भण्डार सम्बन्धी कारबार करने है। आगामी वर्षो मे इसके १० प्रतिशत—१५ प्रतिशत भी हो सकता है—तक हो जाने की आशा है। उस समय उपभोक्ता के हित का—बाजार पर जनता की संगठित क्रय-शक्ति के प्रभाव का आग्रह अधिक सार्थक हो सकेगा।

उपभोक्ता का हित ही एकमात्र सार्वजनीन हित है; अकेला यही हम सब का साझी हित है। इसीलिए उपभोक्ता-हित राष्ट्रीय आर्थिक हित का समरूप होता है। जिससे उपभोक्ताओ को लाभ होता है वह सभी के लिए लाभदायी है। उपभोक्ता के हित का प्रभावशाली आग्रह ही उच्चकोटि के उत्पादन, स्वतन्त्र बाजार मे सस्ती कीमतो, आर्थिक उन्नति और प्रचुर उत्पादन की कुजी है।

यह सब स्पष्ट ही राष्ट्र के हित मे है, या जैसा कि सयुक्त राज्य के विधान मे कहा गया है, 'सर्व साधारण के कल्याण का सवर्द्धक' है।

जनता के उपभोक्ता हित की आग्रहशीलता का अभी तक केवल एक ही उपाय सही अर्थो मे अपने को प्रभावोत्पादक सिद्ध कर सकता है। वह उपाय है उप- भोक्ता सहकारियो की स्थापना और उनका चतुर्दिक विकास।

उपभोक्ताओ की रक्षा के लिए बनाये गए कानून कुछ मामलों मे आवश्यक होते है और सहायक भी। उदाहरण के लिए खाद्य-पदार्थो की विशुद्धता और औषधियों से सम्बन्धित कानून।

लेकिन एक सीमा के आगे कानून और सरकार दोनो के ही लिए कुछ कर पाना सम्भव नही रह जाता। उपभोक्ता के हित का निश्चित और रचनात्मक आग्रह अर्थ-नीति-सगत न्यूनतम मूल्यो पर आवश्यक वस्तुओ और सेवाओ के प्रचुर उत्पादन के द्वारा ही किया जा सकता है, जिसे न कानून कर सकता है और न सरकार।

न अधिक लम्बे समय तक उत्पादको की प्रतियोगिता ही जनता के उप-भोक्ता-हितो की रक्षा कर सकता है। अर्थ शास्त्र के शास्त्रीय ग्रन्थ कुछ भी कहते रहे, औद्योगिक क्रान्ति के बाद का स्वतन्त्र जातियो का सच्चा आर्थिक इतिहास तो यही बतलाता है कि प्रतियोगिता और विशेष रूप से मूल्यो की प्रतियोगिता धीरे-धीरे कम होती जा रही है और एकाधिकार एव 'व्यवस्थापित मूल्यन' क्रमशः बढ़ता जा रहा है।

यह सच है कि जब तक अन्धाधुन्ध सैनिक खर्चे, जो धन का निरा अपव्यय है, होते रहेगे और जब तक परिवारो को उपभोक्ता ऋण के बदले अपना आर्थिक भविष्य बन्धक रखने को अधिकाधिक मात्रा में फुसलाया जाता रहेगा

ऊपरी सतह पर यही दिखाई देता रहेगा मानो हम बड़े सम्पन्न है और मानो उपभोक्ता के हित का पूरी तरह पोषण हो रहा है।

लेकिन अर्थ व्यवस्था की ये थूनियाँ तो वास्तव मे वह कीमत है जो अपनी अर्थ व्यवस्था पर एकाधिकारी उत्पादको को प्रभुत्व स्थापित करने की अनुमति देने के लिए हम चुकाते जा रहे है। आज अमरीका मे जिन्हे 'शक्तिशाली' उद्योग माना जाता है वे सब इजारेदारियाँ है—मोटर, इस्पात, रसायन, प्रसारण, समाचार पत्रो का प्रकाशन आदि। जिन उद्योगो को हम 'कमजोर' कहते है वे ऐसे उद्योग है जिनमे प्रतियोगिता अब भी है, जैसे कि वस्त्र उद्योग, कृषि इत्यादि।

यह क्यो ?

यह इसलिए कि जो भी उद्योग अपने मूल्यो को 'व्यवस्थापित' करने की स्थिति मे होता है वह जो उद्योग ऐसा नही कर सकते उनके और उपभोक्ता के रूप मे सारे राष्ट्र के माथे पर, यानी उनका शोषण करके ही मुटाता है। ऐसी स्थिति मे 'दुर्बल' उद्योगो को जीवित रखने के लिए उपभोक्ता-माँग को सैनिक खर्चो और उपभोक्ता-ऋण की वृद्धि के रूप मे आर्थिक उपदान देना आवश्यक हो जाता है, जिससे 'व्यवस्थापित मूल्यो' वाली एकाधिकारी प्रथा द्वारा वस्तुओ और सेवाओ के अधिमूल्यन से उपभोक्ता की क्रय-शक्ति का जो ह्रास होता है उसकी आशिक पूर्ति की जा सके।

इसलिए उपभोक्ता सहकारियो के महत्त्व के प्रतिपादन मे यह कहना कि अमरीकी अर्थ व्यवस्था के समक्ष निम्नलिखित तीन विकल्प है, जरा भी अत्युक्ति न होगी। पहला विकल्प तो यह है कि हम वर्तमान प्रवृत्तियो को इसी प्रकार चलने दे, अपनी अर्थ व्यवस्था पर एकाधिकार और अल्प एकाधिकार की वृद्धि को चुप खड़े देखते रहे और आँखे मूँदे हुए प्रतियोगिता के क्रमशः विलुप्त होते जाने तथा आर्थिक विकास की गति के निरन्तर मन्द होते रहने की स्थिति में पहुँच जाएँ। दूसरा विकल्प यह है कि हम सरकार को एकाधिकार की वृद्धि रोकने, प्रतियोगिता को पुनर्नियोजित करने और आर्थिक प्रगति को सुनिश्चित करने के पूरे अधिकार दे दे। लेकिन सरकार के द्वारा केवल कानून बना देने से तो कुछ भी न होगा। क्योकि सरकारी कानून पुनर्नियोजन तो कर सकते है, निर्माण या सृजन नही; गति को मन्द तो कर सकते है, उसमे तेजी नही ला सकते।

सरकार के सामने स्थिति को सँभालन का सिर्फ यही एक रास्ता है कि वह एकाधिकारियों के मुकाबले स्वय उत्पादन शुरू कर दे। लकिन केवल विद्युत्-शक्ति—जैसे उद्योगों को छोड़कर, जहाँ जनता के मूल हित बिलकुल स्पष्ट और एकाधिकार अवश्यम्भावी हो जाता है, हम उत्पादन के क्षेत्र मे सरकार की क्रियाशीलता और शक्ति का विस्तार न तो चाहेगे न उसकी अनुमति ही देंगे।

अब रह जाता है तीसरा विकल्प। यह विकल्प है जनवाद और उद्यम की स्वतन्त्रता के जिन मूल सिद्धान्तों मे हमसे विश्वास की आशा की जाती है उन दोनो का एक साथ विनियोग करना। इसका अर्थ हुआ स्वतन्त्र उद्यम को उपभोक्ता के रूप मे जनता की जनवादी सहभागिता और नियन्त्रण के अनुकूल बनाना। और इसका अर्थ हुआ अपनी अर्थ व्यवस्था मे आर्थिक सन्तुलन के पुनर्नियोजन और सर्वसाधारण जनता तथा राष्ट्र के आर्थिक हितो के आग्रह और रक्षण के लिए स्वतन्त्र जनता की हैसियत से अपने ही निजी प्रयत्नों के द्वारा बड़ी संस्थाओं मे सहकारी सस्थाओ का संगठन, संवर्द्धन और उन्नयन करना।

इस तीसरे विकल्प का सेवाओं और वस्तुओं के उत्पादन-मूल्य को प्रभावित करने के अतिरिक्त एक लाभ और भी है। वह यह कि उपभोक्ता स्वामीत्व-कृत सहकारो व्यवसायों को उन वस्तुओं और सेवाओ का उत्पादन और वितरण भी अवश्य करना होता है जिनकी उनके सदस्य-स्वामियो को सबसे अधिक आवश्यकता होती है, जैसे कि मकान, स्वास्थ्य-परिचर्या, विद्युत्, उधार पाने के लिए साख, उर्वरक, पेट्रोल के उत्पादन या किराना माल।

यह पुस्तक इन्ही सब बातों के बारे मे है। इसमे यह कहने की धृष्टता तो अवश्य नही की गई है कि सहकारी उद्यमों की आज जो प्रतियोगिता है वह संयुक्त राज्य मे आर्थिक सन्तुलन को पुनः स्थापित कर देगी; लैकिन यह दिखलान का साहस अवश्य किया गया है कि सहकारी उद्यम ने स्कैण्डिनेविया में ठीक यही कर दिखाया है, और काफी बड़ा और पर्याप्त शक्तिशाली होकर वह यहाँ भी इस काम को कर सकता है।

गृह-निर्माण, घरेलू आवश्यकताएँ, ग्रामीण विद्युत्, स्वास्थ्य-परिचर्या, पेट्रोल के उत्पादन, उर्वरक, उधार के लिए साख, और बीमा आदि कई क्षेत्रों मे सहकारी उद्यमों की विद्यमानता और प्रतियोगिता के लाभदायी प्रभावों को दिखाने वाले

कई उदाहरण दिये गए है । हम यह देख आये है कि सहकारी उद्यमों द्वारा किये गए समझौतों के कारण और सीधे इन व्यवसायो मे भी रोजगार की कितनी अधिक वृद्धि की जा सकती है, क्योंकि उपभोक्ता स्वामीत्व कृत होने के कारण इन्हें हमेशा अर्थनीति-सगत न्यूनतम मूल्य पर पूरा-पूरा उत्पादन करना होता है। हमने यह भी देखा कि अर्थ व्यवस्था के जिन क्षेत्रो को लाभ-प्रेरित व्यवसाय छूते तक नही उन नये क्षेत्रों का भी ये सेवा-प्रेरित अथवा पारस्परिक सेवा-प्रेरित उद्यम किस तत्परता से आर्थिक विकास करते है। और हमने यह भी लक्ष्य किया कि परस्पर सम्बद्ध व्यवसायो मे किसान के स्वामीत्व के अन्तर्गत सहकारियो का सशक्त एकीकृत विकास हमारी कृषि के उद्धार की अन्तिम और एकमात्र न सही बहुत अच्छी आशा तो अवश्य है।

सयुक्त राज्य मे सहकारी उद्यम के वर्तमान परिमाण का तीन या चार गुना विस्तार, जिससे वह देश का दस से बारह प्रतिशत व्यापार करने लगे, आर्थिक विकास को पर्याप्त गति, अधिकतम रोजगार और मूल्य के स्थिरीकरण के सम्पादन की दिशा मे बड़ा ही महत्त्वपूर्ण कदम होगा।

हमारी अर्थ व्यवस्था के वर्तमान सकट का कारण है थोड़ी-सी, बड़ी-बड़ी उत्पादक इकाइयों के हाथ मे बहुत अधिक आर्थिक शक्ति का केन्द्रित हो जाना। इतना ही नही; हमारी अर्थ प्रणाली के काफी बड़े हिस्सों पर उनका एकछत्र अधिकार हो गया है। उस अधिकार को बनाये रखने के लिए वे उत्पादन का नियन्त्रण, और सीमा-बन्धन भी करते है। उस अधिकार से लाभान्वित होने के लिए वे अपने उत्पादनों की कीमते 'व्यवस्थापन' के द्वारा, जो कि सरासर अनुचित है, निरन्तर तेजी की ओर ले जाते है। लेकिन सबसे गम्भीर बात तो यह कि वर्द्धमान औद्योगिकीय दक्षता के लाभदायी फलों का काफी बड़ा अंश वे स्वयं हड़प लेते हैं, जब कि राष्ट्र की आर्थिक सम्पन्नता और स्वयं उनके अपने उद्योगो की उन्नति के लिए जनता मे उसका व्यापक वितरण नितान्त आवश्यक है। एकाधिकार के रूप मे वास्तव मे ये अर्थ-दानव स्वय अपने ही सबसे बड़े शत्रु है।

सब के अन्त मे केवल एक ही आर्थिक बल ऐसा है जो एकाधिकारी पद्धति से संगठित उत्पादकों की शक्ति को सन्तुलित कर सकता है। यदि कुरमुरे बिस्कुट बनाने का एकाधिकारी उद्योग अपने पूरे कारखाने को स्वचालित कर ले और

उसे एक भी मजदूर की जरूरत न रह जाए तब भी उन उत्पादित बिस्कुटों को खरीदने और खाने वाले लोगो की जरूरत तो उसे होगी ही, अन्यथा उसका वह सारा कारखाना ही एकदम बेकार हो जाएगा।

उपभोक्ता के रूप मे जनता की सगठित क्रय-शक्ति ही औद्योगिक एकाधिकार को प्रतितुलित करने वाला अत्यन्त स्वाभाविक और एकमात्र प्रभावी बल है। सहकारिता जनता की उस क्रय-शक्ति को सगठित करने का एकमात्र न सही, पर श्रेष्ठ साधन तो अवश्य ही है। संगठित उपभोक्ता अपने नैसर्गिक, आर्थिक हितों का अनुसरण करते समय सहज भाव से राष्ट्रीय आर्थिक हितो का प्रतिनिधित्व भी करते है। क्योंकि अन्ततोगत्वा राष्ट्र ही जनता है और जो सारे राष्ट्र का सम्मिलित हित है वही तो उपभोक्ताओं का अपना हित भी है।

यह आवश्यक नही कि अमरीका की वर्तमान समस्या को सुलझाने के लिए सहकारी तेल परिष्करण शालाओं और उर्वरक सयन्त्रो के साथ-साथ सहकारी स्वामीत्वकृत मोटर के कारखाने और इस्पात मिले आदि भी खोली जाएँ। आवश्यक यह हैं कि विभिन्न एकाधिकार-निर्मित उत्पादनो के उपभोक्ताओं की क्रय-शक्ति को इस सीमा तक संगठित किया जाए जिससे उनकी आर्थिक मोलभाव करने की शक्ति उत्पादक कम्पनियो की शक्ति को समान हो जाए।

मानना ही होगा कि यह काम बड़ा कठिन हैं। लेकिन इस बात को हमेशा याद रखा जाए कि एक क्षेत्र मे सहकारी उद्यम से उद्भूत पारस्परिक लाभ के अनुभव को वहीं संगठित जनसमूह बडी सरलता से दूसरे क्षेत्रो मे भी नियोजित कर सकता है। भोजन जीवन की पहली आवश्यकता है। इसीलिए अधिकांश देशों मे खाद्य-भण्डार को केन्द्र बनाकर उपभोक्ता क्रय-शक्ति के व्यापक सगठनो का निर्माण हुआ। लेकिन एक बार आरम्भ करके सहकारी आन्दोलन वही नही रुक जाता। वह आगे और निरन्तर आगे बढ़ता जाता है। उदाहरण के लिए स्कैण्डिनेविया का नाम लिया जा सकता है, जहाँ गृहोपयोगी आवश्यकताओ को पूरा करने के सफल व्यापार की नीव पर उन्होने अपने देश के अधिकांश बड़े एकाधिकारियों के समक्ष सहकारी उत्पादन के रूप मे एक जबर्दस्त चुनौती खड़ी कर दी है।

जो वे कर सके, कोई कारण नहीं कि उसे हम अपने यहाँ न कर सके।

---

११ | कमजोरियाँ और गलतियाँ

पश्चिमी यूरोप के देशो मे, जापान, कनाडा, प्यूर्टोरिको और कई दूसरे स्थानों मे भी लोग 'सहकारी आन्दोलन' की बाते करते है, वे सभी इस आन्दोलन के उत्साही समर्थक नही होते। लेकिन उनमे से अधिकांश इस आन्दोलन को आदर की दृष्टि से देखते है। और जो लोग इस आन्दोलन के अन्दर है वे सामान्यत: एकता की भावना का और उसके कारण कुछ आत्मिक उन्नयन और नैतिक प्रेरणा का भी अनुभव करते है।

महाद्वीपीय विस्तार वाले सयुक्त राज्य में स्थिति भिन्न है; क्योंकि यहाँ सहकारी और पारस्परिक व्यापारों के विभिन्न प्रकार सारी दुनिया से अधिक संख्या में है; और निश्चय ही उनके उद्भव और अस्तित्व के यहाँ भिन्न-भिन्न कारण भी हैं। हमारे यहाँ भी लोग कभी-कभी 'अमरीकी सहकारी आन्दोलन' की बात करते है। लेकिन प्राय: ठीक से नही जानते कि वे इस पद के अन्तर्गत किन संस्थाओं अथवा किन व्यक्तियों का समावेश कर रहे है। बहुत से व्यक्ति और संस्थाएँ, जिनका समावेश कर लिया जाता है, इस बात को बिलकुल पसन्द नही करते। उन्हे 'सहकारी आन्दोलन' पद ही पसन्द नही होता। वे इस बात पर बड़ा जोर देते हैं कि वे किसी 'आन्दोलन' का अंग नही है; वे तो अपने संरक्षक-स्वामियो और समुदायों के लिए सिर्फ व्यापार कर रहे है।

सहकारी सस्थाएँ जैसी बाहर से दिखाई पड़ती है वैसी अन्दर से नही होती। जनहित की दृष्टि से देखा जाए तो वे बाहर से सफेद, लेकिन केवल अपने हित की दृष्टि से देखा जाए तो काली दिखाई देती है। अन्दर से सहकारी सस्थाएँ और उनके कार्य अनेक आभाओ वाले दिखाई पड़ते है—श्वेताभ से लेकर गहरे धूसर तक रंग के कई क्रम विन्यास वहाँ होते है।

इन पंक्तियों के लेखक को लगभग दो दशाब्दियों तक सहकारी संस्थाओं को अन्दर से देखने का अवसर मिला है। मैंने बहुत-सी प्रेरणात्मक बाते देखी हैं : हजारों लोगों की बडी-बड़ी वार्षिक सभाएँ—अर्थ व्यवस्था मे अमरीकी

लोकतन्त्र को राजनीति के ही समान, बल्कि अनेक अंशो मे उससे भी अच्छी तरह कार्यान्वित करते हुए और अपने व्यापार के स्वामीत्व एवं नियन्त्रण के प्रति पूर्णतः सजग हजारो लोगो की सभाएँ। मैने छोटे स्थानीय सहकारी सगठन भी देखे हैं—सुसंचालित व्यापार का निष्ठा से सम्पोषण-सवर्द्धन करते हुए, उस व्यापार के भविष्य के प्रति पूरी तरह आस्थावान, कुशल निःस्वार्थ नेतृत्व में साथ जुटे हुए सदस्यों वाले स्थानीय सहकारी सगठन।

लेकिन मैंने दूसरी बाते भी देखी है। मैने ऐसे स्थानीय सहकारी सगठन देखे हैं जिनके सदस्यो को नीति-सम्बन्धी बहस मे अपनी बात सिद्ध करने की जितनी चिन्ता रहती है उसकी शतांश भी अपनी सस्था की सफलता के बारे मे नही। मैंने सहकारी सस्था के चुनावों मे 'लोकतन्त्र' के नाम पर सभी सदस्यों को 'व्यवस्थापक-पद के लिए' खड़े होते देखा है। ऐसे प्रसगो की तह में पहुँच कर मैंने पाया है कि सदस्यों की शिक्षा और गैर-सदस्य सरक्षकों को सदस्य बनाने के कार्य की नितान्त अवहेलना ही होती रही है। बहस सहकारिता की स्थानापन्न नही है।

सहकारिता का अर्थ है कि हर आदमी अपने हिस्से का काम करे, यह नही कि दूसरे के काम को करने का प्रयत्न करता फिरे।

व्यवस्थापक का काम है प्रबन्ध करना। निदेशक का काम है सामान्य नीति निर्धारित करना और उसे कार्यान्वित करने के लिए व्यवस्थापक को नौकर रखना और जरूरी हो जाए तो उसे निकाल बाहर भी करना। सदस्यों का काम है सरक्षक बनाना, सदस्यता-सख्या मे वृद्धि करना, शैक्षिक कार्यक्रमो को बनाना और कार्यान्वित करना, निदेशक-मण्डल को निर्वाचित करना और कभी-कभी पुनर्निर्वाचित नही भी करना।

मै सफलता अर्जित करने वाले ऐसे स्थानीय सहकारियो को जानता हूँ जिनके सदस्य आत्म-सन्तोष के घरौदे मे आराम से टाँगे पसारे पड़े रहते है और समूचे सहकारी व्यवसाय की उन्नति मे जरा भी उत्साह नही दिखाते। ऐसी स्थानीय सहकारी समितियाँ भी है जो अपने अड़ोस-पड़ोस मे सफलता पाकर फूल उठती है और यह भूल जाती है कि थोक संस्थाओ के प्रति भी उनका कोई कर्त्तव्य है, कि उनका संपोषण-संवर्द्धन स्थानिकों की जिम्मेवारी है, तभी वह दिन समीप

लाया जा सकता है जब राष्ट्रीय उत्पादन के काफी बड़े अंश पर जनता का अधिकार हो सकेगा और जनता अपनी सस्थाओं-अपने सहकारियों के माध्यम से काफी बड़ी मात्रा मे स्वयं उत्पादन करने लगेगी। स्थानीय समितियों और थोक सस्थाओ के बीच पूरा सहयोग होने पर ही थोक व्यापार को बढाया जा सकता है, नये भाण्डागार खोले जा सकते है, माल का पण्योपयोगन और अन्त मे उत्पादन आरम्भ किया जा सकता है।

मैंने क्षेत्रीय सहकारियों के काम मे यह कमजोरी पाई है कि कच्चे माल के स्रोतों के अधिग्रहण के लिए वे साथ मिलकर उतना काम नही करते जितना उन्हे करना चाहिए, न वे सम्मिलित होकर अपनी खरीदों का निकाय ही करते है; और सम्मिलित रूप से शक्तिशाली सहकारी वित्तीय सस्थाओं की स्थापना की बात, जिसकी सभी को इतनी अधिक आवश्यकता रहती है, शायद उनको सुहाती नही। मानी हुई बात है कि यदि सभी सहकारी क्षेत्रीय संस्थाएँ सम्मिलित होकर कच्चा माल खरीदे तो उनकी मोल-भाव करने की सामर्थ्य बहुत बढ़ जाएगी और वे अपने लिए लाभदायी भाव पर सौदा खरीद सकेंगी। सयुक्त होकर काम करने से उत्पादन क्षमता मे भी काफी वृद्धि होगी और उत्पादन ही तो ऐसा काम है जिसमे उपभोक्ताओ के लिए काफी अधिक बचत की जा सकती है।

सबसे बुरी बात जो मुझे देखने को मिली वह है आपसी ईर्ष्या, व्यक्तिगत द्वेष, मनोमालिन्य और इतने गहरे पक्षपात जो कई सहकारी सदस्यों को सच्चे सहकारी कार्यों के सर्वथा अयोग्य कर देते है।

जिसे 'सहकारी चुनौती' कहा जाता है उसकी सफलता प्रथम कोटि के व्यवस्थापकों, उत्कृष्ट कोटि के वाणिज्य-व्यापार और सदस्यों की अडिग आस्था एव क्रियाशीलता पर निर्भर करती है। लेकिन सबसे अधिक वह जिस बात पर निर्भर करती है, वह है सहकारी संस्थाओं का आपसी सहयोग। आखिर सहकारिता का, यदि कुछ अर्थ हो सकता है तो वह इसके अतिरिक्त और है ही क्या कि सर्व सामान्य अच्छे उद्देश्यों के लिए साथ मिल कर काम किया जाए और हर निजी भावना, हर क्षुद्र विचार और सभी स्वार्थ पूर्ण प्रयोजनो से उन उद्देश्यों को ऊँचा और आगे रखा जाए।

सहकारी संस्थाएँ 'लोग' पहले है, व्यापार और संस्थाएँ बाद में। वे ऐसी संस्थाएँ है जिनकी स्थापना जन-समूहों द्वारा की जाती है और स्थापना करने वाले जन-समूह ही उनके स्वामी और नियन्त्रण कर्ता होते हैं और बहुत अंशों में संरक्षण-सम्पोषण करने वाले भी।

लोगों मे कमजोरियाँ होती है और वे गलतियाँ भी करते है और सहकारी संस्था की तरह जो संस्थाएँ पूर्णत जनवादी होती हैं उनमें ये दोनों दुर्गुण तत्काल सतह पर उभर आते है।

अनुदारता या रूढ़िवादिता का अतिरेक एक ऐसा ही दुर्गुण है जो अधिकांश सहकारी और पारस्परिक संस्थाओं मे आमतौर पर पाया जाता है।

इसके अपवाद भी अवश्य है—खास तौर पर क्षेत्रीय फारम-आपूर्ति सहकारी और नये नगर-उपभोक्ता सहकारी संगठनो में।

लेकिन सामान्यत सहकारी संस्थाएँ जोखिम लेने से घबराती और नया कुछ करने से कतराती है।

यह सच है कि उन्होंने कुछ नये काम किये हैं, जो काफी महत्त्वपूर्ण भी हैं। ऐसे कामों में :

खुले सूत्र वाला उच्च विश्लेषण-युक्त उर्वरक;

प्रत्यक्ष विद्युत् चालक (Direct Power Take-off), उच्च गति परिषण (High Speed Transmission) और ट्रैक्टरो की हेड लाईटे;

उपभोक्ता-वस्तुओं पर उनके बारे मे जानकारी देने वाले लेबल लगाना;

पारस्परिक निधि मे रुपया लगाने की सुविधा सहित सस्ती दरों पर बीमा-व्यवस्था;

किसी भी समय (मुद्दत के बाद) बिना दण्ड के कर्ज बेबाक करने का अधिकार;

ये और इसी तरह के बहुत-से दूसरे काम सहकारी संस्थाओं ने ही सबसे पहले किये हैं।

लेकिन यह सूची काफी बड़ी होती, कम-से-कम अपने वर्तमान रूप से तिगुनी तो हो ही जाती यदि उत्पादन की जानेवाली वस्तुओं के क्षेत्र में थोडा अधिक अनुसन्धान और कुछ ज्यादा उत्पादनों एवं सेवाओं का साहस किया जाता।

पुराने जमाने के सहकारी संगठनों की नीति प्रायः यह होती थी कि 'जितना कर चुके हो उसी को निभाते रहो'; प्रगति के नये लक्ष्य निर्धारित करने और उन लक्ष्यों को पूरा किये बिना पूरे वर्ष को असफल और बेकार समझने की प्रवृत्ति उनमे होती ही नही थी। यह भ्रान्त धारणा अब तो काफी हद तक कम हो गई है—विशेषकर बड़े सहकारियों ने अपने को इससे बहुत सीमा तक मुक्त कर लिया है। इस गलत रुझान से मुक्ति दिलाने का एक बड़ा कारण प्रबन्ध-व्यवस्था को उन्नत और विकसित करने का कार्यक्रम भी है, जिसे प्रायः सभी बड़े सहकारी-सगठन अपनाते है, और जिसके बारे मे हम अगले अध्याय मे विस्तार से विचार करेंगे। लेकिन अत्यधिक सावधानी और फूंक-फूंक कर कदम रखने की पुरानी मनोवृत्ति अब भी बहुतों मे घर किये हुए है।

कुछ गिने-चुने अपवादों के अतिरिक्त सहकारी सगठन यथेष्ट मात्रा मे विज्ञापन भी नही करते और न टेलीविजन का उपयोग करते है। जनता को अपनी गति-विधियों से अवगत रखने के लिए पर्याप्त मात्रा मे और प्रभावी ढग के प्रचार कार्यक्रम भी नही अपनाये जाते। और जब कभी विज्ञापन आदि करते भी है तो बड़े ही घिसे-पिटे परम्परागत ढग से-अपने उत्पादनो के गुण गा दिये और छुट्टी पाई। यह बताने की तो प्राय. कोशिश भी नही की जाती कि सहकारी उद्यम क्यों और कैसे एक भिन्न प्रकार के व्यवसाय है; न इसी विशेषता पर जोर दिया जाता है कि ये ऐसे व्यवसाय है जिन्हे उपभोक्ताओ की आवश्यकताओ और इच्छाओ को सुनना ही पडता है, क्योकि वे उपभोक्ता ही उनके स्वामी भी होते है।

सहकारी उद्यमो की, कार्य-व्यापार की दृष्टि से, कुछ ऐसी बाधाएँ हैं जिन्हें उनकी सबसे बडी शक्ति बनाया जा सकता है। इन बाधाओ का मुख्य कारण सहकारी संगठनों का जनवादी नियन्त्रण है, जो इनके अस्तित्व की अपरिहार्य शर्त है, अन्यथा वे सहकारी रह ही नही जाएँगे। लेकिन जनवाद के वास्तविक अर्थ को समझना और ग्रहण करना होगा। सच्चा जनवाद है एक सदस्य और एकमत, जो सर्वोपरि नियन्त्रण के लिए बहुत आवश्यक है और जिसके अभाव मे सहकारी का अपना विशिष्ट स्वरूप ही नही रह जाएगा; क्योंकि इस तरह के जनवाद का होना एक सच्चे सहकारी के लिए नितान्त

आवश्यक होता है। और 'जनवाद' का विकृत रूप है प्रबन्ध एव कार्य संचालन मे उसे जबर्दस्ती घुसेड़ना, जो सहकारी सहित किसी भी व्यापारी सस्था के लिए घातक होता है। लेकिन इस आवश्यक अन्तर को समझा नही जाता, न इसपर ध्यान दिया जाता है; मुश्किल तो यह है कि इधर के वर्षों मे सयुक्त राज्य के सहकारी सगठनो द्वारा प्रबन्ध कौशल और व्यवस्था के विचार और विज्ञान मे इतनी अधिक उन्नति कर लेने के बाद भी जनवाद के इस अन्तर का दुर्लक्ष्य किया जाता है।

फिर प्रगति की——उन्नति और विकास की समस्या है। यह समस्या अकेले सहकारी सगठनो की ही नही सभी स्वैच्छिक जनवादी सगठनो की समस्या है। यह निश्चय ही एक अच्छी समस्या है। लेकिन 'कस्बा-सभा' की पद्धति को कैसे चालू रखा जा सकता है जब 'कस्बे' के 'निवासियो' की सख्या पचीसो हजार या लाखो तक पहुँच जाए ? कुछ सहकारी उद्यमो के सच ही इतने अधिक सदस्य हैं। एसी अवस्था मे जनवावी नियत्रण और सदस्यो की सार्थक सहभागित को सही रूप मे बनाये रखने के लिए एक कार्य पटु शासनतत्र की आवश्यकता होती है। फिर इतने अधिक सरक्षक-सदस्यो अथवा पालिसीधारियो मे उत्तर-दायित्व की भावना, निष्ठा तथ्य परक रुचि और हित-चिन्ता को बनाये रखना भी एक समस्या है। और शैक्षिक कार्यो की समस्या भी कुछ कम नही है; इस दिशा मे यथेष्ट तो कुछ भी नही किया जा रहा है, उल्टे, इधर के वर्षों में, कुछ स्थानों मे, इसकी व्यर्थता पर ही जोर दिया जाने लगा है।

इसके अतिरिक्त जब संस्था की काफी उन्नति हो जाती है तो वह इतनी काम्य वस्तु बन जाती है कि उसपर अधिकार करने के लिए सदस्यो और नेताओ मे लडाई-झगडे शुरू हो जाते हैं।

१९५० के बाद की दशाब्दी मे साख-सघो का बन्दर बॉट करने और उनकी एकता को छिन्न-विच्छिन्न करने के लिए ऐसे ही सघर्ष छिड़ गए थे।

इस तरह के सघर्ष कुछ अशों मे मत-वैषम्य के कारण भी होते है, जिनकी सचाई और ईमानदारी से इनकार नही किया जा सकता।

एक ओर ऐसे लोग है जो यह मानते है कि साख-सघों का काम केवल ऐसे छोटे और सुविधा जनक कर्जों के लेन-देन तक ही सीमित रहना चाहिए

जिन्हें आमतौर पर बैंके और दूसरी महाजनी सस्थाएँ करती। इन लोगो का यह आग्रह भी है कि साख-सघो का भावी विकास मालिकों द्वारा प्रायोजित साख-सघो के ही रूप मे हो; और इसीलिए ये नही चाहते कि देश के बडे सेवा-योजक निगमो को किसी भी तरह नाराज किया जाए।

दूसरी ओर वे लोग है जो इस बात को मानते है कि अपने सदस्यों की उचित और अच्छे ढंग से जितनी अधिक-से-अधिक सेवा की जा सके साख-सघो को वह सब करनी चाहिए। वे साख-सघो को 'जनता की बैंके' मानते है, जिनका काम केवल छोटे कर्ज देना ही नही, जनता की बचतो को सुविन्यस्त कर उसे इतनी वित्तीय निर्भरता और शक्ति प्रदान करना है जिससे वह अपनी बहुत-सी आर्थिक समस्याओ को हल कर सके। ऐसे लोग साख-सघो को सेवा योजक कम्पनियों के वरदहस्त और प्रायोजन से मुक्त रखना चाहे, यह स्वाभाविक ही है; वे साख-सघो के भावी विकास की रूपरेखा पैरिश और चर्च के साख-सघो, सरकारी कर्मचारियो, शिक्षकों, श्रमिक सघ के सदस्यो एव सहकारी सगठन के सदस्यो के साख-सघो के रूप मे अकित करते है।

लेकिन सारी बात केवल इतनी ही नही है। अधिकार और आधिपत्य की लडाई भी है जो अन्दर-ही-अन्दर बडे खुले रूप से लड़ी जा रही है। निरन्तर उन्नति कर रहे लगभग एक करोड़ बीस लाख सदस्य सख्या वाले सगठनों पर कब्जा करने को किसका जी न ललच उठेगा; इस सोने की मुर्गी को हथियाने के लिए कौन खम ठोक कर मैदान मे न उतर आयेगा।

सघर्ष और भी कई स्थानों मे है : कुछ क्षेत्रीय फारम-आपूर्ति सहकारियों की पारस्परिक लाग-डॉट ने तो बडा ही गन्दा रूप धारण कर लिया है; कुछ बड़ी-बडी सहकारी बीमा कम्पनियों मे 'उत्तराधिकार' का सघर्ष है; और कतिपय पुराने और योग्यतम नेताओं की कभी खत्म न होने वाली आपसी उठा-पटक तो चलती ही रहती है।

हॉ, सहकारियों मे त्रुटियॉ भी है, क्योंकि सहकारी सबसे पहले लोग है, और लोग कभी त्रुटिहीन नही होते।

जहॉ तक वणिज-व्यापार और कारबार का सम्बन्ध है सहकारी एव अन्य पारस्परिक सगठनों ने उतनी ही गलतियॉ की है जितनी अन्य प्रकार की संस्थाएँ

करती है। लेकिन आम खयाल यह है कि सहकारी सस्था को कभी गलती नही करनी चाहिए, इसलिए जब भी गलती होती है सहकारियों को अपने प्रति स्पर्द्धी संगठनो की अपेक्षा अधिक हानि उठानी पड़ती है और वह अपेक्षाकृत ज्यादा साफ और ज्यादा बडी दिखाई भी देती है।

सहकारी व्यवसायो को आरम्भ करना मुश्किल काम है और उन्हें सफलता से चलाना तो और भी टेढ़ी खीर है। बहुत से लोगों से थोड़ा-थोड़ा पैसा लगवा कर पूंजी खड़ी करना और तब व्यापार करना सरल नही होता। जिस व्यवसाय का हर ग्राहक मालिक हो और इसी नाते निदेशक-मण्डल का प्रभावशाली सदस्य भी, उसका प्रबन्ध करना आसान काम नही होता। जिस व्यवसाय के संरक्षक उसके स्वामी हों और उन्हे हर बात जानने का अधिकार हो उसको चलाना काँच के घर मे बैठना है, जिसकी कोई बात किसी से छिपी नही रह सकती— हर भेद पूरी बस्ती को, सारे समुदाय को, यहाँ तक कि प्रति स्पर्द्धियो को भी मालूम हो जाता है।

ओछी पूंजी या कम पूंजी सहकारियो की चिरकालिक समस्या है। होगी ही; क्योंकि इनके हिस्से सदा दाम-के-दाम पर खरीदे-बेचे जाते है और केवल इनकी सेवाओं का उपयोग करनेवालो के ही काम के होते हैं। इसलिए मूल पूंजी हमेशा सदस्यो से ही आती है और उनमे अमीर तो शायद ही कोई हो। जब सहकारियों के पास कुछ अधिशेष जमा हो जाते है तो वे उनका उपयोग काम को तेजी से बढ़ाने-फैलाने मे नही करते, सहेज कर बैठे रहते हैं। गाढ़ी कमाई का, सदस्यो का पैसा है, व्यवस्थापको और निदेशकों की उसे जोखिम मे न डालने की सतर्कता समझ मे आती है।

सहकारियो ने अपने वित्तीय साधनो का निकाय करना, वित्त-नियोजन के नये उपायो को विकसित करना और वित्तीय प्रबन्ध के लिए नई संस्थाएँ बनाने का काम शुरू कर दिया है, जिससे इन स्रोतों के द्वारा आवश्यक पूंजी की कमी को पूरा किया जा सके। लेकिन प्रयत्न अभी आरम्भ ही हुए है, आवश्यकता के अनुपात से बहुत छोटे है और मजिल काफी लम्बी है।

सयुक्त राज्य के सहकारी सगठनो को कई चीजों के व्यापार में अत्यन्त कुशल व्यापारियों की काफी कड़ी प्रतियोगिता का सामना करना पड़ता है।

केवल यह बात कि सहकारिता बहुत अच्छा विचार है सफलता को सुनिश्चित नही कर सकती। सफलता के लिए अधिक न सही, कम-से-कम प्रतिस्पर्द्धियों-जैसा दक्षतापूर्ण कार्य-सचालन तो होना ही चाहिए। पश्चिमी यूरोप मे एक ही व्यवसाय के विभिन्न अवयवो का एकीकृत सघठन सबसे पहले वहाँ के सहकारियों ने ही किया और उन्ही ने वितरण की प्रथा मे पहले-पहल सुधारा भी। लेकिन हमारे यहाँ सहकारी जब तक नगर मे आये, दूसरे व्यवसाय इस काम को उससे पहले कर चुके थे।

सहकारियो के सफल निर्माण का कार्य इतना श्रमसाध्य है कि यदि इस आन्दोलन के आरम्भ काल के नेताओ मे वास्तविक महानता न होती तो हमारी बहुत-सी श्रेष्ठ सहकारी सस्थाओ का निर्माण असम्भव ही था। हर बुजुर्ग नेता ने अपनी-अपनी सस्था का बड़ी खूबी से निर्माण किया। अपनी सस्था से उनका लगाव बड़ा गहरा और सम्बन्ध एकदम व्यक्तिगत होते है। इन सम्बन्धो में व्यवधान लाने वाले किसी परिवर्तन की बात, जैसे कि सहकारी सस्थाओ मे आपस मे पूरा-पूरा सहयोग—वे कभी सोच भी नही सकते। लेकिन आज तो इस तरह का सहयोग, और कई प्रसगो मे विलयन भी, आर्थिक दृष्टि से नितान्त आवश्यक हो गया है।

कई नेता है जिन्होने बड़ी मन्दी के काल मे अपने भगीरथ प्रयत्नों से अमरीका मे सहकारी आन्दोलन को परिपुष्ट किया। यहाँ उनके नाम गिनाने का प्रयत्न कदापि उचित न होगा। बहुत से ऐसे नाम जिनका उल्लेख आवश्यक है छोड़ देने पड़ेगे। यदि उन्हे न छोड़ा जाए तो सूची पुस्तक के कलेवर को देखते बहुत लम्बी हो जाएगी।

वे सब अग्रवर्ती नेता थे—अमरीकी समाज के 'अन्त. प्रेरणा' वाले युग की विभूतियाँ। वे गहरी श्रद्धा और अटूट लगन वाले पुरुष थे—और उनमे से जो जीवित है उनकी श्रद्धा और लगन मे आज भी कोई अन्तर नही आने पाया है। उन सबने अपनी धारणाओ और अपने विचारों के अनुरूप—यदि आदर्श न कहना चाहें—एक ज्यादा अच्छे समाज के निर्माण का भगीरथ प्रयत्न किया है।

लेकिन दो या तीन अपवादो को छोड़ कर वे स्वभाव से ही सारा काम स्वयं करनेवाले 'वीर वर' थे, और आज भी है—दल के साथ मिलकर बराबरी के

स्तर पर काम करने के वे अभ्यस्त नही थे, और आज भी नही है। उनके महान गुणों ने उन्हे नेता के पद पर आसीन कर दिया था और प्रत्येक के आसपास भक्तों और श्रद्धालुओं को ला जुटाया था। लेकिन उस महानता का ही यह परिणाम हुआ कि प्रत्येक महा पुरुष को अपने-अपने सहकारी 'साम्राज्य' का बिलकुल एकाकी और अपनी समझ के अनुसार निर्माण करना पड़ा। उनके दमखम के दूसरे नेता की जहाँ गुजर नही थी और हो भी नही सकती थी।

सयुक्त राज्य मे सहकारी उद्यम के आदर्श रूप के मूल तत्त्वों के निर्माण का सारा श्रेय उन्ही को है। वे न होते तो आज का यह सुदृढ समर्थ सहकारी नमूना भी न होता। सहकारी नेताओं और कार्यकर्ताओं की भावी पीढ़ियाँ उनके महान ऋण से कभी भी उऋण न हो सकेगी।

लेकिन ऐसे पुरुषों के साथ यह बडी कठिनाई होती है कि वे अपने निर्मित मूल तत्त्वों को किसी सबल सुसमन्वित रूप मे ग्रथित नही कर पाते। सही दृष्टि के साथ १९३३ मे नेशनल कोआपरेटिव्स को सगठित किया गया था। विचार यह था कि वह क्षेत्रीय थोक सगठनो का स्वामीत्व कृत, उनकी क्रय-शक्ति का निकाय कर राष्ट्र व्यापी स्तर का क्रेता और निर्माता सहकारी सगठन होगा। लेकिन नेशनल को क्षेत्रीय संगठनों के लिए खरीदारी करने की दक्ष संस्था से अधिक कुछ भी नही होने दिया गया। फिर १९४३ मे कोआपरेटिव फाइनेन्स एसोसिएशन बनाया गया; इसे सहकारियो की केन्द्रीय वित्त-प्रबन्धकारिणी संस्था के रूप मे चलाने का विचार था। लेकिन करीब बीस वर्षो तक यह सोई पड़ी रही और तब नई पीढी के नेताओ ने आकर इसे कार्यशील किया। यह नई पीढ़ी अवश्य उत्तराधिकारी होगी और इसे होना भी चाहिए। लेकिन इनके भी नाम हम यहाँ नही गिना रहे। इसलिए नही कि नामोल्लेख किये जाने वाले इसे पसन्द नहीं करेगे, बल्कि इसलिए कि प्रधान व्यवस्थापकों और निदेशक-मण्डलों के अध्यक्षों की यह दूसरी पीढ़ी सामान्यतः स्थपतियों की नही न्यास-धारियों की है, रचयिताओं की नही प्रशासको की है, अकेले-अकेले पहाड़ उठाने-वाले 'वीरवरो' की नही दल के साथ मिल कर काम करने वालो की है।

सहकारी नेताओ की इस नई पीढ़ी के सदस्य एक जगह मिल सकते है और साथ मिलकर निर्णय भी कर सकते है, जो अग्रवर्ती नेताओं के लिए कठिन था।

इस नये नेतृत्व का निर्णय सामूहिक निर्णय होता है। वह ऐसा निर्णय भी हो सकता है जिससे हिस्सा लेनेवाले किसी नेता को अपना प्रधान व्यवस्थापक का पद खोना भी पड जाए। क्योंकि वे निर्णय अपने ही जैसी दूसरी सस्था से संबद्ध होने, समन्वित होने—यहाँ तक कि विलयन के भी हो सकते हैं।

सयुक्त राज्य अमरीका मे सहकारिता का विकास नया-नया हो रहा है। यह ऐसे पुरुषो का कृतित्व और स्मारक है जिनमे से कई अभी जीवित हैं। नया होने के साथ-ही-साथ यह अपनी शक्ति के लिए अभी भी अधिकतर महान अग्रवर्ती नेताओं और उनके आसपास की मण्डली पर निर्भर करता है।

पश्चिमी यूरोप का 'सहकारी आन्दोलन' मुख्यतः उपभोक्ता-हितों के प्रतिरक्षक के रूप मे विकसित हुआ है। पुरानी समाज व्यवस्थायो मे लोग धन्धे कभी-कभार ही बदलते थे। उत्पादनकर्ता के रूप मे उनका धन्धा बड़ी सीमा तक तो वश-परम्परा से निश्चित और निर्धारित हो जाता था, या फिर यह काम प्रशिक्षण से होता था। पारिवारिक आय के स्तरों मे परिवर्तन की गति बहुत मन्द होती थी। इसलिए पारिश्रमिक की क्रय-शक्ति सारे समाज के लिए बड़ी चिन्ता का विषय बनी रहती और उपभोक्ताओ के रूप मे जनता के आर्थिक हित सदैव अस्पष्ट और अकुलाहट पैदा करने वाले प्रतीत होते थे।

लेकिन नागरिक अमरीका मे उपभोक्ता के रूप मे जनता के सर्व सामान्य, सार्वजनीन हितों की ओर अभी-अभी तक भी कोई ध्यान नही दिया गया। जब कि अधिकांश सहकारी संस्थाएँ किसी-न-किसी रूप मे उपभोक्ता सहकारी सस्थाएँ ही होती है। किसानों की विक्रय-सहकारियों और श्रमिकों के स्वामीत्वकृत एवं उन्हीं के द्वारा संचालित कुछ कारखानों को छोड़कर वास्तव में बाकी की सभी उपभोक्ता सहकारी ही हैं। नगरवासी श्रमिकों ने भी अभी-अभी तक अपनी क्रय-शक्ति की रक्षा करने और उसे अधिक प्रभावी बनाने के उपायों मे कोई रुचि नही दिखाई है। उत्पादनकर्ता के रूप मे अपनी आय को ही वे अपनी सारी खुशहाली की बुनियाद मानते रहे हैं।

सहकारी नये होने के साथ-साथ 'भिन्न' भी हैं। ये उन व्यापारों से बिलकुल ही भिन्न है जिनका मुख्य उद्देश्य मुनाफा कमाना होता है। लेकिन अपने अग्रवर्ती पूर्वजों और स्वयं 'पश्चिमी' चलचित्रों के अनन्य प्रेमी होने के बावजूद

हम दूसरे महायुद्ध के परवर्ती काल मे, सुविधाओ की अतिरेकता वाले अन्य सभी लोगों के समान सादृश्यतावादी हो गए है; और कोई भी काम करते समय हमारे प्राण इस विचार से सूखने लगते है कि कही दूसरे लोग हमे 'भिन्न' न समझ बैठे। इसके अतिरिक्त, हम बडेपन के इतने भक्त हो गए है कि यदि स्वय कोई बड़ा काम नही कर सकते तो दूसरे लोगो के साथ मिलकर अपना ही कोई छोटा काम खडा करने की जिम्मेवारी लेने के बजाय किसी बडे काम-काज की सेवा करना पसन्द करते है।

इन्ही दो बातो के कारण बीसवी शताब्दी के इन मध्यवर्ती वर्षो मे भी अमरीको नगरों के औसत निवासी के मन मे सहकारी-सगठन घर नहीं कर पा रहा है। और जैसा कि कहा जा चुका है सहकारी आन्दोलन के सम्बन्ध मे जनता को शिक्षित करने, समझाने-बुझाने और अवगत रखने का काम तो प्रायः किया ही नही जा रहा है।

लेकिन इस सबके बावजूद कुछ खास तरह के सहकारी और पारस्परिक-सहायता सगठन भी अवश्य है जिन्होने काफी प्रगति की और सुस्थापित सस्थाओं के रूप मे ख्याति अर्जित कर ली है।

ऐसे सगठनो मे किसानो और ग्रामवासियो के, लिए बिक्री व्यवस्था सम्भरण, विद्युत्, लेनदेन और बीमा का काम करने वाली सहकारी सस्थाओ के नाम गिनाये जा सकते है। यही बात साख-सघो के बारे मे भी कही जा सकती है।

किसानो को सामान्यतः अपनी आजीविका और पेशो पर बड़ा अभिमान होता है। धरती से लेकर दूसरी सभी तरह की चीजों और सम्पत्तियों की मिल्कियत की भी वे बड़ी कद्र करते है। जब तक आर्थिक स्थितियाँ एकदम असहनीय नही हो जाती और जीना दूभर नही कर देती वे न तो स्थान बदलते हैं और न अपना धन्धा ही; समाज के दूसरे समूहो की तरह नही है कि आज यहाँ बसे कल वहाँ, आज यह धन्धा किया कल दूसरा। दूसरे उद्योगो की तुलना में लघु उत्पादनकर्ता होने के कारण खरीदने और बेचने के समय आर्थिक मोल-भाव की क्षमता को बनाये रखने के लिए सहकारी संस्थाएँ बनाना उनके लिए एक महती आर्थिक आवश्यकता हो जाती है। यही कारण है कि किसान सहकारिता के विचार को, सहकारी संस्था को और कृषि कार्यों से सम्बन्धित अन्य

व्यवसायो के सहकारी, सयुक्त स्वामीत्व को अधिक तत्परता से ग्रहण करते है। इसके अतिरिक्त अभी कुछ ही समय पूर्व तक स्वामी द्वारा सचालित स्वतन्त्र फारम हमारे सारे जनवादी समाज की आधार शिला माना जाता रहा है। इसलिए किसान की सहकारी सस्थाओ को सब ओर से समर्थन और स्वीकृति मिलती रही, क्योंकि वे किसान को आर्थिक प्रतिकूलताओ के बुरे-से-बुरे प्रभावो से बचाने का आवश्यक साधन थी—खासकर उन बुरे प्रभावो से जो किसान को अपनी उपज के प्राप्त होने वाले मूल्यो के या उत्पादन का नियन्त्रण न कर पाने की असमर्थता के परिणाम होते है।

अधिकाश उद्योगो के सामने ऐसी कोई कठिनाई नही होती, क्योंकि वे उत्पादन को नियन्त्रण मे रखते है और उन्हे कीमते भी अच्छी मिल जाती है।

ग्रामीण विद्युत सहकारी सस्थाओ और सहकारी कृषि साख समितियो ने तो साफ तौर से किसानो की ऐसी आवश्यकताओ को पूरा किया जो या तो बहुत महँगे दामो पर पूरी की जाती थी या बिलकुल अन-पूरित थी; इसीलिए इन दोनों उद्यमो को आरम्भ से ही सारे समुदाय का समर्थन और सहयोग मिला। जब विद्युत सहकारी फारम-निवासियो और ग्रामीण उपभोक्ताओ को बिजली देने का महँगा और मुश्किल काम काफी हद तक पूरा कर चुके और उनकी सेवाएँ सुनिश्चित हो गईं, तभी और केवल तभी व्यापारी बिजली कम्पनियो का शोरगुल और कटु प्रचार सुनाई देने लगा।

साख-सघो की, प्रति वर्ष लगभग दो हजार नये संघो की गति से हो रही, प्रगति के कारण दूसरे है। सबसे पहले तो यह कि कार्य सचालन की दृष्टि से साख सघ बडी सरल और सीधी सस्था है। यह अपने सदस्यो की बचते जमा करती है और बचतो के उस निकाय मे से केवल अपने सदस्यो को ही कर्ज देती है। आवश्यक पूँजी सदस्यों को ही पाँच-पाँच डालर के हिस्से बेच कर इकट्ठी की जाती है। दूसरी बात यह कि सूदखोर किसको प्यारा होता है! सारा समाज सूदखोर महाजन से कतराता और उससे दूर रहना पसन्द करता है। इसके अतिरिक्त हमारे बहुत से उद्योग ऐसे है जो यह चाहते है कि लोगो को बराबर उधार मिलता रहे, क्योंकि इससे उन उद्योगों के हितो का सीधा सम्बन्ध होता है। इसलिए जब साख-सघ लोगो को सूदखोरी से मुक्त होने और तुरत

कर्ज पाने की सुविधाओ को विकसित करने के अवसर प्रदान करते है तो कौन है जो उनका विरोध करेगा ! साख-सघों के आविर्भाव के पहले मध्य वित्त के परिवारो के लिए ऐसी कोई जगह नही थी जहाँ से वे उचित ब्याज पर कर्ज पा सके। इसलिए साख सघो ने भी विद्युत सहकारियों की ही भाँति जनता की एक ऐसी आवश्यकता को पूरा किया है जो पहले से अनपूरित चली आती थी।

ऐसी ही परिस्थितियाँ है जिनमे सहकारी सस्थाएँ बहुत अच्छी तरह से काम कर सकती है।

विभिन्न प्रकार के सहकारियो का असमान गति से उन्नति करते जाना ही उनकी पारस्परिक एकता के लिए बाधक हो गया। सफल और जाने-माने सगठन नये प्रकार के संगठनों से सम्बन्ध करते इसीलिए हिचकिचाते है कि इस प्रकार के सम्बन्ध कही उनकी सुरक्षित स्थिति को खतरे मे न डाल दे।

फिर एकता की भावना के पूरी तरह विकसित और उत्कट न हो पाने का एक कारण यह भी है कि सामाजिक और आर्थिक सस्थाओं के जीवन मे पचास वर्ष की अवधि होती ही क्या है। संस्थाओ के विकास-क्रम मे यह समय बहुत थोड़ा है और पच्चीस वर्ष की अवधि तो और भी कम।

जैसा कि हम देख आये है सहकारी और पारस्परिक उद्यम हमारे देश मे आरम्भ से ही रहे है। हमारे जो पूर्वज आरम्भ मे यहाँ बसने के लिए आये उनके जीवन के अधिकतर कार्य-कलाप उनके सहकारी प्रयत्नों पर ही निर्भर करते थे और वे अपने अधिकाश जीवन-व्यापार को सहकारी ढंग पर ही सगठित करते थे। वे मिल-जुल कर घर और खलिहान बनाते थे, मिल-जुल कर बीहडो और जंगलो को पार करते थे, सर्व सामान्य विपत्तियों मे एक दूसरे की सहायता भी सम्मिलित रूप से ही करते थे। सदियों पहले १७५२ मे बेजामिन फ्रैंकलिन ने फिलाडेलफिया मे पारस्परिक अग्नि-बीमा कम्पनी बनाई थी। १८०४ मे कनेक्टिकर के दूध-उत्पादक किसानो ने दूध बेचने की अपनी सहकारी सस्था स्थापित की थी। उटाह के मरमोन्स लोगों ने सहकारी सिचाई समितियाँ, सहकारी भण्डारो और सहकारिता के अन्य रूपों के सहारे ही अपने जीवन को विकसित किया। और जैसा कि हम देख आये है उन्नीसवीं-शती की ७वी दशाब्दि मे ग्रैंगरों ने अपने सदस्यों में सहकारी संगठनों के निर्माण के लिए कितने बड़े प्रयत्न किये थे !

लेकिन जिस तरह के सहकारी उद्यम आज हमारे देश मे काम कर रहे हैं यदि उनके आरम्भ का इतिहास टटोले तो पाएँगे कि उन्हें स्थापित हुए अभी पूरे पचास वर्ष भी नही हुए हैं; और उस समय भी केवल गिनी-चुनी कृषि-विक्रय सहकारी संस्थाएँ ही बन पाई थीं या दो-एक दूसरी तरह की सहकारी संस्थाएँ होंगी, बस।

पहला साख संघ कानून मसाचुसेट्स् की विधान सभा मे १९०९ मे पारित हुआ।

पहली क्षेत्रीय फारम-आपूर्ति सहकारी संस्था १९१४ मे स्थापित की गई और उसका नाम था फार्मर्स यूनियन स्टेट एक्सचेज आफ नेब्रास्कॉ।

उपभोक्ता वस्तुओं की पहली क्षेत्रीय थोक सहकारी संस्था १९१७ मे विस-कोन्सिन मे बनाई गई, जिसका नाम था सेण्ट्रल कोआपरेटिव होलसेल आफ सुपी-रियर। इसके केवल एक वर्ष पहले, १९१६ मे, न्यूयार्क मे सहकारी लीग की स्थापना की गई थी।

१९२१ तक तेल के कारबार मे एक भी सहकारी सस्था नही थी; उसी वर्ष मिन्नेसोटा राज्य के काटनवुड फाल्स के किसानो ने मिलकर तेल-उत्पादनों के स्थानीय वितरण के लिए एक छोटी-सी सहकारी कम्पनी खोली। १९२६ में मिडलैण्ड के स्थानीय सहकारियों ने मिलकर मिडलैण्ड कोआपरेटिव्स नाम की तेल का थोक काम करनेवाली पहली क्षेत्रीय सहकारी संस्था संगठित की। १९२६ मे, न्यूयार्क सिटी मे पहली सहकारी गृह निर्माण योजना बनाई गई, जिसे अमल्गामेटेड क्लोदिंग वर्क्स ने प्रायोजित किया था।

पहला सहकारी अस्पताल या कह लीजिए कि स्वास्थ्य-योजना का १९२९ मे ओक्लाहोमा राज्य के एल्कसिटी मे वहा के सुप्रसिद्ध डाक्टर माइकेल शैडिड के सद् प्रयत्नों के परिणाम स्वरूप स्थापना की गई।

तेल के पहले सहकारी कुएँ मे से सर्वप्रथम १९४० मे तेल निकाला गया। इस कुएँ को कन्जूमर्स कोआपरेटिव एसोसिएशन ने कन्सास राज्य के फिलिप्स-वूर्ग के समीप लगवाया था।

अधिकांश शक्तिशाली फारम-आपूर्ति सहकारी सस्थाएँ जिनका कारबार आज सारे सयुक्त राज्य मे फैला हुआ है इस शती की दूसरी या तीसरी दसाब्दी

मे शुरू की गई थी। बड़ी मन्दी के वर्षो मे हमारे देश मे सहकारी सस्थाओं का बहुत तेजी से विकास हुआ। हम कह सकते हैं कि सयुक्त राज्य मे 'सहकारी आन्दोलन' का श्रीगणेश बड़ी मन्दी के दिनो से ही होता है।

मन्दी के ही वर्ष थे जब लोग पहली बार सोचने के लिए, बार-बार, बहुत जोरो से और जल्दी-जल्दी सोचने के लिए मजबूर हुए। ये ऐसे वर्ष थे जब प्रचलित व्यवस्था मे छाती-ठोक विश्वास डिगा और क्षीण होने लगा। ये ऐसे वर्ष थे जब लोगो ने नये साधनों की खोज की और उनको अपनाया, क्योंकि जिन पुरानों पर अभी तक निर्भर करते आ रहे थे वे असफल सिद्ध होने लगे थे। और ये ऐसे वर्ष थे जब अधिकाश अमरीकनो ने इस सचाई को पहचाना कि वे सब 'एक ही नाव मे सवार हैं', उसकी मरम्मत आवश्यक है और अकेला कोई अपने से उसकी मरम्मत नही कर सकता।

१९०० की तीसरी दशाब्दी ही थी जब देश मे इतने अधिक साख-संघ स्थापित हो चुके थे कि पहली बार उनका राष्ट्रीय सगठन बनाना संभव हो सका और राष्ट्रीय स्तर का क्रेडिट यूनियन नेशनल एसोसिएशन संगठित किया गया। यह मन्दी की प्रतिक्रिया का ही परिणाम था कि ग्रामीण विद्युत् सहकारी संस्थाएं शुरू की गई। पच्चीस वर्षो की छोटी-सी अवधि मे लोगो ने बीस हजार साख संघ बना डाले जिनकी कुल सदस्य संख्या एक करोड़ दस लाख और कुल आस्तियाँ पाँच अरब डालर हैं। इन्ही पच्चीस वर्षों मे लोगों ने एक हजार ग्रामीण विद्युत् सहकारी सस्थाएँ स्थापित की, जिनके ४५ लाख सदस्य हैं, और जो प्रति वर्ष पचहत्तर करोड़ डालर से भी अधिक मूल्य की बिजली बेचती हैं।

दस लाख लोगों को सर्वाङ्गीण स्वास्थ्य परिचर्या प्रदान करने की सीमा तक सहकारी स्वास्थ्य योजनाओ का विकास तो पूरा-का-पूरा दूसर महायुद्ध के परवर्ती काल मे ही हुआ है।

मन्दी के ही वर्षो मे किसानों के छोटे स्थानीय विक्रेता सहकारियो ने सार्वधिक भण्डार और बिक्री करने के लिए दुकानों और सस्थाओ का निर्माण करना शुरू किया और इस तरह वे माल की किस्म और मूल्य दोनो ही को प्रभावित कर सके।

जहाँ तक नगरों के उपभोक्ता सहकारियों का प्रश्न है, इस सचाई से इनकार

नही किया जा सकता कि बीच-बीच मे बहुत से छोटे भण्डार-खोले गए, लापरवाही से चलाये गए और उन्होंने कुछ वणिज-व्यापार भी किया; लेकिन इस प्रकार के सहकारी उद्यम की सफलता के आवश्यक तत्त्वों का निरूपण पूरी तरह इस सदी की पाँचवी दशाब्दी मे ही हो पाया और तभी कार्य-संचालन को इस तरह व्यवस्थित किया जा सका जिससे भावी प्रगति सुनिश्चित हो सकी।

सहकारी बीमा कम्पनियाँ कब आरम्भ हुई यह तय करना बड़ा मुश्किल है, क्योंकि जिसे 'सहकारी बीमा' कहा जाता है उस काम को करनेवाली 'सहकारी' बीमा कम्पनियाँ केवल एक विशिष्ट दृष्टिकोण वाली पारस्परिक कम्पनियाँ है।

सहकारी बीमा के क्षेत्र मे किसानों का अग्नि बीमा करने वाली फार्मर्स टाउनशिप म्यूचूअल्स का इतिहास, विशेषरूप से विसकोन्सिन-जैसे राज्यों में, काफी लम्बा और प्रशसनीय रहा है। इन म्युचूअल्स का आविर्भाव इसलिए हुआ था कि दूसरी कम्पनियां किसानों का अग्नि-बीमा करने को तयार नही थी। लेकिन कई तरह का बीमा करने वाली सहकारी उद्देश्य और दृष्टिकोण वाली कम्पनियों की स्थापना तो इस शताब्दी के दूसरे दशक से ही होने लगी है।

एक प्रश्न बार-बार पूछा जाता है कि सयुक्त राज्य मे सहकारी सस्थाओं का विकास तेजी से क्यों नही हुआ ? इस प्रश्न का आंशिक उत्तर यह है कि विकास तो बहुत तेजी से हुआ है ! पच्चीस वर्ष की छोटी-सी अवधि मे आप और क्या चाहते है ? हमारे देश मे जितने भी महत्त्वपूर्ण सहकारी उद्यम है उनका सारा विकास इन पच्चीस वर्षो में ही तो हुआ है।

विशाल जन-आन्दोलन इतनी तेजी से कम ही विकसित होते हैं।

सयुक्त राज्य मे सहकारियों के एक दर्जन के लगभग राष्ट्रीय संगठन हैं। अपने विशिष्ट अमरीकी ढंग के अनुसार हमारा सारा जोर काम को पूरा करने पर रहा; पद्धति, तर्क-संगति अथवा परिणाम की हमने कोई चिन्ता नही की। परिणामस्वरूप ऐसे राष्ट्रव्यापी सगठनो का रूप सामने आय जो अपने कार्यों मे कभी-कभी एक-दूसरे पर छा जाते है, हावी हो जाते है। और समय को देखते पारस्परिक कार्यों मे जितना ताल-मेल और उद्देश्य की जितनी एकता आवश्यक है वह स्थापित नही हो पा रही है।

देश मे एक नही दो राष्ट्रीय सहकारी थोक संगठन हैं—मिन्नेसोटा राज्य

के एल्बर्टली नगर का नेशनल कोआपरेटिव्स और ओहियो राज्य के एलायन्स नगर का युनाइटेड कोआपरेटिव्स। युनाइटेड कोआपरेटिव्स फारम-आपूर्ति सहकारियों का स्वामीत्वकृत है और उन्हीं की सेवा करता है। नेशनल के सदस्यो मे फारम-आपूर्ति और उपभोक्ता-वस्तु के क्षेत्रीय दोनो ही तरह की सहकारी संस्थाएँ हैं। इसी अन्तर के कारण विलयन के काफी तर्क-सगत कारण होते हुए भी सारे प्रयत्न बार-बार निष्फल होते आ रहे हैं।

कृषि सहकारी संस्थाओं के लिए शिक्षा, वैधानिक (कानूनी) सहायता और जन-सम्पर्क का काम करने वाले दो राष्ट्रीय संगठन हैं। अधिकाश विक्रेता और फारम-आपूर्ति क्षेत्रीय संस्थाओं द्वारा समर्थित अमरीकन इंन्स्टीट्यूट आफ को-आपरेशन स्कूलों, कालेजो और विश्वविद्यालयों मे 'कृषि में सहकारिता' विषय के शिक्षण-अध्यापन को बढ़ावा देने का काम करता है। इस काम के लिए वह सारे देश मे शिक्षण शिविर (वर्कशाप) आयोजित करता है ,एच-४ और भावी कृषकों के सर्वांगीण विकास के लिए बनाये गए 'फारमर फ्यूचर' संगठनों के साथ मिलकर काम करता है, अनुसन्धान कार्यों के अतिरिक्त प्रतिवर्ष एक वार्षिक ग्रन्थ प्रकाशित करता है, और एक वार्षिक पीठ चलाता है जिसमे सारे देश के सहकारी नेता एकत्रित होते हैं।

दूसरे संगठन का नाम है नेशनल कौन्सिल आफ फारमर कोआपरेटिव्स। अमरीकन इन्स्टीट्यूट की तरह अधिकाश कृषि विक्रेता और फारम-आपूर्ति क्षेत्रीय संस्थाएँ इसकी भी सदस्य हैं। इस नेशनल कौन्सिल से छब्बीस राज्य स्तरीय सहकारी कौन्सिलें सम्बद्ध हैं। यह वाशिंगटन में कृषक-सहकारी सभाओं के हितरक्षण का काम और सटिप्पण लेखाचित्रों वाले एक साप्ताहिक पत्र, 'दि वाशिंगटन सिचुएशन' का प्रकाशन करती है। एक वार्षिक सभा का आयोजन इसके द्वारा भी किया जाता है, जिसमे फारम सहकारियो से सम्बन्धित प्रश्नों पर विचार होता है। नेशनल कौन्सिल इन सभाओं मे कृषि सहकारियों के लिए नीति-निर्धारण का काम भी करती है—विशेषकर ऐसी नीतियो के निर्धारण का जो कृषि सहकारियों के सम्बन्ध मे राष्ट्रीय विधि व्यवस्था को प्रभावित करनेवाली होती हैं; और यही वह क्षेत्र है जहाँ इन दोनों राष्ट्रीय संगठनों में एकता स्थापित हो सकती है।

नेशनल फेडरेशन आफ ग्रेन कोआपरेटिव्स अनाज-विक्रेता सहकारियों की जनसम्पर्क और विधायी संस्था है और अपने क्षेत्र मे काफी अच्छा काम करती है। इसके कार्यकारी सचिव के साप्ताहिक वृत्त पत्र मे अमरीकी कृषि के सम्बन्ध मे काफी मूल्यवान और प्रचुर जानकारी रहती है।

नेशनल मिल्क प्रोड्यूसर्ज फेडरेशन अपने सहकारी दूध उत्पादको के लिए ठीक इसी तरह के काम करता है।

साख-सघों ने प्राय: सभी राज्यों मे अपने राज्य-सघ बना लिये हैं। ये राज्यस्तरीय सगठन साख-सघ आरम्भ करने के अभिलाषी नये जन-समूहों की सब प्रकार से सहायता करने के अतिरिक्त पुराने स्थापित साख-सघों को सलाह और प्रोत्साहन एवं उनके निर्देशन का काम करते हैं; राजधानियों मे विधायी कामों की देखभाल और जन-सम्पर्क भी करते हैं। साख-सघ आन्दोलन की केन्द्रीय संस्था का नाम है क्रेडिट यूनियन नेशनल एसोसिएशन, जिसे संक्षेप मे 'कुना' कहते हैं। इसका प्रधान कार्यालय विसकोन्सिन राज्य के मेडिसन नगर में है। कुना अपना एक मुखपत्र प्रकाशित करता है, जिसका नाम 'दिब्रिज' है, साख-संघ से सम्बन्धित साहित्य का सम्भरण करता है और काँग्रेस मे साख-सघों के हितों की देखभाल करता है। कुना से संयुक्त कुना सप्लाई कोआपरेटिव है, जो साख-सघो के लिए आवश्यक लेखन-सामग्री-लेखा पत्रक, जमा पुस्तिकाएँ, ऋण-याचना-पत्रक आदि अधिप्राप्ति की और उत्पादन का काम करता है। और कुना म्युचूअल इन्श्यूरेन्स कम्पनी साख-संघों और उनके सदस्यो का ऋण-सुरक्षा बीमा, आजीवन-बचत बीमा और प्रत्यक्ष जीवन बीमा करती है।

ग्रामीण विद्युत् सहकारियों के संगठन का रूप बहुत-कुछ साख-संघो से मिलता-जुलता है। लगभग सभी राज्यों मे राज्य स्तरीय सगठन हैं। राज्य स्तरीय संगठनों को इलाकों में गठित किया गया है। इलाके ही नेशनल रूरल इलेक्ट्रिक कोआपरेटिव एसोसिएशन (न्रेका) के निदेशकों का चुनाव करते हैं। न्रेका का प्रधान कार्यालय वाशिंगटन डी० सी० मे है। यह काँग्रेस मे विधायी कार्यों की देखभाल और 'दि रूरल इलेक्ट्रिफिकेशन' नामक मुखपत्र के प्रकाशन के अतिरिक्त प्रसार-प्रचार और शैक्षिक कार्य भी करता है।

कोआपरेटिव फूड डिस्ट्रीब्यूटर्स आफ अमरीका फुटकर विक्रेताओं के

स्वामीत्वकृत किराना थोक सहकारियों के हितों की रक्षा और सवर्द्धना करने वाला बड़ा प्रभावशाली और समर्थ राष्ट्रीय सगठन है। 'दि कोआपरेटिव मर्कण्डाइज' नामक मुखपत्र के प्रकाशन के अतिरिक्त यह जन सम्पर्क का कार्य भी करता है।

देश की अधिकांश महत्वपूर्ण सामूहिक स्वास्थ्य योजनाएँ, श्रमिक स्वास्थ्य योजनाएँ और सहकारी स्वास्थ्य सघ ग्रूप हेल्थ एसोसिएशन आफ अमरीका (घ) की सदस्य है। यह सगठन निम्नलिखित कार्य करता है : सामूहिक स्वास्थ्य कार्यकलापों से सम्बन्धित साहित्य का प्रकाशन और वितरण; योजना को प्रारम्भ करने के अभिलाषी नये समूहों को परामर्श और मार्गदर्शन; सामूहिक स्वास्थ्य की वार्षिक राष्ट्रीय सभा का आयोजन; मासिक पत्र का प्रकाशन; सामूहिक स्वास्थ्य सघों से संयुक्त डाक्टरों के साथ भेद-भाव बरते जाने पर उनकी रक्षा; विधि-व्यवस्था से सम्बन्धित—विशेष रूप से स्वैच्छिक स्वास्थ्य सगठनो के लिए प्रतिबन्धकारी कठिनाइयों को हटवाने के लिए वैधानिक कारवाइयाँ।

संयुक्त राज्य को सहकारी लीग (कोआपरेटिव लीग आफ दि युनाइटेड स्टेट्स) सारे देश में उपभोक्ताओं की सहकारिता के सभी रूपों की उन्नति के लिए १९१६ मे स्थापित की गई और १९२२ में शासपत्रित हुई। जैसे-जसे समय बीतता गया लीग का कार्यक्षेत्र भी व्यापक और विस्तारित होता गया। लीग का प्रधान कार्यालय शिकागो मे और एक कार्यालय वाशिगटन डी० सी० मे भी है।

कई बड़े क्षेत्रीय फारम-आपूर्ति सहकारी, उपभोक्ता वस्तुओ के सभी बड़े क्षेत्रीय थोक सहकारी, कई पारस्परिक बीमा कम्पनियाँ, क्रेडिट यूनियन नेशनल एसोसिएशन, नेशनल रूरल इलेक्ट्रिक कोआपरेटिव एसोसिएशन, विसकोन्सिन इलेक्ट्रिक कोआपरेटिव, नेशनल कोआपरेटिव्स, युनाइटेड हाउसिग फाउण्डेशन, और विभिन्न प्रकार के कई सहकारी सगठन लीग के सदस्य हैं।

लीग जिन संगठनों के कार्यों मे सहायता और प्रायोजन करती है उनके नाम इस प्रकार हैं : कोआपरेटिव इन्श्यूरेन्स कान्फ्रेंस, ग्रूप हेल्थ एसोसिएशन आफ अमरीका, नार्थ अमरीकन स्टूडेन्ट कोआपरेटिव लीग, रोशडेल इन्स्टीटयूट,

कोआपरेटिव फाइनेन्स एसोसिएशन, नेशनल एसोसिएशन आफ हाउसिंग कोआ-परेटिव्स और दि फण्ड फार इण्टर नेशनल कोआपरेटिव डेवलपमेण्ट।

लीग सहकारिता की अन्तर्राष्ट्रीय सस्था इण्टर नेशनल कोआपरेटिव अला-यन्स की अमरीकी सदस्य है। यह पैंतालीस राष्ट्रों के सहकारी सगठनो का महासघ है, जिनकी सयुक्त सदस्य सख्या पन्द्रह करोड़ से भी अधिक है।

लीग निम्नलिखित कार्य करती है: देश के सहकारिता से सम्बन्धित समाचार पत्रों के लिए खबरे इकट्ठी करने की केन्द्रीय सवाद एजेन्सी, कोआपरेटिव न्यूज सर्विस, का सचालन; साहित्य का प्रकाशन और वितरण एव फिल्म निर्माण; सहकारी सगठनों के जन-सम्पर्क कार्यों का समन्वय; धार्मिक, कृषि, श्रमिक और अन्य राष्ट्रीय सगठनो से सम्पर्क और संयुक्त काररवाइयाँ; और विधायी कार्य। लीग सम्मेलनों, पीठों और सभाओं के वार्षिक कार्यक्रम भी आयोजित करती है जिनका मुख्य प्रयोजन है सहकारी व्यवस्थापकों, सम्पादकों, शैक्षिक एव कार्मिक कार्यकर्ताओ की दक्षताओं को बढ़ाना और उनके कार्यस्तर को उन्नत करना।

इस प्रकार सहकारी लीग सयुक्त राज्य के सभी प्रकार के सहकारियों का सर्वमान्य मिलन स्थल और सेवा संस्था की गरज पूरी करती है; लेकिन फिर भी इसकी सदस्य सख्या देश के सभी सहकारी संगठनो की सयुक्त सदस्य सख्या से बहुत कम है।

राष्ट्रीय सगठनो की इस बहुलता के कई कारण है। देश मे कई प्रकार के सहकारी उद्यम है और सब के हित और सब की आवश्यकताएँ अलग-अलग है। उन भिन्न हितों की रक्षा और भिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति उनके अपने विशेषीकृत सघ ही अच्छी तरह कर सकते है। फिर स्पर्द्धा व्यापार का ही प्राण नही वह एक ही क्षेत्र मे कार्य कर रहे संगठनों के लिए दूसरो से ज्यादा अच्छी सेवा करने की दिशा मे स्वस्थ प्रोत्साहन भी है।

लेकिन समस्या राष्ट्रीय संगठनो के बाहुल्य की उतनी नही है जितनी उनमें पारस्परिक समन्वय की कमी, प्रयोजन की एकोन्मुखता के अभाव और किसी-किसी मामले मे भीरुता की। कुछ बहुत बड़े और बहुत शक्तिशाली सहकारी व्यवसाय समूचे व्यापारी समुदाय से स्वीकृति प्राप्त करने के इतने उत्सुक रहते है कि अपने सहकारी होने की बात को हर तरह से दबा-छिपाकर रखते है

और किसी पर भी प्रकट होने देना नही चाहते। अपने लिए 'सहकारी आन्दोलन' पद का प्रयोग उन्हे बिलकुल नही सुहाता; यही चाहते है कि लोग उन्हे एक परिपाटी बद्ध साधारण व्यवसाय ही समझते रहे और उनके काम-काज को कोई सामाजिक या आर्थिक महत्त्व न दिया जाए।

इस तरह की भावना के कारण मिले-जुले है, पर सभी बुरे हो ऐसी बात भी नही है।

जब सहकारी उद्यमो के स्वामी स्वय अपने बारे मे, या दूसरे उनके बारे में, यह सोचा करते थे कि वे जन-समाज से भिन्न अथवा हमारे आर्थिक जीवन की मुख्य धारा से कटे-छँटे विजातीय द्रव्य या कोई पन्थ है, वह जमाना तो कभी से बीत गया। सहकारी उद्यम हमारे आर्थिक जीवन से पृथक् तो कभी थे भी नही वस्तुतः वे हमारी स्वतन्त्र अर्थ व्यवस्था के ही अविकल, महत्त्वपूर्ण और अंगीभूत तत्त्व है। भिन्न प्रयोजनो और भिन्न आवश्यकताओ की पूर्ति से आविर्भूत कई प्रकार के व्यापारी संगठनो का समावेश होने के कारण 'स्वतन्त्र' अर्थ व्यवस्था सदैव मिश्रित अर्थ व्यवस्था भी होती है।

लेकिन यह तो मानना ही होगा कि सहकारी उद्यम दूसरे सभी प्रकार के उद्यमो से भिन्न होते है। उनमे अनुपम विशेषताएँ होती है और वे अनुपम योग दे सकते है। उनकी इन विशेषताओ को भुलाना नही चाहिए; और यह भी याद रखना चाहिए कि इन विशेषताओ मे आस्था रखने वाले लोग अपने-जैसे दूसरे आस्थावानों के साथ सम्मिलित रूप से काम करने को प्रस्तुत होकर ही इन विशेषताओं को पूरी तरह निष्पादित कर सकते है।

जब इस तरह का सम्मिलित कार्य होने लगेगा—जिसके कि सकेत मिलने लगे है—तब अमरीका के कुछ लोगो मे एक ऐसे शक्तिशाली, निश्चयात्मक और सुदृढ आन्दोलन का तत्त्व प्रस्फुटित होगा जिसे सही अर्थो मे सहकारी कहा जा सकेगा—फिर उस आन्दोलन की अभिव्यक्ति के सगठनात्मक रूप और प्रतिरूप किसी भी तरह के क्यों न हों और चाहे बिलकुल ही न हों।

यह नही हो पाया उसके दो प्रमुख कारण है।

पहला कारण है उन्नति की समस्या। सहकारी व्यवसाय के नेताओ को तुरत और लग कर जो काम करना होता है वह यह कि जिस तेज गति से

उनके प्रतिस्पर्द्धी उन्नति करते जा रहे हैं कम-से-कम वही गति उनके अपने सगठन की भी हो। इसके लिए शक्ति को और विशेष रूप से आर्थिक शक्ति को दृढ़ करने की, दूरदर्शितापूर्ण व्यवस्था की, श्रेष्ठतम अन्वेषण की, उत्कृष्ट जन-सम्पर्क को चरमावस्था तक ले जाने की और सदस्यो एव सरक्षकों की अत्यन्त प्रगतिशील सेवाओ की आवश्यकता होगी।

इन सारे कामों को पूरा समय लगा कर, तन्मय हो कर करना पड़ता है।

लेकिन जैसे ही उन्नति होने लगती है एक नया प्रश्न उठ खड़ा होता है। वह यह कि क्या बड़े पैमाने के सहकारी उद्यम के निर्माण की प्रक्रिया मे ही ऐसे तत्त्व समाये रहते है जिनके कारण कुशल व्यापारी नेता शिक्षा के द्वारा सदस्य-स्वामियो मे आदर्शवाद, उद्देश्य परकता, और सक्रिय सहभागिता के पोषण का विरोध करने लग जाएँ—उन्हीं सदस्य-स्वामियों मे, जो सच्ची सहकारी संस्थाओ के प्राण, उनकी शक्ति का अमित स्रोत और किसी भी आन्दोलन की आधार शिला होते है ?

यह महत्त्वपूर्ण प्रश्न आज भी अनुत्तरित है !

अमरीका मे सहकारिता के शक्तिशाली न हो पाने का दूसरा कारण भी बहुत-कुछ पहले कारण की ही तरह सहकारी नेताओ और कार्यकर्ताओ से सम्बन्धित है। वह यह कि कई सहकारी नेताओ और कार्यकर्ताओ का अपने कार्य में—जिस कार्य मे वे लगे हुए है उसी कार्य मे जाग्रत विश्वास नही है। कुछ ही समय पहले विसकोन्सिन की एक फारम-आपूर्ति और उपभोक्ता सहकारी संस्था की वार्षिक सभा के समक्ष भाषण करते हुए शिकागो की एक बड़ी रसायनिक कम्पनी के, जो सहकारी नही है, व्यवस्थापक महोदय ने इस सम्बन्ध मे बड़ी पते की बात कही थी। उसके कुछ अंश इस प्रकार हैं :

"आप लोग बड़े कारबार की तरह काम करने की धुन में बहुत अधिक लगे रहते हैं—उस दिशा में बहुत अधिक प्रयत्न करते है।

"जब तक सहकारी बड़े व्यवसायों के तौर-तरीके अपनाते रहेंगे, उनकी नकल करते रहेंगे तब तक वे सहकारियो की ओर से निश्चिन्त हैं, क्योंकि उनके तरीकों पर चलकर सहकारी उनका कुछ भी नही बिगाड सकते। लेकिन आपके पास तो बड़े व्यवसाय से भी काफी बड़ी चीज है; वह है सातवाँ रोशडेल सिद्धान्त : 'निरन्तर शिक्षित करते रहो।'

"आपका आन्दोलन तो दुनिया के विशालतम आन्दोलनों मे से है। आप इसको छोटा क्यो करते है, इसकी मर्यादा क्यो घटाते है ?.

"दुनिया पुकार-पुकार कर सहकारी आन्दोलन से आर्थिक सहायता माँग रही है और सहकारी आन्दोलन जो सबसे बड़ी आर्थिक सहायता दे सकता है वह है ईसाइयत और विश्व के सभी महान धर्मो का आर्थिक भाष्य—आर्थिक क्षेत्र मे उनपर आचरण। लेकिन मैं तो प्रतीक्षा ही कर रहा हूँ कि कोई उठे और इस बात को कहे तो सही।

"दुनिया अमरीका से घृणा क्यो करती है ?

"हमारे मिसनरी सारी दुनिया मे ईसाई धर्म का उपदेश दे रहे है—उसका प्रचार कर रहे है, इसके साथ-ही-साथ हम दुनिया के लोगो को जो सबसे श्रेष्ठ आर्थिक ज्ञान—श्रेष्ठतम आर्थिक धर्म दे सकते है वह है प्रतियोगीता पूँजीवाद।

"आप किसो व्यवस्थापक से पूछिए कि आप किस तरहकी सहकारी संस्था है, तो वह तपाक से उत्तर देगे : 'हमने गत वर्ष दस, बोस या तीस लाख डालर का व्यापार किया।'

"मुझे यह बात हमेशा परेशान करती रही है कि डेढ सौ वर्ष हो गए और उन मूल सात रोशडेल सिद्धान्तों मे न तो हम कोई वृद्धि कर सके, न उनसे कुछ ले ही सके।

"प्रत्येक स्थानीय सहकारी सस्था द्वारा सहकारी लीग को शिक्षा के लिए अधिक धन और हर स्थानीय सहकारी सस्था मे एक शिक्षा समिति सही दिशा मे उचित कदम होंगे।

',शिक्षा से प्रेरणा पाकर विस्तार और ज्यादा होगा, सेवा और अच्छी होगी।'

"विश्व को युवकों के विचारो और उनके उत्साह की आवश्यकता है और सहकारी आन्दोलन युवकों को सब कुछ दे सकता है।"

जब सहकारी नेता और सदस्य अपने काम और अपनी सस्था के मूल्य और महत्त्व को इतनी स्पष्टता से देख और समझ सकेगे जितनी स्पष्टता से एक प्रतियोगो व्यापारी कम्पनी के इस व्यवस्थापक ने देखा और समझा है तभी सयुक्त राज्य अमरीका मे सहकारी विचार और सहकारो पद्धति अपना सही स्थान ग्रहण कर सकेंगे।

उसके पहले नही।

सहकारी उद्यम कितना ही बड़ा क्यों न हो जाय तब भी नही !

---

१२ वर्तमान और भविष्य

दूसरे महायुद्ध के समय हर चीज दुर्लभ हो गई। उस समय सयुक्त राज्य मे केवल फोर्ट नाक्स का सोना ही एक ऐसी चीज थी जिसका कोई भी व्यावहारिक उपयोग किसी की समझ मे नही आया। बाकी तो, कहते दुःख होता है, पर सचाई यही है कि युद्ध के समय हर व्यापार मे, यहाँ तक कि जो अयोग्य और अक्षय थे उनमे भी खूब तेजी आई और सभी फले-फूले।

कुछ सहकारी सस्थाएँ काफी अच्छी तरह जम चुकी थी और बहुत अच्छी तरह चलाई जा रही थी। कुछ इतनी अच्छी नही भी थी; लेकिन युद्ध काल की तेजी मे काम सभी काफी अच्छा कर रही थी, या कम-से-कम लगता तो यही था।

लेकिन जैसे ही शान्ति हुई छोटी और अयोग्य सस्थाओं की मुसीबत के दिन आ लगे। ईस्ट कोस्ट की तरफ बहुत-सी छोटी-छोटी उपभोक्ता सहकारी संस्थाएँ खतम हो गई। ईस्टर्न कोआपरेटिव होलसेल भी करीब-करीब ठप्प हो गया। यहाँ तक कि कुछ फारम-आपूर्ति सहकारी सस्थाएँ भी मुसीबत मे पड़ गई। नेशनल फार्म मशीनरी कोआपरेटिव का दिवाला पिट गया। नेशनल कोआपरेटिव्स को अपने कई कारखाने बेच देने पडे और उन्नीस सौ की चौथी दशाब्दी मे तो एक समय ऐसा भी आ गया था, जब उसका दिवाला पिटते-पिटते बचा।

जैसे ही सरकार ने युद्ध कालीन मूल्य-नियन्त्रण को रद्द किया निर्वाह-खर्च बढ़ने लगा। श्रमिक-सघ के हलको मे केस-लाट (Case-lot) पद्धति से चीजे खरीदने की रुचि और प्रवृत्ति जोर पकड़ने लगी। डेट्रोइट क्षेत्र मे आदर्शवादी सहकारी कार्यकर्ता, जो व्यवहारिकता मे निपट कोरे होते थे, श्रमिक-सघ के पदाधिकारियों के साथ मिलकर धडाधड़ उपभोक्ता सहकारी भण्डार खोलने लगे। उत्साह बहुत होता था, लेकिन योजना और उपाय काफी

कमजोर होते और अच्छी व्यवस्था तो प्रायः दुर्लभ ही होती थी। ऐसी स्थिति मे कोई सहकारी भण्डार ज्यादा चलता भी कैसे ? कुछ ही दिनों में उसका टाट उलट जाता। और एक-एक कर सब इसी घाट उतर गए।

ऐसा लगता है कि युद्ध और युद्धोत्तर-काल मे सहकारी आदर्शवादिता की प्रबलता और व्यावहारिकता की कई अशो मे उपेक्षा सम्भवतः अवश्यम्भावी ही थी।

भूत काल मे सयुक्त राज्य की सहकारी सस्थाओ मे अतिरेकता की दुर्भाग्यपूर्ण प्रवृत्ति रही है—वे घोर आदर्शवादिता और निरे व्यापार के दो ध्रुवों के बीच घड़ी के लोलक की तरह दोलायमान होती रही है। कुछ सहकारी नेता और कार्यकर्ता इस उद्यम को आर्थिक कार्य-व्यापार से अधिक, लोगो मे सामाजिक सम्बन्धों को उन्नत करने, न्याय भावना को बढ़ाने और संसार को ज्यादा अच्छा बनाने का साधन मानते रहे है। दूसरे उतनी ही कट्टरता से इसे सदस्यों और सरक्षकों को ठोस आर्थिक लाभ पहुँचाने वाला कार्यक्षम व्यावसायिक कारबार समझते रहे है; 'दुनिया के उद्धार' से उन्हे कोई मतलब नही होता। इनमे से कभी एक समूह हावी हो जाता और कभी दूसरा।

दोनों छोरों का समन्वय कर एक मध्यम मार्ग का निष्पादन कठिन ही बना रहा। सरल होता भी कैसे ? रद्दी कारबार के साथ सच्चे आदर्शवाद को जोड़ना उतना ही कठिन है जितना कि उच्च और व्यापक दृष्टिकोण के बिना केवल अच्छे व्यापार के सहारे सहकारिता के सफल होने की आशा करना। इन दोनों गुणों को न तो एक-दूसरे से अलग किया जा सकता है और न एक-दूसरे के विरोध मे ही रखा जा सकता है। दोनों एक-दूसरे के पूरक है और एक के बिना दूसरा फल-फूल नही सकता। आलकारिक भाषा मे कह सकते है कि व्यापार का अच्छा संचालन और सहकारिता के मूल्यों मे सदस्यों का अकृत्रिम विश्वास स्वस्थ सहकारी शिशु के माता और पिता है।

आदर्शवादिता के अतिरेक की प्रतिक्रिया अवश्यम्भावी थी। १९५० मे सहकारी लीग का शिकागो मे जो द्विवार्षिक सम्मेलन हुआ उसमे एक प्रस्ताव पारित कर लीग से कहा गया कि 'वह जो भी करे उसके व्यवस्था-पक्ष पर पूरा-पूरा जोर दिया जाए।' सहकारी लीग के शैक्षिक कार्यों का कुछ दायित्व नेशनल

कोआपरेटिव्स को सौपने के जो प्रयत्न किये जा रहे थे उन्हे बन्द कर देना पड़ा; इसमे थोड़ी जल्दीबाजी अवश्य हुई, परन्तु वह निर्णय सर्वथा उचित ही था। सभाएँ करके बडी गम्भीरता से यह सोचा जाने लगा कि जो संस्थाएँ ठप्प हो गई है और जिनका कारबार ठीक-से नही चल रहा है उन्हे ठीक ठाक करने के क्या उपाय किये जाने चाहिए—सबसे अधिक सोच-विचार किराना भण्डारो के बारे मे किया गया क्योंकि वे ही सबसे बडा सिर दर्द बने हुए थे।

इसी समय दुबले और दो अषाढ़ वाली कहावत भी चरितार्थ हुई। ठीक उन्ही दिनों अमरीका मे सहकारी सस्थाओं का सुसगठित विरोध आरम्भ हुआ। पश्चिमोत्तर मे (नार्थवेस्ट) गल्ला सहकारियों की एक प्रतियोगी सस्था ने विरोधी आन्दोलन के लिए नेशनल टैक्स इक्विलिटी एसोसिएशन (एनटी—राष्ट्रीय कर-समता सघ) की स्थापना मे आगे बढ़ कर हिस्सा लिया। 'एनटी' ने तरह-तरह के स्वरों से बहला-फुसला कर अमरीकी जनता के मन मे यह धारणा बद्ध मूल करने के प्रयत्न आरम्भ कर दिये कि 'सहकारी सस्थाएँ कर नही देती है।' सहकारी सस्थाओं के लिए इस झूठ का भण्डाफोड़ करना कोई कठिन काम नही था। लेकिन सहकारी सस्थाओं ने इस ओर कोई ध्यान ही नही दिया। झूठा वादी गला फाड़-फाड़ कर चिल्ला रहा था और लाखो लोग सुन रहे थे और सच्चा प्रतिवादी चुप था, वह सचाई किसी को भी नही बता रहा था।

'एनटी' बिलकुल नया सगठन था, पर फिर भी उसे पैसे की कोई कमी नही थी; निजी बिजली कम्पनियाँ, गल्ले की आढ़ते, तेल कम्पनियाँ, लौहखण्ड के थोक व्यापारी और सहकारियों के प्रतियोगी सारे कारबार चारों ओर से 'एनटी' पर पैसे की वर्षा कर रहे थे। फिर 'एनटी' अपने झूठ के प्रचार के लिए 'जन सम्पर्क' और प्रसार-प्रचार का काम करने वाली श्रेष्ठ और कुशलतम कम्पनियों को क्यों न लगाता ? उसने वही किया।

शीघ्र ही यह बात समझ मे आई कि सहकारी सस्थाओं की व्यावसायिक दक्षता और कार्य क्षमता पर ही जोर देना आवश्यक नही है, जनता को अपने बारे मे बताने का जन-सम्पर्क का काम भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है। या जैसा कि जन-सम्पर्क का कार्य करने वाली बिरादरी मे कहा जाता है, सहकारियों

को 'पहले उस तरह रहने और तब उसके बारे मे कहने' की जरूरत थी। और तब सहकारी सस्थाओं ने इस काम को १९५० मे बडी मन्दगति से और काफी हिचकिचाते हुए शुरू किया।

द्वितीय महायुद्ध के बाद के पन्द्रह वर्षो मे अमरीकी सहकारी सस्थाओ ने बड़े कडवे अनुभवो के बाद जो सबक सीखे उनमे से कुछ इस प्रकार है :

१—कोई सहकारी व्यापार या सगठन एक जगह स्थिर नही रह सकता—वह या तो बढ़ता, फैलता और ऊँचा उठता है या मरने लगता है;

२—निरे आदर्शवाद और उत्साह के सहारे जीवित रहने वाले छोटे सहकारी सगठनो के दिन लद गए; सहकारी व्यवसायों को प्रभावशाली बनाने के लिए समन्वयन, सघ बद्धता और विलयन नितान्त आवश्यक हो गए है, कच्चे माल और मूल स्रोतो से लेकर उपभोक्ता तक पहुँचने के सभी कार्य-व्यापारो के एकीकृत सघटन की पद्धति को अपनाया ही जाना चाहिए;

३—कार्य-विस्तार की सही पद्धति नई-नई सहकारी समितियो का निर्माण नही; सुस्थापित सस्थाओ का समुचित उन्नति करते जाना है, अर्थात् विस्तार शक्ति के केन्द्रो से होना चाहिए। शहरो मे सहकारी गृह-निर्माण शक्ति का ऐसा ही केन्द्र है; ग्रामीण क्षेत्रो मे क्षेत्रीय सहकारी सस्थाएँ शक्ति का केन्द्र हैं;

४—अच्छी व्यवस्था अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है और सहकारी सस्थाओं का प्रबन्ध किसी भी अन्य व्यावसायिक सस्था के जैसा या उससे श्रेष्ठ हो सकता है,

५—किसी भी प्रकार के सहकारी की सेवाओ पर मनमाने प्रतिबन्ध लगाना जैसे कि केवल किसानों या जाति-विशेष या राष्ट्र-विशेष के समूहों या एकल-सदस्यता-सगठनो के सदस्यो तक सेवाओ को सीमित करना अव्याव-हारिक ही नही सकटास्पद भी है। सभी को सदस्य बनाने की खुली सद-स्यता सहकारिता का सिद्धान्त ही नही सहकारी संस्थाओ के कामकाज के लिए बहुत अच्छा नियम भी है;

६—सहकारी सस्थाओं की जितनी ही उन्नति और वृद्धि होती जाती है सदस्यो की शिक्षा और कार्यशीलता के कार्यक्रमों को उतना ही बढ़ाते जाने की जरूरत होती है, कम करने की तो जरा भी नहीं। उदाहरणार्थ पालिसी-

धारियों की सक्रिय सहभागिता और उनके नियन्त्रण को विकसित करने का उन्नतिशील सहकारी बीमा कम्पनियाँ जो प्रयत्न करती है वह उस सघर्ष के बहुत समीप है जो आधुनिक मानव अपनी नियति को अपने बस मे रखने के लिए करता है, क्योंकि एक तो लोगों की बचते उनकी उन्नति का प्रवेश द्वार होती है और दूसरे वे इस तरह अपनी बचतो को बीमे मे अधिकाधिक निवेशित करते है।

७—सहकारी सस्थाओ के विस्तार और आधुनिकीकरण के लिए, जिससे वे अपने कर्तव्य को ठीक-ठीक निभा सके, जितनी पूंजी की आवश्यकता होती है उसे परम्परागत उपायों से प्राप्त करना अब सम्भव नही रह गया है;

८—अधिकांश अमरीका वासी बिलकुल ही नही जानते कि सहकारी सस्थाएँ क्या है, वे क्यो बनाई गई है और अमरीकी जीवन-पद्धति को वे कौन से मूल्य और लाभ प्रदान कर सकती है; अतएव सहकारी सस्थाओ के लिए जन-सम्पर्क और प्रसार-प्रचार का काम भी करणीय है और इस कार्य का महत्त्व दूसरे किसी भी कार्य से जरा भी न्यून नही है।

इन बातों को केवल सैद्धान्तिक रूप से समझ कर ही नही छोड़ दिया गया, व्यावहारिक रूप देने का प्रयत्न भी किया गया।

१९५१ मे कोआपरेटिव मैनेजमेण्ट डेवलपमेण्ट प्रोग्राम (सहकारी व्यवस्था विकास कार्यक्रम) आरम्भ किया गया। प्रबन्धन-प्रशिक्षण और कार्य-सचालन की क्षमता को विकसित करने वाले एक कार्यक्रम को आरम्भ करने के लिए सहकारी लीग की प्रेरणा से तीन क्षेत्रीय सहकारी सस्थाओं और दो सहकारी ढंग की पारस्परिक बीमा कम्पनियो मे से प्रत्येक तीन-तीन हजार डालर लगाने को राजी हो गई, और पाँच हजार डालर स्वय सहकारी लीग ने लगाये। इन संस्थाओ ने इस कार्यक्रम को आरम्भ करने के निम्न कारण बताये :

सयुक्त राज्य की जिन सहकारी सस्थाओ की नीव काफी मजबूत हो चुकी है आज उनकी सबसे बड़ी और सबसे पहली आवश्यकता ऐसे प्रबन्ध कर्मचारियों को निरन्तर तैयार करते जाना है जो आधुनिक ढग के प्रबन्धन मे सक्षम और दक्ष हों। इस तरह के प्रबन्धक तैयार करने की दिशा मे किसी सुव्यवस्थित कार्यक्रम का अभाव ही सम्भवतः आज

इस सदी की पाँचवी दशाब्दी मे उन्नत प्रबन्धन, कार्यकर्ताओं के विकास और संगठनात्मक रूपो को ज्यादा अच्छा बनाने की रुचि और प्रवृत्ति बढ़ी। कोआपरेटिव मैनेजमेण्ट डेवलपमेण्ट प्रोग्राम मे कुछ वड़े सगठन और सम्मिलित हो गए और इस तरह हिस्सा लेने वाले सदस्यों की सख्या दस हो गई।

इसके वार्षिक पीठ, इन्स्टीटयूट आफ माडर्न मैनेजमेण्ट मे, जहाँ शिक्षण-शुल्क दो सौ डालर है, उपस्थिति-संख्या बढ़ते-बढ़ते एक सौ हो गई।

बीमा कम्पनियों और क्षेत्रीय थोक सहकारी सस्थाओं द्वारा सम्बद्ध स्थानीय संगठनों के व्यवस्थापकों और प्रबन्ध-सम्बन्धी कार्य करनेवाले अन्य व्यक्तियों के प्रशिक्षण और कार्य कुशलता-वृद्धि के कार्यक्रम आरम्भ किये गए।

विशेषज्ञों के परामर्शानुसार दुकानों, कार्यालयों एव साधन-सुविधाओं का आधुनिकीकरण, एक रूपता और विज्ञापन, बाजारों का सर्वेक्षण, लम्बी अवधि की विस्तार योजनाएँ आदि कार्य प्रबन्धन के अध्ययन और शिक्षा-दीक्षा के बाद ही आरम्भ हुए।

अपने विषय के श्रेष्ठ परामर्शदाताओ को अच्छा पारिश्रमिक देकर सगठनात्मक रूपों में काफी परिवर्तन-परिवर्द्धन किये गए। निदेशक मण्डल और व्यवस्था-विभाग एव विभागीय अध्यक्षो के 'प्रबन्धक दल' तथा 'व्यवस्था परिषद्' के सदस्यो मे पारस्परिक समझ और अच्छे सम्बन्धों के विकास के लिए नये तरीके अपनाये गए और पहले से ज्यादा ध्यान दिया जाने लगा।

इसी बीच नेशनल रूरल इलेक्ट्रिक कोआपरेटिव एसोसिएशन ने प्रबन्धन और कर्मचारियों के प्रशिक्षण का एक कार्यक्रम आरम्भ किया जिसका कार्य क्षेत्र कुछ ही वर्षों मे राष्ट्रव्यापी हो गया। वह ग्रामीण विद्युत् व्यवसाय की आवश्यकताओं के अनुरूप बनाया गया था। इसने विद्युत् सहकारी संस्थाओं के हजारों व्यवस्थापकों, विभागीय अध्यक्षो और तकनीशियनो को प्रशिक्षित होने का अवसर प्रदान किया। इस योजना के अन्तर्गत व्यवस्थापको और लाइन के अधिकारियो के अतिरिक्त अन्य कार्यकर्ताओ का प्रशिक्षण भी किया गया।

अमरीकन इन्स्टीट्यूट आफ कोआपरेशन की वार्षिक सभाएँ कृषि सहकारियां मे काम करने वाले व्यक्तियो के प्रशिक्षण-सत्रों का रूप धारण करने लगी।

इसी दशाब्दी मे सहकारी लीग ने जनसम्पर्क-निदेशक, वित्त-अधिकारी, शैक्षिक निदेशक और सम्पादक आदि सहकारी कर्मचारियो के विशिष्ट समूहों के पेशेवर प्रशिक्षण के लिए अलग-अलग पीठो और सम्मेलनो का एक कार्यक्रम तैयार किया।

ऐसे ही कुछ सम्मेलनों मे पेशेवर संगठनो की नीव पडी, जिनमे से एक कोआपरेटिव एडिटोरियल एसोसिएशन भी है। १९६० तक इसके दूध-बिक्री से लेकर नगर-उपभोक्ता और साख-सघों तक सभी प्रकार के सहकारी प्रकाशन के एक सौ से भी अधिक सम्पादक सदस्य हो गए थे। सम्पादकों के इस संगठन की वार्षिक सभाएँ सहकारी पत्रकारिता के सक्षिप्त पाठ्यक्रम वाले लघु शिक्षा-सत्र ही होता है जहाँ सहकारी प्रकाशनो के सम्पादन का विशिष्ठ प्रशिक्षण दिया जाता है।

सक्षेप मे हम यह कह सकते है कि वर्तमान शती की पाँचवी दशताब्दी मे सहकारी व्यवसाय ने वयस्कता प्राप्त की।

कुछ मामलो मे तो इसके विकास की गति दूसरे सभी प्रकार के व्यवसायों से तेज रही, जो आवश्यक भी थी, क्योंकि यह काफी पिछड़ रहा था और इसे उस पिछडेपन को बहुत थोड़े समय मे पूरा कर लेना था।

और निश्चय ही इसन बरसो का काम महीनों मे पूरा कर डाला।

इसका मुख्य कारण यही था कि सहकारी नेताओं की मनोवृत्ति मे अब काफी परिवर्तन हो चुका था। सहकारी लोग और नेशनवाइड इन्श्यूरेन्स कम्पनीज के अध्यक्ष मरे डी लिंकन जैसे कुछ नेताओं ने आत्म सन्तोष की हानिप्रद मनःस्थिति से जमकर संघर्ष किया। वे इस बात की बराबर शिकायत करते रहे कि उन्नति नही हो पा रही है और सहकारी उद्यम अमरीकी अर्थ व्यवस्था का महत्वपूर्ण अश बनने मे बराबर असफल होता जा रहा है।

युद्धोत्तर काल के वर्षों मे रचनात्मक असन्तोष क्रमशः आत्मसंतोष का स्थान ग्रहण करता चला गया। यह धारणा दृढ होती गई कि अपने प्रति-योगियो से इक्कीस होकर ही सहकारी व्यवसाय जीवित रह सकता है और उन्नति कर सकता है।

सहकारिता का विचार और पद्धति निश्चय ही अच्छी और हितकर है।

लेकिन दूसरे महायुद्ध का अन्त होने तक यह विचार व्यापारिक सफलता से बँधा घिसटता रहा। सदस्यो से यह आशा की जाती थी कि वे संस्था की योग्यता-अयोग्यता और सेवाओं की उत्कृष्टता-न्यूनता एवं बहुलता विरलता का विचार किये बिना पूरी निष्ठा से अपनी सहकारी सस्था का सम्पोषण-सवर्द्धन करेगे।

लेकिन पाँचवी दशाब्दी के संक्रान्ति काल ने एक नई मनोवृति का विकास किया, जो पुरानी विचार धारा के विरुद्ध यह कहती थी कि अपनी सेवाओ में विस्तार और उन्नति करना सहकारी संस्थाओ के हाथ की बात है और यह उन्हें करना ही चाहिए जिससे न केवल पुराने सदस्यों का सरक्षण बना रहे, बल्कि हजारो की सख्या मे नये सदस्य भी बनते रहे।

परिवर्तन उस समय की परिस्थितियो की माँग ही नही थी वास्तव मे उन परिवर्तनो को घटित भी किया। कृषि उस समय बुरी तरह विपत्तग्रस्त थी, खासकर के मालिकों द्वारा सचालित छोटे और मझौले फारमों के बहुत बुरे हाल थे। व्यापारी हित अपने कार्य-सचालन मे किसानों को इस तरह समन्वित करते जा रहे थे कि वे अपनी स्वतन्त्रता और आत्मनिर्देशन सभी कुछ गॅवाते जाते थे। पूरा समय खेती करने वाले पक्के-पूरे किसानों की सख्या तेजी से कम होती जा रही थी। पुराने ढर्रे से पूरी तरह नाता तोडकर और नया ओजस्वी ढंग अपनाकर ही ग्रामीण सहकारी सस्थाएँ अपने मे निहित विश्वास के उपयुक्त सिद्ध हो सकती थी। और नगरो की सहकारी सस्थाओं को राष्ट्रीय स्तर पर समन्वित, विज्ञापन और सेवा-साधनो की उन्नति पर हजारो डालर खर्च करके व्यापार को हथियाने के लिए प्रस्तुत शक्तिशाली प्रतियोगियों की कड़ी प्रतिस्पर्द्धा का सामना करना पड़ रहा था।

इसलिए पाँचवी दशाब्दी के अन्तिम वर्षो मे सहकारी सदस्यो एवं संरक्षको को नई, उन्नत और विस्तारित सेवाएँ प्रदान करने का विचार बड़ी तत्परता से घर करता गया।

सहकारी परिष्करण शालाओं का आधुनिकीकरण ही नही किया गया उन्हे इतना कार्यक्षम और उपयुक्त बनाया गया कि वे उत्पादन की उत्कृष्टता मे देशव्यापी स्तर पर किसी से भी टक्कर ले सकें। उदाहरणार्थ नेशनल कोआपरेटिव रिफाइनिंग एसोसिएशन की परिष्करण शाला दक्षिण-पश्चिम (साउथ वेस्ट)

के सम्पन्न तेल क्षेत्र के केन्द्रीय नगर मेकफरसन (कन्सास) का गौरव बन गई। फारम-आपूर्ति सहकारी संस्थाओं ने प्रोपेन गैस और द्रव ईंधन का कारबार ग्रामीण ग्राहकों मे ही नही कस्बे के निवासियों मे भी चालू कर दिया। मिडलैण्ड कोआपरेटिव इनकारपोरेशनने, जो मुख्यत: मिन्नेसोटा, विसकोन्सिन, इओवा और डकोटा के देहाती क्षेत्रों मे काम काज करती है, सेवा-साधनो के आधुनिकीकरण, सुधार, क्षेत्रव्यापी एक रूपता और वृहद् विज्ञापन-अभियान का कार्यक्रम आरम्भ किया। इसने शहर और कस्बे के निवासियों मे भी व्यापार बढाने की नीति अपनाई। इसने अपने सारे क्षेत्र का बहुत बारीकी से सर्वेक्षण किया और जिन समुदायों मे सहकारी सेवाएँ नही थी वहाँ उन्हे स्थापित करने का कार्य हाथ मे लिया। फुटकर बिक्री का काम करने वाली जो सहकारी संस्थाएँ इससे सम्बद्ध थी उनकी उपनगरीय क्षेत्रों मे पेट्रोल के पम्पों का अधिग्रहण करने में यह सहायता करने लगी। मिडलैण्ड ने मिनियापोलिस मे एक नया भाण्डागार बनाया। मेडिसन में एक नया तेल गोदाम और कुशिंग (ओक्ला होमा) की अपनी परिष्करण शाला की कार्यक्षमता का पूरा-पूरा विकास किया।

'मिडलैण्ड कोआपरेटर' नामक पत्र ने अपने १३ जून १९६० के अंक मे 'सहकारी का मुख्य बाजार मे स्थानान्तर' नामक एक लेख प्रकाशित किया था जिससे मिडलैण्ड के कार्यक्रमों के व्यापक प्रभाव पर काफी अच्छा प्रकाश पड़ता है। उक्त लेख के कुछ अंश इस प्रकार हैं :

"ओकली (मिन्नेसोटा) कोआपरेटिव आयल एसोसिएशन ने एक बडी तेल कम्पनी का सर्विस स्टेशन और लोहे के सामान का स्टोर खरीद लिया है और अपनी पुरानी जगह से उठकर कस्बे के मुख्य चौराहे पर चला आया है।

"मिन्नेसोटा के उस पश्चिमोत्तर जिले मे जहाँ किसानो की हजारों एकड जमीन भूमि-बैंक मे रखी हो, अवस्थित सहकारी संस्था के लिए यह प्रगति की दिशा मे बहुत बड़ा कदम है।

"इस संस्था के प्रधान व्यवस्थापक एलमर ओरासन का कहना है : 'अब हम केवल किसानों की सहकारी संस्था नहीं रहे, सामूदायिक सहकारी सस्था बन गए हैं। बहुत-से लोगों ने आ-आ कर हमे बताया है कि उन्हे यह परिवर्तन पसन्द आया।'

"पिछले अप्रैल महीने मे इस संस्था को 'स्ट्रैण्ड्स् सर्विस सप्लाई' को खरीदने का मौका मिल गया। स्ट्रैण्ड की स्थापना नेल्सस्ट्रैण्ड ने १९३२ मे की थी। उनके पुत्र जेराल्ड ने १९४६ मे कारबार सँभाला; उन्होंने काफी-कुछ नया किया और काम को बढ़ाया।

"१९५७ मे जेराल्ड ने लोहे का सामान रखना शुरू किया और मोटर का विभाग भी खोल दिया; लेकिन एक वर्ष बाद उनकी मृत्यु हो गई।

"क्लिफर्ड 'माइक' स्ट्रैण्ड जो पिछले वर्ष तक इस कारबार को चला रहे थे, सब-कुछ बेच-बाचकर अपने पुराने निवास स्थान मिल्वाँकी लौट जाना चाहते थे।

"सहकारी सस्था के निदेशक-मण्डल को मुँह माँगी मुराद मिल गई। वे कारबार को बढ़ाने और नया सर्विस स्टेशन चालू करने का विचार कई दिनों से कर रहे थे। इसलिए एकमत से स्ट्रैण्ड कारबार को खरीदने का फैसला हो गया।

"२७ और २८ अप्रैल को जब संस्था का नये स्थान मे शानदार उद्घाटन हुआ तो कम-से-कम दो हजार ग्राहकों की भीड़ तो रही ही होगी। उद्घाटन समारोह की पुरस्कार-प्रतियोगिता मे पच्चीस आदमियो ने मुश्किल इनाम जीते और ८६ व्यक्ति छोटे सरल इनामो मे कामयाब रहे।

'सस्था के प्रधान व्यवस्थापक ओल्सन का कहना है: 'हम जिस दिन से इस नई जगह मे आये है कारबार बढ़ता ही जा रहा है, दम मारने की फुरसत नही मिलती। इस नई जगह मे रोज नये-नये ग्राहकों का ताँता लगा रहता है। अब हमारे किसान सदस्यों की तो चाँदी-ही-चाँदी है, क्योंकि कारबार को चलाने का खर्च ग्राहकों की बढती हुई सख्या पर फैलता और बँटता जाता है।

"सस्था की यह नई इमारत कस्बे की खास सड़क पर ५० फुट चौडी और अन्दर की तरफ ९९ फुट लम्बी है।"

उधर ओहियो के फार्म ब्यूरो कोआपरेटिव एसोसिएशन ने 'फुटकर सचालन' के नाम से एक नया कार्यक्रम आरम्भ किया। यह एक राज्य-स्तरीय थोक सहकारी सस्था है। इस नये कार्यक्रम के अन्तर्गत समस्त सम्बद्ध जिला संस्थाओं के लिए नई सेवा-सुविधाओं के निर्माण का काम हाथ मे लिया गया जिससे स्थानीय सगठन अपनी चालू सेवाओं का आधुनिकीकरण और नये ग्राहकों को आकर्षित करने वाली नई सेवाएँ आरम्भ कर सके।

कन्सास सिटी के कञ्जूमर्स कोआपरेटिव एसोसिएशन न सूअर पालने-वाले किसानों के लिए एक सम्पूर्ण समन्वित सेवा की योजना कार्यान्वित की जिसमे सूअरों के प्रजनन, परीक्षण एव अनुसन्धान केन्द्र से लेकर बूचडखाना, मांस के पण्योपयोगन और डिब्बो मे बन्द करने का कारखाना और विक्री-व्यव-बस्था तक सारे कामो का समावेश था। इस एसोसिएशन ने १९६० मे कई लाख डालर लागत के एक विशाल नाइट्रोजन उर्वरक कारखाने के निर्माण की घोषणा भी की, जो नेब्रास्का मे लगाया जाएगा और कन्सास मे इस ढग के पहले से चल रहे कारखाने की टक्कर का होगा।

इण्डियाना फार्म ब्यूरो कोआपरेटिव एसोसिएशन ने अपने से सम्बद्ध फुटकर विक्रेता भण्डारों के लिए रसायनों, उपकरणो और पेट्रोल-निर्मित वस्तुओ तक के दामो मे भारी कमी कर दी। इसने पैतीस मील लम्बी तेल की अपनी पाईप लाइन बनाई और चूजाघर का भी काफी विस्तार किया।

अनाज का कारबार करने वाली उन्नीस सहकारी सस्थाओ ने मिलकर गल्ले के सयुक्त निर्यात और विदेशी बाजारो मे खपत बढाने के लिए एक कम्पनी बनाई, प्रोडयूसर्ज एक्स्पोर्ट कम्पनी इसका नाम रखा गया। काम काज के पहले ही वर्ष मे इस कम्पनी ने १४ देशो को कुल मिलाकर तीन करोड़ २० लाख बुशल गल्ला बेचा।

देश की अकेली सबसे बडी सहकारी सस्था कोआपरेटिव जीएलएफ एक्स-चैज ने अपने मुर्गीखाने को इस तरह विकसित किया कि वहाँ की मेहनत केवल आधी रह गई; इस एक्सचैज ने पशु खाद्य, चारा और उर्वरक किसानो को सीधे उनके फारमो पर पहुँचाने की सेवा शुरू की और अपने फुटकर विक्रेता भण्डारों को 'इतने बड़े भण्डारो मे परिवर्तित कर दिया जहाँ किसान अपनी जरूरत की हर चीज और हर सेवा प्राप्त कर सकता है।'

मिचीगन की फार्म ब्यूरो सर्विसेज ने अपने किसान सदस्यों की आवश्यकता-पूर्ति के लिए अण्डों के श्रेणीकरण (दर्जाबन्दी) और सवेष्टन (पैकिग) का कार्य शुरू किया।

पगेट साउण्ड की ग्रूप हेल्थ कोआपरेटिव के सीटल-क्षेत्र मे वहाँ की कुल जनसंख्या के पाँच प्रतिशत सदस्य है। अपने इन सदस्यों के लिए इस सामूहिक

स्वास्थ्य योजना ने एक बिलकुल नया अधुनातन अस्पताल बनाया, जिसकी अन्तिम मंजिल पर प्रसूतिगृह है; यह प्रसूतिगृह इतनी ऊँचाई पर है कि यहाँ से चारों ओर का दूर-दूर तक का दृश्य बड़ा ही मनोरम दिखाई देता है। और देश के उस छोर पर वाशिंगटन डी० सी० में वहाँ की ट्रान्जिट वर्कर्स यूनियन ने अपने समस्त सदस्यों को सहकारी ग्रूप हेल्थ एसोसिएशन के द्वारा स्वास्थ्य परिचर्या—सेवा प्रदान करने का फैसला किया और इस काम की सुचारुता के लिए एक नया बढ़िया अस्पताल भी बनवा दिया।

विसकोन्सिन राज्य में ला-क्रोसे की डेरीलैण्ड पावर कोआपरेटिव की बहुत दिनों से यह अभिलाषा थी कि वह अपने एक लाख ग्राहक-स्वामियों को सस्ते-से-सस्ते मूल्य पर बिजली दे। १९५९ में उसकी यह अभिलाषा पूरी हुई और उसने अपनी बिजली की दरें प्रति किलोवाट घण्टा एक सेंट से भी कम कर दीं। इसका महत्त्व तब समझ में आता है जब इस तथ्य पर विचार किया जाए कि यह सहकारी संस्था जिस क्षेत्र में काम करती है वहाँ बिजली की दरें सारे देश में सबसे अधिक हैं।

ग्रीन बेल्ट कन्जूमर सर्विसेज संयुक्त राज्य के नगर उपभोक्ता सहकारी संगठनों में सबसे बडी संस्था है। १९६० में यह सारे देश में विभिन्न स्थानों पर एक दर्जन सब से सुन्दर बाजार चला रही थी और साल भर में कुल मिलाकर दो करोड़ डालर का कारबार करने लगी थी।

शिकागो की हाइड पार्क कन्जूमर्स कोआपरेटिव नगर का सबसे बडा सुपर-मार्केट ही नहीं चला रही थी प्रति सप्ताह सैकडों नये सदस्य बना कर अपना विकास करने के साथ-साथ 'साउथ साइड' की घनी बस्ती के काफी बड़े-बड़े जन समूहों को 'अपने भण्डार' के स्वामी बनने का अधिकाधिक अवसर भी दे रही थी। इतना ही नहीं, अनेक जातियों और राष्ट्रों की समन्वित बस्ती साउथ साइड के पुनर्विकास के संघर्ष को संगठित और आयोजित करने का यह सहकारी संस्था सामुदायिक केन्द्र भी है।

इस दशाब्दी में न्यूयार्क और मिचीगन के साख-संघों ने पूरी आर्थिक निर्भरता प्राप्त कर ली थी, वित्तीय असुरक्षा से वे पूर्णतः मुक्त हो चुके थे और अपने सदस्यों के लिए लेन-देन के अतिरिक्त अन्य सेवा भी सुलभ करने लगे

थे। वह उल्लेखनीय सेवा है अपने सदस्यों को सहकारी आधार पर अच्छे, सुन्दर और सुशोभन मकानों का मालिक बनाना। इसके लिए साख-सघ सहकारी गृह निर्माण योजनाएँ प्रायोजित करते है और इस प्रकार की चालू योजनाओं की सहायता भी करते है।

सेण्ट पाल की म्युचूअल सर्विस इन्श्यूरेन्स कम्पनीज ने तो बीमा-सेवा में युगान्तर करके यह दिखा दिया कि सहकारी बीमा कम्पनियाँ अपने पालिसी-धारियों की कम-से-कम मूल्य पर कितनी उत्कृष्ट-से-उत्कृष्ट और व्यापकतम बीमा सेवाए कर सकती है। इओवा के एक जिले के हताहत व्यवसाय मे दूसरी व्यापारी बीमा कम्पनियों के मुकाबले ठीक उसी तरह के सात मामलो मे म्युचूल नेबीमकाक की जो बोलियाँ लगाई उनकी रकम आधे से भी कम थी। 'सहकारी बीमा कम्पनियों' मे सब से बड़ी नेशन वाइड इन्श्यूरेन्स कम्पनीज ने नये प्रकार के हताहत बीमों और सामूहिक मोटर बीमो के प्रयोग किये। नेशनल ने सहकारी सामूहिक स्वास्थ्य योजनाओ के विकास मे सहायता देने के लिए एक प्रतिष्ठान की स्थापना करने मे भी आगे बढ कर हिस्सा लिया। और ग्रूप हेल्थ म्युचूअल नामक एक तीसरी सहकारी बीमा कम्पनी ने तो बिलकुल नई तरह की जीवन-बीमा पालिसी शुरू की; इस पालिसी मे यदि २७ वर्ष का कोई आदमी बीमा करवा कर मर जाए तो वह केवल २.५० डालर प्रति सप्ताह पर अपने बच्चों के वयस्क होने तक प्रति मास दो सौ डालर आय का निश्चित प्रबन्ध कर जाता है।

लेक सुपीरियर के आस पास के विपन्न और वीरान प्रदेश में सेण्ट्रल कोआपरेटिव्स इनकारपोरेशन ने 'इलाके के सबसे सुन्दर और सबसे श्रेष्ठ' बाजारों के निर्माण का क्षेत्र व्यापी कार्यक्रम बनाया और कुछ चुने हुए समुदाय मे निर्माण-कार्य आरम्भ कर भी दिया।

पाँचवे दशक मे अमरीकी सहकारी सस्थाओं मे जिस नये दृष्टिकोण का क्रमशः विकास हो रहा था उसके ये कुछ उदाहरण है और ऐसे कई नये उदाहरण और भी दिये जा सकते है।

बीसवी शताब्दी के अन्तिम तृतीयाश के आरम्भ होने से पहले ही अमरीकी सहकारी नेताओं को भूतकाल की असफलताओ के कारणो का ठीक-ठीक ज्ञान हो गया और वे यह भी जान गए कि आगे सफलता किन बातों पर निर्भर करती

है। एक जबर्दस्त चुनौती सामने थी, जिसे उन्होंने देखा और स्वीकार किया। अब उनके कर्तृत्व की सार्थकता इसी मे थी कि ज्यादा-से-ज्यादा लोगों को बड़े और प्रभावशाली उद्यमों के स्वामीत्व और नियन्त्रण में सक्रिय रूप से हिस्सा लेने के योग्य बनाएं, न कि छोटे आदर्शवादी लँगड़ाते उद्यमों के। उन्हे विश्वास हो चला था कि यदि इस काम को कर लिया गया तो अमरीकी लोकतन्त्र के सबसे दुर्बल अंग को पुनः शक्ति-सम्पन्न किया जा सकेगा।

लेकिन इस प्रतीति ने मार्ग की तीन बडी-बड़ी बाधाओं को और भी स्पष्ट कर दिया। वे थी :

१—पर्याप्त धन की आवश्यकता, जो यों तो एक चिरकालिक समस्या थी लेकिन अब सेवाओं के विस्तार, आधुनिकीकारण और समन्वयन के भारी खर्चों के कारण तात्कालिक और चिन्तनीय हो उठी थी।

२—जनता का अज्ञान, न केवल सहकारियों के कर-दान के सम्बन्ध में बल्कि उनके उद्देश्यों, प्रयोजनों, उनसे होने वाले फायदो, उनके स्वरूप और यहाँ तक कि उनके अस्तित्व के भी बारे मे सामान्य जनता को समुचित ज्ञान नही था।

३—सहकर्मिता का अभाव, सहकारी सस्थाएँ पूरी तरह साथ मिलकर काम करने मे सफल नही हो पा रही थी, जो स्वय उनके अपने लिए और उनके सभी सदस्यों के लिए भी बहुत आवश्यक और उपयोगी था।

इसलिए १९६० के सितम्बर महीने मे सहकारी लीग का शिकागो मे जो इक्कीसवाँ द्विवार्षिक अधिवेशन हुआ उसमे प्रतिनिधियों ने अपना पूरा समय केवल दो समस्याओं के ही विचार-विनिमय मे लगाया : सहकारी सस्थाओं के बारे मे जनता की समझ को बढाना और वित्त के नये और बडे स्रोतों का विकास करना। इसके साथ ही एक प्रस्ताव के द्वारा उस अधिवेशन ने पहले के चार सिद्धान्त मे एक नये सिद्धान्त का समावेश और किया; वह पाँचवाँ सिद्धान्त था—"सहकारी संस्थाओं मे सहकारिता।"

अभी तक इन अधिवेशनों के प्रतिनिधि केवल सैद्धान्तिक बहस-मुबाहसा ही करते आये थे; अबकी पहली बार उन्होंने व्यवहार और आचरण के क्षेत्र मे कदम बढ़ाये, क्योंकि सिद्धान्तों को मूर्त रूप देने का कार्य आरम्भ हो चुका था।

इस अधिवेशन मे प्रतिनिधियों को विमर्श और अभिस्वीकरण के लिए जन-सूचना पर एक सुचित्रित निर्देश पुस्तिका भेट की गई, जो विशेष रूप से इसी अवसर के लिए प्रकाशित की गई थी।

इस बात का पता लगाने के लिए कि प्रचार के उद्देश्य पूरे क्यों नही हो पाते और औसत अमरीकावासी का सहकारी सस्थाओ से सम्बन्धित ज्ञान इतना अस्पष्ट और कभी-कभी प्रतिकूल क्यो होता है, १९५९ मे सहकारी लीग ने एक जॉच- समिति नियुक्त की; और उसे स्वय लीग एव लीग के सदस्य सगठनों के जन-सूचना कार्य की छान-बीन करने के आदेश दिये गए। इस समिति मे सहकारी सस्थाओ के कुछ योग्यतम और चोटी के जन-सम्पर्क निदेशकों को लिया गया। समिति ने अपने काम मे समाज शास्त्र, जन-सम्पर्क, विज्ञान और अभिप्रेरणात्मक अनुसन्धान के क्षेत्र मे सलग्न चार श्रेष्ठ विशेषज्ञों की सेवाएँ भी ग्रहण की।

एक नही दो तथ्य अन्तर्निहित थे। इस बात पर ध्यान दिये बिना की बीसवी शताब्दी के मध्य काल की अमरीकी जनता के विचार, मान्यताएँ और अभिरुचियाँ क्या है सहकारी सस्थाएँ उन्हे अपने बारे मे सही-सही अवगत कर ही कैसे सकती थी? अमरीकी जनता को सही रूप मे जाने-समझे बिना उन्हे अपने बारे मे बताना असम्भव ही था।

इस निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए कि आज के अमरीकावासी बीसवी शताब्दी के दूसरे या तीसरे दशक के अमरीकावासियो से भिन्न है, किसी बहुत बड़ अनु-सन्धान को आवश्यकता नही है। आज लोगो के मन मे अपनी जो तसवीर है वह पहले से बहुत भिन्न है। आज के किसान अपने-आपको सूर्योदय से सूर्यास्त तक हल की मुठिया पकड़े और खेत-मजदूरो की टुकड़ी की रखवाली करते खेतिहर के रूप मे नही देखते, और न पुराने फैशन के ओवराल पहनने वाले किसानो के ही रूप मे। आज तो सयुक्त राज्य का प्रत्येक निवासी, उसकी आय अथवा पेशा कुछ भी क्यो न हो, अपने-आपको 'मध्यवर्ग' का व्यक्ति समझता है और यही समझा जाना पसन्द करता। किसी जमाने मे लोग अपने संघर्षों और निम्न परिवारों मे जन्म लेने पर गर्व किया करते थे, लेकिन आज नही करते। वे अपने को सफल, सुशिक्षित और नागरिक वातावरण के अभ्यस्त व्यक्ति के

रूप मे देखना-सोचना पसन्द करते है। आज के अमरीकावासी स्वतन्त्रता का बड़ा आदर करते हैं, यद्यपि अधिकाश न तो स्वतन्त्रता के उत्तरदायित्वो को समझते हैं न स्वतन्त्रता द्वारा प्रस्तुत अवसरो को ही। वे कुल मिला कर उदार होते हैं और दूसरों की——यहाँ तक कि दूर-देश के वासियों की भी सहायता करने को उत्सुक रहते हैं। वे अपने-आपको आत्मनिर्भर और स्वाधीन समझना चाहते है, सचाई चाहे कुछ भी रहे।

इन जानकारियो के आधार पर यह गलती समझ मे आई कि सहकारी संस्थाएँ विज्ञापन और प्रचार कार्यो मे कथ्य और कथन के जिस ढग को अपनाती आई है वह पिछली दशाब्दियों के लिए तो ठीक था, पर आज के उपयुक्त नही है। जनता के मानसिक स्तर तक पहुँच कर ही जनता की भ्रान्तियों का निवारण किया जा सकता है।

समिति ने इस वास्तविकता को भी स्वीकार किया कि सारी जनता एक-जैसी नही है; और विशेषज्ञ, वे भी इससे सहमत थे। समिति ने पाया कि देश मे कई तरह की 'अमरीकी जनता' रहती है। जन-सख्या का एक हिस्सा ऐसे लोगो का भी है जो झूठी तडक-भड़क वाली उस दुनिया से जरा भी सन्तुष्ट और सुखी नही है जिस पर अधिकाश अमरीकावासी यों टूट पडते है। हाइड्रोजन बम का आतक हम मे से कइयो को उद्विग्न किये रहता है। कई ऐसे हैं जो जीवन की सोद्देश्यता और क्रान्तिकारी आदर्श की अपने अन्तरतम मे बडी तीव्र और गहन आवश्यकता अनुभव करते हैं, लेकिन आज के युग मे तो इन आध्यात्मिक गुणों का नितान्त अभाव ही हो गया है। सहकारी सस्थाओं मे ऐसे ही लोगो को अधिक रुचि हो सकती है और यही लोग उनके सक्रिय सदस्य बन सकते है। भ्रातृ भाव, पारस्परिक सहायता, सामाजिक स्थितियो को शान्तिपूर्ण ढग से सुधारने, विश्व शान्ति को बनाये रखने आदि की आदर्शवादी पुराने ढंग की अपीलें ऐसे ही लोगों के लिए प्रभावकारी हो सकती है।

लेकिन इस समूह के अतिरिक्त विशाल जन-समूह भी है जिससे सहकारी संस्थाओं को अपने लिए असन्दिग्ध रूप से समर्थन और स्वीकृति प्राप्त करनी है; और व्यापक जन-सम्पति को इस सीमा तक अपने पक्ष मे कर लेना आवश्यक है कि उनकी वृद्धि और उन्नति का कम-से-कम विरोध तो नहीं ही किया जाए।

सहकारी सस्थाओ के जन-सूचना कार्यक्रमो पर नियुक्त इस विशेष समिति की काररवाई और सिफारिशों को अन्त मे एक आकर्षक पुस्तिका मे प्रकाशित कर दिया गया। उस पुस्तिका का नाम रखा गया "सहकारी सस्थाओ के शब्द", लेकिन हमारे विचार मे "सहकारी सस्थाओं के आठ शब्द" नाम रखना अधिक उपयुक्त होता। किसी भी प्रकार के सहकारी सगठन मे जन-सम्पर्क अथवा जन-सूचना के कार्य मे सलग्न व्यक्तियों के सन्दर्भ और निर्देश के लिए सहकारी लीग ने इसका प्रकाशन किया था।

पुस्तिका मे इस बात का विशेष आग्रह किया गया कि अमरीकी जनता के समक्ष सहकारी सगठनों का चित्र अथवा स्वरूप निम्न अवधारणाओं के साथ या 'सहकारी सस्थाओ के शब्दों' मे प्रस्तुत करना ही उचित है:

उद्यम—सदस्यों और सरक्षकों की आवश्यकताओं को कल्पना शक्ति, दूरदर्शिता और अधिक एवं श्रेष्ठ सेवाओ के द्वारा पूरा करने मे।

दक्षता—लागतो को कम करने और वितरण-पद्धतियों को उन्नत करने मे।

प्रतिस्पर्द्धा—न केवल अपने सदस्यों अपितु समस्त राष्ट्र के लाभ के लिए अर्थ-व्यवस्था पर एकाधिकारी जकड़बन्दी को तोड़ने के लिए।

प्रचुरता—मूल्य के स्तरों की रक्षा के लिए बनावटी अवरोधों या नकली कमी के बिना पूरा-पूरा उत्पादन करने मे।

स्वतन्त्रता—स्वामी और सक्रिय सहभागी बन कर सामूहिक काररवाई से अपनी आर्थिक समस्या को हल करने मे रुचि रखने वाले हर व्यक्ति के लिए।

हिस्सेदारी—लोगों को मिल-जुल कर सामान्य आवश्यकताओ को पूरा और सामान्य सकटों का सामना करने के योग्य बना कर और अपनी प्रचुरता को दूसरे देशवासियों के साथ बॉटने का मार्ग प्रशस्त कर के।

समझदारी—इसलिए कि सहकारी व्यवसाय 'खुली किताब' की तरह कार्य-सचालन करता है और अपने सदस्य-स्वामियों को अपने कार्य-सचालन के ही सम्बन्ध मे नहीं जिन सिद्धान्तो पर कार्य किया जाता है उनकी भी पूरी-पूरी जानकारी देने का प्रयत्न करता है।

और हमारा—इसलिए कि सहकारी सस्थाएँ अपने सभी ग्राहकों को अपना स्वामी बनाती हैं और इसलिए भी कि सहकारी व्यवसाय स्वभाव से

ही स्थानीय स्वामीत्वकृत और अपने समुदायों, बस्तियों एव क्षेत्रों के जीवन-व्यापार के अभिन्न अग होते है।

दूसरे महायुद्ध के परवर्ती काल मे सहकारी सस्थाओ ने जो प्रगतिशील कदम उठाये उनके बारे मे इसी अध्याय मे पहले बताया जा चुका है, उनसे पता चल जाता है कि ये आठो शब्द उनके कार्य सचालन के सर्वथा अनुरूप ही हैं और उनके कार्यों की व्याख्या भी करते है।

लेकिन इस बात को अमरीकी जनता का केवल एक छोटा अंश ही जानता है। सहकारियो ने 'उस तरह रहना' तो शुरू कर दिया है, लेकिन 'उसके बारे मे कहने' का उनका काम अभी शेष है।

सहकारी लीग के इक्कीसवे सम्मेलन के प्रतिनिधियों ने 'सहकारी के शब्द' नामक पुस्तिका पर अपनी स्वीकृति की मुहर लगा कर उसे अधिकृत निर्देशिका का रूप प्रदान कर दिया।

जहाँ तक वित्त-व्यवस्था की समस्या का प्रश्न है सहकारी लीग के दस सम्मेलन के दो ही दिन पहले एक नई पारस्परिक निधि की स्थापना की गई, जिसका उल्लेख दसवे अध्याय मे किया जा चुका है। सघ और राज्य सरकारो को निधि के पजीपन की काररवाई का आवेदन भी कर दिया गया है। सहकारी लीग ने इस निधि को प्रायोजित किया है; और जो कम्पनी इसके निवेश के प्रबन्ध और हिस्से बेचने की हामी लेगी उसके लिए पूँजी की व्यवस्था कोआपरेटिव फाइनेन्स एसोसिएशन आफ अमरीका ने कर दी है। कई सुयोग्य और सुप्रसिद्ध व्यक्तियों ने इस निधि के निदेशक मण्डल का सदस्य बनना स्वीकार कर लिया है और उन्होने मिडलैण्ड कोआपरेटिव्स के व्यवस्थापक ए० जे० स्मावी को निधि का प्रथम सभापति भी निर्वाचित कर लिया है। इस निधि से दूसरे लाभ की आशाएँ की जाती है। एक तो यह निधि सभी सहकारी सस्थाओं, उनके सदस्यो और निवेशकर्ताओ के लिए अपने-अपने अधिशेषो और अपनी-अपनी बचतों के काफी बड़े अंश को निवेशित करने का आकर्षक, सुरक्षित और लाभदायी स्थान सिद्ध होगी; क्योंकि निधि मे निवेश करके उन्हे अपनी पूँजी एकसाथ कई सस्थाओ मे—बड़े-बड़े कई सहकारी सगठनो के साथ-साथ व्यापारी कम्पनियो की प्रतिभूतियों मे लगाने का बढ़िया अवसर मिल जाएगा, जो इसके पूर्व

सम्भव नही था। दूसरे यह कि निधि के निवेशों का काफी अश सुस्थापित सह-कारी व्यवसायों की प्रतिभूतियों मे किया जाएगा। इस प्रकार थोडे समय मे विस्तार के लिए आवश्यक पूँजी की कमी दूर हो जाएगी।

२१ वे अधिवेशन के प्रतिनिधियों ने पारस्परिक निधि के इस प्रस्ताव पर काफी बहस-मुबाहसा किया और अन्त मे प्रबल बहुमत से इसको स्वीकृत कर पूरी-पूरी सहायता का अभिवचन दिया।

सयुक्त राज्य की सहकारी सस्थाओ की त्वरित प्रगति के मार्ग की तीसरी बड़ी बाधा यह है कि पारस्परिक लाभ के लिए जिस हद तक साथ मिल कर जितना काम करना चाहिए वे करती नही है। उदाहरण के लिए कुछ ही समय पहले एक सहकारी ढग की पारस्परिक बीमा कम्पनी के अध्यक्ष ने हिसाब लगा कर बताया था कि उनकी कम्पनी विभिन्न राज्यों के जिन सहकारी सगठनो की बीमा-सेवा करती है वे सभी यदि अपने बीमा-सम्बन्धी काम का आधा ही उनको दे दे तो उनकी कम्पनी का कारबार पाँच गुना बढ़ जाएगा। सचाई तो यह है कि अधिकाश सहकारी सस्थाएँ गैर-सहकारी बीमा कम्पनियों मे बीमा करवाती हैं। साख-संघो के सम्बन्ध मे पहले बताया ही जा चुका है कि उनमे ऐसे बहुत से लोग हैं जो किसी भी प्रकार के सहकारी अथवा पारस्परिक उद्यम की कोई सहायता नही करना चाहते। ऐसी स्थानीय सहकारी सस्थाएँ भी कई है जिनके अपने स्वामीत्वकृत थोक सहकारी भण्डार हैं लेकिन वे अपना अधि-काश माल खरीदती हैं ऐसी व्यापारी कम्पनियो से जिनसे उनके हित किसी भी रूप में जुड़े हुए नही हैं। ऐसी सहकारी सस्थाएँ भी बहुत-सी हैं जिनमे से कोई खाद्योत्पादन का काम करती हैं तो कोई खाद्य के पण्योपयोगन का, कोई खाद्य के संवेष्टन का तो कोई वितरण का और कोई बिक्री व्यवस्था का। यदि ये सब अपनी क्रियाशीलताओं का समन्वय कर ले तो किसानो और उपभोक्ताओ के स्वामीत्व मे खाद्य-उद्योग का इतने प्रभावी एकीकृत संघटन हो सकता है, जिससे जैसा कि पहले बताया जा चुका है, किसानों को प्राप्त होने वाली और उप-भोक्ताओं द्वारा चुकाई जाने वाली कीमतो के अन्तर की चौड़ी खाई बहुत हद तक पट जाएगी।

प्रबन्ध-परामर्श सेवाओं के लिए भी सहकारी संस्थाओं को प्रति वर्ष बहुत

धन खर्च करना पडता है। लेकिन समझ मे नही आता कि अपने सदस्यों से बचत का आग्रह करने वाली सभी सहकारी सस्थाएँ अपनी एक निजी परामर्श कम्पनी खोल कर, स्वय भी बचत क्यो नही करती? आखिर उन्हे कौन रोकता है?

लेकिन सबसे अपत्तिजनक बात तो यह है कि सभी सहकारी सस्थाओ ने सम्मिलित रूप से जन-सूचना और प्रचार का कोई समन्वित कार्यक्रम अभी तक भी आरम्भ नही किया है। इसका अनिष्टकारी परिणाम यह हो रहा है कि किसी भी सहकारी संस्था का प्रचारात्मक कार्य जरा भी प्रभावकारी नही हो पाता। कहना न होगा कि जिन पत्रो का राष्ट्र व्यापी प्रचार है यदि उनमें सीधे सरल ढग से सहकारी उद्यम और अमरीकी जीवन तथा कल्याण कार्यो मे उसके भूत, वर्तमान और भावो योगदानो का विज्ञापन किया जाए तो उससे जनमत पर कितना अनुकूल प्रभाव पड सकता है! लेकिन इस तरह के लगातार विज्ञापन का भारी खर्च किसी एक सस्था के तो क्या एक ही प्रकार के सहकारी सगठनो के किसी अकेले सघ के बूते का भी नहीं है। केवल देश के समस्त सहकारी संगठन सम्मिलित रूप से ही इस खर्चीले काम को कर सकते हैं।

सहकारी नेताओ को ये तथ्य ज्ञात न हों सो बात नहीं; वे काफी समय से इन बातों को जानते हैं। अकसर यह कहा जाता था कि किसानों की विक्रय उपभोक्ताओ की, गृह निर्माता, स्वास्थ्य योजनाओ वाली, फारम-आपूर्ति की, ग्रामीण विद्युत वाली सहकारी सस्थाओ के और साख-संघो के तथा पारस्परिक बीमा कम्पनियो के नेताओं को एक साथ लाना, एक जगह इकट्ठा करना मुश्किल ही नही असम्भव है। ये लोग आपस मे मिलने को राजी ही नही होते।

लेकिन आखिर इस असम्भव को भी सम्भव किया गया। १९५८ मे देश के सभी सहकारी व्यवसायो के उन नेताओं को जो निर्णय करने का काम करते है, एक त्रि-दिवसीय बैठक मे निमन्त्रित करने के एकान्तिक उद्देश्य से अनौपचारिक समिति बनाई गई। और उस बैठक का उद्देश्य केवल इस बात पर विचार करना था कि विभिन्न प्रकार के सहकारी सगठन सर्व सामान्य उद्देश्यो के लिए एक साथ मिल कर किस तरह काम कर सकते है। उस बैठक मे साठ से भी अधिक प्रधान व्यवस्थापक और अध्यक्ष सम्मिलित हुए। विभिन्न गोष्ठियों मे, और उसके बाद जब भी कभी चार-पाँच व्यक्ति कही मिल कर बैठ जाते तो

जो चर्चाएँ हुई वे काफी जानदार और लाभदायी रही। विक्री-व्यवस्था वाली सहकारी सस्थाओ के व्यवस्थापकों ने थोक सहकारी सस्थाओ के व्यवस्थापको से नये व्यापारी सम्वन्ध बनाने के बारे मे बाते की। सहकारी गृह निर्माताओ ने सहकारी बीमा कम्पनियो के अध्यक्षों से वित्त-प्रवन्ध की सम्भावनाओ पर चर्चाएँ की। जन सम्पर्क और नेशनल टैक्स इक्विलिटी एसोसिएशन के आक्रमण की बात तो प्राय सभी की जबान पर थी। समापन के दिन सभी ने एक स्वर और एक मत से यह निश्चय किया कि इस तरह को बैठके प्रति वर्ष होनी चाहिए। सर्वसम्मति से इन बैठकों का नामकरण भी हो गया—कन्सल्टेशन आन कोआपरेटिव्स अमग कोआपरेटिव्स सहकारियो का सहकारिता परामर्श। बैठको के आयोजन और निर्देशन के लिए एक समिति चुन ली गई। इस समिति का महत्त्व और प्रभावोत्पादकता इसी से सिद्ध हो जाती है कि यह अमरीकन इन्स्टीट्यूट आफ कोआपरेशन के अध्यक्ष, नेशनल रूरल इलेक्ट्रिक कोआपरेटिव एसोसिएशन के प्रधान व्यवस्थापक, नेशनल फेडरेशन आफ ग्रेन कोआपरेटिव्स एव नेशनल मिल्क प्रोडयूसर्ज फेडरेशन में से प्रत्येक के कार्यकारी सचिव और सहकारी लीग के कार्यकारी निदेशक को लेकर बनाई गई थी।

१९५९ मे कन्सल्टेशन का उपनाम रखा गया 'समिट मीटिंग' और इस नाम से बुलाई गई बैठक भी काफी सफल रही। १९६० की बैठक भी सफल रही और यह निश्चय किया गया कि अब यह बैठक प्रति वर्ष होती रहे। किसी भी बैठक मे कोई निर्धारित काम करने का निर्णय या विचार नही किया गया। इन बैठको का प्रयोजन केवल अनौपचारिक विचार-विनिमय और चर्चाओ के ही लिए है।

सहकारी लीग के १९६० वाले अधिवेशन की ही भाँति कन्सल्टेशन भी प्रतीक है उस नई चेतना का जो संयुक्त राज्य की सहकारी संस्थाओं मे इन दिनों प्रबल वेग से प्रवाहित हो रही है। बच्चों का खेल समझ कर या उदासीन भाव से चलाये जाने वाले भण्डारों और कृषक सहकारी सस्थाओ के दिन अब लद चुके। यह दिन है आधुनिक सहकारी उद्यम का, जो कृतसंकल्प है आते कल की सच्ची और न्यायपूर्ण अर्थ व्यवस्था के विकास की गति को सार्थक ढग से सन्तुलित बनाये रखने का।

१३ | सहकारिता और शान्ति की आशा

शान्ति आज मनुष्य-जाति की जबर्दस्त आवश्यकता है। आज की दुनिया की हर सस्था, हर पद्धति और हर कोशिश को सबसे पहले इसी कसौटी पर कसा जाना चाहिए कि विश्व-शान्ति की सम्भावनाओं पर उनका क्या प्रभाव पड़ता है।

यदि शान्ति स्थायी न हो सकी और तीसरा महायुद्ध छिड़ ही गया तो स्वतन्त्रता, लोकतन्त्र, जन-कल्याण आदि समस्त मानवी मूल्य जिनका हम सम्पोषण, सम्वर्द्धन और सरक्षण करते हैं नष्ट-भ्रष्ट हो जाएंगे। श्रेष्ठ मानवी गुणों का मूल्य और महत्त्व तभी है जब तक शान्ति बनी रहे; शान्ति का मोल देकर हम जो भी पाएंगे वह एकदम व्यर्थ होगा।

आज शान्ति की अधिकांश बातें राजनयिकों के वार्तालापों और सन्धि-चर्चाओं, सयुक्त राष्ट्र की काररवाइयों या राष्ट्राध्यक्षों की मुलाकातों में केन्द्रित होकर रह गई है।

लेकिन शान्ति की आशा मूलत. निर्भर करती है इस बात पर कि भीड़-भरी, बुरी तरह बटी और तेजी से बदलती हुई दुनिया में लोग मिल-जुल कर रहना कितनी जल्दी सीखते हैं।

अमरीका की सबसे बड़ी गलती, जिसका दण्ड हम १९६० तक विश्व के नेतृत्व-पद से वंचित होकर भुगत रहे हैं, यह थी कि हमने स्वतन्त्रता और स्वतन्त्र मनुष्यों की गौरव-गरिमा पर मोटर, टेलीविजन और अन्तरिक्ष राकेट को प्रधानता देने का प्रयत्न किया। हम ऐसा आचरण करते रहे मानो उच्च कोटि के साधित्रों-उपकरणों की विपुलता और भौतिक वस्तुओं का सुखपभोग ही विश्व के नेतृत्व पद का मूल मन्त्र हो।

अस्थायी रूप से ही क्यों न हो, अभी तो हम अपने राष्ट्रीय पथ से भटक गए हैं।

हम उसी जाल मे फॅस गए है जिसमे विश्व साम्यवाद की शक्तियाँ हमे फँसा हुआ देखना चाहती थी। असल मे हम अर्थवाद के गोरखधन्धे मे उलझ गए है और साम्यवाद की भी सारी प्रेरणा आर्थिक प्रेरणा ही होती है। साम्यवाद पीड़ितों और सकट ग्रस्तों से कहता है : "हमारी प्रणाली को अपनाओ और अपने जीवन-मानों को जल्दी से उन्नत कर लो। अपनी स्वतन्त्रता की चिन्ता मत करो। अपने धर्म को भी भूल जाओ। आत्म-निर्भरता की सारी आशाओं को छोड़ दो। अपना जीवन राज्य को सौप दो और बदले मे खूब खाना लो, खूब कपडे लो।"

युद्ध के तत्काल बाद के वर्षों मे अमरीका ने सबसे बड़ी गलती यह की कि दुनिया के लोगो के मस्तिष्क के नेतृत्व की लड़ाई जिस भूमि पर लडी जाने को थी उसका चुनाव साम्यवादियो को कर लेने दिया।

हम बिलकुल ही भूल गए कि एशिया और मध्य-पूर्व का जनता की आर्थिक से भिन्न मूल्यो, सास्कृतिक दाय और मूलतः धार्मिक आदर्शो मे शक्ति ही वहाँ के देशो मे साम्यवाद के मार्ग की सबसे बडी बाधा रही है।

जो लोग अभी तक गरीब है उनके लिए आर्थिक प्रगति और जीवन-मानो मे उन्नति का अवश्य बहुत अधिक महत्त्व है। और ये दोनों चीजे वास्तव मे शान्ति की बुनियादी शर्ते भी है। यदि अमरीका चाहता है कि विश्व-नेतृत्व का खोया हुआ पद फिर से मिल जाए तो हमे दूसरे देशों के लोगो के जीवन-मानों को उन्नत करने के लिए और कठिन परिश्रम करना चाहिए और अभी तक उनकी जितनी सहायता करते रहे है उससे कही अधिक करनी चाहिए। हमे इस क्षेत्र मे रूसियों से ज्यादा अच्छा काम करना चाहिए। हमे ऐसे उपाय खोजने चाहिए जिनसे हमारी कृषि-उपज के कथित अधिशेषो का विश्व की क्षुधा के निवारण मे उपयोग किया जा सके और देश मे उन अधिशेषो को शान्ति और स्वतन्त्रता की राष्ट्रीय नीति का सबल अस्त्र बनाया जा सके।

शान्ति और स्वतन्त्रता से हमारा अभिप्राय है, ऐसी शान्ति जो लागू की जा सके और ऐसी स्वतन्त्रता जो व्यावहारिक और समस्याओ को हल करने वाली हो।

सयुक्त राज्य ही सारी दुनिया मे एक ऐसा देश है जहाँ महान् आर्थिक सम्भा-

वनाएँ और स्वतन्त्रता की सस्थाएँ भी है—स्वतन्त्रता की ऐसी संस्थाएँ और प्रथाएँ जो मनुष्य की गौरव-गरिमा को सम्भव करती है। हमारे पास देने को बहुत कुछ है। राष्ट्रपति केनेडी के ससार के नव विकासशील देशों मे काम करने के लिए शान्ति सेना के प्रस्ताव का अच्छा स्वागत-समर्थन हुआ—खास तौर पर युवकों की ओर से। यह एक नये ढंग के नेतृत्व की निशानी है और उनकी विजय मे भी इसका कुछ हाथ है।

विश्व का नेतृत्व प्राप्त करने के लिए आज दुनिया के सामने अमरीका की जो तसवीर है, हमे उसमे दो परिवर्तन करने होगे।

सबसे पहले तो हमे मानव-जीवन और विश्व की समस्याओ के क्षेत्र अर्थात् युद्ध और शान्ति के क्षेत्र मे अपने वर्तमान व्यवहार और आचरण को बदलना होगा। क्योकि आज इसी क्षेत्र मे धरती के हर स्त्री, पुरुष और बच्चे की आशाएँ और आकाक्षाएँ केन्द्रित है और यही—इसी क्षेत्र मे न केवल यह निर्णीत होने जा रहा है कि मनुष्य जाति अच्छी तरह से और स्वतन्त्र रहेगी, बल्कि यह भी कि क्या वह जीवित भी रहेगी।

सबसे अधिक इसी क्षेत्र मे निर्भीक, साहसपूर्ण और नैतिक बल-युक्त नेतृत्व की आवश्यकता है। लेकिन हम है कि रूसियो को बार-बार निरस्त्रीकरण और शान्ति के प्रश्न पर व्यापक और साहसपूर्ण, परन्तु साथ ही लच्छेदार और प्रचारात्मक प्रस्तावों और अपीलों के द्वारा चुनौती का अवसर देते आये है। सयुक्त राज्य ने उनकी हर अपील और हर प्रस्ताव का जवाब बार बार इनकार मे ही दिया है और जो प्रावैधिक कारण बताये गए उनको समझ पाना तो मुश्किल ही है।

परिणाम यह हुआ कि हम ससार के समक्ष मानव-जाति को उसके अपने ही हाथो की मृत्यु से बचाने की उत्कट अभिलाषा वाले राष्ट्र के रूप मे नही आ सके। अब हमे यह काम करना चाहिए। अब हमे सयुक्त राष्ट्र मे विश्व-शान्ति और न्याय पर निर्भीक और सभी दृष्टियों से परिपूर्ण ऐसी योजनाओं का ताँता लगा देना चाहिए कि रूस सहित कोई भी राष्ट्र किसी भी तर्क-बल से उन्हे परास्त और अस्वीकार न कर सके। ऐसी योजनाओ की विस्तृत रूपरेखाएँ बन भी चुकी है। अब तो हमारे देश द्वारा उनको अपनी प्रमुख नीति के रूप मे अपनाये जाने की ही देर है।

यदि हम अपनी सभी राष्ट्रीय योजनाओ और कार्योंमे मानव-जीवन की रक्षा को सर्वोपरि स्थान देने के लिए राजी हो जाएँ तो हम विश्व के नेता बन सकते हैं। और विश्व के नेता बनने के लिए हमे अपने विरोधी को वहाँ पकड़ना होगा जहाँ वह सबसे कमजोर पडता है। नैतिक आधार की कमी ही उनकी सबसे बड़ी दुर्बलता है। इसके साथ-साथ हम राष्ट्रीय सोद्देश्यता की पुनरूपलब्धि भी कर सकते है। लेकिन यदि हम इसी भ्रान्ति मे पड़े रह गए कि अन्तरिक्ष मे हमारे उपग्रहों को और स्नानागारो मे हमारे 'फर'-बिछे बाथ टबो को देखकर दुनिया हमारा अनुसरण करेगी तो इन दोनो मे से एक भी बात न हो पाएगी।

दुनिया के सामने आज अमरीका की जो तसवीर है उसमे दूसरा परिवर्तन हमारी अर्थ व्यवस्था से सम्बन्धित है।

हम 'जनता के पूँजीवाद' का बहुत अधिक प्रचार करते हैं। दूसरे देशों में जहाँ-जहाँ भी विश्व मेले लगे और विश्व प्रदर्शनियाँ हुई वहाँ सभी जगह तरह-तरह के अनोखे और नाटकीय ढंग अपना कर हमने इस विचार को प्रदर्शित और प्रचारित किया है। लेकिन इस बात का जीता-जागता प्रमाण कि सयुक्त राज्य में वास्तव में 'जनता का पूँजीवाद' है, हम हर बार घर पर ही छोड जाते है।

हम लोगों को यह दिखला सकते है कि अमरीकी जनरल मोटर्स, युनाइटेड स्टेट्स् स्टील और स्टैण्डर्ड आयल पर ही गर्व करने वाला राष्ट्र नही है। अमरीका ऐसा राष्ट्र भी है जहाँ एक करोड चालीस लाख परिवार अपनी स्वतन्त्रता और अपने अपेक्षाकृत छोटे साधनो का अपनी आर्थिक आवश्यकताओ को सीधे-सीधे पूरा करने वाली अपनी आर्थिक सस्थाएँ बनाने मे उपयोग करते हैं। अमरीका ऐसा राष्ट्र भी है जहाँ एक करोड़ दस लाख परिवारो की अपनी जन-बैंके हैं जो साख-सघ कहलाती हैं और इन बैंकों के द्वारा ये परिवार अपनी बचतो को अपनी आर्थिक सुरक्षा मे नियोजित करते है। अमरीका ऐसा देश भी है जहाँ के दो तिहाई किसान और ग्रामीण जनता अपने ही तेल कुओ, पाइप लाइनों, परिष्करण शालाओं और विद्युत् प्रदाय के स्वामी है। अमेरिका ऐसा राष्ट्र भी है जहाँ के कई लाख लोगों ने यह भेद जान लिया है कि वे बडी-बडी बीमा कम्पनियाँ—सही अर्थो मे 'पारस्परिक' कम्पनियाँ सगठित कर सकते हैं, उनके स्वामी बन सकते हैं और उनका नियन्त्रण-परिचालन भी कर सकते हैं।

अमरीका ऐसा राष्ट्र भी है जहाँ के लोग सामान्य नर और नारी की मानवी गरिमा को अत्यधिक व्यावहारिक ढगो से स्थापित कर सकते है, और कई अमरीकी जन है जो ऐसा कर भी रहे है।

अगर, जैसा कि डाक्टर रोल्लोमे का कहना है, शक्ति का केन्द्रीकरण ही हमारे समाज की वर्तमान दुर्बलता का कारण है तो हम यह भी दिखला सकते है कि हमारे पास ऐसा प्रतीकारात्मक उपाय भी है जिससे औसत नागरिक की उत्तरदायित्व भावना और आशा को पुनः स्थापित किया जा सकता है।

प्रतीकार का वह सीधा-सा उपाय है सहकारिता—परस्पर सहायता की पद्धति।

धरती पर कही भी कोई भी जनसमूह उस उपाय को,—सहकारिता की पद्धति को अपना कर अपने जीवन-मानो को उन्नत कर सकता है, अपनी स्वतन्त्रता मे वृद्धि कर सकता है और अपनी मानवी गरिमा को निखार सकता है।

यह एक ऐसा चित्र है जिसे कोई भी समग्रवादी देश आलेखित नही कर सकता। यह एक ऐसा चित्र है जो सुचारुता से मानवी जीवन को न कि निष्प्राण वस्तुओ को, सँवारने के उपायों मे, परिकल्पना, निष्ठा और लगन को जाग्रत और नियोजित कर सकता है। यह चित्र है सोद्देश्य लोगों का।

और यह चित्र है ऐसे लोगो का जो साथ मिलकर रहना और इस प्रकार शान्तिपूर्ण विश्व की नीव रखना सीख रहे है।

सहकारी लीग के शिकागो कार्यालय मे कई फाइलों मे 'सामूदायिक सहभागिता' विषय पर ढेरों सामग्री भरी पड़ी है। उस सामग्री मे सहकारी संस्थाओ को अपने समुदायों मे रचनात्मक, सक्रिय और सहायता देने वाली सस्था बनाने मे 'सामूदायिक सहभागिता' के महत्त्वपूर्ण योगदान पर अनेक विवरणात्मक व्याख्याएँ है। कई निर्देश पत्रको मे यह बताया गया है कि सहकारी सस्थाओ को अपने सदस्यों का अधिकाधिक समर्थन और सामूदायिक सहभागिता प्राप्त करने के लिए शैक्षिक सम्मेलनो का आयोजन किस प्रकार करना चाहिए।

युद्ध के तत्काल बाद के वर्षो मे ऐसे कई सम्मेलन आयोजित किये गए थे। उनका कुछ प्रभाव भी हुआ।

प्रबन्धन विकास कार्यक्रमो का सम्भवतः कुछ अधिक प्रभाव हुआ।

कुल मिलाकर परिणाम अच्छे रहे। आज सहकारी सस्थाओ के सदस्य-निदेशक-मण्डल और व्यवस्था विभाग अपने सदस्यों की आर्थिक उन्नति के ही लिए प्रयत्न करके नही रह जाते बल्कि जहाँ व्यापार करते है उन क्षेत्रो, राज्यो और समुदायो के जनजीवन मे अपने सर्वांगीण योगदान की भी सजग, सक्रिय-चिन्ता करते रहते हैं।

इस सम्बन्ध मे कुछ उदाहरण रुचिकर होगे :

मिन्नेसोटा राज्य का क्लोकेट एक छोटा-सा नगर है, जो कभी सम्पन्न खनि-प्रदेश का केन्द्रस्थल था। लेकिन अब वहाँ की खाने बहुत कुछ रीत चली है और खनि-कर्म से उतना उत्पादन नही होता जितना पहले हुआ करता था। वहाँ नये उद्योगों और नये प्रकार के रोजगार की आवश्यकता है। नगर की आबादी कम हो सकती है, लेकिन अब शायद ऐसा नही होगा। इसका एक कारण तो यह है कि बरसो पहले जिन आप्रवासियो द्वारा स्थापित नगर के प्रमुख सहकारी सगठन ने वहाँ एक बहुत खूबसूरत बाजार बना दिया है। इस बाजार की चहल-पहल और रौनक से सारे सयुक्त राज्य का कोई भी बाजार टक्कर नही ले सकता। जिस दिन उद्घाटन हुआ वह क्लोकेट और उसके विस्तार की बस्तियो के लिए शानदार उत्सव से कम न था। इस बाजार के पास अब नई इमारते बन रही हैं। जो व्यापारी और व्यवसाय घबराकर बस्ती छोड गए वे अब हाथ मलते है। लेकिन सहकारी संस्था तो छोडकर जा नही सकती। जिनकी आवश्यकताओं को पूरा करती है, जिनकी सेवा करती है सहकारी सस्था उन्ही को,अर्थात् स्थानीय लोगो की होती है। वह अपने स्वामियो-सरक्षको को छोडकर कहाँ जा सकती है। सहकारी सस्था तो लोगो को जहाँ वे है वही साथ मिलकर रहना सिखाती है।

शिकागो के ठीक मध्य भाग मे अनेक जातियों वाले जाति-वर्ण-मिश्रित हाइडपार्क का सहकारी भी वहाँ से नही गया, यद्यपि दूसरे कई व्यापार जन-सख्या की अदला-बदली और हालते कुछ बिगड़ जाने से सैकडों की तादाद मे वहाँ से चले गए। ऐसी स्थिति मे हाइडपार्क कोआपरेटिव सुसाइटी के सदस्यो ने वही डटे रहकर हालत का मुकाबला करने और हाइडपार्क को नये सिरे से विकसित

करने का फैसला किया। इस निर्णय ने जादू का-सा काम किया। इस सहकारी को केन्द्र बनाकर नई सामुदायिक चेतना विकसित होने लगी। पुनर्विकास की एक योजना तैयार की गई। वही की खस्ताहाल इमारतों के कुछ हिस्सों में एक बाजार बनाने का निश्चय किया गया। उस बाजार मे सुपर मार्केट खोलने और चलाने की जिम्मेवारी सहकारी समिति को सौपी गई। समिति ने इतना बड़ा ओर अच्छा सुपर मार्केट बनाया जिसकी टक्कर का सारे शिकागो में दूसरा नही है। इस सुपर मार्केट का एक वहुत बड़ा नोटिस बोर्ड है। उस पूरे शहर नुमा इलाके के लोग उस नोटिस बोर्ड पर अपनी आवश्यकताएँ लगा देते है—किसी को बच्चे रखने वालों की जरूरत है तो किसी को बावा गाड़ियों की : फरनीचर, कैलिफोर्निया की यात्राएँ आदि सब-कुछ; और यह तुलनात्मक ऑकडे थी कि इस तरह की चीजे और सेवाएँ दूसरों से किस दाम पर मिल रही है। उस नोटिस बोर्ड पर सूचित किये बिना हाइडपार्क क्षेत्र मे कोई सभा नही होती और और न हो ही सकती है। और बहुत-सी सभाएँ तो सहकारी समिति के सभा भवन मे ही होती है।

हाइड पार्क कई जातिया के लोगो के शान्तिपूर्ण और रचनात्मक सहजीवन (साथ मिलकर जीवित रहने) के लिए अमरीका के सघर्ष का प्रतीक है। इस दिशा मे हाइड पार्क समिति ने अपना योगदान बहुत पहले और बड़े ही यथार्थ-वादी ढग से आरम्भ कर दिया था। उसका व्यावहारिक रूप था समिति के कर्मचारियों का 'एकत्रीकरण', अर्थात् कर्मचारियों की सेवा नियोजित करने मे यह नीति अपनाई गई कि हाइड पार्क क्षेत्र मे जितनी जातियाँ और प्रजा-तियाँ बसती है उन सब का प्रतिनिधित्व हो सके। शुरू-शुरू मे इस काम में बड़ी कठिनाइयाँ पेश आई। कुछ सदस्य सम्बन्ध-विच्छेद भी कर गए, परन्तु बाद मे पुनः सम्मिलित हो गए।

१९५८ मे हाइडपार्क कोआपरेटिव समिति के प्रधान व्यवस्थापक को शिकागो कौन्सिल आन ह्युमैन रिलेशन्स (मानवी सम्बन्धों की परिषद्, शिकागो) का नगर-पुरस्कार दिया गया; सारे शिकागो शहर मे उन्होने मानवी सम्बन्धों के सुधार की दिशा मे सबसे अच्छा काम किया था।

लोग साथ मिलकर शान्ति से रहना सीखते है।

मध्योत्तर (नार्थ सेट्रल) कन्सास के मिचेल काउण्टी के निवासियो को अपने सबसे बड़े सहकारी पर बड़ा अभिमान है। यह सस्था किसानों के अनाज के सग्रह और पोत-लदान के लिए आधा दर्जन समुदायो मे अन्नागारो की व्यवस्था करती है। शहर का सबसे बढिया किराना भण्डार इसी सस्था का है। यह किसानो और नगरवासियो, दोनो की पेट्रोल-सम्बन्धी हर माँग को पूरी करती है। यह पशु-खाद्य और चारा, बीज, उर्वरक और फारमो के लिए आवश्यक दूसरा सामान बेचती है। लेकिन यह सस्था इन व्यापारी कामोके अतिरिक्त और भी बहुत से काम करती है। इसके व्यवस्थापक बरसो से जिला बोर्ड के सदस्य और सामुदायिक अस्पताल के निदेशक मण्डल के अध्यक्ष है। स्थानीय कम्युनिटो चेस्ट (सामुदायिक निधि-सग्रह) अभियान के सभापति पद को कभी व्यवस्थापक महोदय और कभी सहकारी सस्था के निदेशक मण्डल के कोई सदस्य सुशोभित करतें है। यह सस्था युवक-युवतियो के लिए नृत्य का आयोजन और बालचर दलों के लिए वाहनादि का प्रबन्ध करती है। यदि व्यापारी सस्थाओ के लिए कोई 'सुनागरिक' पद, पदक अथवा पुरस्कार होता तो मिचेल काउण्टो निश्चय ही उसे अपनी इस सहकारी सस्था को प्रदान करती।

उचित भी होता, क्योंकि मिचेल काउण्टी की सहकारी सस्था किसी एक आदमी की नही उस जिले के हजारो व्यक्तियो की अपनी, अपने स्वामीत्व की सस्था है।

मिचिगन क्रेडिट यूनियन लीग जो एक साख-सघ है, अपने सदस्यो की बचतो की रक्षा और जरूरत पड़ने पर उन्हे उधार देने का ही काम नही करती, उनको और भी कई आवश्यकताओ का ध्यान रखती है। उन आवश्यकताओ को सारे समुदायो की आवश्यकताओ से अलग नही किया जा सकता। लोगों की-सामर्थ्य का मकान ऐसी ही आवश्यकता है। इसलिए मिचीगन लीग के नेताओ ने मकान के लिए ऋण संघ की स्थापना की और विधि-विधान इस तरह का बनाया जिससे हिस्सो की बिक्री से अर्जित धन साख-सघ की अधिशेष निधि मे निवेशित किया जा सके। शीघ्र ही उन्हे एक जन-हितैषी ठेकेदार भी मिल गया। यह मकान के लिए ऋण सघ दस हजार डालर या इससे कम लागत मूल्य के मकानो के लिए उधार देता है। मिचिगन मे इस योजना के

अन्तर्गत कई मकान बन भी गए और उनका कर्ज भी चुका दिया गया। डेट्रोइट टीचर्स क्रेडिट यूनियन अमरीका का सबसे बडा साख-सघ है, इसने अपने सदस्यों को मकान बनाने के लिए कर्ज दिया जिससे उन्होंने अपने सहकारी-स्वामीत्व की बहुत ही सुन्दर रिहायशी इमारत बनाई।

लोग साथ मिल कर रहना सीख रहे हैं।

डेरीलैण्ड पावर कोआपरेटिव दक्षिण-पूर्वी मिन्नेसोटा,उत्तर-पूर्वी इओवा और पश्चिमी विसकोन्सिन के एक लाख किसानों की स्वामीत्वकृत सस्था है। यह इन एक लाख किसानों के विभिन्न सहकारी विद्युत् प्रदायों को उस क्षेत्र में सबसे न्यून मूल्य पर थोक बिजली ही नही देती और भी बहुत कुछ करती है। विसकोन्सिन के लाक्रोसे का सबसे प्रमुख उद्योग है डेरी लैण्ड। इसका मासिक मुखपत्र प्रति वर्ष अक्तूबर महीने मे लाक्रोसे कम्युनिटी चेस्ट अभियान का जुड़वाँ पृष्ठों पर विज्ञापन प्रकाशित करता है। उसमे पाठकों को विस्तार से बतलाया जाता है कि कम्युनिटी चेस्ट की सस्थाएँ क्या-क्या काम करती है। उसमे डेरीलैण्ड के उन कर्मचारियों के नाम भी दिये जाते है जो अपने साथियों से निधि जमा करेगे और यह भी बता दिया जाता है कि हर कर्मचारी को कितनी रकम देनी चाहिए।

अलग-अलग प्रकार की बीमारियो के लिए भिन्न-भिन्न निधियो की संख्या हमारे देश मे गणनातीत हो गई है। हृदय-निधियाँ, कैन्सर-निधियाँ, पोलियो-निधियाँ, ल्यूकेमिया (रक्त मे श्वेताणुओ की संख्या वृद्धि और उससे होनेवाली विकृतियों का रोग) निधियाँ, मनः स्वास्थ्य-निधियाँ—जितने भी रोगो का मनुष्य को ज्ञान है उन सब की अनन्त निधियाँ है। नही है तो एक सर्दी-जुकाम की निधि जिसकी हमारे देश और सारी मनुष्य जाति को सबसे अधिक आवश्यकता है। लेकिन ये सभी निधियाँ साथ मिलकर सामुदायिक पद्धति पर धन-संग्रह के लिए तैयार नही होती। सब का यही दावा है कि अलग-अलग इकट्ठा करने से उन्हे ज्यादा पैसा मिलता है। बहुत-सी जगहो के लिए उनकी बात सच हो सकती है। लेकिन एक जगह ऐसी भी निकली जहाँ उनका यह दावा गलत साबित हुआ। न्यूयार्क के निचले ईस्ट साइड के सहकारी ग्राम (कोआपरेटिव विलेज) मे जो परिवार रहते है, उन्होंने एक बार यह माँग की कि उन्हे

अलग-अलग आधा दर्जन धन-सग्रह अभियानो के बदले अपने ग्रामवासियों से एक सयुक्त चन्दा कर लेने दिया जाए। विभिन्न निधियो के अध्यक्ष पहले तो हानि की अ.शका से राजी नही हुए, परन्तु बाद मे उन्होने स्वीकार कर लिया। परिणाम यह हुआ कि सहकारी ग्राम के निवासियों ने स्वेच्छा से जी खोल कर धन दिया और कुल निधियाँ की अपेक्षित जोड से कही अधिक पैसा जमा हो गया।

इन परिवारो ने साथ मिलकर रहना सीख लिया था।

विसकोन्सिन के एक मझौले नगर की सामूदायिक सहकारी सस्था के व्यवस्थापक नये प्रकार के मिशनरी के रूप मे पॉच वर्ष के लिए भारत जाने का विचार कर रहे हैं। उन्हे चर्च बोर्ड आफ एग्रोकल्चरल मिशन्स वहॉ भेजेगा। वे वहॉ धर्मोपदेश नही देंगे; लोगों को पारस्परिक सहायता पर आधारित स्वावलम्बी आर्थिक संस्थाओं का सगठन करना सिखाएँगे।उन्हे भेजने वाला मिशन बोर्ड इस काम को ईसाई धर्म प्रचारको के सर्वथा उपयुक्त ही मानता है।

लेकिन ये व्यवस्थापक महोदय एक टेढी समस्या का हल अभी तक नही निकाल पाये हैं। वह समस्या है अपने समुदाय से छुट्टी पाने की।यदि वे भारत चले गए तो स्कूल समिति, गिरजाघर के प्रबन्ध मण्डल और वाणिज्य मण्डल (चेम्बर आफ कामर्स) मे उनकी जगह कौन काम करेगा? स्कूल की उच्च कक्षाओं के छात्रो को प्रति वर्ष अपने नगर के व्यापार और उद्योग पर कौन भाषण देगा? अपने-आप को 'अपरिहार्य और अत्यावश्यक' समझने की इनकी आदत जरा भी नही है। ये भले ही न समझे परन्तु अधिकाश नागरिको का यह खयाल है कि उनके चले जाने से बहुत से काम रुक जाएँगे। इसलिए वे उन्हे छोडने को राजी नही होते, यह जानते हुए भी कि वे भारत जाकर वहाँ के लोगों को साथ मिल कर जीना सिखा सकते हैं, क्योंकि विसकोन्सिन मे वे इस काम को कर चुके हैं और आज भी कर रहे हैं।

विश्व मे शान्ति की स्थापना के लिए इन सारे कामो का जरा भी महत्त्व नही रह जाता यदि दुनिया के करीब-करीब हर देश मे ठीक इसी तरह के काम न हो रहे हों। लेकिन जहाँ सयुक्त राज्य मे सहकारी सस्थाओं को हर कदम पर अपने समाज के विरोधी दलों से सघर्ष करना पड़ता है, नवविकसित देशों

मे, बिना एक भी अपवाद के, सहकारी संस्थाओ को आधार शिला बनाकर ही वहाँ की जनता के जीवन-मानो का निर्माण किया जा रहा है। आज एशिया, अफ्रीका और इधर-उधर तो लैटिन भाषी अमरीकी देशो मे भी 'सहकारी' वहाँ के सर्वश्रेष्ठ, सर्वमान्य और सर्व स्वीकृत शब्दो मे है।

इन देशों मे साम्यवाद का विकल्प सहकारिता है, आर्थिक पूँजीवाद नही।

उदाहरण के लिए भारत को पचवर्षीय योजनाओ मे उस महान देश की अर्थ व्यवस्था के 'सहकारी क्षेत्र' को समूची योजना के एक दृढ़ आधार के रूप मे विकसित करने की बात बहुत जोर के साथ कही गई है।

यदि इण्डोनेशिया साम्यवाद से बच सकेगा तो केवल इसीलिए कि वहाँ के निवासी अपने गाँवो और नगरो मे बडी तेजी से सहकारी सस्थाओं को विकसित कर रहे है जो उनके जीवन-मानों को उन्नत करने के साथ-साथ सारे देश की जनता को आर्थिक सुरक्षा भी प्रदान करेगी। यह प्रसन्नता की बात है कि वहाँ इस दिशा मे काफी प्रगति हो चुकी है।

मिस्र अपने लिए जितने पेट्रोल का उपयोग करता है उसका चालीस प्रतिशत एक सहकारी सस्था द्वारा उपलब्ध किया जाता है।

पेरू मे एडोज के ऊँचे पहाडो मे कैथोलिक पादरियों का एक सगठन वहाँ के निवासियों को जिनमे विशुद्ध इडियनो की सख्या अधिक है, साख-सघों को संगठित करना और चलाना सिखला रहे हैं। इन प्रयत्नों से वहाँ के लोगों की हालतो मे जो आश्चर्यजनक उन्नति हुई उसकी कहानियाँ किसी परी कथा से कम नही है। कोलम्बिया के सहकारियों ने १९६० मे अपना एक राष्ट्रीय सघ बना लिया है। इस सघ मे किसानो के विक्रय और सम्भरण साख-सघ, गृह-निर्माता, उपभोक्ता और अन्य प्रकार के कई सहकारी है। सयुक्त राज्य की सहकारी लीग, कैरीबीयन कोआपरेटिव कान्फेडरेशन और मेक्सिको के नेशनल फेडरेशन आफ कोआपरेटिव्स ने अपनी १९६० की बैठको मे जिस पहले अखिल-अमरीकी सहकारी महा सम्मेलन को आयोजित करने का प्रस्ताव किया है वह या तो पेरू या कोलम्बिया मे से कही पर होगा और उसमे सस्काट्चेवान से पैटागोनिया तक के सगठन सम्मिलित होगे।

सयुक्त राज्य के सहकारियों के प्रतिनिधिगण भारत, कैरीबीयन और वियत-

नाम मे काम कर रहे है। उन देशो के सहकारी सगठनो के निमन्त्रण पर वे वहाँ गये है। वे वहाँ के लोगो को ऐसी आर्थिक सस्थाएँ विकसित करने मे तकनीकी सहायता देने के लिए गए है जो सदैव वहाँ के निवासियो के अधिकार मे बनी रहेगी। १९६० मे सयुक्त राज्य की सहकारी लीग का जो बाईसवाँ द्विवार्षिक अधिवेशन हुआ उसकी प्रमुख वक्ता एक सुप्रसिद्ध भारतीय महिला थी, जो अपने देश की नेता और भारतीय सहकारी सघ का अध्यक्षा भी है। उस अधिवेशन मे बधाई का जो सबसे महत्त्वपूर्ण सन्देश प्राप्त हुआ वह पश्चिमी नाइजीरिया की सहकारी यूनियन द्वारा तार से भेजा गया था। जापानी उपभोक्ता सहकारियो के दो युवक अधिकारी १९५९ मे अमरीका आये और उन्होने छह महीने कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय और कैलीफोर्निया की सहकारी सस्थाओ मे प्रशिक्षण प्राप्त किया। उनका सारा खर्च कैलीफोर्निया की दो सहकारी सस्थाओ और सहकारी लीग ने उठाया। सयुक्त राज्य के सहकारियो ने अपने जिस व्यक्ति को वियतनाम भेजा था मुख्यतः उन्ही के प्रयत्नो से वहाँ पर सहकारी नेताओ, व्यवस्थापको और सदस्यो की शिक्षा-दीक्षा के लिए एक राष्ट्रीय प्रशिक्षण स्कूल स्थापित किया गया।

जिस इण्टरनेशनल कोआपरेटिव पेट्रोलियम एसोसिएशन के हावर्ड काऊडेन प्रमुख सस्थापक है, वह सयुक्त राज्य, स्वीडन, मिस्र, युगोस्लाविया, फ्रान्स, नारवे, हालैण्ड, जर्मनी, इसराइल और दूसरे एक दर्जन देशो के सहकारी सगठनों की स्वामीत्वकृत अन्तर्राष्ट्रीय सस्था है। यह सस्था खरीदारो को सरक्षण-धन वापसियो की अदायगी के आधार पर पेट्रोल का कारबार करती है। इसका उद्देश्य मुट्ठी-भर स्टाकधारियों के लिए लाभ कमाना नही लोगो के जीवन-मानों को उन्नत करना है। सार्वलौकिक आवश्यकता की अन्य वस्तुओ का व्यापार करने वाली इसी तरह की दूसरी अन्तर्राष्ट्रीय सहकारी वणिज सस्थाओ की स्थापना की दिशा मे यह पेट्रोलियम सघ पथ प्रदर्शक बन सकता है।

इण्टरनेशनल कोआपरेटिव अलायन्स का इक्कीसवाँ त्रयवार्षिक अधिवेशन १९६० की पतझड़ मे स्विट्जरलैण्ड मे हुआ। मनुष्य को जितने भी आर्थिक कार्य-व्यापार मालूम है उनमे लगे पन्द्रह करोड़ परिवारों के प्रतिनिधि अपने-अपने देशों से इस सम्मेलन मे भाग लेने के लिए आये थे और वहाँ चर्चा का

मुख्य विषय था कि अमरीका और यूरोप के सुस्थापित सहकारी संगठन नव-विकासशील देशों के सहकारियों की अच्छी-से-अच्छी और ज्यादा-से-ज्यादा सहायता किस प्रकार कर सकते हैं।

इस प्रकार शान्ति के सेतु निर्मित होते हैं।

विश्व के सहकारी संगठन, संयुक्त राष्ट्र संघ के घोषणापत्र को शान्ति-स्थापन के प्रभावशाली अस्त्र के रूप में न तो फिर से लिखेंगे और न निरस्त्रीकरण कार्यक्रमों का ब्योरा ही तैयार करेंगे।

लेकिन वे इन कामों को करने के लिए भूमि अवश्य तैयार कर देंगे, जिसका कि किया जाना बहुत आवश्यक है।

जो लोग देश में अपने पड़ोसियों के साथ शान्ति से रहना सीख लेते हैं, उनमें दूसरे देशों के इसी तरह के अनुभव-प्राप्त जन-समूहों को समझने और उनसे मैत्री करने की भावना बहुत प्रबल हो जाती है। वे पारस्परिक समझ, शान्ति और एक प्रकार के व्यवहारिक भाई चारे के पुल बनाते जाते हैं; राष्ट्रों के बीच शान्ति के लिए निर्मित ऐसे पुलों के दूर व्यापी महत्त्व का मूल्यांकन कठिन ही है।

दूसरे महायुद्ध के समय जब इस पुस्तक का लेखक कैलीफोर्निया में कांग्रेस के सदस्य के रूप में अपने देश की सेवा कर रहा था तब एक आधी रात को उसने निम्न पंक्तियाँ लिखी थी :

वाशिंगटन का अनुभव मेरे लिए कई तरह से शिक्षाप्रद रहा; कहना चाहिए कि जिन बातों पर पहले मेरा केवल विश्वास था उन्हें इस अनुभव ने मन पर अमिट रूप से अंकित कर दिया।

मैंने सीखा कि मानवी सद्गुणों में विनय ही सबसे महान गुण है—यह प्रेम से भी महान् है, क्योंकि प्रेम स्वयं विनय से उद्भूत है और वही उसका एकमात्र स्रोत है। मैंने यह भी सीखा कि ईश्वर के अस्तित्व और उसकी उपस्थिति के चेतन ज्ञान के बिना जीवन निस्सार और निरानन्द है—बिना किसी आशा और अर्थबोध के, नितान्त भयावना। मैंने यह भी सीखा कि नैराश्य के भंवर में पड़ कर और उससे उबर कर भी जो दोनों को कोई महत्व नहीं देता आशा का यत्किंचित् वरदान उसी के हिस्से आता है। मैंने यह भी सीखा कि जिसे मूल्यवान समझते रहे उसके अधिकारों से वंचित हो जाने की स्थिति को अनुभव और अंगीकार करके ही जीवन के हर दिन को, भय विकम्पित हुए बिना अन्तिम दिन

मान कर, नई समर्पणशीलता, नई अनुरक्ति और नई तत्परता से ग्रहण किया जा सकता है।

हम यहाँ भेजे गए है सफलता के लिए नहीं निर्भीक प्रयत्न के लिए, असाध्य कार्यों को साध्य करने के लिए नहीं यथाशक्ति कर्म करने के लिए, जीवित रहने के लिए नहीं अच्छी तरह मरने का ज्ञान प्राप्त करने के लिए, मूर्खतापूर्ण आशावादिता के लिए नहीं निराशा की उस चरमावस्था के लिए जो अन्ततः मृत्यु की अनिवार्यता के ज्ञान से सौन्दर्यपूरित हो उठती है।

और दुनिया में जितना ही अन्धकार घिरता जाता है मेरा यह विश्वास उतना ही दृढ होता जाता है कि वह अन्धकार ही सब-कुछ और अन्तिम सत्य नहीं है; सच्चे प्रयत्नो में निराशा का मुझे जितना ही अनुभव होता जाता है उनकी अन्तिम विजय में मेरी आशा उतनी ही दृढ होती जाती है; अनिष्टकारी शक्तियो को जितना ही बढते देखता हूँ उनके द्वारा अपने ही विनाश के बीज स्वयं बोते जाने के बारे में मै उतना ही आश्वस्त होता जाता हूँ।

मै इसे समझा नहीं सकता। लेकिन मुझे कोई भय नही है—शायद इसलिए कि मेरे मन पर भय पूरी तरह आच्छादित हो गया है। और मै फिर भी आशावान हूँ—शायद इसलिए कि मेरे मन मे निराशा के लिए कोई स्थान नहीं बचा रह गया।

इन पक्तियो को लिखे बीस बरस होने आये। आज भी लिखना हो तो इसमे मै कोई परिवर्तन नही करूँगा।

लेकिन इसमे कुछ जोड अवश्य दूँगा।

हमारे युग की सकटापन्न स्थिति मे भी मानव जाति के भविष्य मे मेरा विश्वास क्यो नही डिगा इसके दो सारगर्भित कारण आज, संयुक्त राज्य की सहकारी सस्थाओ मे पन्द्रह वर्ष काम कर चुकने के बाद, मै बता सकता हूँ।

पहला कारण यह है .

मैंने देखा है कि जब लोगो का एक समूह बचतो की सर्व सामान्य निधि मे अपने पॉच-पॉच डालर के हिस्सो का निकाय करता है तो कैसे एक प्रकार की व्यावहारिक सहकारिता आरम्भ होती है। मैने देखा है कि जब लोग बिजली या स्वास्थ्य-परिचर्या या मकान या सिचाई की अपनी एक-सी आवश्यकता को समझ कर उसे पूरा करने के लिए स्वय को और अपने साधनों को संगठित करने लगते है तो किस प्रकार नये सम्बन्ध आरम्भ होते और बढ़ने लगते है। मैंने देखा है कि इस तरह के परस्पर सहायता के उद्यमो का प्रयोग करने वाले लोग कोई भी क्यो न हों और किसी भी देश मे क्यो न रहते हों पारस्परिक

समझ के दृढ़ सूत्रों मे किस तरह बँधे होते है और कैसे उस स्नेह बन्धन का सतत अनुभव करते रहते हैं। और इस तरह मैंने देखा है कि लोग अपनी एक-जैसी समस्याओं के द्वारा व्यावहारिक और शान्तिपूर्ण ढग से एक साथ मिल कर रहना किस तरह सीखते है। और साथ मिल कर रहना सीखने का यह काम यदि दुनिया के अधिकतर गाँवों और फारमों मे, देशों और नगरों मे किया जा सके—परस्परावलम्बन और परस्पर सहायता के विचार यदि अधिकतर देशों मे अधिकतर लोगों को अनुप्राणित कर सके—तो राष्ट्रों के बीच शान्ति का बिरवा विश्व-जन समुदाय मे सुदृढता से आरोपित किया जा सकता है।

तो यह है मेरी आशा और मेरे विश्वास का पहला कारण जो मनोरम कल्पनाओ, स्वप्नों या राजनयिकों की चर्चाओं पर नही स्वय अपने और अपने पडोसी के लिए भोजन और छाजन प्राप्त करने की एक अच्छी पद्धति पर आधारित है।

दूसरा कारण है नई पीढी मे मेरी आस्था, जिसे मैं इस तरह व्यक्त करना चाहूँगा ·

पहले महायुद्ध के बाद की घटनाओं, बडी मन्दी और पिछली पीढी के आशातिरेकपूर्ण उदारवाद की परम्परा से प्रभावित और निर्मित मेरी अपनी पीढी के सोचने-विचारने का ढग अब सामयिक नही रह गया और अकेले उससे काम चल भी नही सकता। हम आज की दुनिया को बीते कल की प्रथाओं और सस्थाओ मे बॉध रखने का प्रयत्न करते हैं। यह चल नही सकता और कोई अच्छी बात भी नही।

फिर अच्छा क्या है ? ठीक-ठीक तो सम्भवत कोई नही जानता।

आदमी की आज की जिन्दगी को अनथक परिश्रम और सतत प्रयत्नो से इस तरह पुनर्निर्मित करने की आवश्यकता है जिससे मानव-जीवन और आशा, प्रेम और सवेदनाएँ सजीवन हो सके, त्राण पा सकें। इस तरह के निर्माण के उपयुक्त सक्षम उपस्करों का जिन्हे सम्भवत· धुँधला-सा आभास है और जिन्हें उनका उपयोग करना है वे अभी इतने बडे और वयस्क नहीं हो पाये है कि नेतृत्व का अपना दावा पेश कर सकें। मेरी पीढी उन्हे अनश्वर मूल्यो का—विशुद्ध धार्मिक आस्था, प्रभु के शाश्वत नियमों की प्रतीति, जन-जन मे व्याप्त

परस्पर-सहायता-भावना और मानव-आत्मा की अमर पुष्करिणी आशा का दाय दे सकती है। प्राण और मन और बुद्धि और चेतना और प्रकृति के नियम आज भी उतने ही सत्य और अद्भुत और अलौकिक हैं जितने दस हजार या एक सौ या पच्चीस वर्ष पूर्व थे।

इन शाश्वत मूल्यों का दाय देने के अतिरिक्त मेरी पीढ़ी के लिए उचित तो यही है कि भावी पीढ़ी जिस साफ, मजबूत और चमकीली दुनिया को गढ रही है उसे समझने का प्रयत्न करे और अपने अधिक साहसी और अधिक यथार्थ-वादी बच्चों को बागडोर थामने का अवसर देने के लिए यथाशीघ्र रास्ते से हट जाए।

क्योंकि हम तो उतनी अच्छी तरह नहीं जानते पर वे जानते हैं कि उन्नीसवीं शताब्दी की राजनीति और अर्थनीति को बीसवीं शताब्दी के विज्ञान के साथ गड्ड मड्ड करने में ऐसा विस्फोटक द्रव बन जाएगा जो इस दुनिया को ही उड़ा देगा। हमसे अधिक वे इस बात को जानते हैं कि बीसवीं शताब्दी के विज्ञान को निरस्त नहीं किया जा सकता, और यह भी कि मनुष्य जाति के भविष्य की आशा बीसवीं शताब्दी के अनुरूप राजनैतिक और आर्थिक संस्थाओं के विकास में ही निहित है।

वे किस प्रकार की संस्थाएं होंगी ? वे होंगी पारस्परिक सहायता की पीठिका पर प्रस्थापित विभिन्न रूपों-प्रकारों वाली संस्थाएँ, मात्र इसीलिए कि आज समूची मानवजाति शाब्दिक और लाक्षणिक दोनों ही अर्थों में 'एक ही नाव में सवार' है। या तो हम सब मरते हैं, या हममें स्वार्थ-वृत्तियों पर विजय पाने की बुद्धि शेष रही तो नवोपलब्ध शक्तियों का उपयोग सभी के जीवन को ज्यादा सुन्दर और ज्यादा अच्छा बनाने में करते हैं।